कामना है और उसी अटल पदमें लीन हो इस चाहना को त्याग करो चाहना द्वैत को कहते हैं—एक चाहने वाला दूसरा जिसको चाहा,यह दो हुये तब ब्रह्म में कैसे लीन होगा? तब ध्रुवने पूछा कि उसको कैसे चेतकरूं उसका भजन क्याहै मुझको उपदेश कीजिये कि जिससे उसको जानूं और निश्चय करूं,तब गौतमऋषि ने कहा कि प्रथमअपने मनको प्रपंचदृष्टिका त्यागकरो क्योंकि आदि में जिज्ञासा अर्थात् जानने की इच्छा विषय यही कर्त्तव्य अर्थात् करने के योग्यहै,तदनन्तर अर्थात् इसके पीछे भगवान् में लीन होताहै, काहेसे कि सर्व उसीसेहै अर्थात् अपने मनको सर्व से और सब ओर से फेरो और श्री गोविंद को प्राप्तहो, भजन और तपस्या यही है कि जिससे निश्चयहोवै कि सर्वव्यापक वहीहै, जब तू ऐसी तपस्या करेगा तब गोविंद तुझपर प्रसन्न होंगे और वह पद जो कि त्रयलोक्य में दुर्लभहै तुझको प्राप्तहोगा। ध्रुव इस बातको सुनकर और मनमें स्थितकरके वहां से चले और लोगोंने यहकथा उनके पिता राजा उत्तानपाद से जाके कही कि ध्रुव सब त्यागकरके वनमें चलेगये, तब राजा ने अपने चाकरों को आज्ञादी कि तुमलोग ध्रुवके निकट शीघ्र जाकर यह कहो, कि राज्यका तीसराभाग लेकर विराग का त्यागकरो जब राजाके सेवकों ने जाके यहवार्त्ता ध्रुवसे कही तब ध्रुव इस बातको सुनकर बड़े आश्चर्य को प्राप्तहुये और शोचने लगे कि जब एकही पद श्रीभगवान्के मार्गमें देने से राज्यका तीसरा भाग मिलता है तो राज्यको लेकर क्या करूंगा श्रीगोविंदहीकादर्शन क्यों न करूं, ऐसा विचारकर राजाकी आज्ञा स्वीकार न की तब राजाने दूतोंसे यह वार्त्तासुनकर राज्य का अर्धभाग देना कबूल किया लेकिन ध्रुवने फिरभी न माना तब राजाने कहा कि मैं तुमको सम्पूर्ण राज्य देताहूं लौटआवो इसपरभी ध्रुवने न माना और मन में यह निश्चय करके कि एक श्री विष्णु ही सब जगत् का आत्माहै और यमुना के किनारे जाकर स्थितहुये और सम्पूर्ण शरीर का बोझ

बांये पैरके अंगूठे पर रखके तपस्या करनेलगे जिसतपके प्रभाव से पहाड़, आकाश, अग्नि और जल कम्पितहोकर सम्पूर्ण पृथ्वी कांपनेलगी और गौका रूपधरकर इन्द्रके पासजाकर ध्रुव की सम्पूर्ण तपस्या का हाल कहतीहुई यहसुनकर सबदेवगणोंसमेत इन्द्र बहुत बिस्मितहुये और राक्षसोंको बुलाकर यह आज्ञादी कि ऐसीयुक्ति करो कि जिससे ध्रुवका चित्त ध्यानसे उखड़जावे। उसी समय सुनीता माता भी ध्रुवकी आनपहुँची और रोदन करके कहनेलगी कि हेपुत्र! देखो राक्षसलोग आनपहुँचे ये तुमको टुकड़े२ करडालेंगे तुम अपने जीव के शत्रु होकर मुझको क्यों क्लेशित करतेहो इससंसारमें एक तुमहीं मेरे आश्रयी भूतहो इससे पांच वर्षकी अवस्था में मुझको त्यागकरके ऐसी कठिन तपस्याकरना उचितनहीं है यहसमय तुम्हारे खेलने कूदनेकाहै कष्ट उठाने का नहीं, जो तुम इस तप का त्याग न करोगे तो मैं अपना प्राण त्याग दूंगी। पराशर जी मैत्रेय जी से बोले कि हे मैत्रेयजी! ध्रुवका चित्त परमेश्वर में लीन था इससे उनकी माता की अति दीनता युक्त शिक्षा उनके मनमें कुछ भी प्रवेश न करसकी तब माता बोली कि हे पुत्र! देखो ये जो राक्षस तुम्हारे शीशपर खड़े हैं सब तुमको मारडालने की चाहना करते हैं इतना कहकर सुनीता चलीगई और वे राक्षस अपने२मुखसे अग्नि निकाल निकाल और आयुध हाथों में ले लेकर ध्रुवको अनेकप्रकार से भय दिखानेलगे और सिंह व सर्पोंका भेषधारण करके कहने लगे कि इसबालकका मारडालनाही उचितहै इनकेऐसे नानाप्रकारके भय जनक चरित्र देख व सुनकर ध्रुवके मनमें कुछभी संदेह न होताथा क्योंकि उससमय ध्रुवकामन किसी अंगके विषय में लीन न था वहजानता था कि भीतर बाहर गुप्त प्रकट वही एक विष्णुहै जब उस परमेश्वर से अतिरिक्त कुछभी नहींहै तो डर किसका करूं. फिर राक्षसों ने ध्रुवके निकट जाकर क्या देखा कि ध्रुव नहीं है भगवान् ही हैं, तब कंपित हुये और भयदिखाने का

बलभी न रहा,व मनमेंहारमानकर इन्द्रके पासगये औरध्रुवका सब वृत्तान्त कह सुनाया तब इन्द्र देवताओं समेत ब्रह्मा के पासगये और उनको भी अपनेसाथ लेकर क्षीरसागर में जहां विष्णु भगवान् का स्थानहै वहांपहुंचे और स्तुति करके कहने लगे कि ध्रुवकी तपस्या नित्यप्रति बढ़तीजातीहै न जाने इस कठिन तपस्या से वे क्या चाहतेहैं उनकी चाहना हमारी समझ में नहीं आती इससे उनके तपकी चिन्ता हमारे चित्तमें बाणके समान वेधतीहै कृपाकरके हमारा यह भय दूरकीजिये और ध्रुव के ध्यानको उचाट करदीजिये यह सुनकर विष्णु भगवान् ने उत्तरदिया कि हे देवताओ ! तुम सब निश्चिन्तहोकर अपने २ स्थानपर जावो ध्रुवको तुम्हारी किसी पदवी की चाहनहींहै वह जो चाहताहै उसे मैं जानताहूं मैं उसकी कामना पूरीकरूंगा विष्णुभगवान् की ऐसी वार्ता सुनकर सबदेवता लोग अपने २ स्थानों को चलेगये और श्रीविष्णु जी चतुर्भुजरूप से शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये गरुड़पर सवार होकर ध्रुवके निकट पहुंचकर बोले कि हे पुत्र ! तूधन्यहै मैं तेरी तपस्यासे बहुत ही प्रसन्न हूं क्योंकि तूने संसार से दृष्टि उठाकर अपने मनको मुझ में लगाया है। जब श्रीविष्णुजी ऐसा कह चुके तब ध्रुव ने नेत्रखोलकर देखा कि जिसका मैं ध्यानकरता था वह साक्षात् मेरे नेत्रोंकेसन्मुख खड़ाहै यह देखकर ऐसा प्रसन्नहुआ कि शरीर की सुधि बुधि भूलगई फिर चेत सम्हालकर विचार करनेलगा कि मैं बालकहूं और कुछ शास्त्र पुराणभी नहीं पढ़ा. इननारायणदेव की स्तुति किस तरह से करूं. इस प्रकार अपने को स्तुति करने योग्य न समझकर उन गोविन्दजीकी शरण में प्राप्तहोकर कहनेलगा कि मैं ध्रुव नहीं हूं जो कुछ हैं आपही हैं. तब पराशरजी ने मैत्रेयजी से कहा कि हे विप्र ! गोविन्द जी की यही स्तुति है अर्थात् सदा यह जाने कि जो कुछ हैं गोविन्दही हैं मैं कुछ नहींहूं। ब्रह्म में मैं. तू नहीं है वह सब जगह व्याप्त व सर्वगत है। तत्पश्चात् ध्रुव जी बोले

हे नारायण! जब आपकी माया सब संसारमें फैलरहीहै तो मुझ बुद्धि हीन बालक परभी दयादृष्टि से देखकर अनुग्रह कीजिये जिससे मैं आपकी स्तुतिकेयोग्य होजाऊं तब विष्णुभगवान् ने सरस्वती जी को आज्ञादी कि तुम ध्रुव के कंठ में स्थितहो जावो जिससे वह मेरी स्तुति करसके इतना सुनकर सरस्वती जी ने ऐसाही किया तब ध्रुवजी दोनों हाथ जोड़कर नारायण की स्तुति करनेलगे कि हे जनार्दन! पृथ्वी और पंचभूत, तीनों गुण और प्रकृति आदि सब तुम्हीं से उत्पन्न हुये और तुम सब में व्याप्तहो इससे आपको नमस्कारहै आप शुद्ध, निर्मल, सर्वज्ञ, और सबसे परेहो व ब्रह्मा से आदि लेकर पिपीलिका पर्यन्त सब जीवों में व्याप्त हो और तुमको परमेश्वर भी कहतेहैं विश्वके प्रकाशक, और सम्पूर्ण इन्द्रियों के अनन्तर, बाह्यके अधिष्ठाता आपही हैं आप स्वयं प्रकाशमान, अद्वितीय और लम्बान चौड़ान सेवर्जित हैं तुम्हीं को परमात्माकहते हैं जिनको योगीजन ध्यानकरते हैं, ऐसे आपको मैं साक्षात् नेत्रों के सम्मुख देखताहूं हे भगवन्! नेत्र, श्रवण, नासिका, कटि और चरण जो कुछ दिखाई देतेहैं सब तुम्हीं, हो यह मेरे निश्चयहै कि तुम और प्रकट जो कुछ स्थावर जंगमहै सबमें व्याप्त होकर आपही सूर्यके समान प्रकाश करने वाले हो मैं बुद्धिहीन आपको इधर उधर खोजता फिरता था परन्तु यह नहीं जानता था कि आप स्वयं प्रकाशरूप मेरे हृ- में स्थित हैं, मनुष्य, देवता, राक्षस ये सब आपही की कला मुझ में इतनी शक्ति नहीं जो आपके गुणानुवाद गासकूं वि- राट्, सुराट्, और सम्राट् ये सब आपहीके नाम हैं। जिनमें सब जगत् व्याप्तहै वह विराट् और जो स्वयं प्रकाशमानहै वह सुराट् और जो आकाश की नाईं ब्रह्मासे चींटी पर्यन्त सब में व्याप्त उनको सम्राट् कहतेहैं नाम रूप प्रकाशक आपही हैं मैं आ- पको कहांतक वर्णन करूं यदि कुछ कहने की इच्छा क- तो ढेर प्राप्त होता है हे भगवन्! अब आपकी दया से

ज्ञान से होता है और जो अविद्या से कोई काम कियागया तो फिर उसका पछिताव व्यर्थ है जिस कामना के निमित्त तूने तपस्या की वह तुझको प्राप्तहुई क्योंकि तेरी स्वयं इच्छाथी, तब ध्रुव जी बोले बड़े आश्चर्य की बात है कि जो मैं ज्ञानरूपी नेत्रों से अन्धाहुआ और आपने मुझको कूपमें गिरादिया यदि सर्वमय आप थे तब मुझ ज्ञानान्ध को उपदेश देकर रोंका क्यों नहीं तब विष्णु भगवान् बोले कि मैंने तुझे कुछ भी नहीं दिया जो कुछ तुमको प्राप्तहुआ यह सब तेरी ही इच्छा से मिला अब मैं जाता हूं इस प्रश्न का उत्तर तुझको किसी समय में सन्तों से मिलैगा तब ध्रुवजी ने फिर विनय की कि हे महाराज! मुझे आपही क्यों नहीं समझाते तब विष्णुभगवान् बोले कि क्या कहूं तेरे प्रश्न के उत्तर में मेरा तेरा और तीनों लोकों का नाश है, तब ध्रुवजी बोले कि यदि यह संदेह है तो आप जाइये जब मुझे संत मिलेंगे तब उनसे बोध होजायगा इतना सुनकर विष्णुभगवान् अन्तर्द्धान हुये और ध्रुव विचार करनेलगा कि मैं अब क्या करूं और कहांजाऊं और वह स्थान कहां है जहांपर मुझे सन्तों के दर्शन होंगे, भला सन्तों को मुझ से क्या प्रयोजन है, जो लोग निष्काम हैं उनका सत्संग मुझको तब प्राप्त होसक्ता है जब मैं भी उन्हीं की तरह निष्काम होजाऊं फिर अपने चित्त में यही दृढ़ विश्वास किया कि सिवाय नारायण के और कोई नहीं और यदि वह सर्वव्यापी है तो लोक व परलोक से क्या प्रयोजनरहा, यह शरीर नौका तुल्य है जैसे मनुष्य जब पार उतर जाता है तब नौका से कुछ प्रयोजन नहीं रहता यदि यह शरीर नाशवान्है तो फिर इससे कुछ काम नहीं इसी शोचविचारमें निमग्नथा कि अकस्मात् तीन सन्तोंके दर्शन हुये और उनसे वार्तालाप होनेलगा प्रथम पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! जो तुम पूछतेहो कि तीन संत कौन कौन थे तो सुनो एक तो मैंही था तब मैत्रेयजी बोले कि मुझे यह कैसे

निश्चयहोवे कि वे तीनों संत आपही थे आप तो एक हैं तीन रूप किसप्रकार से होगये अब कृपाकरके उन तीनों के नाम पृथक् पृथक् मुझे समझाइये तब पराशरजी बोले कि निश्चयकरो मैं ही था तब मैत्रेयजी ने कहा यहां मैं कैसे जानूं कि तीनों पराशर ही थे तुम तो एक हो त्रिपुटी अपने ऊपर क्योंकर स्थित करतेहो तब पराशरजी ने पूछा कि तू मुझको नाशवान् जानता है या अमर? तब मैत्रेयजी ने उत्तरदिया कि आप सदा अजर अमर हैं अब कृपा करके ध्रुव की कथा मुझको सुनाइये तब पराशरजी बोले कि सुनो व्याकरण शास्त्रानुसार ध्रुव शब्द का अर्थ निश्चयहै इससे तुम अपने मनमें विश्वास मानों कि त्रैलोक्य में तुम्हारे सिवाय कोई दूसरा नहीं है परन्तु तुम तो कपटीहो अपनेही को स्वयंब्रह्म कहतेहो तब मैत्रेयजीबोले कि चारों बेद कहते हैं कि ब्रह्मअस्ति अर्थात् ब्रह्महै पराशरजी ने पूछा कि तुम अपनेको स्वयंब्रह्म किसप्रकार से समझतेहो तब मैत्रेयने कहा कि सर्वव्यापीहूं तब पराशरजी बोले यह वार्ता तुम्हारी हँसने के योग्यहै इसलिये कि तुम भोजन,शयन इत्यादि नानाप्रकार की सांसारिक कामनाओं में बँधेहोनेपर भी अपने को स्वयंब्रह्म मानते हो तब मैत्रेय जी ने उत्तर दिया सम्पूर्ण कामनाओं में बन्धहोने के कारण से ही तो मैं अपनेको सर्वव्यापी बतलाताहूं नहीं तो ऐसा किस तरह कहसक्ता था इतनी वार्ता सुनकर फिर पराशरजी बोले कि जब तक जीव मृत्युको प्राप्तहोकर फिर जन्म नहीं लेता अमृत का खोज उसको नहीं मिलता यदि चाहो कि जीतारहकरही ज्ञानको प्राप्तहोऊं यह अति दुष्करहै यदि तुमको मोती लेने की इच्छाहै तो डुबकी लगाओ परन्तु इसकेलिये ये चारवस्तुयें अति आवश्यक हैं एक डोरी का सिरा मित्रके हाथ. और दूसरा जीव हथेलीपर. और तीसरासांस न लेना, और चौथा मोह का त्याग करना हे मैत्रेयजी! ज्ञानरूपी अग्निसे शीश और शरीर नहींबचता तब मैत्रेयजी बोले कि यह शरीर काठ की पुतली की नाईं है कि

जिसके ऊपर त्वचा और भीतर रुधिर और अस्थि का जाल है तब पराशरजी बोले कि तुमने अभीतक अपनी दृष्टि रुधिर, मांस से नहीं उठाई मन से गोविन्दजी का भजन करो कि जिससे मन निर्मल होवे, यह मनुष्य का शरीर बारंबार नहीं मिलता इसी शरीर से मुक्ति प्राप्त होती है इससे देवता भी इसकी चाहना करते हैं और मुक्त मनुष्यही आवागमन से रहित है, यह आनन्द देवतों को भी दुर्लभ है अर्थात् जब जब ब्रह्माण्ड की रचना होती है तब तब देवतों को भी जन्म लेना पड़ता है और जिसको मायारूपी यह रत्न चिन्तामणि प्राप्त हुआ है वह सदा प्राप्त होनेवाले धनआदि विषयों में लीन रहता है और जब धन मिलजाता तब रूपवती स्त्री की चाहना करता है कि जो मिलजावे तो उससे भोग विलास करूं इन्हीं कारणों से गोविंद जी के भजन से विमुख रहकर, विषयों की चाहना करके परमेश्वर से आशा रखता है और कहता है कि मैंने इतने समयतक गोविन्दजी का भजन किया परन्तु दर्शनों की प्राप्ति न हुई हे मूढ़ ! तूतो विचार के नेत्रों से अंधा है गोविन्दजी का दर्शन तुझे किसतरह प्राप्तहो, तेरा अभ्यास तो इन्द्रियों के द्वारा सुख मिलने का है, तूने अपने माता पिताको प्रत्यक्ष अग्नि में जलाया और उनके मरने के पश्चात् विचार करता है कि अब भली भांति सुख भोगूंगा परन्तु यह विचार न किया कि जब उन्हींका शरीर न रहा तब हमारा शरीर कैसे रहेगा. हे मैत्रेय जी ! तुमही ने झूठा भ्रम मनमें धराहै कि मैं ब्रह्मर्षिहूं और वेद बहुत पढ़ाहै परन्तु पढ़ना तुम्हारा इस निमित्त है कि लोग जानें कि मैत्रेय परमहंस हैं परन्तु जिस में मन, वाणी का विषय नहींहै उसकोवे तुम कैसे जान सक्ते हो और वेद क्या जाने परन्तु जहां इन सबके पहुंचने का रास्ता नहीं है संत लोग अपनी दृष्टि वहांही लगाते हैं हैं फिर नारायणजी का स्वयं वाक्य भी है कि मैं संतोंका भक्त किसे करताहूं । हे मैत्रेयजी ! जो स्वरूप में लीन हैं और मौन धारण

किये हुये हैं जैसे जड़ भरत, प्रह्लाद, शुकदेव जो कि अपने तत्त्व को पहिचानते और चिंता से रहित, मंगनी के वस्त्र के समान शरीर से नग्नहुये हैं उन लोगोंने जो कुछ कहा वह वह योग था। तब मैत्रेयजी ने कहा कि अब कृपा करिके मुझको ध्रुव की कथा सुनाइये तब पराशरजी बोले कि ध्रुवकी यही कथा है कि जो निश्चय कर चाहे कि ध्रुव के समान होवें तो वैसाकरो कि जैसे ध्रुव माता, पिता, और भाई बन्धु की लज्जा सबको इकबारगी त्यागकर गोविन्दरूप हुये तुम्हारी सामर्थ्य नहीं है कि उनके समान होवो, तब मैत्रेयजी बोले कि मैं उनके समान नहींहोता परन्तु आप उनकी कथा तो वर्णन कीजिये इतना सुनकर पराशर जी कहने लगे कि जो तुम उनके समान नहीं होते तो उनके कर्म सुनने से तुम्हारा क्या प्रयोजन सिद्ध होगा, तब मैत्रेयजीने कहा- कि मैं जानताहूं कि सतगुरु की दया से ही जिज्ञासू अपनी का-
प्र मना को प्राप्त होता है फिर आप मुझको वैसा क्यों नहीं करते
श तब परा गादि स बोले कि इस तुम्हारी वार्ता से निश्चित होताहै
न कि तुम दे तुम्हा त होने की इच्छा रखते हो यदि ऐसी इच्छा है तो यह री ऊर्ण इलोवास जो शरीर पर धारण कियेहो पृथ्वी पर फेंकदो और शिखासूत्रको त्याग करो व सब कामोंको छोड़दो। जब सम्पूर्णरागादि कर्मों का परित्याग करोगे तब तुम्हारे अहं- कार उत्पन्न होगा उससे बचना तब मैत्रेयजी ने कहा कि तुम मेरे गुरु देवहो दया दृष्टि से ऐसा उपदेश कीजिये कि जिससे ऐं और राजर्षि सबको यह बात विदित होवे कि यह मैत्रेय पराशरजीका शिष्यहै तब पराशरजी कहनेलगे कि ये सब अतीत जोकि तुम देखतेहो इन्हीं के समान तुम भी होवो हम तुमको शिष्य नहीं करते इन्हीं अतीतों से पूछो कि ये लोग किस तरह अतीत हुये हैं कहेंगे कि कुटुम्ब के त्याग से. तब अतीत नहीं हुये वह अभी अहंकार के आश में फँसे हैं. मैत्रेयजी ने कहा कि जो तीनों गुणों से अतीत हुआ उसीको अतीत समझना चा-

हिये तब पराशरजी बोले कि सम्पूर्ण सृष्टि अर्थात् जीवधारी तीनों गुणों से उत्पन्न हुये हैं किसको बिना शरीर के देखा है जिसको अतीत निश्चय किया तब मैत्रेयजी ने कहा कि जिसने ज्ञानाग्नि में शरीर के अभिमान को जलाया है वही अतीत है यह सुनकर पराशरजी बोले कि उस जले हुये की जो राख पड़ी हो वह मुझको दिखाइये, हे मैत्रेयजी! निश्चय जानो कि अतीत कोई नहीं सब लोग गृहस्थही का भजन करते हैं अर्थात् जो कोई विष्णु का भजन करता है तो विष्णु भी गृहस्थ हैं तब उनका चेला किस प्रकार अतीत होसक्ता है और मैं भी गृहस्थ हूं और जो संन्यासी हैं और कहते हैं कि मैं शिवको जानता हूं तो शिवभी गृहस्थ हैं इससे यदि तुम मेरे शिष्य हो तो अतीत न होगे तब मैत्रेयजी ने कहा कि मैं जानता हूं तुम अपने को सब से बड़ा जानते हो तब पराशरजी बोले कि ऐसाही है मैं अहंकारी हूं फिर मैत्रेयजी ने पूछा कि अब यही उपाय है कि वस्त्र को जलाकर नंगा होजाऊं तब पराशरजी [illegible] कि बहुतही अच्छा है यह सुनकर मैत्रेय ने उसी क्ष[illegible] जलाकर अपने वस्त्र हवन करदिये और सिवाय एक [illegible] के अपने अंगपर कुछ शेष न रक्खा तब पराशरजी ने कहा कि इसको भी जलादो तब मैत्रेयने उसको भी जलादिया तब पराशरजी बोले कि ऊपरका सब शृंगार तो जलाया परन्तु शरीर के अहंकारका वस्त्र तो हृदय के भीतर पहिने है, जो शरीर अभिमान से छूटा है वही नंगा है यह सुनकर मैत्रेयजी बोले कि कैसा २ नाच नाचता हूं परन्तु यह प्रसन्न नहीं होते इससे अग्नि जलाकर शरीरही को भस्म करदूंगा जिससे बिलकुल नग्न होजाऊं तब पराशरजी बोले कि तुमने भला विचारकिया, शरीरको जलाओ जिससे नग्न होजाओ यह सुनकर मैत्रेयजी उठखड़े हुये और जलने के लिये लकड़ियां इकट्ठाकीं तब पराशरजीने कहा कि लकड़ियां थोड़ी हैं और शरीर तेरा स्थूल है कैसे जलेगा. हे मूर्ख!

यदि शरीर के नाश होने से कोई नग्न होता तो सबही शरीर नाश होते रहते हैं फिर नग्न क्योंकर न हुये यदि तू नग्न होने की इच्छा रखता है तो ग्रहण अरु त्यागको छोड़दे ये दो वस्तुयें जिस स्थानपर नहीं हैं वहां आपही आप है और उन्हीं नग्नों में से एक मैं भी हूं और यदि तूने अपना शरीर भी जला-या और लोक परलोक की कामना नाशको न प्राप्त हुई तो इस जलने से क्या लाभ है, नग्न वही है जो शरीर की वि-द्यमानता में लोक परलोक से छूटजावे। अब ध्रुव की कथा सुनो—मेरे कहने का प्रयोजन यहहै कि तू अपने स्वरूप को प्राप्त होवै क्योंकि यह मनुष्य का शरीर दुर्लभ है यदि नाश होगया तो फिर न मिलेगा इससे इस मनुष्य तन को दुर्लभ जानकर गोविन्दजीका भजन कर यदि पूछो कि गोविन्दजीका भजन क्या है तो गोविन्दजी से अतिरिक्त कोई नहीं जिस पुरुषका गोविन्दजी में निश्चय है वह स्नान, ध्यान, पूजन, तर्पण, भो-जन, शयनादि सम्पूर्ण कार्यों में गोविन्दजीही को व्याप्त सम-झताहै यदि तुम्हारी इच्छा नग्न होने की है तो सूक्ष्म अहंकार को त्याग करो और यह समझो कि न मैं किसी का हूं न कोई मेरा है जन्म मरण सूक्ष्म अहंकार से होता है जब इतना ज्ञान प्राप्त होजावेगा तब आपही आप जन्म मरण से मुक्त होजावोगे यदि शंका करो कि सूक्ष्म अहंकार क्या वस्तु है तो समझो कि सिवाय गोविन्दजी के और किसी को मानना यही सूक्ष्म अहं-कार है तुमको उचित है कि इस क्षणभंगी शरीर की प्रीति को त्याग करके श्रीगोविन्दजी से जाकर मिलो, इतनी वार्त्ता सुनकर मैत्रेयजी बोले कि अब आप कृपा पूर्वक मुझे ध्रुवजीकी कथा सुना-इये तब पराशरजी बोले कि तुमको ध्रुव की कथा से क्या प्रयो-जन है तुम आपही शरीरके भ्रम विषे बँधे हो और चाहतेहो कि ध्रुवकी कथा सुनकर मुक्त होजावें यह अति दुस्तर है यदि भ्रम को त्याग दो तो तुमभी ध्रुवके समान होसक्ते हो तब मैत्रेयजीने

उत्तर दिया कि हे महाराज! जिसप्रकार यह भ्रम निवृत्तहो दया करके मुझको वह उपाय बतलाइये तब पराशरजी बोले कि तुम अतीत होजावो तो निर्वाण पदको प्राप्तहोगे तब मैत्रेय जीने कहा कि अब आप क्यों विलम्ब करते हैं जो आज्ञा दीजिये मैं उसे करने पर उद्यतहूं तब पराशरजी बोले कि मैं अतीत नहीं हूं न दंड न कमंडलुही धारण कियेहूं न संन्यासीहूं न वैरागी हीहूं तब मैत्रेयजीने पूछा कि मैं कहां जाऊं और क्याकरूं तब पराशरजीने कहा कि कुछ मतकरो केवल अतीत होजावो फिर मैत्रेयजीने कहा कि आपही दयाकरके मुझको अतीत करलीजिये तब पराशरजीने उत्तर दिया कि जो मैं तेरे केश और दाढ़ी मूंडूं तो दिन प्रति बढ़ेगी और मंत्र नहीं जानता जो सिखापन करूं नख और शिखा तो सदा मेरे बढ़ते हैं और न कुछ मेरे पास है जो तुझे सिखाऊं तब मैत्रेयजी बोले कि अब मुझको उचितहैकि जो नख और शिखा बढ़ैंगे उनको न कटाऊं तब पराशरजी बोले कि तुम क्या करोगे यह आप से आप बढ़ते हैं मैत्रेयजी ने कहा कि मैं रोताहूं तब पराशरजी बोले कि रोदन को त्याग करके अतीत हो तब मैत्रेयजी ने उत्तर दिया कि बड़े आश्चर्य की बात है कि जो मैं अतीत होताहूं तो रोकते हैं और बार २ अतीत होने की आज्ञा भी देते हैं इस द्विविधा में क्या उपाय कर्त्तव्य है इस शोच विचार में व्याकुल होरहाहूं तब पराशरजी बोले कि जब तू अतीत होवेगा तब तेरी मनरूपी पृथ्वी में पुष्प की तरह यह अहंकार खिलेगा कि अब मैंने सर्वस्व त्याग दिया इस लिये मेरे ऊपर ईश्वर दयाकरेंगे और मैं परमहंस हूंगा यदि तुम्हारी कांक्षा इन पदवियों के लेने की है कि इस स्वमतन संसार में सब लोग मेरी प्रतिष्ठा करके प्रतिदिन समझें तो तू अतीत होजावे तब मैत्रेयजी बोले कि इस असत्य कामना से निर्लोभ हो मेरी इच्छा तत्त्व जानने की है कि जिससे अपने तत्त्व को प्राप्त होऊं तब पराशरजी बोले कि तू तत्त्व जानता नहीं

पहुंच सका जो ध्रुव की नाईं पांच वर्ष का हो कि तत्त्वों का जानना निर्लज्जों का काम है, मैं पण्डित नहीं हूं जो तुझको मूल विद्या समझाऊं परन्तु इतना समझना कि एक तूही है दूसरा नहीं यही तत्त्व है तब मैत्रेय जी ने कहा कि मैं ब्रह्मचर्य्य करूं कि जिस से ब्रह्मचारी होजाऊं। तब पराशरजी बोले कि ब्रह्मचारी पद का अर्थ कहो, इसी को ब्रह्मचारी कहते हैं कि स्नान करिके कम्मल और धोती लपेट ले मैत्रेय जी आप भली-प्रकार जानते हो आपही कहिये कि ब्रह्मचारी किसको कहते हैं तब पराशरजी ने उत्तर दिया कि जो ब्रह्म को जानै वही ब्रह्मचारी है ब्रह्म को जाने बिना ब्रह्मचारी नहीं होता और ब्रह्म भी वही है काहेते कि यदि ब्रह्मही है तो उसमें चार कौन हैं। मेरेपास दंड कमण्डलु नहीं है कि तुझे ब्रह्मचारी करूं तब मैत्रेय जीने कहा कि कुछ उपदेश कीजिये पराशर जीने कहा कि कोई श्रोता तो दिखाई नहीं पड़ता मैं आपी आप किसको उपदेश करूं, तब मैत्रेय जी ने कहा कि हस्तामलक की कथा सुनाइये कि वह कैसा था तब पराशर जी बोले कि हस्तामलक आपही नारायण है दूसरा कोई नहीं सुनकर मैत्रेय जी बोले कि मैं आप से भय मानता हूं कि आप मुझको भस्म न करदेवें, तब पराशर जी बोले कि तू क्या है मैं अपनी शक्ति से सम्पूर्ण संसार को भस्म करसक्ता हूं, मैत्रेय जी ने कहा कि महाराज अब मैं जो प्रश्न करूंगा बड़ी नम्रता से पूछूंगा यह सुनकर पराशर जी बोले कि हे मैत्रेय जी! तुम कपटी लोगों की रीति को त्यागकर ऐसा निर्णय निरूपण करो कि जिससे जीव और ब्रह्म दोनों से निवृत्त होजावो तब मैत्रेय जी बोले कि यदि यह कार्य मुझ से होसक्ता है तो मैं अभी करूंगा तब पराशर जी बोले तुम ब्रह्म जानने की इच्छा रखते हो इससे जो कार्य तुमसे न होगा उसको दूसरा कौन करसक्ता है तब मैत्रेय जी बोले कि जीव किसको कहते हैं तब पराशरजी ने उत्तर दिया कि किसी ने यह नहीं कहा कि यह

जीव है, श्रीकृष्ण महाराज ने गीता में अर्जुन जो यह उपदेश किया है कि जैसे हम अनादि हैं इसी तरह जीव भी अनादि है और आदि, मध्य, अंत से रहित है मैत्रेय जीने कहा यह जीव क्या वस्तु है तब पराशर जी बोले कि जो तुमने जीव की व्यवस्था अबतक न जानी तो मेरे सत्संग से तुमको क्या लाभ हुआ यदि अपने तत्त्व को जानना चाहते हो तो मैत्रेय को बीच से निकाल डालो क्योंकि शरीर बहुत हैं और जीव एक है, यदि कहो कि सर्व जीव है तो मैं कैसे जानूं यह तो तुम स्वयं जानते हो कि जीवही से शरीर उत्पन्न हुआ है इससे जीवही शरीर का कर्त्ता है यह सुनकर मैत्रेयजी ने कहा कि जीव के शरीर नहीं यह हमक किसतरह ज्ञात होवे तब पराशर जी ने उत्तर दिया कि यह जं सम्पूर्ण सृष्टि दृष्टिगोचर है इसी को जीव कहते हैं तब मैत्रे जी ने पूछा कि यदि जीव सर्वमय है तो उसका रूप किसप्रका का है तब पराशर जी बोले कि हे मैत्रेय जी ! जोकुछ दिखला देता है उसी का रूप होता है इसप्रकार से तुम भी जीव हुये तब मैत्रेय जीने पूछा कि हे महाराज ! इन दोनों पदों से किस तरह निवृत्ति होवे यदि कुछ नहीं है तो आपही त्याग है तब पराशर जी ने समझाया कि ये दोनों तेरी अविद्या से उत्पन्न हुये हैं जब तू अपने स्वरूप का ध्यान करेगा तब ये नाश होजावेंगे तब मैत्रेय जी ने कहा कि यदि ये मेरे अज्ञान से उत्पन्न हुये हैं तो कृपा करके बतलाइये कि इस में मेरी क्या हानि है तब पराशर जी बोले कि यही बड़ी हानि है कि यदि अंधेरी रात्रि में तुम्हारे पैर में रस्सी लपट जावे और तुमको भ्रम से अनुमान होवे कि मेरे पैर में सर्प काटता है तब मैत्रेय जी ने कहा कि यदि अज्ञान से मैंने रस्सी को सर्पही माना तो मेरी क्या हानि हुई तब पराशर जी ने समझाया कि यही बड़ाभारी क्लेश हुआ कि तुम्हारी जान पैर में सर्प लपट गया है और काटेगा यही भेद जीव और ब्रह्म में वेद वर्णन करते हैं तब मैत्रेय जी ने कहा

कि तुम्हारे कहने से बोध होता है कि जबतक कुछ त्याग न करूंगा तबतक कुछ न होऊंगा जब मैंने पहिले पूछा था कि कुछ उपाय बतलाइये तब आपने समझाया था कि आपही आप हैं अब कहते हो कि जो कुछ करो वह होवे तब पराशर जी ने कहा कि मैं और तू कुछ नहीं यह जीव अद्वितीय ब्रह्म है तब मैत्रेय जी बोले कि मैं अहंकार के बंधन में फँसकर किसतरह कहूं कि जीवआत्मा नहीं हूं, तब पराशर जी बोले कि जिसका रूपही दिखलाई न देवे उसका नाम किसप्रकार रक्खाजावे, तब मैत्रेय जीने कहा कि सुनकर कहताहूं तब पराशरजी बोले कि जिससे सुनाहै उससेही पूछो तब मैत्रेयजीने कहा कि वह भी सुनीहुई कहताहै तब पराशरजी बोले कि सब लोग परस्पर कहीहुई सुनते हैं परन्तु मूल वस्तुको कोई नहीं जानताहै यदि तुमको रूपके जाननेकी इच्छाहै तो अतीत होवो तब मैत्रेयजी बोले कि मुझको उदास प्राप्त हुआहै इससे चाहताहूं कि उदासी होजाऊं तब पराशरजी बोले कि यह जो भूत, प्रेत और पशु, पक्षी आदि वनमें घूमते फिरते हैं येभी सब उदासी हैं तू भी इन्हीं में जाकर मिल जा और हे कपटी, दगाबाज़! मनको माया अरु पुरुष से उदास कर जिससे उदासीहो जिसने ऐसा समझा है कि स्त्री, पुत्र और घरके छोड़ने से उदासी होताहै वह मिथ्याहै, घर यही शरीर है इससे इस शरीरके अभिमान में जो बंधाहै वही गृहस्थ है और जो देहकेअभिमानसे रहित होकर भगवान्के सिवाय किसीवस्तु को न जाने उसको अतीत कहते हैं हे मैत्रेयजी! जिसको सांसारिक पदार्थों की इच्छाहै उसको मेरे वचनों से कुछ भी सुख नहीं मिलसक्ता और जोकि नामरूप से रहितहै उसको सुखरूपही है जिससमय यहनामरूपका आवरण अर्थात् पर्दा नाशहुआ तब जीवन मरणका शोच नहीं करता क्योंकि नाम और रूप स्वयं प्रकाशित नहीं हैं तुम्हीं से प्रकाशित होते हैं इससे इस शोचको त्याग करो इसलिये कि यही अभिमान चौरासी लाख योनियों में पहुं-

चाताहै सन्तलोगभी यही उपदेश करते हैं कि नाम,रूपको मध्य से उठाकर आदि अन्त में श्रीनारायणहीको देखो, यद्यपि काम, क्रोध और भीतर बाहरकी सब इन्द्रियां स्थित रहती हैं परन्तु जब नाम,रूप से रहितहुआ तब सब इन्द्रियां व्यर्थ होजाती हैं हे मैत्रेयजी! मैं तुमको तत्त्व दिखाताहूं समझो कि, न तू पराशरहै और न मैं मैत्रेयहूं सब श्रीनारायणही हैं परन्तु अतीतहो, तब मैत्रेयजीने कहा, कि तुम यह कहतेहो कि मैं अतीत और गृहस्थ दोनों नहीं फिर अतीत किसप्रकार से होऊं तब पराशरजी बोले कि अतीत होना यहीहै कि श्रीगोविन्दजीके सिवाय और कोई दूसरा नहीं है जब ऐसा भान होताहै तब अतीत और गृहस्थ में कुछ भी अन्तर नहीं है तब मैत्रेयजीने पूछा कि यदि आपही कुछ नहीं है तो क्या होवे तब पराशरजीने कहा कि जो अतीत न होवेगा तो काल दुःख देवेगा तब मैत्रेयजीने कहा कि मुझको कालका भय नहींहै क्योंकि मैंने जानलिया कि सर्वमय नारायण ही हैं जब नामरूप मुझमें नाशहुआ और काल भी नामरूप है तब नाम कहांरहा, तब पराशरजी बोले कि तू भी ध्रुव हुआ अब ध्रुवकी कथाको श्रवणकरो तब मैत्रेयजीने कहा कि मुझको दया करके गुदड़ी दान कीजिये अब मैं अतीत होताहूं तब पराशरजी बोले कि अतीत तत्त्वमें गुदड़ी की आवश्यकता नहींहै वह गुदड़ी नहीं रखता तब मैत्रेयजीने कहा कि अब ध्रुवकी कथा कहिये तब पराशरजी बोले कि तुमको विश्वास नहीं है तुमको भस्म करना उचित है तब मैत्रेयजीने कहा कि मैं नहींहूं ईश्वर है क्या इस ईश्वरहीको भस्म करोगे तब पराशरजी बोले कि यह सामर्थ्य किसमें है कि ईश्वरको भस्मकरे तब मैत्रेयजी बोले कि अब ध्रुव की कथा वर्णन कीजिये तब पराशरजी बोले कि ध्रुवके स्थान में आस, काम और निष्काम ये तीनों सन्त प्राप्तहुये तब मैत्रेयजीने कहा कि जो आस, कामथे वे किस मनोरथ से राजपुत्रके पासगये तब पराशरजी बोले कि ऐसा कहना तुमको न चाहिये सन्तोंका

राजपुत्र से कुछ प्रयोजन न था इसीके दृष्टान्त में एक इतिहास राजा जड़भरतका वर्णन करताहूं चित्त लगाकर श्रवणकरो, जड़भरतकी कथा। एक समय राजा भरतजी इन्द्र जो देवतों के राजाहैं उनकी तपस्या करने लगे जब जड़भरतको तपस्या करते तीनमास व्यतीत होगये तब इन्द्रने अपना दर्शन दिया कि जिस को देखकर जड़भरतजी बहुत हँसे और हँसकर यह प्रश्न किया कि आप कौनहैं जो मुझपर कृपाकरके अपने दर्शनदिये और मुझ को कौनसा वरदान दीजियेगा तब इन्द्रने कहा कि मेरे लिये तुमने इतनी कठिन तपस्याकी और मुझको बुलाया और जब मैं तुम्हारे सम्मुख आया तो पूछतेहो कि तुम कौनहो, हेजड़भरत! जो तुम्हारी इच्छाहो वह मैं पूर्णकरूं तब जड़भरतजीने पूछा आप स्वयं किसी वस्तुके देनेकी शक्ति रखते हैं या किसी से दिलावेंगे तब इन्द्रने उत्तरदिया कि मुझको तो यह शक्ति नहीं है परन्तु ब्रह्माजी से प्रार्थना करूंगा वे तुम्हारी कामना पूरी करेंगे तब जड़भरतजीने कहा कि आपसे मेरा मनोरथ सिद्ध न होगा इससे अब मैं ब्रह्माजीकी तपस्या करूंगा इतना कहकर फिर सुमेरु पर्वतकी कन्दरामें जाकर ब्रह्माजीकी तपस्या करनेलगे जब चार मास व्यतीतहुये तब ब्रह्माजीने दर्शन देकर कहा कि हे पुत्र! तू धन्यहै मैं तेरी तपस्या से बहुत प्रसन्नहुआ अपने मनका चाहा हुआ वरदान मांगले तब जड़भरतजीने कहा कि आपके पास दण्डकमण्डलुके सिवाय और कुछ दिखलाई नहीं देता मुझे आप वरदान कहांसे देंगे तब ब्रह्माजी ने कहा कि तुम्हारी जो कुछ इच्छा होवे वह मांगो परन्तु सबका विष्णुही दाताहै तब जड़भरतजीने कहा कि अब आपसे मुझसे कुछ प्रयोजन नहीं है मैं विष्णुजी से आपही मांगलूंगा तब ब्रह्माजी बोले कि मेरा दर्शन निष्फल नहीं होता कुछ तो मांगलो तब जड़भरतने कहा कि आप दयाकरके मुझको यही वरदान दीजिये कि श्रीविष्णुजी का दर्शन प्राप्तहोवे जब आपकी दयासे उनका दर्शन पाऊंगा

तब जो मेरी इच्छा होगी वह उन्हीं से मांगलूंगा तब ब्रह्माजीने
विष्णुके मिलनेका उपदेशकिया तब जड़भरतजी ब्रह्माजी से उ-
पदेश पाकर बदरिकाश्रममें गये और वहां पहुंचकर उस मन्त्रको
जपनेलगे जब जप करते २ छः मास व्यतीतहुये तब श्रीविष्णु
भगवान् चतुर्भुजरूप धारणकिये गरुड़पर सवार हँसतेहुये जड़-
भरतके सम्मुख आके खड़ेहुये तब जड़भरतजीने उठकर और
दण्डवत् प्रणाम करके वेदोक्त विष्णुकी पूजाकी. जब नारायण
उक्त पूजाको गृहण करचुके तो प्रसन्न होकर जड़भरतजी से बोले
कि हे पुत्र ! जो तेरी अभिलाषा होवे वह वरदान मांग मैं सब
विधिसे तेरा मनोरथ सिद्ध करूंगा तब जड़भरत बोले कि इन्द्र
और ब्रह्मामें तो यह शक्ति नहीं है कि वे कुछ देसकें कहिये आप
को यह दान शक्ति कहांसे प्राप्तहुई तब विष्णुभगवान् जड़भरत
को समझाकर बोले कि वे लोग विज्ञान नहीं रखते और न आ-
पही को जानते हैं कि हम कौनहैं और मैं स्वयं प्रकाशरूपहूं मुझ
में दूसरेका प्रवेश नहीं और सम्पूर्ण संसार मेरेही प्रकाश से प्र-
काशितहै तब जड़भरतजी बोले कि मेरा प्रयोजन आपसे भी
सिद्ध न होगा क्योंकि मैं भी अपने स्वरूपको जानताहूं कि मैंही
हूं अब आप जहांसे आये हैं वहां जाइये यह सुनकर विष्णुभग-
वान् बोले कि जो तुम जानते थे तो फिर इतनी कठिन तपस्या
तुमने वृथाकी तब जड़भरतजी बोले कि यह केवल आप लोगों
के तपकी परीक्षा लेनेके लिये मैंने कठिन तप किया था परन्तु
अब निश्चितहुआ कि सिवाय एक परमात्माके और कोई न कुछ
देसका और न कुछ लेसकाहै इससे हे मैत्रेयजी ! जब सन्तोंको
ईश्वर से भी जो तीनलोकका स्वामीहै कुछ प्रयोजन नहीं रहता
तब राजपुत्र से उनका क्या मतलब निकलसक्ता था इस वार्ता
को सुनकर फिर मैत्रेयजीने पराशरजी से पूछा कि महाराज वे
तीनों सन्त किसप्रकार से विदाहुये तब पराशरजीने उत्तरदिया
कि वे तीनों सन्त अपने ज्ञान. काम स्वरूपके पास आये थे तब

मैत्रेयजीने पूछा कि हे महाराज! जब स्वरूप एकही है अन्य नहीं तो फिर उससें आना जाना किसप्रकार होसकाहै तब पराशरजी बोले कि मैं एक इतिहास तुमको सुनाताहूं उसको ध्यानसे सुनो और निश्चयकरो कि स्वरूप में आना जाना भी है । बामदेवजी का इतिहास ॥ एक समय बामदेवजी तपस्याके निमित्त बदरिकाश्रम में मेरे स्थानपर आये तब मैं उनके एक हाथमें दण्ड और दूसरे में कमण्डलु देखकर बहुत हँसा और उनसे पूछा कि हे स्वरूप! जब मुझको तुम्हारे साथ और तुमको मेरे साथ किसी प्रकारका बैर बिरोध नहीं है तब इस दण्डको बिना प्रयोजन क्यों धारण कियेहो तब बामदेवजी बोले कि तुम्हीं मेरे शत्रु हो, मैंतो सर्व स्वरूपहीको देखताहूं परन्तु फिरभी तुम कहतेहो कि कुछ कर तो स्वरूप होवे इससे तुमको दण्ड देना उचित समझके इस दण्डको धारण कियेहूं फिर पराशरजीने पूछा कि कमण्डलु किस लिये धारेहो तब बामदेवजीने कहा कि गोविन्दसे अतिरिक्त पदार्थ मनसे धोनेके लिये यह कमण्डलुहै यदि कहो कि गोविन्द से अतिरिक्त क्या वस्तुहै कमण्डलु भी तो गोविन्दहीका रूपहै, तब पराशरजी बोले, कि आपही कहतेहो कि चराचर, स्थावर, जंगम इत्यादि जितनी सृष्टिहै यह सब विष्णुहीका स्वरूपहै फिर क्या विष्णुको विष्णुही से धोतेहो तब पराशरजी बोले विष्णु भगवान्‌ही सम्पूर्ण जगत्के कर्त्ताहैं यदि ऐसा कहा तो क्या हानि है. फिर पराशरजीने पूछा कि आप कहांसे आते हैं तब बामदेव जीने उत्तर दिया कि न कहीं से आयाहूं न कहीं जाऊंगा, तब पराशरजीने कहा कि मेरे देखतेहुये आप चले आतेहैं अब कहिये आप कौनहैं, तब बामदेवजी बोले कि मैं शिवहूं यह सुनकर पराशरजीने पूछा कि शिव एकहैं या दो तब बामदेवजी इसप्रश्नको और भी निर्वचनीय समझकर न मौन धारणकरके कुछ उत्तर न देसके तब मैंने कहा यदि शिवहै तो तपस्या से क्या प्रयोजनहै तब बामदेवजी बोले कि हे पराशरजी! यदि शिवही है तो जाना

आना और तपस्या भी शिवही है मध्यमें दूसरा कोई नहीं क्योंकि यह शरीर पंचभौतिकहै विचारो तो यह पांचो न कहीं से आये और न कहीं जायँगे सब अपने वर्गमें मिलजाते हैं, तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! इससे निश्चय होताहै कि आना जाना भी स्वरूपही है अब श्रवणकरो कि उक्त तीन सन्तों में एक में दूसरा अवधूत दत्तात्रेय और तीसरा वामदेव यहही ध्रुवके पासगये थे जब उसने सन्तों को आते देखा तो दूरही से दौड़ा और दण्डवत् करके मिला तब पराशरजी बोले, कि हे ध्रुवजी! जो तुमने समझा कि ये सन्त हैं यह भूलहै यह लोग सन्त नहीं हैं जो सन्त होते तो अटल पदवी चाहते तब ध्रुवजी ने उत्तर दिया कि तुमलोग समान भाव रखते हो इससे तुमको सन्त कहते हैं तब अवधूत ने पूछा कि यदि बराबरहै तो पण्डित और मूर्ख में क्या भेदहै तब ध्रुवजी बोले कि, तुम कौन हो तब अवधूत ने कहा कि तुम्हारा रूपहूं फिर ध्रुवने पूछा मैं कौनहूं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तुम मेरा स्वरूप हो तब ध्रुवने फिर भी पूछा कि तुम कौनहो तब अवधूतने उत्तर दिया कि मैं नहींहूं तब ध्रुवजी बोले कि यदि तुम्हीं हो तो तुम्हारा स्वरूप कैसाहै तब अवधूत ने उत्तर दिया कि जैसा तुम्हारा आकार है इस वार्त्ता के सुनने से ध्रुव बहुतही आश्चर्य को प्राप्तहोकर मौन होरहे तब अवधूत नेकहा कि मौन मतहो तब ध्रुवने उत्तर दिया कि आपकी इस वार्ताके सुनने से मेरे चित्तमें इतना सन्देह उत्पन्न हुआ है कि जिससे बुद्धि भ्रमित होकर मुख से कुछ कहा नहीं जाता तब अवधूत ने कहा कि तू इसी ज्ञानके बलसे अटलपदवी चाहता था कि मैं बहुत कालतक अचल रहूंगा, तू स्वयंशक्तिमान् और अचल होना चाहता था, हे मूर्ख! तुझे लाज नहीं आती, तू नहीं जानता कि आत्मा अविनाशी है, यदि तू कहे कि शरीर नाशवान् है तो तुझ को इसतरह समझना चाहिये कि जैसे पुरुष पुराने वस्त्रका त्याग कर नवीन को धारण करलेता है तैसेही आत्मा भी एक शरीर

को त्यागकर दूसरा शरीर धारण करलेता है इससे शरीर भी एकही है हे ध्रुव! मैं नहीं चाहता कि शरीर मेरा सदा बनारहे क्योंकि जो अविनाशी पदार्थ है उसके दृढ़करनेमें कुछ कर्त्तव्य की आवश्यकता नहीं है जब ईश्वर ने तुझपर दयाकी तो तुझने क्या मांगा? यह अटलपदवी ऐसी है जैसे किसी नगर में एक पहाड़ की चोटीपर मन्दिर बनावे, उस मन्दिरको अचलमन समझना चाहिये शरीररूपी पहाड़ में मनरूपी आत्मा भी एक है अर्थात् जब यह पंचभौतिक शरीर पंचत्व को प्राप्त होताहै तब सब तत्त्व अपने अपने वर्ग में मिलजाते हैं और वे अविनाशी हैं इससे शरीर को भी नाशवान् न समझना चाहिये, इससे क्या लाभ हुआ तब ध्रुवजीने पूछा कि हे महाराज! फिर किस उपाय से स्वरूप का ज्ञानहोवे तब अवधूतने उत्तर दिया कि जिस उपाय से अटलपद प्राप्तहुआ है उसी से आत्मा को भी पावोगे तब ध्रुवजी ने प्रश्न किया कि हे महाराज! अबदया करके मुझे उस की प्राप्तिके मार्गका भी उपदेश कीजिये यह सुनकर अवधूत मौन होरहे कुछभी उत्तर न देसके तब वामदेवजीने उत्तर दिया कि आत्मासे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं यह समझनाही उसके मिलने का पूरा रास्ता है तब ध्रुवजीने कहा कि अब कृपापूर्वक मुझे उसका निश्चय कराइये कि जिससे मेरा यह द्वैतभाव निवृत्त होकर जीव और आत्मा दोनों में ऐक्यता प्राप्त होवे तब वामदेवजीने कहा कि पहिले उन संतोंका सत्संग करना चाहिये जो लोग ज्ञान के ज्ञाताहों फिर वेद शास्त्र को श्रवण करके उस पर निश्चय करना और मन से विचारना कि इस शरीर में जो जड़ता को प्राप्त होकर सब चीजों का जाननेवाला है चैतन्य पदार्थ कौनसा है और हे ध्रुवजी! यह भी वतलाओ कि तुम जड़ हो अथवा चैतन्य, तब ध्रुवजीने कहा कि मैं चैतन्य हूं, अब दया पूर्वक मुझे यह समझाइये कि मैं चैतन्यता में क्या वस्तु हूं, तब वामदेवजीने उत्तर दिया कि तुम सत्चित आनन्द स्वरूपहो, फिर

ध्रुवजीने कहा कि अब कृपा करके मुझे वैराग्य का उपदेश कीजिये,यह सुनकर वामदेवजी को कुछ उत्तर न आया और मौन होरहे तब पराशरजी बोले कि हे ध्रुवजी! अपने को कुछ भी न समझना इसीका नाम वैराग्य है जब तुम समझोगे कि मैं ध्रुव नहीं हूं तब भ्रम स्वतः नाश होजावेगा तब ध्रुवजी ने कहा कि हे महाराज ! जो मैं नहींहूं तो कौन है, तब पराशरजी बोले कि मैं हूं, फिर ध्रुवजी ने उत्तर दिया कि जब तुम हो तो मैं कैसे नहीं हूं तब पराशरजीने कहा मैं अद्वितीयहूं, तब ध्रुवजीने कहा यदि आप अद्वितीय हैं तो मैं भी अद्वितीय हूं, तब पराशरजी ने पूछा कि अटल पदवी किसको कहतेहैं तब ध्रुवजी ने उत्तर दिया कि अटल पद कुछपदार्थ नहींहै केवल कथनमात्र है, तब पराशरजी बोले कि जब अटलपद कुछ पदार्थही न था तब तुमने उसकी चाहना क्योंकी, इसप्रकार आपस में वार्तालाप करके तीनों हँसकर कहनेलगे कि हम तीनों यहां क्या करने आये हैं, आत्मा तो स्वयं ब्रह्म है. इससे ध्रुवको क्या कहें, तब ध्रुवजीने कहा कि हे पराशरजी ! मुझको मोक्षकी इच्छा है वह कैसे प्राप्त होवै, तब पराशरजी ने कहा कि हे ध्रुवजी ! वासना का त्यागकरना इसीको मोक्ष कहते हैं जो तुम मोक्ष होना चाहते हो तो वासना का त्याग करो. तब ध्रुवजी ने कहा कि हे महाराज ! वासना तो पिशाच की नाईं मनको पकड़े है उसके दूर होने के लिये कुछ मंत्र उपदेश कीजिये. तब पराशरजीने कहा कि वैराग्य द्वारा इससे निवृत्त हूजिये अर्थात् यह समझिये कि मैं कोई चीज नहीं हूं जब तुमको ऐसा ज्ञान होजायगा तब वासना तुमको स्वयं त्याग देगी, फिर ध्रुवजी ने पूछा कि वैराग्य क्या वस्तु है, तब हे मैत्रेयजी ! मैंने उसको वैराग्यका ऐसा उपदेश किया कि वह अपने आप में न रहा पर [illegible] को नहीं कहताहूं क्योंकि तू मेरा शिष्य नहीं है तब [illegible] मैंने कुछ भक्ति नहीं की इसी [illegible] आप

पराशरजी बोले कि तू ब्राह्मण है इससे मुझको तेरे ऊपर दया आती है तब मैत्रेयजी ने कहा कि यदि आप मुझको ब्राह्मण समझते हैं तो आप भी ब्राह्मण होवेंगे तब पराशरजी बोले कि तुम मेरी बराबरी करते हो मेरे शिष्य नहीं हो इसी से मैं तुम को उसका उपदेश नहीं करता हूं तब मैत्रेयजी ने पूछा कि तुम कौनहो तब पराशरजी ने उत्तर दिया कि तुम अविद्या और अहंकार में फँसेहो इससे मुझको नहीं पहिचानते अब ध्रुवकी कथा श्रवण करो,—तब ध्रुवजी बोले कि मैं बासना का किस प्रकार से त्याग करूं तब पराशरजीने समझाया कि ब्रह्मको अद्वितीय मानना यही वासना का त्याग है तब ध्रुवजीने पूछा कि यदि श्रीगोविन्द अद्वितीय हैं तो मैं क्या हूं तब पराशरजी ने कहा यह निश्चय करो कि श्रीगोविन्दजीही हैं तब ध्रुवजी बोले कि यदि श्रीगोविन्दजीही हैं तो मुझको भजन से क्या प्रयोजन है तब पराशरजीने उत्तर दिया कि भजन करना तपस्या समझो, और जानो कि सर्व मैंही हूं, हे ध्रुवजी! संत लोग अपने में मग्न होकर अटल पदवी से छूटते हैं एक समय शिवजी ने मुझ से कहा कि मैं तुझे तीनों लोकका राज्य देताहूं तब मैंने कहा कि मुझे राज्य से कुछ प्रयोजन नहीं लेऊं या न लेऊं तब शिवजी ने समझाया कि राज्य के लेने से तेरी कोई कामना बाकी न रहेगी मनकी सम्पूर्ण अभिलाषा पूर्ण होजायगी और तू जो चाहेगा वही प्राप्तहोगा तब मैंने कहा कि यदि मैं ऐश्वर्यको प्राप्त हुआ तो तुम तीनों देवताओं को ईर्षा उत्पन्न होगी कि पराशर संसार का परमेश्वर हुआ इससे ऐसी राज्य से मेरा कुछ लाभ नहीं है तब ध्रुवजीने कहा कि हे पराशर! मैं तुमको अटल पदवी देताहूं इसको स्वीकार करो तब पराशरजी ने कहाकि मैं अटल पद लेकर क्या करूं कि जिससे बंधन में फँसना होता है तब ध्रुवजी ने अवधूत से पूछा कि हे महाराज! मैं इस दुःखसे कभी छूटूंगा तब अवधूत से कहा कि इस अटल पदको तुमहीं

ग्रहणकरो अवधूतने उत्तर दिया कि मेरी इच्छा इसके लेने की नहीं है तब वामदेव से कहाकि तुमहीं इसपद को स्वीकार करो उन्होंने उत्तर दिया कि यह मलिन बुद्धि तुम्हारीही है यदि एक शिवरूप है तो चल और अचल दोनों पदवियों को भस्म करके अपने शरीर पर मल लेता है यह उत्तर पाकर ध्रुव उस वन में पागल की तरह पुकार २ कर कहनेलगा कि कोई मुझसे अटल पदको लेलेव तव उस वनके पत्ते और घास बोल उठे कि श्री गोविन्दजी भीतर और बाहर सब जगह व्याप्त हैं अटल किस जगह पर है तब ध्रुव चित्र की तरह पृथ्वी पर गिरपड़ा. पराशर जी बोले तुम यह समझो कि मैं नहीं हूं और जब तुमहीं नहीं हो तब अटल पदवी और तुम सब गोविन्दही हो तब ध्रुवजी ने कहा मेरा रूप क्या है तब अवधूत ने कहा मैं हूं तब ध्रुवजी ने कहा कि तू कौन है अवधूत ने कहा तू, तब ध्रुव आप विषे लीन हुआ पराशरजी ध्रुवकी यह दशा देखकर बोले कि इस बालक का तो अब देहान्त होगया तब अवधूतजीने उत्तर दिया कि जिसने मेरे वचनोंको बुद्धिरूपी श्रवणोंसे सुनाहै वह फिर किसी प्रकार जीता नहीं रहसक्ता उसकी यही व्यवस्था होती है फिर वामदेवजी बोले कि तुमने बड़ा बुरा काम किया कि एक राजपुत्र को मारडाला तब अवधूतने कहा कि राजपुत्र कहां है वह साक्षात् शिवरूप है जैसे अपनी इच्छा से उत्पन्न हुये थे वैसेही चले गये ॥ इति ध्रुवका इतिहास प्रथम अंश समाप्त हुआ ॥

अब दूसरे अंशका प्रारंभ करते हैं ॥

मैत्रेयजी बोले कि हे पराशरजी महाराज! अब दयादृष्टिसे मुझसे वह उपाय वर्णन कीजिये कि जिससे संसारके बंधन से छूटकर मुक्तिको प्राप्तहोऊं तब पराशरजीने कहा कि तेरा मुक्तहोना अति कठिनहै क्योंकि तेरीबुद्धि पुराण और शास्त्रसे पूर्ण रूपसे टिकीहै जो कि केवल भ्रमरूप होकर बंधन के कारण हैं फिर तुमको मुक्ति

किस तरह प्राप्त होगी। तब मैत्रेयजी ने कहा कि हे गुरो! अब मैं शास्त्र का सुनना त्याग कर के और आयुध से सम्पूर्ण इन्द्रियों को काटकर अपने वश में करूंगा तब पराशरजी ने कहा कि ऐसा मत करना हे मैत्रेयजी! इस उपाय से मुक्ति का मिलना बहुत दुर्लभ है, नेत्रों से देखो श्रवण से सुनो जिह्वा से बोलो व जो जी चाहे सो करो परंतु अंतःकरण से किसी कर्म के बंधन में न फँसो बिचार करके देखो कि यह शरीर मांस, रुधिर, अस्थि और मज्जा से बनकर विष्ठा से भराहुआ है इसको काटने व दुःखदेने से क्या लाभहै, तब मैत्रेय जी ने उत्तर दिया कि तुम इस शरीर को विष्ठा कहते हो इसका भेद मुझे अच्छीतरह समझाकर कहो कि जिससे मुझको भी भासित होजावे, तब पराशर जीने कहा कि तुम चित्तलगाकर श्रवण करो मैं तुम्हारी संदेह दूर होनेके लिये इसका भेद अच्छी तरह समझाताहूं, हे मैत्रेय जी! विष्ठातीन प्रकार की होती है अर्थात् खट्टी, मीठी, और कडुई, प्रथम मीठी होती है जब धन आदि का नाश होकर दुःखमिलता है तब वह मिठाई खट्टी होजाती है और जब शरीर को दुःख मिलता है तब वही हे मैत्रेयजी! जिसको ऐसी दशा प्राप्त होती है कि प्रारब्ध के अनुसार शरीर को दुःख प्राप्त होय और वह शरीर अर्थात् सूक्ष्म शरीर से आपको भिन्न जान कर शोक न करे वही सुखी है और उसीको ज्ञानी समझना चाहिये सिद्धान्त यह है कि नारायण के विना और कुछ न देख न सुन न कहु जब अद्वितीय आत्माहै और ऐसा भजन मनविषे तू करेगा तब आपी आप भगवत् रूप होजायगा इससे भजन कर जिससे द्वैत की निवृत्ति होवे तब मैत्रेय जी ने कहा कि जो कुछ कहो वह कथाकेसाथ कहो तब पराशरजी बोले कि आश्चर्य है कि जो कोई कथा कहताहै तू उसके कहने पर ध्यान न देकर निश्चय नहीं करताहै तो कथा कहने से क्या प्रयोजन सिद्ध होगा। तब मैत्रेयजी ने कहा कि कथा और प्रतीति दोनों कर्म हैं

जो पुरुष निश्चय करना चाहे तो कथा के सुननेकी अभिलाषा करे इससे आप मेरे हित के लिये कथा वर्णन कीजिये ॥

अब ध्रुव का इतिहास सम्पूर्ण हुआ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः

अब वेश्याका इतिहास प्रारम्भ करते हैं ॥

पराशर जी बोले कि एकसमय हम, अवधूत और जड़भरत तीनों संत कि जिनके स्वरूप देखने में भिन्न २ परन्तु हृदय एक थे प्रसन्न चित्त साधारण रीति से निष्प्रयोजन वदरिकाश्रम में बैठे हुये आपस में हंसते थे. कि मैत्रेयजी ने अकस्मात् आकर यह कहा कि तुमलोग निष्प्रयोजन क्यों हंसतेहो यह मूर्खों का काम है कि वे वे प्रयोजन भी हंसा करते हैं तव पराशर जीने उत्तर दिया कि हमारे हंसने में पंडित और मूर्ख दोनों न थे, कि उसी समय एक वेश्या जो हिमालय में गलने गई थी आपहुंची और वहां के वसनेवालों से पूछने लगी कि यहां कोई संतभी रहते हैं तब उन लोगों ने कहा कि नगरके बाहर कई एक संत अर्थात् परमहंस रहते हैं इस वचन को सुनकर वह वेश्या प्रसन्न चित्त होकर मेरे पास आई और हम लोगों को हंसतेहुये देखकर बोली कि मैं सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थ व भोग विलासों को त्याग कर अब आप लोगों की शरण में आई हूं इसलिये आपलोग मेरे ऊपर कृपा करके रक्षा कीजिये परन्तु हमलोगों को निष्प्रयोजन हंसताहुआ देखकर बोली कि मैंने विचार कर जाना है कि यह शरीर पंचइन्द्रिय युक्त नहीं है कि तुमलोग इस अनित्य शरीर पर दृष्टि करके व मुझे वेश्या जानकर हंसतेहो इससे निश्चित है कि तुम्हारी दृष्टि में भ्रम हुआ है मैं इसको स्वप्नमात्र जानती हूं, शुभ और अशुभ अहंकार इस शरीर का मन से प्रकट होता है मैंने इस मन को इन सम्पूर्ण वैकारिक पदार्थों से हटाकर अ-

पने वशमें करलियाहै, जो पूछे कि मन क्या है तो इसी संकल्प विकल्प का नाम मन है कि जिससे मुझको वेश्या और अपने को पुरुष मानते हो यह मन किसीतरह वश नहीं होता इसके वश होने का उपाय वर्णन कीजिये.तब वेश्या ने उत्तर दिया कि हे अवधूत! मैं तेरा गुरू हूं इसलिये कि तू मेरे साथ वार्त्तालाप नहीं करसक्ता है इसवाक्य को सुनकर अवधूत ने कहा कि तू क्या पूछती है.तब वेश्या ने कहा कि मुझको गोविन्द जी के भजन का उपदेश कीजिये कि जिससे नारायण जी का भजन करके हिमालय में गलूं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तू आपही कह चुकी है कि मैं तेरा गुरुहूं इससे मैं तुझे क्या उपदेश करूं तब वेश्या ने कहा कि मुझको अपनी सौगन्द है कि जो मैं तुम को शिष्य और अपने को गुरू जानती होऊं जो पूछो कि यदि ऐसा नहीं जानती है तो किस हेतु ऐसा कथन किया कि मैं गुरू हूं तब वेश्या ने उत्तर दिया कि यहवार्त्ता केवल कथनमात्र है इसका कुछ प्रमाण नहीं है तब अवधूत ने पूछा कि यदि कथन मात्र है तो इसका प्रमाण किस हेतु करती है तब वेश्या ने उत्तर दिया कि जिसतरह से मृगतृष्णा में जलका प्रमाण होता है तब अवधूत ने कहा कि तबतो इसमें भ्रम हुआ तब वेश्या बोली की श्री भगवान् से अतिरिक्त जो वाक्य है वह भ्रम है अरु बिचार करके देखती हूं तो भगवान् से बिलग कोई पदार्थ नहीं फिर धर्म कहां रहा जो कुछ है वह उसी ब्रह्म का अवयव है तब अवधूत ने कहा कि तेरे कथन से जाना जाताहै कि जिसतरह भगवान् है उसीतरह भ्रम भी कहा जाता है इसी से तू वेश्या हुई कि द्वैत लेकर वचन कहती है तब वेश्या बोली कि हे अवधूत! मेरे वचन और लक्षणों का द्रष्टा तू किसप्रकार से हुआ कि मेरे वचनों को पकड़ता है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तू मेरी समानता क्यों करती है मैं सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों को त्यागकर अवधूत हुआ हूं तब वेश्या बोली कि बड़े आ-

श्चर्य्य की बात है कि अनगिनत पुरुषों ने मेरे साथ भोग किया और मैंने इस तनको बहुत कुछ धोया परन्तु फिर भी रंचक मात्र निर्मल न हुआ तूने अहंकार पदको धोया इस से क्या किया तब अवधूत ने उत्तर दिया कि क्या कहूं तब वेश्याने पूछा कि बताओ नारायण कौन है तब अवधूतने कहा कि यह ज्ञान तो अति सुगम है जो वस्तु नेत्रों से दृश्यमान है उसीको नारायण कहते हैं तब वेश्याने पूछा कि मैं तुम्हारी इस वाक्य का किस तरह विश्वास करूं, जब किसी समय कोई पुरुष मेरे पास आता और उसी समय यदि दूसरापुरुष भी आजाता तो अपने मन में यह विचारता था कि एकतो मुझ से पहिले से बैठा है अब मैं किसतरह जाऊं इससे यदि दृश्यमान संसार विषे द्वैत का सम्बन्ध नहीं और अद्वैत का भी सम्बन्ध नहीं है तहां किसतरह देखे और कौन देखे इससे तू अवधूत नहीं है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! इसप्रकार वेश्याकी वार्त्ता सुनकर अवधूत अवाक् होगये कुछ उत्तर न देसके तब जड़भरतजी ने उत्तर दिया कि हे वेश्या! तूने जो कहा वह सत्य है, आत्मा में द्रष्टा, दर्शन, दृश्य तीनों पदार्थों में कुछ भी नहीं है इस से यदि देखा तो आपको देखा न और को देखा तब वेश्या ने कहा कि तू जड़भरत नहीं है, देखना बिना त्रिपुटी के नहीं होता अरु वेद भी इसी बातको कथन करते हैं कि आत्मा विषे एक अरु दो नहीं है तब जड़भरतजी बोले कि त्रिपुटी आत्मा से भिन्न कहां है तब वेश्याने उत्तर दिया कि तुम्हारी बुद्धि हँसने योग्यहै। कि भिन्न और अभिन्न दोनोंको देखतेहो, क्यों व्यर्थ हँसतेहो रोदन करो, इसी बुद्धिपर तुम कहतेहो कि हम परमहंस हैं वेश्या की इसवार्ता को सुनकर जड़भरत भी अवाक् होकर कुछ उत्तर न देसके तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! मैंने कुछ भी न कहा क्योंकि वेश्या नारायण और जीव को अभेद कहती थी इस से मैंने मौन होना अच्छा समझा निदान जब

जड़भरत और अवधूत दोनों हारमानकर लज्जित हुये और रोदन करने लगे तब मैंने कहा कि हेमित्रो! रोदन क्यों करते हो रोना और हंसना एकहीहै इससे हँसनेकात्याग और रोदनका ग्रहण करना उचित नहीं है तब वेश्या हंसी और ऐसा आत्मनिरूपण करतीभई कि अज्ञानी के हृदयमें साक्षात् नारायणके विना कुछनहींहै ऐसा निश्चय करके बोली कि मुझे पूर्ण विश्वासहै कि न मैं हूं न यह संसार केवल अद्वितीय आत्माहै यह संसार जो नाशवान् है इस से अपने को निवृत्त करने का कारण नाम और रूपका नाश क- रना है। जब नाम और रूप का नाश होवे तब चित्त कहां जावे, जैसे समुद्र के मध्य जहाज पर बैठाहुआ काग उड़ने पर भी चारों तरफ़ जलही जल देखता है कोई स्थान ऐसा नहीं दिखाई पड़ता कि जहां विश्रामकरे,तब लाचार होकर फिर भी अपने उक्त स्थान पर जा बैठता है.तैसेही यह चित्त भी सांसारिक विषयों के नि- मित्त उड़ता है, अरु यही नामरूप संसार है जब नामरूप को मिथ्या जाना तब कहां जाय, जब यह बात यहांतक पहुंची तब पराशर जी मैत्रेय जी से बोले कि सिद्धान्त यही है कि आत्मा एक है और यही परमभक्ति है.फिर वेश्या बोली कि जिससमय भगवान् में चाहना उत्पन्न हुई उससमय वेश्यापद नाशहोग क्योंकि भगवान् के विना जो कुछ दिखाई देता है वह सब म लिन पदार्थ है जो कोई मूढ़ है वहही इसमें प्रीति करता है औ जो पंडित है वह किञ्चिन्मात्रभी इससे प्रीति नहीं करता॥अरु काल जो सर्वज्ञ है वह धर्म में फांसी डालता है परन्तु मनुष्य को य ज्ञात नहीं होता, इससे जो पुरुष अपने शरीर में दृष्टि रखके न नाधिक्य शोचता है उसको काल अपना ग्रास समझता है; का का भय उससमय नाश होता है जब गोविन्द का भजन कर है, हे पराशर! तुम्हारी दृष्टि संसार में फंसी है इसी से कहते हो मैं पराशरहूं परन्तु यह जानो कि शरीर के मल, कृमि, भस्म तीन रूप हैं, तब मैंने उत्तर दिया कि हे वेश्या! तू कहती है

आत्मा एक है इससे मल, कृमि, भस्म भी तूही है मैं कहां हूं। तब वेश्या बोली कि पद और अपद मुझ में कुछ भी नहीं है, तब मैंने पूछा कि यदि तुझमें नहीं तो किसमें है क्योंकि तेरे बिना और कौन है। तब वेश्या बोली कि तुमको पद और अपद कैसे दिखाई पड़ा, तब मैंने कहा कि जिसतरह तुमको मल, कृमि, भस्म दिखलाई दिये, तबवेश्याने कहा कि तुम तो परमहंस हो, तब मैंने कहा ऐसा मतकहो मुझमें कल्पना नहीं है यह कल्पना तुझी में है कि जिससे अपनेको वेश्या समझती है, अब जाकर अपने शरीरको जला दे क्योंकि तू मुझको परमहंस और अपनेको वेश्या मानती है यदि तेरी ऐसीबुद्धि न होती तो हिमालय में क्यों गलने आती, यदि तुझको इसमें कुछ भ्रम न था तो इससमय तक इसनामको क्यों दृढ़ रक्खा. तूने आपही नामरक्खा और आपही पालना करती है और [illegible] डालती है इसमे तू यहां से जाकर हिमालय में गल,त[illegible]या कि मुझको हिम से [illegible] प्रयोजन है ग[illegible] तु[illegible]चन से होगा. काहे से कि

तब मैत्रेयजी बोले कि आप मेरे गुरु हो मेरे चित्त से अहंकार दूर कीजिये गुरु की कृपा के बिना गर्व का नाश नहीं होसक्ता तब पराशर जी ने कहा कि सत्य कहो अहंकार तेरा नाश करूं या अपना, तब मैत्रेय जी बोले हे महाराज! मेरा अहंकार नाश कीजिये तब पराशर जी ने कहा कि तेरा अहंकार मैं कैसे नाश करूं तब मैत्रेय जी ने कहा कि जो आप मेरा अहंकार दूर नहीं कर सक्के तो अपना आचार्य क्यों नाम रक्खा, तब पराशर जी बोले कि मेरे बचन पर विश्वास करके दूसरी वाक्य मुखसे न निकाल और नित्यानित्य से भी कुछ न पूछ जो मैं तुझसे कहता हूं उसीको सत्य जान तब मैत्रेयजी ने फिर पूछा कि जब-तक मेरा सन्देह निवृत्त न हो तबतक मैं किसतरह चुप रहूं. यदि आप मुझे मरने के डरसे भयभीत करते हैं तो मुझको इस विषय में कुछ भी सन्देह नहीं है, जब मैत्रेयजी ने इसप्रकार उत्तर दिया तब पराशर जी मैत्रेय के बाल पकड़ कर अच्छी तरह से उसे ताड़ना देने लगे. तब मैत्रेय जी हंसकर बोले कि हे पराशर जी! दैत्य भी तो अपनी देह में भक्षण अर्थात् भोजन की चाहना नहीं रखते फिर तुम अपनेको क्यों शासना देतेहो मैं मैत्रेय नाम मात्र भी नहीं हूं इस से आपको न मारो, तब पराशरजी कहनेलगे कि तूने क्या समझा है मैं इसीसमय तुझको भस्मकरताहूं तब मैत्रेय जीने उत्तर दिया कि मैं तुम्हारी शरणमेंहूं मेरीरक्षाकीजिये और दुःख न दीजियेमैंआपका शिष्यहूं तब पराशरजी बोले कि अभी तू कहता था कि आपको आप मारताहै अब थोड़ीहीसी ताड़ना में तुझसे द्वैत का अहंकार प्रकटहुआ, जीव के भयसे क्षमा चाहता है और कहताहै कि मेरी रक्षाकरो यदि तू अपनास्वरूप नहीं जानता और कहताहै कि श्री नारायणहै यह तेरा संपूर्णदंभ इस निमित्तहै कि मैं तुझे परमहंस जानूं हे पाखण्डी। श्रीगोविन्दजी सर्वान्तर्यामी होकर सबके हृदयकी जानते हैं, तुझको दृढ़ निश्चय नहीं है जिसको आत्मा

निश्चितहै उसकी देह यदि नाश भी होजावे परन्तु वह अपने निश्चय से कभी नहीं फिरता, तुम्हब्राह्मण से उस दैत्यके पुत्र प्रह्लाद को धन्य है कि जिसके पिताने अच्छी तरह से उसको ताड़नादी परन्तु वह अपने निश्चय से चलायमान न हुआ तब मैत्रेयजी बोले कि हे महाराज ! दयाकरके उसकी कथा मुझेभी श्रवण कराइये कि किसप्रकार है तब पराशरजीने कहा कि तुम सावधानहो चित्तलगाकर प्रह्लादकी कथा श्रवणकरो मैं तुम्हें विस्तार पूर्वक सुनाताहूं ॥ वेश्या का इतिहास समाप्तहुआ ॥

हरि ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ॥

अब प्रह्लाद का इतिहास प्रारम्भ करतेहैं ॥

नृसिंहभगवान् का प्रत्यक्ष होकर हिरण्यकशिपुको मारना और प्रह्लादको दत्तात्रेय अवधूत का उपदेश करना ॥

पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! अब हम प्रह्लादकी कथा तुमसे वर्णन करते हैं उसको चित्त लगाकर श्रवणकरो. सतयुग में दितिके उदर से हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु दो पुत्र उत्पन्न हुये थे. कि जिनमें हिरण्याक्ष जब वाराहरूप भगवान् के हाथसे मारा गया तब हिरण्यकशिपु उसके राज्यका स्वामी हुआ और रत्नजटित सिंहासन पर बैठकर राज्य करनेलगा और ऐसा प्रतापी हुआ कि तीनों लोकका राज्य उसके अधिकार में आगया इन्द्र. यम. कुबेर. सूर्य और चन्द्रमा इत्यादि सब उसकी आज्ञानुसार अपने २ कार्यों में लीन रहनेलगे. यज्ञों का भाग भी जो देवतालोग पातेथे उसने स्वयं ग्रहण करलिया. तब सब देवतालोग उसके भय से भयभीत होकर स्वर्गलोक [illegible] लगे । राजमन्दिर सबका स्फटिक म[illegible]

जिसमें लाखों सुवर्ण के कलश हीरा, मोती, मूंगा, पन्ना, जवाहिर इत्यादि रत्नों से भरेहुये सुभग स्थानों में अपनी शोभा से प्रकाश करते थे और उसके सजावट की सुन्दरता देखकर मुनियों का भी मन स्थिर होजाताहै ऐसे विचित्र मन्दिरमें प्रह्लाद जीका जन्म हुआ और जब बाल्यावस्था व्यतीत होकर कुछ समझने लगे तब उनके पिता हिरण्यकशिपु ने विद्या पढ़ने के लिये उनको गुरूके पास भेजा व विधिपूर्वक विद्यारम्भ कराके गुरुको सौंप दिया और प्रह्लाद नित्यप्रति पाठशाला को जाने लगे जब इसीतरह कुछ दिन व्यतीतहुये तब एक दिन हिरण्यकशिपुने मद्यपान करतेसमय प्रह्लाद जीको बुलाकर पूछा कि हे पुत्र ! तुमने गुरु से जो संथापाई है वह मुझे सुनाओ तब प्रह्लाद जी बोले कि हे पिताजी ! मैं अपनी संथा आपको सुनाता हूं इसको एकान्त बैठ, मन लगाय श्रवण कीजिये, यह जो सम्पूर्ण संसार देखने और सुनने में आताहै इसको स्वप्न कीनाईं असत्य और मिथ्या भ्रमजानकर मैंने त्यागदिया और एकअद्वितीय ब्रह्म कोही जाना है यह वचन सुनकर हिरण्यकशिपु ने क्रोधसे नेत्र लालकरके दैत्यों के पूज्य शुक्राचार्य जी को जो कि उनके गुरु थे बुलवाभेजा और बोला कि हेब्राह्मण ! तूने बड़ा अनर्थ किया कि हमारे कुल,वंशका घातक जो विष्णुभगवानहै उसका जप करना सिखाकर लड़केको खराबकरादिया मैं जो तीनोंलोकका मालिक हूं तिसको अपने चित्त से बिसार दिया, तब शुक्राचार्य ने हिरण्यकशिपु को समझाया कि हे दैत्येन्द्र ! क्रोध न कीजिये मैं इस बालक को इस बातसे निवृत्त कराके ऐसा उपदेश दूंगा कि प्रतिक्षण तुम्हाराही आराधन किया करैगा इतना सुनकर हिरण्यकशिपु प्रह्लाद से बोला कि हे प्रह्लाद ! तेरे मनरूपी मलिन पात्रपर जो लिखगया है उसको छुरीरूपी गुरू के उपदेशसे छील नहीं तो तेरा नाश होजायगा तब प्रह्लाद जी ने उत्तर दिया कि हे पिता ! मुझको नाश करनेवाला संसार में कौन पुरुष है नाश

रन्तु प्रह्लाद का काम करने से लाचार हैं क्योंकि जब हम उसको पीड़ा देना चाहते हैं तब हमारे मन कांपने लगते हैं तुम इसको बालक समझके इसकी त्वचा कोमल न समझो इसका शरीर पाषाण से भी अधिक कठोर है तब हिरण्यकशिपु ने आज्ञा दी कि पहाड़ के समान बड़े२ हाथी लाकर उनसे इसको खुँदवाडालो राक्षस लोग उसकी आज्ञा पातेही बड़े २ मत्त हाथी जिनके शरीर पहाड़ के समानथे ले आये, और जब वे प्रह्लादपर उसके बध करने के लिये छोड़ेगये तब हाथियों ने प्रह्लाद को सूंड़ि से पकड़कर उसकी छाती पर दांत धरे परन्तु प्रह्लाद ने गोविंद जी के भजन का त्याग न किया निरन्तर भजन में लीन रहा और यही जानता रहा कि यह हाथी नहीं है गोविंदजी हैं इसके प्रतापसे हाथी भी व्याकुल होकर भागे तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि इसको अग्निमें जलादो उसकी आज्ञा पातेही राक्षसों ने बहुतसी लकड़ी, काठ कबाड़ इकट्ठा करके उसमें प्रह्लादको डालकर चारों ओरसे अग्नि लगादी जब अग्नि प्रज्वलित हुई तब प्रह्लाद उसमें समुद्रक्रमिकी नाईं बैठा यह कहता था कि हे पिता ! यहअग्नि और वायु हमको अमृतकेसमान गुणदायक होरहे हैं क्योंकि अग्नि और पवनमेंभी मैंही हूं ये मुझे किसप्रकार जलावें और श्रुति साक्षी है व गीतामेंभी श्रीभगवान्‌ने अर्जुन से कहाहै कि आत्मा आयुध अर्थात् शस्त्रसे नहींकटता और न अग्नि से जलता है अरु यह काष्ठ और अग्नि मुझकोकमल के फूलकी नाईं शीतल जानपड़ते हैं जब हिरण्यकशिपुने देखा कि सम्पूर्ण काष्ठ जलगया और प्रह्लाद निष्कण्टक बैठाहै तब सण्डा, मर्क शुक्राचार्य के दोनों पुत्रों को बुलाकर सैन से समझाया कि इस को अग्निमें से निकालके साम, दाम, दण्ड और विभेद चार प्रकार से शिक्षा दीजिये उन्होंने उसकी आज्ञा पाकर प्रह्लादजी को अग्निसे निकाला और साम, दाम किया अर्थात् हिरण्यकशिपुके सन्मुख लेजाकर विनय किया कि पुत्रपर क्षमा कीजिये

बालकों की भूलपर बड़े लोग सदा से अनुग्रह करते आते हैं, अब हम इसको ऐसा प्रबोध करायेंगे कि फिर कभी विष्णुका नाम अपनी जिह्वा पर न लावेगा यदि यह पुत्र फिर कभी विष्णुका नाम उच्चारण करे तो हम इसको अपनी ज्वालारूपी श्वासों से जलाकर भस्म करदेंगे ऐसा कहकर गुरूके घर लेगये और वहां उनके गुरूने समझाया कि पिता जो कुछ आज्ञाकरे पुत्रको उचितहै उसको अङ्गीकार करे तब प्रह्लादजी ने गुरूसे कहा कि हे गुरूजी! आपकी तो ऐसी बुद्धि न होना चाहिये तब शुक्राचार्यजी ने समझाया कि हे पुत्र! अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष ये चारो पदार्थ गुरू व पिताकी आज्ञा पालन करने मेंही टिके हैं इनसे उनकी आज्ञा अवश्य माननीय है, तब प्रह्लादजी ने उत्तर दिया कि मैं तेरा कथन कुछभी श्रवण न करूंगा एक अद्वितीय विष्णु है दूसरा कोई नहीं इसके बाद किसी दिन शुक्राचार्य किसी कार्य को गये तो उससमय प्रह्लाद अध्ययन-शालाके बालकों को यह उपदेश करनेलगा कि हे राक्षस पुत्रो! तुम लोग पूर्णरूप से निश्चय करो कि मैं और तुम यह कुछ नहीं है केवल एक अद्वितीय ब्रह्मही है तब बालकों ने कहा कि बाल्यावस्था तो खेल कूदका समयहै इसके उपरान्त जब युवा अवस्था आवेगी तब भजन करेंगे, इस अवस्था में कुछ न कहो तब प्रह्लाद जीने कहा कि हे बालको! प्रथम जन्म लेना बहुरि बालक होना तदुपरि युवावस्था फिर कालग्रासके समान वृद्धा प्राप्त होती है परन्तु ये सम्पूर्ण अवस्थायें दुःख का हेतु हैं इन में सुख कदापि नहीं विचारदृष्टि से देखो कि प्रथम जन्म लेना कैसा क्लेश है फिर बाल अवस्था है फिर यौवन अवस्था कैसी दुस्तर है कि जो भीतर, बाहर से सब अङ्गों को प्रफुल्लित करके परमार्थ के मार्ग पर जाने से रोंकती है श्रवणसे शब्दादि व नेत्रों से अच्छी चीज़ों का देखना और घ्राणसे महक का सूंघना यह सम्पूर्ण विषय घेरे रहते हैं किसी समय शान्ति अर्थात् सुख

नहीं मिलता और जब यौवनावस्था के पीछे जरा अवस्था आती है तब निराश होकर अवधि व्यतीत होने से पश्चात्ताप करता है कि हाय हाय मैंने कुछ न किया और अब निर्बल होगया इस से कुछ नहीं होसका फिर जब इसके बीतने पर मृत्यु को प्राप्त होताहै तब संसार से सिवाय पश्चात्तापके और कुछ हाथ नहीं लगता जब गर्भ में होताहै तब उसके कष्ट से व्याकुल होकर यह कहता है कि यह क्या दुःख है जो मैंने अपने को इस में फँसा रक्खा है और आवागमन में पड़ाहूं अब जो इस महा भवसागरसे छूटूँ तो फिर देहाभिमान न करूंगा, फिर जब समय पाकर उदर से बाहर होताहै तब कहा कहा कहके कहरता या रोदन करता (कि कहां आया) और समय समय पर यह कहता है कि अभी मैं बालकहूं, अब जवानहूं, अब वृद्ध हुआ इसी विचार में आयु व्यतीत होजाती और प्रयोजन सिद्ध नहीं होता अर्थात् तत्त्वको नहीं पहिंचानता कि मेरा आदि, अन्त क्या है मैं कहा आया और कहां जाऊंगा ऐसी व्यवस्था उसकी होती है जैसे किसी पुरुष को चिन्तामणि प्राप्त होनेपर वह उस मणि के गुण न जानकर कीच में फेंकदेवे इसी तरह इस मनुष्यशरीर को पाकर उसकी बड़ाई को न जाना तो शरीर पाने से क्या लाभ हुआ. भूख, प्यास, गर्मी.सर्दी इसी को दुःख जानता है परन्तु दुःख के कारण को नहीं पहिंचानता कि किस तरह प्राप्त हुआ. यह समझना चाहिये कि यह शरीर मांस, त्वचा, अस्थि. मज्जा और रुधिर के एकत्रित होनेका विकार है, हे बालको ! शरीर से अभिमान को त्यागकर यही जानो कि विष्णुही सर्वव्यापी है और अन्तर, बाहर सब उसी का प्रकाश है. पिता, पुत्र, राज्य, धन. आश्रम, बाल्यावस्था, युवा और बुढ़ापा यह सब इन शरीरही के विकार हैं परन्तु आत्मा इनसे निर्लेप होकर अपनेही प्रकाश से प्रकाशितहै वह शरीर के सम्बन्धमें नहीं मानता, जैसे स्फटिकमें नानाप्रकार के रंग दिखाई

देते हैं परन्तु वास्तव में उसमें कोई रंग नहीं है वह बिलकुल निर्मल व विकार रहित है, इसी तरह आत्मा में भी दृश्यमान संसार दिखाई देता है परन्तु शरीर की कोई भी अवस्था उसमें नहीं है, क्योंकि वह स्वयंप्रकाशवान् है. केवल यह नाम रूप भ्रम है कि मनुष्य इससे प्रीति करके जन्म मरण के बंधन में पड़ता है. इससे हे बालको ! तुमको उचित है कि इसी समय नारायण में परायण होकर यह निश्चय करो कि वह ईश्वर बाल, युवा, वृद्धा इनतीनों से न्यारा रहकर सबका साक्षी है और उसी के तेज से सम्पूर्ण जगत् प्रकाशित है इन सांसारिक विकारों का उसमें लेश मात्र भी नहीं है यदि ऐसा निश्चय करोगे तो तुम आपही विष्णु होजावोगे, यह संसार के बंधनों से जो भ्रम रूप हैं मुक्त होकर तीनों ताप अर्थात् आध्यात्मिक,आधिभौतिक और अधिदैविकसे बचोगे क्योंकि ये सम्पूर्ण शरीर कीही उपाधियां हैं, जब शरीरका अभिमान नाश होजाता है तब सब दुःखों से छूटता है, इससे द्वैत का विचार मन से त्याग करो जो कुछ देखा और सुना है वह सब विष्णु है, दूसरा कोई नहीं जिसने एक ब्रह्म को जाना है वही आवागमन से छूटा है इससे तुम लोग गोविन्दजी का भजन करो. पराशरजी बोले कि उसी समय शुक्राचार्यजी आगये और उन्हों ने देखा कि अध्ययन शालाके कुलबालकों के मुख से यह शब्द निकलरहा है कि हम विष्णु हैं हम विष्णु हैं इस चरित्र को देखकर शुक्राचार्य अत्यन्त विस्मित हुये और चिन्ता करने लगे कि अभी तक तो केवल प्रह्लादही यह वचन कहताथा परन्तु अब सम्पूर्ण बालकों ने इसी वचन की धारणा धारणकीहै कि हम विष्णुहैं हम विष्णु हैं यह बड़ा अनर्थ हुआ. यह विचार मनमें ठान हिरण्यकशिपु के निकट पहुंचकर सम्पूर्ण व्यवस्था वर्णन की इसको सुनकर हिरण्यकशिपु को अति प्रचण्ड क्रोध उत्पन्न हुआ कि जिसको संभाल न सका और शुक्राचार्य को साथ लेकर उसी समय पाठ-

न करो नहीं तो तुम्हारा नाश होवेगा, पराशरजी बोले कि तू भी भयभीत होवे देख गुरू ऐसे होते हैं, शुक्राचार्य तो एकही शक्ति रखते थे परन्तु मुझमें सहस्र शक्तियां विद्यमानहैं शुक्राचार्य को मैंने ही संथा दी है, तब मैत्रेय जी ने पूछा कि शुक्राचार्य को भी यही उपदेश दिया था जो कि प्रह्लाद वर्णनकरताहै तब पराशरजीबोले कि जब मैं शुक्राचार्यको ज्ञानसिखाताथा तब वह उस ज्ञान से प्रीति नहीं करताथा क्योंकि उसका मन कामना में टिकाथा जब मैं उनसे कहता कि निर्वाण शास्त्र सीखो तब वह उत्तर देताथा कि मुझको वह विद्यासिखाइये कि जिससे किसीको मारण करूं और किसीको जिलाऊं. हे मित्र! तू ऐसे गुरू से सदा भय भीत रह, तब मैत्रेय ने कहा कि मैं क्यों डरूं जब आप से मेरे गुरू हैं जिनमें मारना और जिलाना दोनों विद्यमान हैं तब पराशर जी बोले कि न्यायशास्त्र में लिखा है कि गुरू, अतीत, राजा, सर्प और व्याघ्र इनसे सदा भयभीत रहना चाहिये, यह कभी न समझना चाहिये कि ये हमारे मित्र हैं तुम मुझे क्या समझते हो, मैं कौन हूं, मैं ऐसा हूं कि यदि कहो तो तुमको नाश करडालूं तब मैत्रेय जी ने कहा कि मैं आपकी शरणहूं अब प्रह्लाद की कथा कहिये तब पराशर जी बोले कि तू मेरा पुत्र है मुझसे किसीप्रकार का डर न मानके प्रह्लाद की कथा निडर होके श्रवणकर। तब प्रह्लाद जीने शुक्राचार्य से कहा कि हे महाभाग! गुरु ज्ञानि हमारी सर्वसृष्टि में निन्दित है और तीनों लोक में प्रकट है इससे किसतरह प्रतीति करूं जो आप कहते हैं कि पिता गुरू के समान है यह आपका कथन मिथ्या है क्योंकि पिता तो केवल पालन, पोषण का अधिकारी है किन्तु परमार्थ का नहीं है, जो पुत्रपर पिता की अति अनुग्रह होगी तो इन्द्रियों की पालनाही अच्छी रीति से करेगा, तुम्हारी बुद्धि भ्रम से युक्त होरही है इसी से ऐसे पिताको गुरू समान कहते हो, और गुरूजी आपका वचन सत्य भी है कि पिता गुरू के समान है परन्तु

पिता का ध्यान करना योग्य नहीं है मैं सिवाय जनार्दन भगवान् के किसी को नहीं जानता और आप कहते हैं कि भगवान् से तुझको क्या प्रयोजन है यह अति असंगत वचन है, जो परमार्थ को पहिचानता है वह ऐसा कदापि कथन नहीं करता इस तुम्हारी वार्ता से निश्चित होताहै कि तुम्हारी बुद्धि मंदता को प्राप्त होगई. तब शुक्राचार्य क्षणमात्र अवाक् होरहे फिर विचार कर बोले कि तू जो इतना गोबिन्द जी का भजन करताहै इससे तेरी क्या अभिलाषा है जो तेरा बाञ्छित होवे उसको तेरा पिता भी पूर्ण करनेकी शक्ति रखता है, मरीचि इत्यादिक सब ऋषीश्वर जिन चार पदार्थों के मिलने के लिये भजन करते हैं उन चारों पदार्थों को तुम्हारा पिता भी देने की सामर्थ्य रखता है, इससे उचितहै कि उसकी शरणमें जावो और उसकी शिक्षा को अंगीकार करो तब प्रह्लाद जीने कहा कि आप मेरे अन्तःकरण की वार्ता कैसे जान सक्ते हैं, भजन और ध्यान से यही प्रयोजन है कि अपने मूल को प्राप्त होऊं जिससमय अपने तत्त्व को प्राप्त हुआ तब सम्पूर्ण बन्धनों से छूट जाता है, गोविन्द के भजनही से सम पदकी प्राप्ति होती है, भजन श्रीभगवान् का पूर्ण रूप है तब शुक्राचार्य्य ने कहा कि हे प्रह्लाद! क्या तुम को वह समय भूल गया कि अग्नि में जलते हुये से मैंने तुम्हारी रक्षा की थी, अब फिर तेरी बुद्धि पहिले की सी आगई यदि मैं ऐसा जानता तो उसी समय आज्ञा देकर तुझे भस्म करवा डालता, अब जो तू मेरी शिक्षा न मानेगा तो इसीसमय तुझको नाशकर डालूंगा तब प्रह्लाद ने उत्तर दिया कि किसी में इतनी शक्ति नहीं है कि किसी को मार अथवा जिला सके, सब जगत् की रक्षा और नाश करना केवल उन्हीं भगवान् के हाथ है तब शुक्राचार्य ने क्रोधित होकर मुखसे अग्नि निकाली और चाहा कि प्रह्लाद को भस्म करडालूं, इस चरित्र को प्रह्लाद जी ने देखा कि यह मुझे भस्म करना चाहताहै तब विष्णु भगवान् से प्रार्थना

की कि हे अनन्त देव ! मुझको इस ब्राह्मण के हाथ से बचाइये फिर विचार किया कि जब जगद्गुरु विष्णु जी सम्पूर्ण जगत् जो चराचर है और जहांतक दृष्टि गोचर है उसमें विद्यमान है तब ब्राह्मण में द्वैत कहांरहा और जो विष्णुही है तो किस वस्तु का डर है। जब शुक्राचार्य अग्निमय अपनी निकालीहुई श्वास को फिर अन्तर न लेजासका तब शोचा कि श्वास के विना जीना कठिन है क्योंकि जीवन श्वासही से है यह विचार मन में ठान प्रह्लाद की शरण में प्राप्त हुआ और विनती करने लगा कि मैं तुम्हारा पुरोहित और ब्राह्मण हूं तुम चिरजीवी हो और तुम्हारी आयुबढ़े अब हमारी रक्षा कीजिये हे मैत्रेय जी ! शुक्राचार्य ने प्रथम जितना क्रोध किया था उतनीही जब अन्त समय को अवस्था पहुंची तब स्तुति करनी पड़ी परन्तु प्रह्लाद दोनों अवस्था अर्थात् निन्दा, स्तुति में सदा एक रस रहा इससे कुछ भी हर्ष शोक को प्राप्त न हुआ, मैत्रेयजी ने यह वार्ता सुनकर उत्तर दिया कि तुम अपना और पराया समझतेहो तब पराशरजी ने कहा कि मैं औरों की तरह किसीको भजन और उपासना का उपदेश नहीं करताहूं कि भजनकर अथवा उपासना, तब मैत्रेयजी ने कहा कि जो मैं कुछ न करूं तो मेरा कार्य किसतरह सिद्ध होवे और मूलको कैसे प्राप्त होऊं तब पराशर जी बोले कि तू आपही मूलहै मूलके पहुंचनेकी इच्छा किसकारणसे करताहै, नारायणसे व्यतिरेक जो भ्रम करके मानाहै उसे तू जबतक त्याग न करेगा तबतक तत्त्वकी प्राप्ति अतिदुर्लभहै, मैत्रेयजीने कहा कि कृपाकरके मुझको यह समझाइये कि भजन क्या चीज है तब पराशरजी बोले कि अपना और दूसरे का द्वैत चित्त से दूर करके सब में समान भाव देखना इसी को भजन कहते हैं और यही अद्वैत भजन भी कहलाता है इससे अधिक करने की कुछ आवश्यकता नहीं है फिर मैत्रेयजी ने कहा कि अब प्रह्लादचरित्र वर्णन कीजिये तब पराशर जी बोले कि मैं पंडित नहीं हूं न दूसरी

कथा या कोई चरित्र जानता हूं जो किसी दूसरी विधिसे प्रह्लाद-चरित्र का निरूपण करसकूं मैं केवल यही जानता हूं कि इतना ही समझनाठीक है कि आत्मा के सिवाय और कुछ भी नहीं है इसी को प्रह्लादचरित्र समझो तब मैत्रेयजीने कहा कि जो आप पंडित नहीं हैं तो मूर्ख होगे तब पराशरजीने उत्तर दिया कि जब पंडित नहीं तब मूर्खही कहां है तब मैत्रेयजी ने पूछा कि जब तुम दोनों में से कोई नहीं तो फिर कौनहो तब पराश-रजी बोले कि जो कुछ है सो यहीहै तब मैत्रेयजीने पूछा कि मैं तुम्हारा आदि अंत कुछ भी नहीं जानताहूं इसको समझाकर मेरा संदेह निवृत्त कीजिये कि आपका आदि, अन्त क्याहै तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय! चारोंवेद और चार मुखके ब्रह्मा भी मेरा आदि अन्त नहीं जानते क्योंकि मैंही सबका आदि, अर्थात् उत्पत्तिका कारणहूं इससे तुम क्या जानो तब मैत्रेयजी ने कहा कि अब मैं अतीत होताहूं तब पराशरजी बोले कि यदि तूने अपने चित्त से ऐसा चिन्तवन किया तो तुझको धन्य है क्योंकि मनुष्य की देह धारण करके जिसने श्रीगोविन्दजी का भजन न किया तो पीछे सिवाय पछितावे के और कुछ हाथ नहीं लगता, मैं भी यही चाहताहूं कि सब अतीत होवें तब मैत्रेयजीने पूछा कि मुझे आश्रम बतलाइये कि मैं उनमें प्रवृत्तहोऊं तब परा-शरजी बोले कि तू दंडी, संन्यासी हो तब मैत्रेयजी पूछा कि हे महाराज! जबतक ब्रह्मचर्य और वानप्रस्थ न होवे संन्यास किस प्रकार धारण करसक्ता है परन्तु मेरी समझ में आता है कि सं-न्यास से आशय सर्व वस्तुओं का त्यागना है, परन्तु कर्मों का त्याग विना कर्म के नहीं होसक्ता तब पराशरजी बोले कि तूने यह शोचा है कि मैं जीव हूं अब अतीत होऊं इनदोनोंका त्याग करनाही कर्मोंका त्यागहै तब मैत्रेयजीने कहा कि जो मैं अहंकार का त्याग करूं तो फिर क्याकरूं तब पराशरजी बोले कि जो तू अतीत होवे तो मैं जानूं कि तू मेरी शरणमें आया है जबतक तू

कुटुम्ब और सांसारिक व्यवहार में लगाहै तबतक मुझको तेरा विश्वास नहीं है कि तू संन्यासी होगा, तब मैत्रेयजीने कहा कि जो मैं कहताहूं कि अतीत होऊं तब कहतेहो कि संन्यासीहोवो, मेरे एक शिखा और यज्ञोपवीतहै, इसके भी त्याग कराने की तुम्हारी इच्छाहै, यह अब मुझको करना पड़ा तब पराशरजी बोले कि तुम सत्य कहो यह बुद्धि कहां से पाई इससे जानाजाता है कि तुम इसी क्षण तीनोंलोकों से उड़ना चाहतेहो, हे मैत्रेयजी! जिस समय मनुष्य गृहस्थी से मुक्त होने के लिये अतीत के पास जाकरमुक्त होने के लिये प्रश्न करताहै और अतीत कहताहै कि अतीत हो तब शिष्य कहताहै कि अतीत होने और गृहस्थी के त्याग करने से क्या लाभ होगा, तब अतीत कहता है कि आप से आप भगवान् के दर्शन होंगे, और शिष्य वैसाही करता है, परन्तु यह विचार नहीं करता कि जब अतीत होने को भगवान् के दर्शन नहीं पाये तो मुझे किस तरह प्राप्त होंगे, अतीत का केवल यही प्रयोजन है कि जो यह भी अतीत होजावेगा तो लोग कहेंगे कि यह अमुक अतीत का शिष्य है—तब मैत्रेयजी बोले कि मैं अब सब छोड़ के योग करूंगा, क्योंकि योग करने से (चित्त) कामना जलजाते हैं, और योगवाशिष्ठ तुम्हारे पितामह भी योगकी उपदेश करतेहैं, पराशरजी ने कहा कि इससे क्या भला है, तू योग कर जिससे यह तेरा शरीर सदा बना रहे, परन्तु यह शरीर नरक का मन्दिर है, जो पापी है उसको नरक प्राप्त होता है. तू भी पापी है योग कर, और सदा नरक वास कर, हे मैत्रेयजी! जब चाहना मिटगई तब शरीर रहे या न रहे, यदि तेरी इच्छा है कि यह शरीर सदा बना रहे तो जबतक इच्छा शरीर का परित्याग न करे, यह सब छोटे बड़े तेरे शरीर हैं किस कारण से कि यही इच्छा शरीर का बीज है, इससे चाहिये कि ऐसा काम करो कि जिससे शरीर न रहे, मैत्रेयजी बोले कि तुम से कहताहूं कि अतीत करो परन्तु तुम

नहीं करते इसमें मेरा क्या बश है तब पराशरजी ने कहा कि ये जो अतीत हैं इनका पंथ ले, और अतीत हो जब तू अतीत होवेगा तब मन में अहंकार की अग्नि से जलेगा और जब अहंकार की अग्नि से जला तब सुख चैन कैसे पावेगा, कि गोविन्द का भजनकरे, तब मैत्रेय ने कहा फिर क्या करूं पराशर ने कहा कि अतीत हो यही कर तब मैत्रेयजी ने कहा कि अब मुझको अतीत का धर्म समझाइये, तब पराशरजी बोले कि मैं अबतक अतीत नहीं हुआ तो तुमको उसका धर्म कैसे बताऊं, जो गृहस्थी को त्याग करे उसको अतीत कहते हैं परन्तु मैं इस को नहीं मानता, अतीत वह है जो सूक्ष्म और स्थूल दोनों से अतीत हुआ है, तब मैत्रेयजी ने पूछा कि सूक्ष्म और स्थूल क्या वस्तु है तब पराशरजी बोले कि जब पिता, माता, पुत्र, शत्रु, और मित्र इन सबका त्यागकर अतीत हुआ तब सूक्ष्म में बंध हुआ, अर्थात् कहता है कि मैं परम त्यागी हूं मैंने सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों को त्याग करके गोविन्दका पूर्ण विश्वास रक्खा है, अब मैं जिससे कहूं कि तेरे पुत्रहो उसको पुत्र प्राप्तहो और जिससे कहूं कि तू मरजा वह मरजाय अर्थात् आशिष, और शाप दोनों की सामर्थ्य है, लोग मुझको परम तपस्वी कहते हैं, जब शरीर का त्याग करूंगा तब स्वर्गलोक प्राप्त होवेगा इससे हे मैत्रेय! स्वरूप कीचाह मिटगई, और आप अपने महत्त्व में बँधा हुआ, इससे ऐसे अतीत होने की तेरी इच्छा है तो अच्छाहै, तुझ को लोक परलोक की कामना प्राप्त होती है, मैं जानता हूं कि तेरी आयु ऋषिपुत्रों में व्यतीत हुई है, इसीकारण से तेरे मन में अतीत होनेकी उपजी है पर जितने ऋषिपुत्र देखता हूं सब अहंकार में पड़े जल रहे हैं कोई अपने को ज्ञानी और कोई तपस्वी कहता है परन्तु सब झूंठे अहंकार में बँधे हैं, परन्तु अहंकार आत्मा को त्याग नहीं करता, इससे तूभी क्यों अतीत नहीं होता, तब पराशरजीने कहा कि गोविंद गोविंद कहो संसार कहां

है तव मैत्रेयजी बोले कि इस कहने से क्या प्रयोजन और कर्त्तव्य है तव पराशरजी ने कहा कि यही कर्त्तव्य है कि कारण कुछ नहीं, तब मैत्रेयजी ने कहा कि जब मैं कहूं कि सर्व गोविंद है तब तू प्रसन्न होवे तब पराशरजी बोले कि मैं इस कहने से प्रसन्न नहीं होता, जब तैंने आपको जाना तब भगवान् कहां और पंथ कहां रहा इस कथन से क्या सिद्ध हुआ कि, आप को न जाना और कहै कि संत हूं, इससे जो स्वरूप है तो संत असन्त कहां, अब प्रह्लादचरित्र सुनो, उससमय शुक्राचार्य अपना जीव प्रह्लाद से छुड़ाकर भागा तब हिरण्यकशिपुने अपने पुत्र प्रह्लाद को बुलाकर पूछा कि तेरे पास क्या शक्ति है जो किसी उपाय से भी नहीं माराजाता यह मन्त्र किससे सीखा है, तब प्रह्लाद पिता के चरणों की वंदना करके बोला कि हे पिता ! मैंने कोई मन्त्र नहीं सीखा केवल यही कारण है कि श्री विष्णु जी को सर्व ब्रह्मांड में समान देखता हूं आत्मा से अतिरिक्त और दूसरामन्त्र नहीं सीखाहै काहेसे कि सम्पूर्ण संसारमें आत्मा को पूर्ण जानकर तीनों तापों से छूटा हूं किसकारण से कि जिस पुरुष ने सारग्रहण किया उसको असार झूठ कैसे दुःख देसक्ता है हिरण्यकशिपुने इसवचन को सुनकर इतना क्रोधयुक्त हुआ कि नेत्रों के सन्मुख अन्धकार छागया और जिसस्थान पर स्थित था वह पृथ्वी से सौ योजन अर्थात् चारसौ कोश ऊंचा था वहां से राक्षसों को आज्ञा देताभया कि प्रह्लाद को इसीसमय कोई नीचे गिरादेवे, राक्षसों ने आज्ञा पातेही तुरन्त प्रह्लाद को उस स्थान से नीचे गिरादिया परन्तु गिरने के समय प्रह्लाद अपने मनमें यह विचारनेलगा कि जनार्दन विना और कुछ नहीं है इस विचार से उसको कुछभी परिश्रम न हुआ तब प्रह्लाद को पर्वत के शिखरपर लेजाकर वहां से गिराया कि जिसके गिरने से पृथ्वी कांपने लगी, और यह विचार किया कि यह परमेश्वर का भक्त मेरे ऊपर गिरता है मैं दोनों हाथों से इसको उछंग

उठालूं तब केशवजी अपने दोनों हाथों से उनको लेकर पृथ्वी पर बिठाकर बोले कि यह मेरी अमानत है इसको भलेप्रकार से रखना और प्रह्लाद से बोले कि जो तेरी इच्छा होवे वह मांग मैं दूंगा तब प्रह्लाद ने श्रीविष्णु भगवान् से कहा कि हे महाराज ! वह सेवक नहीं है जो अपने स्वामी से कुछ मांगे आपतो स्वयं अन्तर्यामी हैं हृदय के भीतर की जानते हैं यदि मैं ऐसा कहूं कि मेरे पिताका नाशकरो तो मुझको लाज आतीहै क्योंकि सम्पूर्ण स्थावर जंगम, पशु और पक्षी तुम्हीं हो हिरण्यकशिपु कहां है कहीं हिरण्यकशिपु होकर कहतेहो कि विष्णुमत कहो और कहीं विष्णुहोकर कहतेहो कि विष्णुही है, मैं तुमको भलेप्रकार जानता हूं और आपसे यह इच्छा करताहूं कि तुम्हारे सिवाय और किसीको न जानूं यदि कहो कि तुम्हारा उपकार मेरे ऊपर है तो मैं प्रतीति नहीं करता, किसकारण से कि सर्व तूहीहै तेरा उपकार किसपर है। जब विष्णुजीने देखा कि कुछ नहीं मांगता निष्काम है तब आज्ञा करतेहुये कि नेत्रों को मूंद जब प्रह्लादने नेत्र बन्द करके फिर खोले तो अपने को अपने पिता के पास खड़ा देखा तब हिरण्यकशिपु बड़े आश्चर्य को प्राप्त होकर संभर नाम राक्षस को बुलाके बोला कि यह बालक किसीप्रकार नहीं मरता क्योंकि यह माया का भजन करता है अपनी आत्मा को नहीं जानता केवल माया के प्रताप से इसकी रक्षा होती है इससे तू इसको मन्त्र के बल से नाश करडाल यह आज्ञा पाकर संभर राक्षस ने करोड़ों उपाय और मन्त्र यंत्र इत्यादि किये कि प्रह्लाद को भस्म करडालूं परन्तु प्रह्लाद को कुछ भी भासित न हुआ और यही कहता रहा कि संभर भी एक पूर्ण आत्माहै तब मधुसूदन भगवान् ने चक्र को आज्ञा दी कि प्रह्लाद की रक्षा करके संभर का शिर काटडालो जब सुदर्शन चक्र ने विष्णुभगवान् की आज्ञा पाकर प्रह्लाद की रक्षा और संभर दैत्य का शिर काटडाला तब हिरण्यकशिपु इस वृत्तान्त को देखकर मूर्त्ति की तरह स्थित

होके विस्मय युक्त यह वचन बोला कि इसको मेरे सन्मुख से दूर करो, और पवन को आज्ञा दी कि इसको सुखा डालो, अथवा किसी दूसरे द्वीप में लेजाकर छोड़ आओ, परन्तु प्रह्लाद भगवान् की शरण में था इससे वायु न उड़ासकी और न उन को कुछ कष्टही देसकी तब प्रह्लाद वहांसे भागकर शुक्राचार्य के घरमें गया और हिरण्यकशिपु उनका पीछा करता हुआ चला गया और शुक्राचार्य के मकान से उन्हें फेरलाया फिर उनके केश पकड़कर बहुत ताड़ना दी परंतु प्रह्लाद अपनी प्रतीति से किञ्चिन्मात्र भी चलायमान न हुआ और यही जानतारहा कि भगवान् से अतिरिक्तकोई पदार्थ नहीं है दुःख और सुख दोनों में वहीहै जब हिरण्यकशिपु ने अपने हाथ की गदासे प्रह्लाद पर प्रहार किया तब उस गदा के तुरन्तही सातखंड होगये, तब शुक्राचार्य ने कहा कि हे हिरण्यकशिपु तूने इतनी शासना पुत्रको करी परन्तु तेरी नानाप्रकार की शासनाओं से उसको कुछ भी क्लेश न हुआ वह जैसे का तैसा बना है इससे निश्चित है कि उसने तत्त्व को पाया है अब उसकी शासना त्यागदे तब हिरण्यकशिपु बोला कि यह जबतक दूसरे का निश्चय त्याग न करेगा तब तक में उसके नाश करने की चिन्ता को किसी प्रकार त्याग न करूंगा, क्या तू भी कालके वश हुआहै जो इसप्रकार उपदेश करताहै. मैं तो तीनों लोकका राजाहूं इसने मेरे सिवाय किसको देखाहै जो कहताहै कि विष्णुहै, जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों का प्रकाशक मैं ही हूं, नहीं जानता कि इसने कौन से विष्णु का निश्चय किया है, इसके इस आचरण से प्रतीत होताहै कि यह मेरे वीर्यसे उत्पन्नही नहीं हुआहै यदि यह मेरा पुत्र होता तो मुझ को अवश्य जानता इसतरह वार्त्तालाप करके फिर प्रह्लादसे बोला कि हे प्रह्लाद ! अपना धर्म त्यागकर दूसरे को जानना यह कौन मार्ग है तूने जो कुछ गुरु से पढ़ाहै वह मुझे सुनाव तब प्रह्लादने हाथ जोड़कर नम्रता पूर्वक हिरण्यकशिपु अपने पिताको उत्तर

दिया कि हे पिताजी! जो कुछ मैंने पढ़ा है यह सब गुरुजीका ही उपदेश है परन्तु मैंने असार त्यागकर उसमें से सारांश को गृहण करलिया है उन्होंने मुझको बहुत कुछ उपदेश दिया कि तुम्हारा पिता अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थोंका दाता है पर मैंने परमार्थपर दृष्टि की, अर्थात् यह समझा कि जनार्दन विना और कुछ भी नहीं है और जब वही है तब इन चारों पदार्थों से क्या प्रयोजन है, इस से हे पिताजी! इसबात का तुम भी निश्चय करो कि मैं और तुम कुछ वस्तु नहीं केवल विष्णुहीजी हैं अविद्या का त्याग करके विद्या में प्रवृत्त हूजिये और इस पंचभौतिक शरीर को मिथ्या व नाशवान् जानकर ईश्वर को नाश रहित व सर्वव्यापी जानो, यह पूर्ण निश्चय करो तब हिरण्यकशिपु ने उत्तर दिया कि अपना सम्पूर्ण राज्य तुझको देता हूं अब तू परमेश्वर को त्याग के मेरा भजन कर तब प्रह्लाद ने कहा कि मैंने राज्य और सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों से विशेषकर गोविन्दजीही को जाना है मैं राज्य लेकर उस विष्णुको त्यागकरूं और पतितहोऊं हे पिताजी! विश्वास मानों कि स्थावर, जंगम सब के विषे एक विष्णु आत्मा व्याप्त है और शम, निर्वाण, चैतन्य और संन्यास ये सब उसी से हैं, जिसने ऐसा जाना सो भगवद्रूपहै, हे पिता! मेरी यही इच्छा है कि भगवान् मेरे ऊपर प्रसन्न होवें॥ अब पराशरजी मैत्रेयजी से कहते हैं कि हे मैत्रेय! तुमने कभी ऐसा प्रश्न मुझसे न किया कि जिससे मैं प्रसन्न होता तुझ ब्राह्मण से तो वह राक्षस का पुत्र धन्य है. तब मैत्रेयजी ने कहा कि हे गुरो! प्रह्लाद केवल जीभ मात्र से कहता था परन्तु वह इसका सुख नहीं जानता था काहे ते कि संत सर्व विषे सम हैं ताते पिता को दूसरा जानना और यह कहना कि भगवान्हीहैं; यह संतोंका मार्ग नहीं है जे कोई पुरुष अहंकार रहित और समहैं उनको परम सुखहै, हे गुरो! यदि मैं कहूं कि अद्वितीय हों तो लज्जा प्राप्त होती है

क्योंकि इस कहने से आगे क्या न था, जो अब कहूं कि सर्व विश्व मेरास्वरूप है तब आत्मा विषे विश्व कहां है जैसे कोई जल विषे तरंग और बुद्बुदे कल्पित करे परन्तु ज्ञानी उस संपूर्ण को जलही जानता है ये तरंग और बुद्बुद जल से भिन्न नहीं हैं सब उसी जलका स्वरूप हैं यह सुनकर पराशर जीने कहा कि हे मैत्रेय! अब तू मुझको परमहंस दिखाई देता है परन्तु एक बात और सुन जब प्रह्लाद ने हिरण्यकशिपु अपने पिता से कहा कि,सम्पूर्ण देवता,राक्षस, मनुष्य और सर्प इत्यादि जो कुछ दृष्टि आता है तिनको तुम केवल अनन्त विष्णु जानों जब तुम ऐसा निश्चय करोगे तब अच्युत तुम पर दयालु होंगे और तब तुम्हारे द्वैत दुःख का नाश होगा, हिरण्यकशिपु प्रह्लाद के मुख से ऐसे वचन सुनकर अत्यन्त क्रोधित होकर चौकी से उठा और प्रह्लाद को अपनी बगल में दबाकर ऐसा सिंहनाद किया कि मानों संसार का नाश करना चाहता है और जैसे रुद्रको प्रलयकाल में संसारके नाश करने की चाहना होती है तैसेही प्रह्लाद का हाथ पकड़कर चाहा कि इसी समय इस का नाश करूं कि इतने में राहु केतु की ओर दृष्टिजा पड़ी तब उनसे बोला कि प्रह्लाद को बांधकर अथाह समुद्र में डालदो कुछ विलम्ब न करो इसके सिवाय इसके नाश होने का कोई दूसरा उपायदृष्टि नहीं आता यह हतभाग्य माया में लीनहुआ है मैंने इसके मारडालने में बहुत विलम्ब किया कि यह अबभी अपनी चाहना त्यागकरे परन्तु इसका मृत्युने घेरा है यह आपभी पापी है और पापी हीका भजन भी करता है, अब इसका शीघ्र नाश करो, तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय! यदि तुझको नदी में डालदें तो उसी क्षण कहेगा कि मैं ब्रह्म नहींहूं, धन्य है उस प्रह्लाद को कि जिसको राक्षस लोगोंने हिरण्यकशिपु की आज्ञानुसार लोहकी मोटी जंजीर में गर्दन बांधकर समुद्रमें डाल दिया परन्तु वह अपने प्रण से च्युत न हुआ और न किसी

प्रकारकी शङ्काही उसके हृदय में आई है मैत्रेय! यदि तुझको ऐसी दशा प्राप्त होवे तो क्याकरे, तब मैत्रेयजीने कहा कि यदि गोविन्दजीके भजनमें ऐसे कठिन क्लेशहैं तो मैं कभी जिह्वासे भी उनका किञ्चित्नाम न लेऊंगा तब पराशरजी बोले कि हे मूर्ख! यदि चाहताहै कि मित्रको पाऊं और साथही कामनाकी इच्छा भी रखताहै तो इन दोनों वस्तुओंका एक साथ मिलना अतिकठिन है, दो रोटी घी चुपड़ी तो पावेगा परन्तु मित्रकी मित्रता बहुत दुर्लभ होजायगी प्रह्लादकी भगवान् परीक्षा लेतेहैं कि यह अपने कहेपर निश्चलहै या नहीं, इस विषयमें एक इतिहास तुझको सुनाताहूं तू ध्यान लगाकर श्रवणकर॥ इतिहास। मैं एक समय एक ऋषिपत्नी पर परम प्रीति करता था॥ तब मैत्रेयजीने कहा कि यह आप भी जानते हैं और वेदमें भी कहाहै कि जो कोई पराई स्त्रीपर दृष्टि करताहै वह नरकगामी होताहै और इससमय आप कहतेहो कि मैं एक ऋषिपत्नीमें लुभाया था यह कैसी वार्ता है तब पराशरजी बोले कि तेरा कहना सत्यहै कि जो कोई पराई स्त्रीपर कुदृष्टि करताहै वह नरकगामी होताहै परन्तु मुझको पर अपरका ज्ञान न था यही व्यास जो मेरा पुत्रहै मेरी विवाहिता स्त्रीके उदर से पैदा नहीं हुआ, यह अपना और पराया तेरी दृष्टि में है जो अहंकारकी देह धारणकिये है मेरी दृष्टिमें यह भेद कुछ भी नहीं है और न मुझमें पाप, पुण्यकी कल्पनाही है मैं आपी आपहूं जबतक यह जीवहै तभीतक कालका भयहै, मैं जीव नहीं हूं यदि चाहूं तो धर्मराजको चित्रगुप्तके सहित भस्म करडालूं, जो अपनेको नहीं जानता उसको भयहै, और जो आपी आपहै उसको किसीका भय नहीं है, मैंनेही मन, बुद्धि, अहंकार और ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रको प्रकट कियाहै मुझसे विशेष कोई नहीं है फिर मुझको किसका डरहै मैं उस स्त्रीको देखने के लिये सदा जाया करता था, एक दिन अर्धरात्रिमें मेरा चित्त उससे मिलने को उमँगा और उसी समय अपने स्थानसे चलदिया उस समय

महाभयानक मार्ग होगया एक ओर मेहके बूंद झमाझम वरस रहे थे और दूसरे रैनि अतिकारी भयानकथी कि जिससे अति कठिन मार्ग किसी तरह नहीं सूझता था ऐसे दुर्गम समय में मेरे पैरोंसें जो सर्प लिपटजाता था, उसको अपना मित्र जान प्रेमसे उठाकर छातीसे लगाय बगलमें दबा लेताथा और यह जानता था कि मेरे मित्रने मुझको आगे से आकर आदर दिया है तब मैंने उससे कहा कि मैं तेरे निमित्त आताहूं मुझे अपने घर लेचल, हे मित्र! मेरे उस मित्रका घर गंगापारथा परन्तु गंगाजी समुद्रकी तरह जलकी बाढ़से तरंगें माररही थीं मुझे मित्रके प्रेममें समुद्र समान चढ़ीहुई गंगाजी गोपदके समान दृष्टिआई तब उस सर्पको नौका बनाकर गंगापार गया जब उस पार पहुंचा तो देखा कि ऋषीश्वरलोग बैठे तप कररहेहैं उन्होंने मुझसे पूछा कि तुम कौनहो तब मैंने कहा कि अमुकऋषि की स्त्रीहूं तब उन्होंने अपने स्थान से उठकर पूछा कि इस समय अर्धरात्रिमें तू कहां रही तब मैंने कहा कि कहीं नहीं, मैं ऋषि पत्नीहूं और ऋषिपत्नीके पास आईहूं, उन्होंने कहा कि यह स्त्री नहींहै कोई जादूगर मालूम होताहै, फिर पूछा कि तुम्हारी अब कहां जानेकी इच्छाहै तब मैंने कहा कि ऋषिपत्नीके पास जाऊंगी मेरी यह वार्त्ता सुनकर एक ऋषि निद्रासे उठा और मुझे लातों और घूंसों से खूबमारा परन्तु उस प्रेमकी उमंगमें मैं बुद्धिहीन होरहाथा इससे वह मारपीट मुझको कमलपुष्पके समान जान पड़ी जब उन ऋषियोंने मुझको अच्छी तरह देखा और पहिचाना तो निश्चितहुआ कि यह महाराज वशिष्ठजीका पुत्र पराशर है तब बोले कि ऐसे पिताके तू ऐसा पुत्र किसतरह उत्पन्नहुआ तब मैंने कहा कि न मेरे कोई पिताहै और न मैं किसीका पुत्रहूं तब उन लोगों ने समझा कि यह पराशर नहीं है. कोई जादूगर है अग्नि प्रज्वलित करके मुझको उस प्रचण्ड अग्निमें डालदिया और मेरा सारा शरीर जलगया, परन्तु इस विपत्तिसे मुझको कुछ भी

पीड़ा न हुई, लेकिन जब उसी समय मेरा मित्र आपहुंचा तो उसके दर्शन करतेही अग्निकी उष्णता मेरे शरीर में प्रवेश कर गई तब मित्रने कहा कि यह क्या दशा है तब मैंने उत्तरदिया कि कुछ नहीं, जो कुछ है तूही है, मैं अपने शरीर को त्याग करूंगा परन्तु तुझको किसीप्रकार न त्यागूंगा, तब मित्रने कहा कि जो तुम्हारा शरीरही न रहेगा तो मुझको लेकर तुम क्या करोगे तब मैंने उत्तरदिया कि तेरे हृदय में अपना स्थान बना-ऊंगा, हे मैत्रेय ! ऐसी प्रीति तुमने किसीके साथकी है या नहीं तब मैत्रेयजी ने कहा कि मैं तुमको सम्पूर्ण बुद्धि का आगार जानताहूं तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! इस मिथ्या शरीरमें प्रीतिकरनेसे मुझको ऋषि के दण्ड से कुछभी क्लेश न हुआ, जो सच्ची प्रीति में लीन होता है उसको किसीप्रकार की विप-त्तियों से कुछ भी भय नहीं होता है, । अब प्रह्लाद का इतिहास श्रवण कर। जबराक्षसों ने प्रह्लाद को हाथ पाँव बांधकर समुद्र में डाला तब समुद्र ने कम्पित होकर अपने बीच से प्रह्लाद को उठाकर अपने मस्तकपर सुखपूर्वक आसन दिया यह चरित्र देख राक्षस लोग हिरण्यकशिपु के पास गये और उससे निवेदन करने लगे कि महाराज मैंने आपकी आज्ञानुसार प्रह्लाद को स-मुद्र में डाल दिया परन्तु वह डूबता नहीं है तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि उस अभागे पर शिला का प्रहार करो कि जिससे वह डूब जावे, इस हत भाग्यपर कोई औषधि भी काम नहीं क-रती. यह विष्णु को जानता है और अपने जीवन की आश भी नहीं रखता, जब हिरण्यकशिपु से राक्षसों ने इसतरह की वार्त्ता सुनी तब बड़े बड़े शिला प्रह्लाद पर प्रहार करनेलगे परन्तु प्र-ह्लाद स्वस्थ चित्त बैठा नारायण की स्तुति करता रहा कि हे क-मलनयन ! हे जगत् के कारण ! हे विष्णो ! तुमको नमस्कार है तुम ब्रह्मा होकर संसार को उत्पन्न करते और विष्णुरूप से पा-लन व रुद्र होकर संहार करते हो, देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी,

सर्प, पिशाच, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर व पंचतत्त्व, और दशों इन्द्रियों में तुमहीं व्याप्त हो और जहांतक मन, व बुद्धि से दृष्टि आता है सब स्थानों में तुम्हाराही रूप दर्शित होता है. यदि विचार करो कि पंचतत्त्व तुमसे भिन्न हैं तो यह बुद्धि की मिथ्या कल्पना है, क्योंकि सर्व वस्तु तुमहीं होकर सब में समानरूप से वास करते हो, हे परमेश्वर! तुमको नमस्कार है. जो तुमको ज्ञानचक्षु से न देखकर अवतारों की पूजा तो करता है परन्तु उसने परमार्थ को नहीं पाया ताते जिससे सम्पूर्ण जगत् पूर्ण है उस विष्णु को नमस्कार है. जिससे सर्वजगत् है वही सर्व है, और मैं भी वही हूं यदि मैं ही हूं और सर्व सूझते हैं और गुप्त प्रकट एक पुरातन मैं ही हूं मुझको मृत्यु नहीं नित्य हूं आत्मा परमात्मा मुझी को कहते हैं और वासुदेव मैं हूं. ब्रह्म नाम मेरा है, किसकारण से कि पूर्ण हूं और माया से रहित हूं हे मैत्रेय जी! जिसने इतनी स्तुति श्रीविष्णुजी की और यह जाना कि विष्णु आत्मा मैं ही हूं वह विष्णु में लीन हुआ तब मैत्रेयजी बोले कि हे पराशरजी! जिसने विष्णु को जाना वह विष्णु हुआ और जिसने नहीं जाना वह विष्णु से भिन्न है तब पराशरजी बोले कि गोविन्द में मिलना गोविन्द को अपने निज जानना है तब मैत्रेयजी ने कहा कि यदि जाना तो मिला नहीं तो भिन्न हुआ ताते आत्मा न हुआ काहेते कि सर्व आत्मा है तब पराशरजी बोले कि क्रिया करके सिद्ध है जहां वक्ता व श्रोता नहीं तहां नाम रूप नहीं तब आपी आप है तब मैत्रेयजी ने कहा कि जानना हुआ जो तू केवल विदित मुक्त है, ताते आपी को कहो न दूसरे को तब पराशरजी ने कहा कि ज्ञानशक्ति ईश्वर है और अज्ञान शक्ति जीव है यह दोनों कथनमात्र हैं जहां ज्ञान है और जहां अज्ञान केवल स्वयं प्रकाशमान है जब तत्त्व ज्ञान हुआ तब ज्ञान और अज्ञान दोनों का नाश होजाता है जैसे अग्नि के प्रज्वलित होने से सूखा गीला ईंधन सबही भस्म होजाता है. इसने प्रह्लाद को

जीव ईश्वर को एक विचार कर मोक्ष होगया था जंजीर जो हाथ पैर और गले में थी सब आपही आप टूट गई पृथ्वी काम्पित हुई और शिला जो राक्षस लोग प्रह्लाद को मारते थे उनको जल स्वयं अपनी शक्ति से बाहर फेंक देने लगा उससमय प्रह्लाद जिस वस्तुपर दृष्टि करताथा अपने आपको देखता था और कहता था कि हे विष्णो! आपके स्वरूप को नमस्कार है यहजगत् जो गुप्त, प्रकट दिखाई देता है सब तुम्हीं हो क्योंकि कोई वस्तु आपसे भिन्न नहीं, हे मैत्रेयजी! कहो तुम श्री गोविन्द की स्तुति कैसे करते हो तब मैत्रेयजी ने उत्तर दिया कि मुझसे न पूछिये स्तुति तब होती है जब निन्दा भी होती है मुझे तो द्वैत दिखाई नहीं देता इससे स्तुति व निन्दा कैसे करूं यदि प्रह्लाद के समान दुःख या क्लेश पहुंचे तब कहूंगा कि आत्मा एक है तब पराशर जी बोले कि तू मिथ्या कहता है तेरी क्या सामर्थ्य है जो दुःख में कहे कि आत्मा एक है, अब मैं तेरा नाश करता हूं मुझको संसार में कोई ऐसा नहीं दिखाई देता है जो मुझसे तुमको छुड़ावे तब मैत्रेयजी ने कहा कि हिरण्यकशिपुको भगवान् ने इसी कारण मारा और प्रह्लाद को छुड़ाया कि वह निन्दक था, तब पराशरजी ने कहा कि मैं स्तुति और निन्दा किसी की नहीं करता हूं जो तुमको छुड़ावे और मुझको मारेगा इससे मैं तुझको इसी समय नाश करताहूं तब मैत्रेयजीने कहा कि यदि मैं तुम को ऐसा जानता तो तुम्हारी संगत भूल से भी न करता जैसे कोई सिंह का साथ करके बचना चाहे तो अत्यन्त कठिन है इससे हे पराशर! तुम आपही मारो और आपही खावो तब पराशरजी बोले कि मैं ब्रह्म राक्षस नहीं हूं जो तुम्हें भक्षण करूं हे मैत्रेय जी! गोविन्द का ध्यान करके उन्हीं का भजन करो और प्रह्लाद की कथा को चित्त लगाकर सुनो जब ऐसी स्तुति भगवान् की की तब श्रीविष्णुजी गरुड़ पर सवार होकर आ पहुंचे और प्रह्लाद उनको देखकर उठ खड़ा हुआ व दोनों हाथ बांधकर

प्रणाम करके स्तुति करनेलगा कि देव ! महादेव ! मुझपर दयालु होकर मुझे इस दुःख से छुड़ाइये आपका दर्शन मुझको अमृत के समान है मेरे नेत्र आपके दर्शनों से तृप्त नहीं होते तब श्री विष्णुभगवान् बोले कि मैं तुझपर प्रसन्न हूं जो तेरी इच्छा हो वह वरदान मांगले मैं तुझ को तेरा वांछित वर दूंगा तब प्रह्लादजी बोले कि हे जनार्दन ! हे अच्युत ! मैं यही चाहता हूं कि जिस योनि में उत्पन्न होऊं उसमें तुम्हारे चरण कमल की प्रीति मेरे हृदय से न जाय और जिस स्थान में रहूं तुम्हारे सिवाय और किसीको न जानूं और जैसे विषयी विषयसे प्रीति करते हैं उसी तरह तुम्हारी प्रीति मेरे मनसे न जावे तब श्रीविष्णुभगवान्ने कहा कि ऐसाही होगा अब इससे अधिक और जिस वस्तुकी इच्छा होवे वह भी मांगलो मैं देनेको उद्यतहूं तब प्रह्लादजीने कहा कि मेरे पिताने अज्ञानसे जो द्वैत निश्चय किया है सो कृपाकरके क्षमाकरो यद्यपि उसने मेरे मारने के लिये बहुत उपाय किये तथापि आपसे यही वर चाहताहूं कि आप उसपर ऐसी दया कीजिये कि जिससे आपके चरणकमलकी प्रीति उसके हृदय में अचल होकर तुममें सदा प्रीति बनीरहै तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि उसके हृदयमें जो अज्ञानका बन्धनहै उसको उठाकर मैंने अपने में लीन करलिया यह सुनकर प्रह्लादजीने विनयकिया कि हे भगवन ! आज मैं प्रसन्नताकी अधिकता से ऐसा प्रफुल्लित हुआहूं कि अपने शरीर में नहीं समाताहूं तब श्री विष्णुभगवान् बोले कि जो तू मेरी भक्तिमें दृढ़हुआ इससे मैंने तुझको निर्वाणपद दिया तब प्रह्लादने कहा कि हे महाराज ! अब मैंने आपकी रुचिको जाना मुझे समझ पड़ता है कि आप मेरे पिताका नाश करना चाहते हैं पर मैं ऐसा नहीं चाहता मैं यह चाहताहूं कि उसमें आपकी ऐसी प्रीतिहोवे कि सिवाय आपके उसको और कोई वस्तु न रुचे अर्थात् तन्मय होजावे और यह समझे कि स्वयं विष्णुहूं क्योंकि आप शत्रु व मित्र भावाभावसे

रहित होकर सम्पूर्ण चराचर, स्थावर, जंगम पदार्थों में व्याप्तहैं और लोक परलोकमें सब जगह व जहांतक मन व बुद्धि पहुंचती है वहांतक आपकी गतिहै अर्थात् आप सर्वमयहैं यदि मेरे ऊपर आपकी अनुग्रहहै तो मुझको यह वरदान दीजिये कि मेरा पिता मारा न जावे और यही समझे कि मैंही विष्णुहूं और जो आप मुझसे पूछिये कि तू कौनहै तो मैं तो अपनेको ब्रह्म आत्मस्वरूप जानताहूं तब फिर विष्णुभगवान्ने पूछा कि तुम अन्तर बाहरसे निष्कपट होकर बताओ कि तुम कौनहो विष्णुभगवान् के इस प्रश्नको सुनकर प्रह्लादने कहा कि हे महाराज! आदिसे यही निश्चितहुआ और जाना व सुनागयाहै कि मुझमें तुझमें व सम्पूर्ण जगत् में एक आत्माही परिपूर्णहै इससे मैं जानताहूं कि मैं स्वयं ब्रह्महूं तब फिर विष्णुभगवान्ने प्रश्नकिया कि यदि तुझको यह निश्चय है कि मैं पूर्ण आत्मा हूं तो तेरा पिता जो तुझे इतना कष्ट देताहै उसके नाशका उपाय क्यों नहीं करता उसके जीवित रहने की इच्छा क्यों करता है यह जीवन और मरण केवल शरीरका धर्म है परन्तु ब्रह्ममें इन दोनोंका विकार किसीप्रकारसे नहींहै मैं उसको अवश्य मारकर अपने में लीन करूंगा विष्णुके मुखसे यह कथन सुनकर प्रह्लादने फिर विनयपूर्वक निवेदनकिया कि हे महाराज! यह उत्पत्ति और नाश सब आपका धर्महै मैं निर्गुण हूं मैं इनको नहीं जानता तब विष्णुभगवान् बोले कि जब तू मेरे निकट आता है तब आत्मस्वरूप बतलाता है और जब अपने पिता के पास जाकर उससे कष्ट पाता है तब तू कहता है कि विष्णु है यह क्या बात है तब फिर प्रह्लादजी ने कहा कि हे महाराज! दुःख का संहार करना आपही का काम है इससे उचित है कि विपत्ति और क्लेश की दशा में कभी आपको न भूले इतना सुनकर विष्णुभगवान् ने प्रह्लाद से कहा कि तू अच्छा मेरा मित्र है कि शासना व क्लेश में मुझको आगे करता है तब प्रह्लादजी ने उत्तर दिया कि हे महाराज! यदि

प्रह्लाद भी जलमें से निकल के अपने पिताके निकट आया इस चरित्र को देखकर हिरण्यकशिपु अचम्भित होकर आश्चर्य करने लगा कि यह पुत्र जलमें से भी जीवित बच आया ! तब अत्यन्त क्रोध युक्त होकर प्रह्लाद को लोहे की जंजीर में बांधकर उनके मुंहपर इतने तमाचे मारे कि जिनकी पीड़ा से प्रह्लादजी मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिरपड़े और बोला कि रे अभागे, मति मन्द ! तू तो स्वयं आत्मस्वरूप है और मुझसे कहता है कि विष्णु है, रे मूढ़ ! विष्णु तो तुझसेही प्रकाशवान् है वह आप को त्यागकर माया में लीन होता है ऐसी बातों में तुझ को लज्जा नहीं आती, कि आत्मा मैं हूं मुझ आत्मस्वरूप को छोड़कर तू मेरे सिवाय किसका भजन करता है तब प्रह्लादजी ने उत्तर दिया कि हे पिताजी ! आत्मा अच्युत ब्रह्म को कहते हैं आपको आत्मा कदापि नहीं कहसके तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि अभी तू जलके मध्य में विष्णु से कहता था कि मैं ही आत्माहूं तब मैं बहुत प्रसन्न हुआ परन्तु अब तू मेरे सम्मुख कहताहै कि आत्मा श्रीविष्णुजी हैं इस द्वैतको स्थित करना यह कहां की रीति है,हे पुत्र ! विचार करके देखो जो सम्पूर्ण संसार विष्णु होता तो प्राणी मात्र सबही चतुर्भुज होते तब प्रह्लाद जी ने पूछा कि हे पिता जी ! जब मैं विष्णु जी से वार्त्ता करता था उससमय आप कहां थे तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि तुम, विष्णु और संवाद तीनों मैं ही था, कारण यह है कि मैं सबमें पूरित हूं इससे हे प्रह्लाद ! तू आत्मा को छोड़कर और किसी का ध्यान मतकर, विचार के देखले कि जब आत्माही सब में व्याप्त है तब विष्णु को क्यों सिद्ध करता है तब प्रह्लाद ने कहा कि यदि मैं ऐसा न कहूं तो संत और संसार के जीव विष्णुभगवान् को कैसे जाने मेरे कहने का प्रयोजन यह है कि यह पद नाश न होवे हे पिता ! तुम परमात्माहो तब हिरण्यकशिपुने कहा कि आत्मा और परमात्माका प्रकाशक मैंही हूं तब प्रह्लाद जी ने कहा कि जो कुछ कहने, सुनने

और देखने में आता है वह सब एक चैतन्य विष्णु है और यह पंच तत्त्वात्मक जगत् श्रीविष्णुही हैं यह सुनकर हिरण्यकशिपु अत्यन्त क्रोध युक्त होके बोला कि मैं इसी क्षण तेरा नाश किये देता हूं देखूं तेरा विष्णुनारायण कहां है तब प्रह्लाद जी बोले कि तुमने अभीतक विष्णुनारायण को नहीं जाना, तुम मुझे इतना कष्ट देते हो और वह मेरी रक्षा करते हैं इसी से सिद्ध है, फिर जहां निश्चय करे वहीं प्रकट होते हैं, तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि तू बड़ा निर्लज्ज है तब प्रह्लाद ने कहा कि मैं पंचतत्त्व को त्यागकर श्रीविष्णुभगवान् कोही एक आत्मा जानता हूं इसी से आपकी दृष्टि में निर्लज्ज हूं इतना सुनतेही हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद के दोनों हाथ बांधकर खंभे में लटका दिया और नंगी तलवार लेकर कहने लगा कि अब दिखाव तेरा विष्णु कहां है तब प्रह्लाद जीने कहा कि जो वस्तु गुप्त होवे वह प्रकट करके दिखलाई जावे, वहतो सर्वव्यापी निरञ्जन मुझमें, तुझमें, खड्ग और खंभ में सब ही जगह विद्यमान हैं उनके सिवाय और कोई दूसरा नहीं है तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि यदि प्रकट है तो निकलता क्यों नहीं है इससे जानाजाता है कि यह केवल भ्रम मात्र है तब प्रह्लादजीने कहा कि जो सम्पूर्ण नहीं है तो यह खंभ जिससे तुम ने मुझे बांधा है यह भी वही है ज्योंही प्रह्लादजी ने इतना कहा त्योंही उस खंभ से एक ऐसा गम्भीर शब्द हुआ कि जिसको सुनकर हिरण्यकशिपु भी शब्दाघात करके प्रह्लाद से बोला कि आज तूने अपना परमेश्वर प्रकट किया देखें यह मेरे साथ क्या करता है यदि मैं इस नाशवान् शरीर पर दृष्टि करूं तो भयभीत होता हूं इससे यही दृढ़ संधान है कि इसमें जो प्रकाशस्वरूप आत्मा है उसका नाश करनेवाला कोई नहीं है तब प्रह्लाद ने कहा कि हे पिता! अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है इस शरीराभिमान को छोड़कर कहो कि सर्वमय एक विष्णुही है तब हिरण्यकशिपु ने कहा कि आज कामना सिद्ध हुई जो शत्रु को रण

में सम्मुख पाया अब पीठ देना शूरता से विरुद्ध है यह सुनकर विष्णुभगवान् जैसे प्रातःकाल पूर्व दिशा से सूर्य का उदय होता है सन्ध्या समय में नृसिंहरूप से प्रकट होकर दरवाजे के बीच में स्थित हुये और हिरण्यकशिपु के उदर को अपने नखों से विदीर्ण करडाला परन्तु हिरण्यकशिपु अपना उदर फट जाने पर भी तुरन्त विष्णु के हाथसे छुटकर और खड्ग हाथ में लेकर। उनके सम्मुख दौड़ा तब विष्णु भगवान् ने उसकी ऐसी दशा देखकर उससे कहा कि अब तुझमें जितना पराक्रम होवे मुझपर करके दिखाव, तब हिरण्यकशिपु ने जितना कि उसमें पराक्रम था विष्णुभगवान् पर किया तब नारायण ने उसको पकड़कर उसका शिर अपने पैरों पर रखकर उसके शरीर से जीव को भिन्न करदिया जिसको देखकर ब्रह्मादि सम्पूर्ण देवगण आकाशसे फूल वर्षाकर स्तुति करनेलगे कि हे महा प्रभो! जब २ हम लोगों को दैत्यों से दारुण क्लेश पहुंचता है तब २ आपही रक्षक होकर उस दैत्यजनित कष्ट से बचातेहो, इसप्रकार देवगण विष्णुभगवान् की स्तुति करके फिर प्रह्लाद से बोले कि अब तुम इनके क्रोध को शान्त करो तब प्रह्लाद जी देवगणों के यह वचन सुनकर विष्णुभगवान् के सम्मुख हाथ जोड़के विनय करने लगे कि हे दीनानाथ! यह बाजीगर कासा चरित्र आपने क्यों किया और इतना क्रोध किसपर करतेहो हे करुणाकर! आपके सिवाय और कौन है सम्पूर्ण संसार आपही से उत्पन्न, पालन और लय होता है तब श्रीविष्णुभगवान् ने प्रह्लाद की इसप्रकार विनययुक्त नम्र वाणी सुनकर उनको अपनी गोद में उठालिया और उसी अपने रुधिर भरे हुये मुख से प्रह्लाद के मस्तक को सूंघकर बोले कि अब तुम निर्भय राज्य करो तब प्रह्लादजी ने विनय किया कि हे करुणाकर! अब मुझको इस राज्य की कांक्षा नहीं है कृपा करके मुझको सुराज्य दान दीजिये तब विष्णु भगवान् अन्तर्ध्यान होगये और प्रह्लाद विष्णुजी की आज्ञानुसार अपने पिता

की राजगद्दी पर बैठकर राज्य करने लगा जब यह वार्ता यहाँ तक पहुँची तब पराशरजीने मैत्रेय से कहा कि हे विप्र! मैंने प्रह्लाद की कथा तुमको भली विधि से समझाकर सुनाई इस से तुमको क्या लाभ हुआ तुमने एक कान से सुनकर दूसरे से निकालदी इससे मेरा यह सम्पूर्ण कथन निष्फल हुआ तब मैत्रेय जीने कहा हे महाराज! मुझे इस कथा के श्रवण करने से यह निश्चित होगया कि परमात्मा से अतिरिक्त और कुछ नहींहै तब पराशरजी ने कहा कि तुम अब भयभीत होकर यह समझो कि परमेश्वर की माया अति प्रवल है ब्रह्मादिक इस प्रवला से पार नहीं पासक्के तब मैत्रेयजी बोले कि आप के कथन से यह निश्चय हुआ कि माया अति दुस्तर है परन्तु जब गोविन्द के स्वरूप में दृढ़ निश्चय हुआ कि जिसके विना और कुछ वस्तु नहीं है तब माया से क्या काम रहा तब पराशरजी बोले कि अभी तेरी बुद्धि में पूर्ण प्रकार से भासित नहीं हुआ, यह माया परमेश्वर की बाजीगरी है हे मैत्रेयजी! ध्यान धरकर श्रवण करो मैं तुमको कुछ और दृष्टान्त सुनाता हूं जब प्रह्लादजी अपने पिता के राज्यसिंहासन पर बैठ चुके तब एक दिन शुक्राचार्यजीने आकर प्रह्लाद से पूछा कि हे प्रह्लाद! सत्य २ कहो कि हिरण्यकशिपु के मारने के लिये विष्णु भगवान् से तुमने कहा था अथवा उन्हीं ने स्वयं अपनी इच्छानुसार तुम्हारे पिता का बधकिया तब प्रह्लादजी बोले कि हे महाराज! इस विषय में मैंने विष्णु भगवान् से कुछभी नहीं कहा उन्होंनेही अपनी इच्छानुसार उसका बधकिया मेरी तो यह इच्छा भी न थी तब शुक्राचार्यने कहा कि हे प्रह्लाद! जबतक तुम अपने पिता के नाश होने का बदला शत्रु से न लेवो तुम्हारा जीवन मृत्यु से भी निन्दित है वरन तुम्हारा भोजन व जलपान इत्यादि सब पाप रूपही है तब प्रह्लादजीने कहा कि किसकी सामर्थ्य है कि विष्णु भगवान् की समता करसके तब शुक्राचार्यजी बोले कि

गोविन्द कहा है कि जो तुझको निश्चय हुआ वह तो नाम रूप से न्यारा है धर्म शास्त्र में लिखा है कि जबतक पुत्र पिता का बदला न ले लेवे तबतक जो कुछ करता है सब वृथा अर्थात् निष्फल है। शुक्राचार्य से इस वार्त्ता को सुनकर प्रह्लादजी बोले कि हे शुक्र! प्रथम तो आप कहते थे कि जिस समय तेरी श्वास रुकी सर्व विष्णुको माना और कहा कि गोविन्द का भजन कर और अब कहते हो कि उसको मारो यदि हिरण्यकशिपु को उसके मारने की शक्ति न थी तो मेरी क्या सामर्थ्य है तब शुक्राचार्य ने कहा कि तेरे पिताने इसी स्थूल शरीर पर निश्चय किया था उसको आत्मशक्ति का ज्ञान न था परन्तु तुझको आत्मशक्ति का भली विधि से बोध है इससे तू इसकार्य के सिद्ध करने में समर्थ है तुझ से यह सिद्ध होवेगा पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! प्रह्लाद जिस जिज्ञासा विषे कि पिताकी बड़ी शासना सहने पर भी अपनी प्रतीति से न फिरा था अब शुक्राचार्य के कहने से क्षणमात्र में कुसंग वश होके उसके चित्त में यह चाहना उपजी कि यदि आप आज्ञा दीजिये तो मैं शक्ति रखता हूं कि पिताका बदलालूं और इसी क्षण विष्णुका नाश करूं फिर शुक्र के मंत्र से राक्षसों को इकट्ठा होने की आज्ञा देकर फौज इकट्ठी की और नगर से पांच योजन पर जा उतरा यह चरित्र देख विष्णु भगवान् अन्तर्यामीने जो प्रह्लाद के हृदय में स्थित थे जाना कि प्रह्लाद ने सत्य बुद्धि का त्याग करके दुर्बुद्धि और राज्याभिमान में स्थित होकर यह साहस किया है, क्योंकि कुसंगति का फल सदा निकृष्ट होता है, वृद्ध ब्राह्मणका दुर्बल भेष धारण करके व लकड़ी हाथ में लिये हुये हिलते कांपते आकर पूंछा कि यह क्या धूम धामहै तब लोगोंने बतलाया कि प्रह्लाद को विष्णु के साथ युद्ध करने की इच्छा है इसलिये आगे से न आइये क्योंकि जो किसी कामके जाते समय ब्राह्मण आगे से आकर मिले तो अशुभ होता है यह सुनकर ब्राह्मण ने

उत्तर दिया कि प्रह्लाद ब्राह्मण और दुखियों पर दया करता है तब उन्होंने कहा कि पहिले थे अब उसकी प्रकृति बदलगई है तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं वृद्ध हूं मुझको क्या डर है शरीर में मांस तक नहीं रहा मैं यह जानता हूं कि यह शरीर आज कल्ह में नाश हुआ चाहता है इससे किसी तरह की शंका नहीं है यह सुनकर उनमें से कोई भी न बोला और वह वृद्ध ब्राह्मण प्रह्लाद के निकट पहुँचा तब प्रह्लाद ने उसे आते देख पूंछा कि तू कौन है और यहां किस कार्य के लिये आता है तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं ईश्वर के अन्याय से पीड़ित होकर तुम्हारी शरण में आयाहूं उसने मेरा सम्पूर्ण कुटुम्बनाश करदिया और अब मुझको भी नाशकरना चाहता है,मैंने सुनाहै कि आपने ईश्वर के नाश करनेका विचारांश कियाहै इससे तुम धन्यहो, मैं जानता हूंकि तुमने यह बुद्धि अपनेदयालु गुरुजी से पाईहै, परन्तु यह बताओ कि तुमने उस विष्णुके रहने का स्थान कहां विचारा है जो तुम सेना लेकर युद्धकेनिमित्त अपने गृहसे बाहरनिकलेहो, वह विष्णुकहांहै मैं भी चलकर तुम्हारी सहायता से युद्धकरूं और अपने पिता पितामह का उससे बदलालूं तब प्रह्लादने कहा कि मैं उसके रहने का स्थाननहीं जानताहूं कि वह कहां रहता है तब ब्राह्मण ने हँसकर कहा कि जैसा मैं मूर्ख था वैसाही तूभी मिला, भला जिसको न कहीं देखही सक्के न उसका स्थानही जानतेहो उससे पिता का बदला किस तरह ले सकते हो तब प्रह्लाद ने। कहा कि बदला मैं अवश्य लूंगा तब उस ब्राह्मणने कहा कि मुझे किस तरह निश्चयहो पहिले यह लकड़ी जो मेरे हाथ में है मैं इसको पृथ्वीपर डालता हूं तुम इसी को उठाकर मेरे हाथ में दो, मैं इसी से इसबात की परीक्षा करलूं कि यह कार्य तुमसे सिद्ध होजायेगा तब प्रह्लाद ने कहा तू यह क्या कहता है तब ब्राह्मणने कहा कि उठायकर देखो तब प्रह्लाद ने कहा बहुत अच्छी बातहै तू इसको पृथ्वी में डालदे मैं उठालूंगा इसी बात चीत में

इस ब्राह्मण ने वह लकड़ी अपने हाथ से पृथ्वीपर गिरादी और प्रह्लादने चाहा कि इसको पृथ्वी पर से उठालूं परन्तु सम्पूर्ण शारीरिक बल करके हारगया और वह लकड़ी पृथ्वी से कुछ भी न उठी तब ब्राह्मण ने कहा कि जो तू इस लकड़ी कोही न उठासका तो विष्णु को कैसे मारेगा तब प्रह्लाद को निश्चय होगया कि ये ही विष्णु भगवान् हैं तब उस ब्राह्मणके चरणों पर अपना मस्तक धर के विनती करनेलगा और प्रार्थनाकी हे महाराज! मैं आपकी शरण में हूं आप दया पूर्वक मेरी रक्षा कीजिये तब विष्णु भगवान् ने कहा कि तू मुझपर क्षमाकर कि तू ने मेरे मारने की इच्छा की है तब प्रह्लाद ने कहा कि हे महाराज! मैं निरपराध हूं यह सब शुक्राचार्य के उपदेश का फल है तब विष्णु भगवान् बोले कि इसीकारण से कहा है कि गुरु कीजिये जानके और पानीपीजे छानके अर्थात् गुरुऐसा होनाचाहिये जो ज्ञान विज्ञान से सम्पन्न होवे तब प्रह्लादने कहा कि ऐसा गुरु कहां पाऊं तब विष्णु भगवान् बोलेकि एकसंत आपसे आप मेरे रूपसे तुम्हारे निकट आवेगा तुम उसके चरणोंकी धूलिकी चाहना अपने मनविषे रखना पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! जबऐसे बुद्धिमान् प्रह्लाद को कि जिसने अपने पितासे इतना कष्ट पानेपर भी अपने विश्वासको दृढ़रक्खा और अपने निश्चयसे न फिरा अंत में उसको भी मायाने भ्रमादिया तो तू किस गिनतीमें है तब मैत्रेयजीने कहा कि हे प्रभो! फिरमैं क्या यत्नकरूं तब पराशरजी बोले कि वहीकरो जिसमें कुछ करना नहो तब मैत्रेयजीने पूछा कि हे महाराज! यदिमैं कुछ न करूं तो इसअज्ञान सागर से किस तरहपार पाऊंगा तब पराशरजीने कहा कि जो तू सदा मेरा ध्यान कियाकर तो तुझे माया दुःख न देवेगी परन्तु यहभी यादरखना कि ध्यान करने कोही माया कहतेहैं इससे गोविंदका भजन कर तब मैत्रेयजीने पूछा कि यदिभजन करने से माया छूटजातीहै तो प्रह्लादसे क्या चूकपड़ी कि उसको मायाने नहीं छोड़ा तब पराशर-

जी बोले कि वह अपनेको बड़ाजानताथा "अपनेको श्रेष्ठ जानना,, इसीको माया कहते हैं तू इसको छोड़दे जब यह छूटजायगी तब माया स्वयं निवृत्त होजायगी तब मैत्रेयजीने पूछा कि प्रह्लादको कौनसंत मिलाथा जिससे उसे यहज्ञान प्राप्तहुआ तब पराशरजी बोले कि जब भगवद्रूप दत्तात्रेयजी नगरके समीप आये और वहां से कुछ दूरपर स्थितहोकर अपनी बांहको शिरकेनीचे तकियाकी तरह रखकर सोगये कि इतने में राक्षसोंने उनको शयन करते हुये देखकर आकर पूछा कि तुम कौनहो तब अवधूत अर्थात् दत्तात्रेयजीने उनसे कहा कि मैं राक्षसहूं यह वचन सुनकर उनमेंसे एकने जाकर प्रह्लादजीसे कहा कि एक परमहंस तुम्हारे नगर के निकट आये हैं उनकी जातिपांति का कुछ ठीक नहीं जाना जाता परन्तु वे दर्शन करने योग्य हैं इतना सुनतेही प्रह्लादजी तुरन्त उठकर उनके समीप गये और दंडवत् करके अपने जी में शोचने लगे कि मैं इनका वर्णाश्रम भी नहीं जानता हूं इनको किस तरह से प्रणाम करूं यह शोच करके उनसे पूछा कि आप कौन हैं और कहां से आये व कहां को जायँगे जब अवधूत ने उत्तर न दिया तब प्रह्लादने पूंछा कि आपने कुछ उत्तर न दिया इसी तरह जब प्रह्लाद ने तीनबार अवधूत से पूछा तब तीसरी बार अवधूत ने प्रह्लादसे कहा कि मैंने सुना है प्रह्लाद परमहंसहै परन्तु दिखाई नहीं देता तब प्रह्लादने उत्तर दिया कि मैं माया से परे हूं तब अवधूत ने कहा कि इसी को माया कहते हैं कि जिससे देखकर भी पूंछता है कि तुम कौनहो व कहां से आते और कहां जावोगे, देखो जब कि कोई वस्तु गोविन्द से भिन्न नहीं है तब गोविन्द कहांसे आवे और कहां जाय और क्याकहे कि कौन हूं वह तो वायु की तरह सब जगह पूरित है फिर उस में आना जाना कहां है, ये तेरी राक्षसी बुद्धि है इसी को त्याग कर। यह सुनकर प्रह्लाद ने पूछा कि फिर मैं क्याकरूं तब अवधूत ने समझाया कि वही करो जिसमें करना न हो इसको सुने

कर प्रह्लादने पूंछा कि जो करना नहीं है तो क्या करना चाहिये तब अवधूत ने कहा कि इसीको कर्म कहते हैं, कि कर्म नहीं है गोविन्द है. हे प्रह्लाद! जब यह ज्ञान प्राप्त होवै कि एक गोविंन्दही है, तब मैं और तू यह द्वैत बुद्धि नष्ट होजाती है और जब मैं और तू के द्वैताभाव का ज्ञान प्राप्त हुआ तब आना, जाना, अपना, पराया यह जो अहङ्कारमय ज्ञानबुद्धि एक लोहे की शृङ्खला के समान तेरे जीवरूपी हृदय के पैर में पड़ी है इससे मुक्त होजावेगा और जब तक जीव इस जंजीर से नहीं छूटता तबतक आने जाने का कारण बना रहताहै हे प्रह्लाद! जो ज्ञानी इस जंजीर को अपने ज्ञानरूपी खड्ग से काटता है वह संसार से पार होकर निर्वाणपद पर पहुंचता है और जो तू मेरा नाम पूछताहै सो मुझको सब लोग दत्तात्रेय अवधूत कहते हैं, परन्तु यह नाम केवल अहङ्कार है, मेरा नगर कोई नहीं जानता कि मैं कहां से आयाहूं और न मेरे जानेके स्थान को कोई जानता है कि मैं कहां जाऊंगा, इस स्थूल शरीर को कि जिसे तुम समझते हो मैं प्रह्लाद हूं इसको सदा नाशवान् समझो जब इस शरीर का विनाश होताहै तब इसके तीन प्रकार के रूपान्तर अर्थात् कृमि. विट्, भस्म होते हैं अर्थात् जलाया गया तो भस्म किसी ने खालिया तो विट् (मल) और यदि पड़ारहा तो कीड़ा पड़जाते हैं तू इसी नाशवान् शरीर के बलपर अहङ्कार करके अपने को राजा बताता है यदि तू राजा है तो तेरी प्रजा कौन है, हे प्रह्लाद! इसी को माया कहते हैं जिससे तूने अपने को प्रह्लाद निश्चित किया है, तुझे चाहिये कि इस बुरे ध्यान को अपने मन के पात्र से धोडाल और विचार करके देख कि यह क्या वस्तु है कि जिसके ऊपर चर्म और भीतर मांस, रुधिर, हाड़ और मज्जा है तू ऐसी निन्दित वस्तु को कहता है कि मैंहूं तुझे इस बातके कहने से लज्जा नहीं आती. हे प्रह्लाद! विचार करो कि जब तू और यह शरीर जो साहङ्कार व माया का रूप है इसको तूने

अपना जाना तब सर्व दुःखोंका भोक्ता हुआ, इस मांस के टुकड़े को कि जो शरीर का घर है अपना जानकर कहता है कि मैं महात्माहूं, यदि ऊपर से कहता है कि मैं शरीर नहीं हूं और भीतर से इससे स्नेह रखता है तो यह अच्छा नहीं। निश्चय करके जानो कि यह शरीर काल का एक ग्रास है और मैं इससे परेहूं, यदि शरीर से परे है तो इसके दुःख सुख से अपनेको दुःख में क्यों डालता और मोह करताहै। इस शरीर की वनावट चार प्रकारसे है अर्थात् नाम, रूप, कर्म, अहङ्कार और इन तीनों वस्तुओं की पुष्टता अहङ्कार से है जो अहङ्कार नहो तो तीनों नहीं हैं यह सुनकर प्रह्लादजी ने कहा कि आप मेरे गुरु हैं मुझ को उपदेश कीजिये, तब दत्तात्रेय अर्थात् अवधूत ने कहा कि पांचतत्त्व और दश इन्द्रिय तू नहीं है और वर्णाश्रम से दूर किसी वस्तु से तेरा मेल नहीं है और क्रिया कर्म से रहित है तू आपही आत्म स्वरूप है। तू अपने को नाशवान् जान, क्योंकि तू शरीर नहीं है। तेरा सत्, चित्, आनन्द स्वरूप है इस लिये जीवन, मरण का शोक किसलिये करता है, जो जन्मता है वह अवश्य मरता है और जो मरता है वह अवश्य जन्म पाता है मैं तुझ को मैं यह उपदेश करताहूं इसको अपने हृदयमें रखके विचारकर। हे प्रह्लाद! गोविन्द का भजन करो जो अहङ्कार के मल से शुद्ध होजावो। तब प्रह्लादजीने कहा कि हे दत्तात्रेयजी! मैं आप की आराम केलिये चारपाई लेआऊं आप उसपर सुख से विश्राम करें तब दत्तात्रेयजीने कहाकि हे प्रह्लाद! यदि भाग्यवश इस शरीरको रेशमकी विनीहुई चारपाई मिलजावे तो कुछ आनन्द नहीं और न कांटोंके मिलने से कुछ दुःखही प्राप्त होताहै तब प्रह्लाद ने कहा कि कुछ भोजन कीजिये तब अवधूत ने कहा कि यदि कुछ भोजन मिलगया तो करलेताहूं नहीं तो सूखे पत्तोंही से अपनी क्षुधा मिटा लेताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि राज्य कीजिये अवधूत ने उत्तर दिया कि किसान और देश मेरी दृष्टि में नहीं है तब

प्रह्लाद ने कहा कि जैसे चारपाई पर सोना और भोजन करना ग्रहण करतेहो उसीतरह राज्य भी कीजिये तब अवधूतने कहा कि मैं स्वयं अर्थात् आपीआप राजाहूं न मेरे कोई भ्राताहै न मित्र, जो प्रजा होवे अब मैं जो तुझ से प्रकट करताहूं उसको ध्यान देकर श्रवणकर ! इससंसार के आदिमें मेरी इच्छा जिस को प्रकृति कहते हैं उत्पन्न हुई फिर उस प्रकृति से तीन गुण, जिनको सात्त्विक, राजस, तामस कहते हैं पैदाहुये जिनमें तामस से पंच भूत और राजस से दश इन्द्री, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार यह चारों जो मेरे मन्त्री हैं उत्पन्न हुये मैं इन्हीं की सहायता से इस शरीर रूपी नगर की पालना करताहूं ! यदि पूछो कि हाथी, घोड़ा, रथ पियादा जो राजका सामान है वह कहां है तो उसेभी तुमको सुनाता हूं श्रवण करो। अहंकार मेरा रथ, सात्त्विक शान्ति उसका सारथी, मन हाथी, चित्तघोड़ा, बुद्धि पियादाहै और यही बुद्धि सबकी सहायक और शरीरको पालन करनेवालीहै इस से इसशरीरके नगरमें जो पच्चीस वस्तुसे रचाहुआहै मैं एकराजा हूं यहसुनकर प्रह्लादजी ने पूछा कि मैं कौन हूं तब अवधूतने उत्तर दिया तू वही राजा है कि जिसका मैं ऊपर वर्णन करचुका हूं तब प्रह्लादने पूछा कि हे कृपासिंधु ! गोविन्दका भजन किसप्रकार का है दया करके इसे भी समझाइये यहसुनकर अवधूत ने उत्तर दिया कि मैं तुमको समझाताहूं इसको ध्यान धरकर सुनो हे प्रह्लादजी ! गोबिन्दका भजन उसी को अच्छा लगता है जो कि शरीराभिमान से रहित है क्योंकि चित्त एक है इससे जो कुछ उसके सम्मुख पड़ा वही प्रकृति होती है और जिसने शरीरका अभिमान किया वह गोविंदका भजन कैसे करसकेगा हे प्रह्लाद ! जोकोई शरीराभिमान करके गोविन्द का भजन करताहै उसको मनुष्य देह धारण करनेका आनन्द कभी नहीं प्राप्तहोता क्योंकि वह अपने मनमें विचारताहै कि मैं अमुकहोकर गोविन्दका भजन करताहूं मुझ में और गोविन्द में द्वैत नहीं है इनसे जो श्वास

आती है उससे गोविंद गोविन्द कहो, यदि चाहो कि ममता भी बनी रहे और गोविन्द के भजन का सुख भी प्राप्तहो तो यह अत्यन्त दुर्लभ है, स्वरूप का जानना यह है कि, आपही शोचे कि मैं कौन हूं, और कहां से आया व कहां जाऊंगा। जिसकी स्थूल दृष्टि है वह परमेश्वर को कैसे जानसक्ताहै। पाप पुण्यकी दृष्टि खुली है और भीतर से क्या जाने कि क्यावस्तु है, जैसे तू मुझे देखनेको आया परन्तु नमस्कार न किया और मनमें शोचने लगा कि इनका वर्णाश्रम क्या है। तब तुझको गोविन्द के सुखसे क्या लाभ है। यदि कहो कि गोविन्द में वर्णाश्रम है या नहीं, परन्तु तू मूर्ख है तेरी दृष्टि शरीरपर है, शरीर क्या है? मांस, चर्म, और रुधिर। तूने स्वरूपको नहीं जाना इससे जो तेरे समान वर्णाश्रम रखता हो उससे मिल। आश्चर्य है कि अपना माथा जो मेरे चरणपर रखताहै वह भी मांसका टुकड़ाहै। मुझको तुझसे चरण छुवाने की इच्छा नहीं है। परन्तु अपने को जान और जो अपनेको जानताहै वह तू नहीं है। तू सर्व दृश्यका प्रकाशक रूपहै। जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति कहांहै। यदि तेरी दृष्टि असल स्वरूपपर पड़े तो भीतर बाहर से उड़ने लगे, और आपीआप होजाय। हे प्रह्लाद! तू अपना, पराया छोड़कर श्रीगोविन्दका भजनकर यह निकृष्ट खयाल नाहक मनमें करता है कि मैंने इतने दिन गोविन्दका भजन किया परन्तु दर्शन न पाया, तेरे मनमें तो पाखण्डहै उसको कैसे पावे, अगर तू पूछे कि पाखंड क्या है तो सुन कि जिह्वासे नारायण नारायण करे और मनमें इच्छा सांसारिक पदार्थों के भोग की रक्खे। इससे इस इच्छाको निश्चयरूपी अग्नि से जलादे कि जिससे आपहीआप होजावे, यदि तू पूछे कि निश्चय किसतरह प्राप्तहोवे तो पाखण्डको मनसे दूर करके महात्माओंका सत्संगकर महात्मा कौनहै, जो अपने सिवाय दूसरेको न जाने व अपने और सम्पूर्ण स्थावर, जंगम में एक प्रकाश देखे, इसी को मुक्ति कहतेहैं, क्या भगवान् की भक्ति यही है कि अपने और भगवान्

में द्वैतभाव देखता है। और प्रत्यक्ष में किसी से प्रीति करै जिससे वह जाने कि मित्र है यदि बीच में फरकपड़ा तो परदा पड़गया, इससे आपही शोचो कि अन्तर्यामी से जो सम्पूर्ण संसार की गुप्त प्रकट व सबके मनका भेद जाननेवालाहै उससे प्रीति करना और अभिमान (आपा)का परदा बीचमें रखना यह परमात्मा की भेंट की अप्राप्ती है।यदि कहो कि आपाक्याहै.तो सुनो यहविचारना वृथाहै कि मैं प्रह्लाद हूं और यह शरीर व यह वर्णाश्रम मेरा है इसको अन्तर्दृष्टि से देखो कि श्रीनारायणही हैं प्रह्लाद कहां है और यह निश्चय करो तू शरीर नहीं है। जो यह नहीं है तो वह जो है सो तू है तब फिर प्रह्लादने पूछा कि यदि मैं नहीं हूं तो तू कौन है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मैं नहीं हूं तब फिर प्रह्लाद बोले कि जो मैं व तू नहीं है तो कौन है अवधूत ने यह सुनकर उत्तरादिया कि मुझ में इतनी शक्ति नहीं है कि जो मैं कहूं यह है तब प्रह्लादने पूछा कि यदि तुम में कहने की पूर्ण शक्ति नहीं है परन्तु जो कुछभी शक्ति हो तो कहिये तब अवधूत ने कहा कि हे प्रह्लाद! नाशवान् और नित्य दो वस्तु हैं परन्तु नित्य को, कौन है इससे जो नाशवान् है कहता है वही है तब प्रह्लाद ने पूछा कि हे महाराज! नित्य को अनित्य कौन कह सकता है तब अवधूत ने कहा कि यदि यह भेद जानने की तुम्हारी इच्छाहै तो ध्यान लगाकर सुनो, यह शरीर पञ्चभौतिक अर्थात् पांचतत्त्वों से बना है और इस महत्तत्त्व की जड़ अहङ्कार है. यह महत्तत्त्व अहङ्कार माया अर्थात् अविद्या से देखा गया है, और फिर त्रिगुण अर्थात् सत्, रज, तम हुआ। फिर तमोगुण से पञ्चतत्त्व और रजोगुण से दश इन्द्रिय और सतोगुण से अन्तःकरण और जीव और देवते उत्पन्न हुये, इसी वस्तु से इस शरीर का शृङ्गार है। अब शरीर क्या है। यह शरीर मांस की प्रतिमा है, और यही शरीर उत्पन्न होता और मरता है और जो इस सम्पूर्ण शरीर का प्रकाशक है वह तू है यह सुनकर

प्रह्लाद ने पूछा कि मैं कौनहूं तबअवधूत ने कहा कि योग कर, क्योंकि वह योग के बिना जाना नहीं जाता तब प्रह्लाद ने कहा कि योग क्या है मुझे बतलाइये तो करूं तब अवधूतने उत्तर दिया कि योग दोप्रकारकाहै एक चींटीमार्ग दूसरा विहङ्गमार्ग दोनोंमें तुझे जिसके पूछने की इच्छा होवे वह बतलाऊं तब प्रह्लादने कहा कि हे महाराज! आप दया करके मुझको दोनों मार्ग समझाइये तब अवधूत ने कहा कि प्रथम चींटीमार्ग को सुनाताहूं ध्यान से सुनो—पहले शनैः शनैः प्राणायाम करके फिर धीरे धीरे शरीर के सम्पूर्ण छिद्रों को बन्द करना चाहिये जैसे चींटी किसी वृक्ष पर चढ़ती है परन्तु मध्यमार्ग में यदि उसका पैर कांपता तो फिर पृथ्वी पर गिर पड़ती है और फिर चढ़ती है यही दशा इसमार्ग की है हे प्रह्लाद! तू राक्षस है यह लज्जा योग्य चींटीमार्ग तेरे ग्रहण करने लायक नहीं है। अब दूसरा विहङ्गमार्ग तुझे सुनाता हूं उसको भी ध्यान से सुन। जैसे विहङ्ग विना किसी के सहारे पृथ्वी से उड़कर आकाश और पहाड़ों में घूमता हुआ स्वेच्छाचारी होकर सम्पूर्ण संसार में विचरकर आनन्द को प्राप्त होता है इसी तरह इस मार्ग का ग्रहण करनेवाला सर्वत्र आनन्द पूर्वक विचर सक्ता है। इन दोनों मार्गों में जो तुझको अच्छा लगे उसको ग्रहण कर इस प्रसङ्ग को सुनकर प्रह्लाद ने कहा कि महाराज मालूम होताहै कि विहङ्गमार्ग अति उत्तम है परन्तु जो कोई तीरन्दाज तीर से मारे तो अवश्य पृथ्वीपर गिरपड़ता है तब अवधूत ने कहा कि हे मूर्ख! उनका उड़ान पंख से नहीं है वे चित्तके पंख से आकाश से पाताल पर्यन्त उड़ते हैं इससे ऐसी एक मास की राह एक दण्ड में जासक्ता है हे प्रह्लाद! अब कहो चित्त का रूप कैसा है तब प्रह्लाद ने कहा कि चित्त को सुनताहूं परन्तु उसका रूप देखा नहीं है तब अवधूतने कहा कि वह निराकार है इस कारण से दृष्टिमें नहीं आता इस विषय में एक इतिहास तुझे सुनाताहूं उसको ध्यान से सुन॥

इतिहास—मैं एक समय हिमाचल पर्वत पर गया तो जितने पग उठाताथा मुझे मालूम होताथा कि सर्व शिवही हैं और जितनी श्वासें भीतर से बाहर निकलती थीं वेभी सम्पूर्ण सदाशिवही जान पड़ती थीं व हाथी, पहाड़ व वृक्ष फलफूल आदि जो मेरी दृष्टि में पड़ते थे वे सब शिव का रूपही दिखाई पड़ते थे झरना जो पहाड़ पर बहता था वह भी शिव शिव कहता था। हे प्रह्लाद! इसी प्रकार विहंग मार्ग है इससे विहंग असुरके समान कहां उड़के जाय जानो कि भीतर बाहर सर्व शिवही है यह नानरूप शिव है दृष्टादृष्ट दर्शन सर्व शिव है, भोगी व त्यागी सर्व शिवहै स्थावर, जंगम, सूर्य, चन्द्रमा और तारा गण भी सर्व शिव हैं। हे प्रह्लाद! मैं इसी प्रकार सम्पूर्ण चरित्र देखता चलाजाता था जब शिखर पर पहुंचा तो क्या देखताहूं कि वहां नौ योगेश्वर बैठे हुये हैं। यदि तुम पूछो कि वे नौ कौन थे तो सुनो मैं तुमको उनके नाम विवरण से सुनाताहूं—उनमें पंच महाभूत व चित्त बुद्धि मन व अहंकार जिसको विष्णु पारषद् कहते हैं ये सब योग की यत्न करतेथे जब मैंने उनसे पूछा कि आप लोग यहां क्या करते हैं तब उन्होंने उत्तर दिया कि हम लोग यहां योग करते हैं तब मैंने उनसे पूछा कि किससे योग करतेहो उन्होंने कहा कि आकार में योग करते हैं उनकी यह वार्ता सुनके मैं हँसा और उनसे कहा कि हे मित्रो! आकार तो तुम्हीं हो फिर किसके साथ योग करतेहो तब उन्होंने कहा कि यह हमने आज तुमसे जाना कि आकार हम लोग हैं अगर पहिले से जानते कि हमीं आकार हैं तो आकार से न मिलते तब मैंने कहा कि हे अवधूतो! तुम नवों शरीर कहां से उत्पन्न हुये तब उन्होंने उत्तर दिया हम लोग निराकार से उत्पन्न हुयेहैं तब मैंने उनसे कहा कि निराकार तो एक है उसमें योग क्याकरें, वह आपी आप है, इस वचन के सुनने से हमको ज्ञात हुआ कि हम निराकार हैं। हे प्रह्लाद! यह मैंने तुमको विहंग मार्ग

सुनाथा,यह सुनकर प्रह्लादजी ने कहा कि हे महाराज! यह विहंग मार्ग मुझको बहुतअच्छा लगा परन्तु तुमको एक मार्ग की बड़ाई व दूसरे की निन्दा करना उचित नहीं है तब अवधूत ने कहाकि यदि तूही तू है तब कौन भला और कौन बुरा है मैं तुझसे एक बात कहताहूं जिसमें कौन, व क्या और विहंगम तीनों नहीं हैं क्योंकि ये सम्पूर्ण एक शिवही है तू कुछ मतकर और भगवान् में लीन हो तब प्रह्लाद ने कहा कि हे अवधूत! मैं राक्षसहूं तब अवधूत ने कहा कि यदि तू राक्षसहै तो मनुष्य कौनसाहै, निश्चय कर कि सर्वत्र तूही है तब प्रह्लादने कहा कि इस बिषय को मैं नहीं जानताहूं कहांजाऊं क्या कहूं और कौन कर्म करूं, मैं और विहंगम कहां और प्रह्लाद कौन है और अवधूत कहांहै और यह भी नहीं जानता कि शत्रु, मित्र, जीवन मरण व अपना पराया और स्थूल सूक्ष्म क्या वस्तु है न गुप्त प्रकटही को देखताहूं हे अवधूत! न तू अतिथि और न मैं राक्षस हूं और न यह संसार न जीव न ईश्वर है एक अद्वितीय आत्मा वचन से रहित हुआ मैं अर्थात् गूंगाहूं जैसे कि कोई मनुष्य जंगलमें बैठकर आपी आप बातकरे तो उसका वचन किसके साथ है इससे क्या कहूं दूसरा नहीं, हे अवधूत! अब मैंने जाना कि सर्व मैं ही हूं, सत्संग यही सुफल है, श्रीविष्णुजीने सत्य कहा था कि एक संत मेरा स्वरूपहै तुझे मिलेगा तेरीस्तुति किस जिह्वा से करूं क्योंकि मुझ व मेरी वार्त्ताकी तुझतक गम नहीं है और मैं अज्ञानी नहीं हूं जो कहूं कि मेरा उद्धार न किया, यही तेरी स्तुति है कि सर्व तूही है नहीं नहीं मिथ्या कहा मैं सर्व कहां है तूही है स्तुति तेरी यह है कि तूनेसर्व तूही है, तेरेमें सर्वही है, आपी आपहै, ताते अपनेको मैंने तुझको दिया और आप हुआ मैं नहीं हूं तूही है तब अवधूत ने कहा कि झूंठ मतकहो क्यादिया और क्याहुआ काहेते कि देनालेना मध्ये मैं नहीं है सर्व शिव है ताते मेरी नमस्कार मुझको है अब जाताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि तेरे बिना मेरा जीवन न होगा

तब अवधूत ने कहा कि तू सत्य कहता है तेरे में जन्म मृत्यु दोनों नहीं हैं और तू मृत्यु से रहित है मैंने जाना कि तू अद्वितीय है तब प्रह्लाद ने कहा कि यदि कोई कहै कि तू विष खाले तो मैं विष खालूं परन्तु सन्तों का सत्संग ब्रह्मनेष्ठी का कैसे त्याग करसक्ता हूं संत मेरे प्राण हैं, नहीं प्राण कहां है संत आप हैं, काहेते यदि संत को भगवान् के तुल्य कहूं तो अनुचित है क्योंकि भगवान् सम्पूर्ण उपाधियों से युक्त है अर्थात् उत्पत्ति, पालन और नाश करना उसका काम है और संत निर्मल है हे अवधूत! अब तुम कहीं न जाव इसी स्थान पर रहो तब अवधूत ने कहा कि मैं आदि से पूर्ण हूं कहां जाऊं और कहां रहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि क्या कहूं वचन तेरे समीप लहती नहीं केवल एक नारायण है दूसरा नहीं है। मूर्ख अज्ञानी से कहता है कि कोई यत्न हो तो उसे देखूं मैं आपको नहीं जानता कि मैं कौन हूं परमार्थरूप आप शिव है। और कहता है कि उसको देखें, तब कैसे प्राप्त हो, हे अवधूत! मेरे साथ विहार करो तब अवधूत ने कहा कि स्त्री पुरुष मेरी दृष्टि में नहीं है, आपी आप शिवरूप हूं॥ तब प्रह्लाद ने कहा कि मैं आप से पूछता हूं पर यह नहीं जानता कि मैं कौन हूं क्योंकि मैं अपने में नहीं हूं, और आपी आप हूं, यदि कहूं कि तेरे सत्संग से मुझको कुछ प्राप्त हुआ तो नहीं, क्योंकि एक अद्वितीय शिव है इससे जहां तेरी इच्छा हो वहां जा मैंने अपने को जाना कि सर्व मैंही हूं तब अवधूत ने कहा कि जिह्वा से कहता है और मनमें दूसरे का शोच रखता है जो तुझको श्रीगोविन्द के दर्शन की इच्छा है तो जान कि गुप्त, प्रकट वही है, यही श्रीगोविंदजी का भजन है कि सर्व भगवद्रूप है, तुझको चाहिये कि आपा को त्यागकर आपी आप होजावे और ज्ञान प्राप्ति का सारांश है तब प्रह्लाद ने कहा कि जब आपे से रहित हों तब आप कैसे हों तब अवधूत ने कहा कि जब आपा मिट गया तब कहो कि नारायण है.

यदि वही है तब सर्व वहीहै,दूसरा नहीं,इससेसर्वसाधन औरकर्म यहीहै कितू जान कि श्रीगोविन्दहै,जब चैतन्यको जाना तब वही हुआ ताते स्वरूपको मत देख काहे ते किरूप कोईवस्तु नहींहै वह सर्वआत्माहै, हेप्रह्लाद! यदि तू जानना चाहताहै तो जान ले कि मैं भी वही हूं तब प्रह्लाद ने पूछा कि हे महाराज! मुक्त क्या वस्तु है यह भी दयापूर्वक समझाइये तब अवधूत ने उत्तर दिया कि इसके जानने का यही उपाय है कि सर्वमय नारायणही को जाने, क्योंकि आत्मा सम्पूर्ण पदार्थों में आकाश की तरह परिपूर्ण है, हे प्रह्लाद! तुम राक्षसी बुद्धि का त्याग करो और पाखंडी न बनो यह समझो कि वह पुरुष भाग्यहीन है जो नारायण के सिवाय दूसरी वस्तु निश्चय करे, और जो पुरुष चलना, निद्रा, भोजन इत्यादि सम्पूर्ण वस्तुओं को एक समझे उसको धन्यभाग्य समझना चाहिये, मैं ऐसा अतिथि नहीं हूं कि जो राज्य व सम्प्रदाय की रक्षा करूं इससे सारांश यह निकलता है कि अपने सिवाय और कुछ न देखो न सुनो, तुम्हारे विना कोई दूसरा नहीं है, जो कुछ दृश्यपदार्थ है उस सम्पूर्ण को मिथ्या और अहंकारमय जानो, यदि तुमको निश्चय न होवे तो मैं तुम को प्रत्यक्ष दिखा दूं, कि जिसतरह तुम्हारे वाप, दादे का शरीर त्याग होने उपरान्त अब पता नहीं मिलता कि वे कहां हैं उसी प्रकार इस शरीर को भी नाशवान् समझो तुम यह नित्य देखते और सुनते हो कि अमुक पुरुष का शरीर पात (मरा) हुआ और भस्म कियागया तिसपर भी अपने शरीर इस शरीर को अचल व नाश रहित समझते हो, इससे सत्य यही है कि आपा को त्याग करके अत्मा को निश्चय करो जो कि अखंड है तब प्रह्लादजी ने कहा कि हे महाराज! मेरे चित्त पर काई अर्थात् मल दुःख का लगाहुआ है। इससे जब तक उसका नाश न होवे आत्मा का निश्चय किसप्रकार से होसक्ता है तब अवधूत ने समझाया कि हे प्रह्लाद! अब मैं तेरे इस संशय को दूर करने के

लिये नारायण की स्तुति तुझ को सुनाता हूं उसे ध्यान देकर सुन व अपने हृदय में स्थिर करके उसपर चल कि जिससे इस मल से निवृत्त होकर स्वच्छशरीर होजावे– यह न जानना कि मैं सुनता हूं, क्योंकि गोविन्द और स्तोता एकहै और जो तुझको यह निश्चय है कि मैं राक्षस हूं तो इस बुद्धिको बीच से उठाकर शिवलिंग का पूजन कर लिंग शरीर को कहते हैं इससे जहां लिंग है वहीं शिव हैं, और यह समझो कि जो देखते व श्रवण करते हो वह सब लिंगही है व सूर्य,चन्द्रमा, तारागण ये सम्पूर्ण लिंगही हैं, सम्पूर्ण आकाश, पाताल, मर्त्य लोक को भी लिंगही समझो हे प्रह्लाद! मैं शिव से अतिरिक्त किसी वस्तु को नहीं जानता व देखता हूं इसी ज्ञान से मैं शिवरूप हुआ, क्योंकि शिव सर्वत्र व्याप्त है और जब केवल वही शिवहै तब मैं उससे अतिरिक्त कहां रह सक्ता हूं। इसी विचार से जानो कि मैं शिवरूप हूं, ब्र व विष्णु भी शिवजी का पूजन करते हैं इससे भी मुझ को निश्चय है कि आदिब्रह्म से पिपीलिका पर्यंत एक अद्वितीय शिवही है हे प्रह्लाद! मैं जिससमय शिव के स्थानपर पहुंचा तो उससमय उस शिवपुरी की शोभा मुझ से वर्णन नहीं होसक्ती कि जिसमें शिवजी आनन्दमूर्त्ति अपने पुत्र स्वामिकार्त्तिक आदि को साथ लियेहुये आनन्द से विराजतेहैं कि जिनकी जटाओं से श्री गंगाजी शिव शिव शब्द करती हुई बड़ी ऊंची २ लहरों से बह रही हैं और निर्मल सरोवरों में पक्षीगण कल्लोल करते हुये अलगही शिव २ की ध्वनि से कूज कूज के तैर रहे हैं और उनके मुंह से यही राग निकलता था कि शिवजी अद्वितीय आत्मा हैं। उसीसमय कुबेर भंडारी ने भी आकर दण्डवत् की और विनय की हे महादेवस्वामी! हे ज्ञान के समुद्र! मुझको एक संशय उत्पन्न हुई है उसको आप अपनी कृपामयी शीतल वाणी से निवृत्त करके मेरे हृदय को निस्संशय कीजिये वह यह है कि हे महाप्रभो! मुझको यह नहीं ज्ञान पड़ता कि आप

यदि वही है तब सर्व वहीहै, दूसरा नहीं, इससेसर्वसाधन और कम यही है कि तू जान कि श्रीगोविन्दहै, जब चैतन्यको जाना तब वही हुआ ताते स्वरूपको मत देख काहे ते कि रूप कोईवस्तु नहींहै वह सर्वआत्माहै, हेप्रह्लाद! यदि तू जानना चाहताहै तो जान ले कि मैं भी वही हूं तब प्रह्लाद ने पूछा कि हे महाराज! मुक्त क्या वस्तु है यह भी दयापूर्वक समझाइये तब अवधूत ने उत्तर दिया कि इसके जानने का यही उपाय है कि सर्वमय नारायणही को जाने, क्योंकि आत्मा सम्पूर्ण पदार्थों में आकाश की तरह परिपूर्ण है, हे प्रह्लाद! तुम राक्षसी बुद्धि का त्याग करो और पाखंडी न बनो यह समझो कि वह पुरुष भाग्यहीन है जो नारायण के सिवाय दूसरी वस्तु निश्चय करे, और जो पुरुष चलना, निद्रा, भोजन इत्यादि सम्पूर्ण वस्तुओं को एक समझे उसको धन्यभाग्य समझना चाहिये, मैं ऐसा अतिथि नहीं हूं कि जो राज्य व सम्प्रदाय की रक्षा करूं इससे सारांश यह निकलता है कि अपने सिवाय और कुछ न देखो न सुनो, तुम्हारे विना कोई दूसरा नहीं है, जो कुछ दृश्यपदार्थ है उस सम्पूर्ण को मिथ्या और अहंकारमय जानो, यदि तुमको निश्चय न होवे तो मैं तुम को प्रत्यक्ष दिखा दूं, कि जिसतरह तुम्हारे बाप, दादे का शरीर त्याग होने उपरान्त अब पता नहीं मिलता कि वे कहां हैं उसी प्रकार इस शरीर को भी नाशवान् समझो तुम यह नित्य देखते और सुनते हो कि अमुक पुरुष का शरीर पात (मरा) हुआ और भस्म कियागया तिसपर भी अपने शरीर इस शरीर को अचल व नाश रहित समझते हो, इससे सत्य यही है कि आपा को त्याग करके आत्मा को निश्चय करो जो कि अखंड है तब प्रह्लादजी ने कहा कि हे महाराज! मेरे चित्त पर काई अर्थात् मल दुःख का लगाहुआ है। इससे जब तक उसका नाश न होवे आत्मा का निश्चय किसप्रकार से होसक्ता है तब अवधूत ने समझाया कि हे प्रह्लाद! अब मैं तेरे इस संशय को दूर करने के

लिये नारायण की स्तुति तुझ को सुनाता हूं उसे ध्यान देकर सुन व अपने हृदय में स्थिर करके उसपर चल कि जिससे इस मल से निवृत्त होकर स्वच्छशरीर होजावे– यह न जानना कि मैं सुनता हूं, क्योंकि गोविन्द और स्तोता एकहै और जो तुझको यह निश्चय है कि मैं राक्षस हूं तो इस बुद्धिको बीच से उठाकर शिवलिंग का पूजन कर लिंग शरीर को कहते हैं इससे जहां लिंग है वहीं शिव हैं, और यह समझो कि जो देखते व श्रवण करते हो वह सब लिंगही है व सूर्य,चन्द्रमा, तारागण ये सम्पूर्ण लिंगही हैं, सम्पूर्ण आकाश, पाताल, मर्त्य लोक को भी लिंगही समझो हे प्रह्लाद ! मैं शिव से अतिरिक्त किसी वस्तु को नहीं जानता व देखता हूं इसी ज्ञान से मैं शिवरूप हुआ, क्योंकि शिव सर्वत्र व्याप्त है और जब केवल वही शिवहै तब मैं उससे अतिरिक्त कहां रह सक्ता हूं । इसी विचार से जानो कि मैं शिवरूप हूं, ब्र व विष्णु भी शिवजी का पूजन करते हैं इससे भी मुझ को निश्चय है कि आदिब्रह्म से पिपीलिका पर्यंत एक अद्वितीय शिवही है हे प्रह्लाद ! मैं जिससमय शिव के स्थानपर पहुंचा तो उससमय उस शिवपुरी की शोभा मुझ से वर्णन नहीं होसक्ती कि जिसमें शिवजी आनन्दमूर्त्ति अपने पुत्र स्वामिकार्त्तिक आदि को साथ लियेहुये आनन्द से विराजतेहैं कि जिनकी जटाओं से श्री गंगाजी शिव शिव शब्द करती हुई बड़ी ऊंची २ लहरों से बह रही हैं और निर्मल सरोवरों में पक्षीगण कल्लोल करते हुये अलगही शिव २ की ध्वनि से कूज कूज के तैर रहे हैं और उनके मुंह से यही राग निकलता था कि शिवजी अद्वितीय आत्मा हैं । उसीसमय कुबेर भंडारी ने भी आकर दण्डवत् की और विनय की हे महादेवस्वामी ! हे ज्ञान के समुद्र ! मुझको एक संशय उत्पन्न हुई है उसको आप अपनी कृपामयी शीतल वाणी से निवृत्त करके मेरे हृदय को निरसंशय कीजिये वह यह है कि हे महाप्रभो ! मुझको यह नहीं जान पड़ता कि आप

यदि वही है तब सर्व वहीहै,दूसरा नहीं,इससेसर्वसाधन और कम यहीहै कि तू जान कि श्रीगोविन्दहै,जब चैतन्यको जाना तब वही हुआ ताते स्वरूपको मत देख काहे ते कि रूप कोईवस्तु नहींहै वह सर्वआत्माहै, हेप्रह्लाद ! यदि तू जानना चाहताहै तो जान ले कि मैं भी वही हूं तब प्रह्लाद ने पूछा कि हे महाराज ! मुक्त क्या वस्तु है यह भी दयापूर्वक समझाइये तब अवधूत ने उत्तर दिया कि इसके जानने का यही उपाय है कि सर्वमय नारायणही को जाने, क्योंकि आत्मा सम्पूर्ण पदार्थों में आकाश की तरह परिपूर्ण है, हे प्रह्लाद ! तुम राक्षसी बुद्धि का त्याग करो और पाखंडी न घनो यह समझो कि वह पुरुष भाग्यहीन है जो नारायण के सिवाय दूसरी वस्तु निश्चय करे, और जो पुरुष चलना, निद्रा, भोजन इत्यादि सम्पूर्ण वस्तुओं को एक समझे उसको धन्यभाग्य समझना चाहिये, मैं ऐसा अतिथि नहीं हूं कि जो राज्य व सम्प्रदाय की रक्षा करूं इससे सारांश यह निकलता है कि अपने सिवाय और कुछ न देखो न सुनो, तुम्हारे विना कोई दूसरा नहीं है, जो कुछ दृश्यपदार्थ है उस सम्पूर्ण को मिथ्या और अहंकारमय जानो, यदि तुमको निश्चय न होवे तो मैं तुम को प्रत्यक्ष दिखा दूं, कि जिसतरह तुम्हारे बाप, दादे का शरीर त्याग होने उपरान्त अब पता नहीं मिलता कि वे कहां हैं उसी प्रकार इस शरीर को भी नाशवान् समझो तुम यह नित्य देखते और सुनते हो कि अमुक पुरुष का शरीर पात (मरा) हुआ और भस्म कियागया तिसपर भी अपने शरीर इस शरीर को अचल व नाश रहित समझते हो, इससे सत्य यही है कि आपा को त्याग करके आत्मा को निश्चय करो जो कि अखंड है तब प्रह्लादजी ने कहा कि हे महाराज ! मेरे चित्त पर काई अर्थात् मल दुःख का लगाहुआ है। इससे जब तक उसका नाश न होवे आत्मा का निश्चय किसप्रकार से होसक्ता है तब अवधूत ने समझाया कि हे प्रह्लाद ! अब मैं तेरे इस संशय को दूर करने के

लिये नारायण की स्तुति तुझ को सुनाता हूं उसे ध्यान देकर सुन व अपने हृदय में स्थिर करके उसपर चल कि जिससे इस मल से निवृत्त होकर स्वच्छशरीर होजावे– यह न जानना कि मैं सुनता हूं, क्योंकि गोविन्द और स्तोता एकहै और जो तुझको यह निश्चय है कि मैं राक्षस हूं तो इस बुद्धिको बीच से उठाकर शिवलिंग का पूजन कर लिंग शरीर को कहते हैं इससे जहां लिंग है वहीं शिव हैं, और यह समझो कि जो देखते व श्रवण करते हो वह सब लिंगही है व सूर्य,चन्द्रमा, तारागण ये सम्पूर्ण लिंगही हैं, सम्पूर्ण आकाश, पाताल, मर्त्य लोक को भी लिंगही समझो हे प्रह्लाद! मैं शिव से अतिरिक्त किसी वस्तु को नहीं जानता व देखता हूं इसी ज्ञान से मैं शिवरूप हुआ, क्योंकि शिव सर्वत्र व्याप्त है और जब केवल वही शिवहै तब मैं उससे अति-रिक्त कहां रह सक्ता हूं। इसी विचार से जानो कि मैं शिवरूप हूं, ब्र \व विष्णु भी शिवजी का पूजन करते हैं इससे भी मुझ को निश्चय है कि आदिब्रह्म से पिपीलिका पर्यंत एक अद्वितीय शिवही है हे प्रह्लाद! मैं जिससमय शिव के स्थानपर पहुंचा तो उससमय उस शिवपुरी की शोभा मुझ से वर्णन नहीं होसक्ती कि जिसमें शिवजी आनन्दमूर्त्ति अपने पुत्र स्वामिकार्त्तिक आदि को साथ लियेहुये आनन्द से विराजतेहैं कि जिनकी ज-टाओं से श्री गंगाजी शिव शिव शब्द करती हुई बड़ी ऊंची २ लहरों से बह रही हैं और निर्मल सरोवरों में पक्षीगण कल्लोल करते हुये अलगही शिव २ की ध्वनि से कूज कूज के तैर रहे हैं और उनके मुंह से यही राग निकलता था कि शिवजी अद्वितीय आत्मा हैं। उसीसमय कुबेर भंडारी ने भी आकर दण्डवत् की और विनय की हे महादेवस्वामी! हे ज्ञान के समुद्र! मुझको एक संशय उत्पन्न हुई है उसको आप अपनी कृपामयी शीतल वाणी से निवृत्त करके मेरे हृदय को निस्संशय कीजिये वह यह है कि हे महाप्रभो! मुझको यह नहीं ज्ञान पड़ता कि आप

कौन हैं और मैं कौन हूं और यह सर्वदृश्य क्या पदार्थ है यह आत्मतत्त्व कृपापूर्वक मुझको दर्शाइये-इसप्रकार कुबेर की नम्रतायुक्त विनय सुन के श्रीसदाशिव भोलानाथ ने उत्तर दिया कि हे कुबेर! यह जो पंचभूत, मन, बुद्धि व अहंकार दृष्टि आते हैं सब मैंही हूं मैं तीन प्रकार के स्वरूप धरके संसार को रचताहूं ग्यारह रुद्रहोकर मेरा दर्शनहै मैं आकाश की नाईं सर्वत्र परिपूर्ण हूं यह नाम रूपजो तुमको दिखाई पड़ता है इसको मृगतृष्णा की तरह समझो, चारों वेद, अठारह पुराण और छःशास्त्र मैंही हूं हे कुबेर! मुझको संगरहित व एक जानो यह मैं अखंडी तत्त्व तुमको समझाताहूं, यह नानाप्रकार के शब्द नारायण के शरीर से निकलते हैं यह तत्त्व से निकलते हैं इस सोना, निद्रा, तीय विष्णुको जानो। श्री सदाशिवजी से यह वचन सुनके धन्यबेर अत्यंत हर्षितहुये! हे प्रह्लाद! यदि तू आत्मा जानना चाहे तो राज्य सदाशिवजी का पूजनकर क्यों कि शिव के पूजनसे तत्ता जीवों भी शिवरूप होजाताहै और शिवका नाम के उच्चारना ही जन्म मरण की मुक्तिहै तब प्रह्लादजीने कहा कि शक्ति की पूजन अच्छी है तब अवधूतने उत्तर दिया कि शक्ति का पूजन यही है कि शिव हैं, पार्वतीजी नित्यही शिवके साथ रहती हैं परन्तु जड़होनेके कारणसे उसके तत्त्वको नहीं जाना तू स्त्रीका चेला न हो न प्रह्लादहै न अवधूतहै सर्वव्यापी शिवजीही हैं अबकुबेर की कथा श्रवण करो, कुबेरजी ने पूछा हे शंकर! अब कृपापूर्वक बंध और मुक्तका भेद समझा कर मेरे संशयको निवारण कीजिये कि बंध और मोक्ष क्या वस्तु है। तब सदाशिव भगवान् बोले कि हे कुबेरजी! बंध और मोक्ष ये दोनों अहंकार से उत्पन्न होते हैं जब अहंकार का नाश होवे तो ये दोनों स्वयं निर्मूल होजाते हैं यह सुनकर कुबेर ने फिर विनय किया कि हे महाराज! योग क्या वस्तु है यह भी कृपा करके मुझको समझाइये तब शिवजी ने कहा कि सम्पूर्ण पदार्थों में शिवजी का वास समझना इसीको योग कहते हैं जब

यह वार्ता यहांतक पहुंची तब पराशरजी ने मैत्रेयऋषीश्वरसे कहा कि हे मैत्रेय! चतुर पुरुषको एक वचन बहुत है अगर तू मूर्ख है तब तो तत्त्व की प्राप्ति तुझको अतिदुष्कर है फिर कुबेरजी ने हाथ जोड़कर शङ्करजी से पूछा कि हे सदाशिवजी! कृपाकरके अब मुझको धारणाका यत्न बताइये तब शंकरजी बोले कि शिव काही सम्पूर्ण पदार्थों में बास समझना धारणा है फिर कुबेरने पूछा कि हे शिव! मैं हर्ष व शोक से किसप्रकार निवृत्त होऊं तब कशिवजीने कहा कि एक शिवजी को ही अद्वितीय समझना यही लिंगही शोक से निवृत्त होने का मार्ग है तब कुबेरजीने कहा कि हे समझो है! यदि काम, क्रोध और मोहका त्याग न करूं तो किसत- जानता हूं मैं कहसक्ता हूं कि एक शिव है तब शिवजीने कहा कि कहो सर्व ःाव है तब कुबेरजी ने कहा कि अब मुझको दयाकरके श्वास कि ा ोकना बतलाइये तब शिवजी ने कहा कि जब शिवको जा- उनेगा श्वास रोकना कहां रहा तब कुबेर बड़े आश्चर्य को प्राप्त होकर बोले कि यदि मनही नहीं तब कुबेर कहां है तब शिवजी ने कहा कि प्रथम कुबेर कहां था जो अब नाशहुआ तब कुबेरने कहा कि यदि कुबेर ही नहीं है तब पाप और पुण्य न- रक व वैकुण्ठ किसपर है तब शिवजी ने कहा कि सर्व शिव है यह सब चारों अन्तःकरण और इन्द्री और पांचों तत्त्वरूप शिव का है वैकुण्ठ व नरक भी सदाशिवहै और आदि अन्त और मध्य भी शिवही है और आकाश, पाताल भी शिवही है तब कुबेरने कहा कि हे शिव! वेद शास्त्र में लिखा है कि जिसने श्रीविष्णु को देखा वह फिर मर्त्यलोक में नहीं आता, मैं उसलोकको कैसे पहुंचूं तब शिवजी ने कहा कि यही स्थान है कि शिव है तब कु- बेरजीने पूछा कि हे शिवजी! जो कोई वासना में लिप्त है वह कैसे निवृत्तहोवे तब शिवजीने कहा कि कहो शिव है तब कुबेर जीने कहा कि अब मैंने तत्त्वको पाया इससे यह निश्चय हुआ कि इच्छा से रहित होना यही तत्त्वकी प्राप्ति है तब शिवजी ने

पूंछा कि हे कुवेर! तू कौनहै तब कुवेरने कहा कि मैं शिवहूं जैसे कि जब अग्नि से काष्टका सम्मेलन होता है तब काष्टभी अग्नि होजाता है ऐसे ही जब मैंने अपने को आपके अर्पण किया तब मैं भी तुम्हारा रूप होगया तब शिवजीने कहा कि जब काष्ट है तब अग्निभी है और जब तुमहोतो मैं भी हूं यदि तुम नहीं तो मैं कहां इससे जहां मैं और तू नहीं है वहां कौन है तब कुवेर चुप होरहे क्योंकि इससे अधिक वचन नहीं है हे मैत्रेयजी! जब यह इतिहास अवधूतने प्रह्लादको सुनाया तब प्रह्लाद ने उत्तर दिया कि हे अवधूत! आपके सत्संग से मैंने तत्त्वको जाना अब यह आवरण अर्थात् पर्दा नाशहुआ तब अवधूत ने कहा कि अब मेरी नमस्कार मुझको है मैं जाताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि जहां जा मैं हूं तब अवधूतने कहा कि अब मैं न जाऊंगा काहे से कि तुझे परमहंस देखताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि जब कौवाहैनहीं है तब हंसकहां है यह कहकर स्वरूप में लीन होगयेतौर अवधूत जैसे आयेथे वैसेही चलेगये हे मैत्रेयजी! तुमभी समझो कि मुझको सन्तों का सत्संग सर्वदा प्राप्त न होगा यही समय और काल है जो तुमसे कहताहूं तब मैत्रेयजीने कहा कि हे पराशरजी! मैं तुम्हारे इस उपदेश से मोमके समान पिघल उठा मैं अपने को समझता था कि मैं ब्राह्मणहूं सो मैंने कितनाही ढूंढ़ा परन्तु मुझको इसका पता न मिला कि मैं कौनहूं अब कोई यत्न सिवाय इसके कि अपनेको अग्नि में जलाकर नाशकरडालूं दूसरा दिखलाई नहीं देता अब कृपाकरके जड़भरत महाअद्वैत का इतिहास वर्णन कीजिये वह किसप्रकारका है यदि मैं जानता कि तेरा सत्संग अग्निके समान है तो किञ्चित् भी ग्रहण न करता तब पराशरजीने कहा कि हे मैत्रेयजी! सन्तों का सत्संग अति दुर्लभ है मैं तेरे मनकी बात जानताहूं यह सब मक्र और दंभ है इस नाशवान् शरीरकी प्रीतिका त्यागकर और आनन्द को प्राप्तहो। हे मैत्रेय! अब प्रथम अंश समाप्त हुआ और

द्वितीय अंशका प्रारम्भ करताहूं जो पहिलाहै वही दूसरा है- छः
अंश जो विष्णुपुराणमें हैं उन छहोअंशोंमें वही एकविष्णुहै आदि
व अन्त दूसरा न जानो क्योंकि पंच महाभूत और छठवां आत्मा
है यह सम्पूर्णनाम व रूप जो कुछ दृष्टि में आता है इसको एक
श्री विष्णुका पूर्ण जान काहेते कि जो एकको नाशकरूं तो पांच
दूसरे उत्पन्न होते हैं परन्तु वह एक जिससे पांच उत्पन्नहुये उस
को किसी ने नहीं देखा॥

इति प्रह्लाद का इतिहास समाप्त॥

श्रीगणेशाय नमः॥

हरिः ॐतत्सद्ब्रह्मणे नमः॥

द्वितीयअंशप्रारम्भः॥

अब जड़ भरतका इतिहास प्रारंभ करते हैं॥

पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! इस धर्मपुराण में लिखा है कि ऐसा न हो जो अनेक प्रकारके धर्म सुनकर अपनेका निश्चय त्यागकरे, वही धीरजीवा वली है जो शरीर नाश न होवे तो भी अपने निश्चयका त्याग न करे काहेसे कि शरीरका धर्म गिरनाहीहै इससे निश्चयको क्यों त्यागे, हे मैत्रेय ! द्वितीय अंशमें निरंजन भगवान् की भक्तिका निरूपण वर्णन कियाजायगा जो कोई भक्ति करै वह मुक्त है और जो भगवान् से विमुख है वह बंधमें रहताहै, निर्भयहोना और सर्वविषे एक चिन्मात्रदेखना यही मुक्त है और आपको गोविन्दसे भिन्न जानना यही बंध है, ज्ञानी वहीहै जिसकी सत्में स्थितिहो. न कि मिथ्या में फँसा होय और कहे कि मैं ज्ञानी हूं निश्चय करके समझो कि यह संसार कुछ नहीं है

पूछा कि हे कुबेर! तू कौनहै तब कुबेरने कहा कि मैं शिवहूं जैसे कि जब अग्नि से काष्ठका सम्मेलन होता है तब काष्ठभी अग्नि होजाता है ऐसे ही जब मैंने अपने को आपके अर्पण किया तब मैं भी तुम्हारा रूप होगया तब शिवजीने कहा कि जब काष्ठ है तब अग्निभी है और जब तुमहोतो मैं भी हूं यदि तुम नहीं तो मैं कहां इससे जहां मैं और तू नहीं है वहां कौन है तब कुबेर चुप होरहे क्योंकि इससे अधिक वचन नहीं है हे मैत्रेयजी! जब यह इतिहास अवधूतने प्रह्लादको सुनाया तब प्रह्लाद ने उत्तर दिया कि हे अवधूत! आपके सत्संग से मैंने तत्त्वको जाना अब यह आवरण अर्थात् पर्दा नाशहुआ तब अवधूत ने कहा कि अब मेरी नमस्कार मुझको है मैं जाताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि जहां जा मैं हूं तब अवधूतने कहा कि अब मैं न जाऊंगा काहे से कि तुझे परमहंस देखताहूं तब प्रह्लाद ने कहा कि जब कौवाही नहीं है तब हंसकहां है यह कहकर स्वरूप में लीन होगयेता और अवधूत जैसे आयेथे वैसेही चलेगये हे मैत्रेयजी! तुमभी समझो कि मुझको सन्तों का सत्संग सर्वदा प्राप्त न होगा यही समय और काल है जो तुमसे कहताहूं तब मैत्रेयजीने कहा कि हे पराशरजी! मैं तुम्हारे इस उपदेश से मोमके समान पिघल उठा मैं अपने को समझता था कि मैं ब्राह्मणहूं सो मैंने कितनाही ढूंढ़ा परन्तु मुझको इसका पता न मिला कि मैं कौनहूं अब कोई यत्न सिवाय इसके कि अपनेको अग्नि में जलाकर नाशकरडालूं दूसरा दिखलाई नहीं देता अब कृपाकरके जड़भरत महाअद्वैत का इतिहास वर्णन कीजिये वह किसप्रकारका है यदि मैं जानता कि तेरा सत्संग अग्निके समान है तो किञ्चित् भी ग्रहण न करता तब पराशरजीने कहा कि हे मैत्रेयजी! सन्तों का सत्संग अति दुर्लभ है मैं तेरे मनकी बात जानताहूं यह सब मक्र और दंभ है इस नाशवान् शरीरकी प्रीतिका त्यागकर और आनन्द को प्राप्तहो। हे मैत्रेय! अब प्रथम अंश समाप्त हुआ और

द्वितीय अंशका प्रारम्भ करताहूं जो पहिलाहै वही दूसरा है- छः अंश जो विष्णुपुराणमें हैं उन छहोअंशोंमें वही एकविष्णुहै आदि व अन्त दूसरा न जानो क्योंकि पंच महाभूत और छठवां आत्मा है यह सम्पूर्णनाम व रूप जो कुछ दृष्टि में आता है इसको एक श्री विष्णुका पूर्ण जान काहेते कि जो एकको नाशकरूं तो पांच दूसरे उत्पन्न होते हैं परन्तु वह एक जिससे पांच उत्पन्नहुये उस को किसी ने नहीं देखा ॥

इति प्रह्लाद का इतिहास समाप्त ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

हरिः ॐतत्सद्ब्रह्मणे नमः ॥

द्वितीयअंशप्रारम्भः ॥

अब जड़ भरतका इतिहास प्रारंभ करते हैं ॥

पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! इस धर्मपुराण में लिखा है कि ऐसा न हो जो अनेक प्रकारके धर्म सुनकर अपनेका निश्चय त्यागकरे, वही धीरजीवा बली है जो शरीर नाश न होवे तो भी अपने निश्चयका त्याग न करे काहेसे कि शरीरका धर्म गिरनाहीहै इससे निश्चयको क्यों त्यागे, हे मैत्रेय ! द्वितीय अंशमें निरंजन भगवान् की भक्तिका निरूपण वर्णन कियाजायगा जो कोई भक्ति करै वह मुक्त है और जो भगवान् से विमुख है वह बंधमें रहताहै, निर्भयहोना और सर्वविषे एक चिन्मात्रदेखना यही मुक्त है और आपको गोविन्दसे भिन्न जानना यही बंध है, ज्ञानी वहीहै जिसकी सत्में स्थितिहो, न कि मिथ्या में फँसा होय और कहे कि मैं ज्ञानीहूं, निश्चय करके समझो कि यह संसार कुछ नहींहै

स्वप्न अथवा मृगतृष्णा के समान भासमानहै, इससे सूक्ष्म दृष्टि चाहिये कि बुद्धिसे सत्य और असत्य को समझे, और असत्य को सत्यसे पृथक् करे। सन्तोंने कहा है कि गोविन्दसे प्रीति करना और संसार का त्याग करना योग्य है परन्तु ऐसी प्रीति न करे कि दृश्यको देखकर आश्चर्यवान् रूपका होवे और ब्रह्ममें लीन होकर मुक्त होवे जैसे समुद्र में बूंद मिलनेसे वह भी समुद्र होजाता है। हे मैत्रेय ! जो मिथ्या निश्चय करता है अर्थात् अपने को यही शरीर नाशवान् जानता है उसको नरक से निकलना अति दुष्कर है। नरक इसी शरीराभिमान को कहते हैं जोकि रुधिर, पीव से भराहुआ चर्म्म, मांस, हाड़ व विष्टा और मूत्रका स्थान है। जिस पुरुषको इसके साथ प्रीति है वही नारकी है। हेमैत्रेय ! तू अपनी चाहनासे ऐसे गहिरे कूपमें पड़ा है कि जिससे रक्षा करने को किसीकी शक्ति नहीं है। इससे इस असार शरीरकी प्रीतिका त्यागकरके दृश्य की दृष्टिको त्याग दे कि जिससे नरक से छूटे, तब मैत्रेयजी ने कहा कि अब कृपा करके बाहरकी पूजा व अन्तर का ज्ञान वर्णन कीजिये, तब पराशरजी बोले कि बाहरी पूजावाले को त्वचा देखती है और अन्तर के पुजारी को सर्व आत्मा जानताहै इससे तू इन दोनों से रहितहो तब मैत्रेयजी ने कहा कि आपने प्रथम अंशमें कहा है कि सर्व विष्णुही है तब मैं कहांहूं हेपराशरजी ! मैं जन्म, मरण के तापसे अति भयभीतहूं इससे मेरी रक्षा कीजिये तब पराशरजी बोले कि इस असार शरीरकी प्रीतिका त्यागकर जोकि आवागमनका बीज है इससे उचित है कि वैराग्य कर जिसके करनेसे आनन्द को प्राप्तहोवे तब मैत्रेयजी ने पूछा कि अब आप कृपाकरके राग और वैराग दोनोंका भेद मुझसे वर्णन कीजिये तब पराशरजी ने कहा कि संसारको मिथ्या जानना इसको विराग कहते हैं और भगवान्को छोड़कर और वस्तुका अहंकार करना इसको राग कहते हैं इससे इसशरीर से विराग करके गोविंद का भजन करो

तब मैत्रेयजी ने कहा कि मैं विरागके विनाही इस शरीराभिमान से विरागी हूं किस कारण से कि मेरा शरीर तेरे निकट है और मैं आप कहां कहां जाताहूं यही चित् चैतन्यहै जहां चित् जाता है वहीं चिन्ता साथ २ जाती है इससे किसी से नहीं मिलता और जो गोविन्दका भजन करताहूं तो भजनको छोड़कर हजारों स्थानों में मारा मारा फिरता है मैं नहीं जानताहूं कि यह चित् क्या वस्तु है। न शरीर में है और न गोविन्द में, शरीर की पालना करता है, निष्प्रयोजन मित्र इसी को देखा है। यह शरीर से मुक्तभी है और जब शरीर को कुछ दुःख होता है तब हाय २ भी करताहै, और एक आश्चर्य और भी है कि सम्पूर्ण संसार इससे पूर्ण है परन्तु यह संसार से मुक्तहै इससे यह शरीर सदा मेरे संग है और मैं इससे निर्लेप हूं कि जैसे आकाश घटके अन्तर व बाहिर पूर्ण है और निर्लेप भी है तैसेही शरीर के नाश से आत्मा का नाश नहीं होता क्योंकि आत्मा नित्य है जरा, मृत्यु, युवा अवस्था से रहित एक रसहै, यह आत्मनिरूपण मैंने तुमसे प्रकट किया अब तुम भी कुछ आत्मनिरूपण करो तब पराशरजीने कहा कि तुमने यह क्या निर्णय किया, आत्मनिर्णय वह है कि जो भक्तिसंयुक्त हो, भक्ति विना ज्ञान फल रहित वृक्षके समान है, भक्ति तो आपही भगवद्रूप है अब जड़भरतकी कथा को श्रवण करो॥

अथ जड़भरतकी कथा॥

पूर्व जन्म में जड़भरत यमुना किनारे तपस्या करते थे और रात दिन परमेश्वर के भजन में मग्न रहतेथे कि एकदिन उसी वनमें सिंह आया जिसको देख भयभीत होकर मृग इधर उधर भागने लगे तब एक गर्भवती हरिणी के उदरसे एक बच्चा पृथ्वी पर जड़भरत के तपस्थल के निकट गिरपड़ा जोकि अत्यन्त दुर्बलहोने के कारण चल नहीं सक्ताथा जब जड़भरतका नैमित्तिक तपस्याके अन्तमें ध्यान उखड़ा तो देखा कि एक हरिणका बच्चा

स्वप्न अथवा मृगतृष्णा के समान भासमानहै, इससे सूक्ष्म दृष्टि चाहिये कि बुद्धिसे सत्य और असत्य को समझे, और असत्य को सत्यसे पृथक् करे। सन्तोंने कहा है कि गोविन्दसे प्रीति करना और संसार का त्याग करना योग्य है परन्तु ऐसी प्रीति न करे कि दृश्यको देखकर आश्चर्यवान् रूपका होवे और ब्रह्ममें लीन होकर मुक्त होवे जैसे समुद्र में बूंद मिलनेसे वह भी समुद्र होजाता है। हे मैत्रेय! जो मिथ्या निश्चय करता है अर्थात् अपने को यही शरीर नाशवान् जानता है उसको नरक से निकलना अति दुष्कर है। नरक इसी शरीराभिमान को कहते हैं जोकि रुधिर, पीव से भराहुआ चर्म्म, मांस, हाड़ व विष्ठा और मूत्रका स्थान है। जिस पुरुषको इसके साथ प्रीति है वही नारकी है। हेमैत्रेय! तू अपनी चाहनासे ऐसे गहिरे कूपमें पड़ा है कि जिससे रक्षा करने को किसीकी शक्ति नहीं है। इससे इस असार शरीरकी प्रीतिका त्यागकरके दृश्य की दृष्टिको त्याग दे कि जिससे नरक से छूटे, तब मैत्रेयजी ने कहा कि अब कृपा करके बाहरकी पूजा व अन्तर का ज्ञान वर्णन कीजिये, तब पराशरजी बोले कि बाहरी पूजावाले को त्वचा देखती है और अन्तर के पुजारी को सर्व आत्मा जानताहै इससे तू इन दोनों से रहितहो तब मैत्रेयजी ने कहा कि आपने प्रथम अंशमें कहा है कि सर्व विष्णुही है तब मैं कहांहूं हेपराशरजी! मैं जन्म, मरण के तापसे अति भयभीतहूं इससे मेरी रक्षा कीजिये तब पराशरजी बोले कि इस असार शरीरकी प्रीतिका त्यागकर जोकि आवागमनका बीज है इससे उचित है कि वैराग्य कर जिसके करनेसे आनन्द को प्राप्तहोवे तब मैत्रेयजी ने पूछा कि अब आप कृपाकरके राग और वैराग दोनोंका भेद मुझसे वर्णन कीजिये तब पराशरजी ने कहा कि संसारको मिथ्या जानना इसको विराग कहते हैं और भगवान्को छोड़कर और वस्तुका अहंकार करना इसको राग कहते हैं इससे इसशरीर से विराग करके गोविंद का भजन करो

पहुँचे तब उनके माता पिता को बड़ा सन्देह हुआ कि जाना जाताहै हमारा पुत्र गूंगा और मूढ़है और वे लोग जिस कामको कहते थे जड़भरत कभी नहीं करते थे और अपने चित्तमें सदा आनन्दित रहते थे जब भाइयोंने देखा कि जड़भरत किसी काम का नहीं है तब एक दिन वन क्रीड़ा के लिये लिवालेगये और खेत सींचने की इच्छा करके खेतकी मेड़पर पहुँचे परन्तु मेड़ उस खेतकी टूटीथी कितनाही यत्न किया परन्तु उस मार्गसे बहतेहुये जलको किसी प्रकार बांध न सके तब लाचार होकर आपस में विचार करनेलगे कि इस जड़भरत से कुछ काम नहीं होता लाओ इसी को बांधकी ठौर डालदें और यह विचार करके जड़भरतको बांधके स्थानपर डालदिया और ऊपर से मिट्टी डालकर खेत सींचा और खेतको सींचने के पीछे जड़भरतको उसीदशामें छोड़ अपने घरचलेआये परन्तु इसअवस्था को जड़भरत ने अपने मनमें कुछ भी खेद न लाना और अपने दोनों खुलेहुये नेत्रों से आनन्दपूर्वक वनका कौतुक देखते रहे कि इतनेमें उसदेशका राजा जो प्रतिवर्ष कालीजीको एक मनुष्य का बलिदान चढ़ाताथा बलिढूंढ़ता हुआ आ पहुंचा, वह चाहता था कि कोई बाहरी मनुष्यमिले तो उसीका बलिप्रदानकरूं परन्तु कोई विदेशी मनुष्य दिखाई न पड़ता था कि अकस्मात् उसकी निगाह जड़भरतजी पर जापड़ी और इनको हृष्ट पुष्ट चैतन्य शरीर पानी के बांध में मिट्टी से दबाहुआ देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और अच्छा बलि विचारकर उनको उस मिट्टी से निकाला और पूछा कि तू कौन है जब जड़भरतजी ने कुछ भी उत्तर न दिया तब वह इनके दोनों हाथ बांधकर भवानी के मन्दिर में लेगया और खड्ग उठाकर जैसेही चाहा कि इनकी गर्दनपरमारें कि इकबारगी मन्दिरसे बड़ा घोरशब्द हुआ और उसके पीछे देवीने स्वयंप्रकट होकर राजा को इनके मारने से निवृत्तकिया और कहा कि रे मूर्ख! तू इनको बलिदान करने के लिये लाया

पड़ाहै उसकी सुन्दरता देखकर जड़भरत का चित्त मोहित होगया और उसपर रीझके अपनी गोदमें करके अपने तपस्थलमें उठालाये और फिर दिन प्रतिदिन उससे ऐसी प्रीति बढ़ाई कि जिससे उनके ध्यानमें बाधा पड़नेलगी और वे उस बच्चेके पालने में मग्न होगये एक दिन जब किसी आवश्यक कार्यके वशहोके जड़भरतजी अपने स्थानसे कहीं बाहर गयेथे कि स्थान सूना पाकर वह हरिणका बच्चा वनमें किसी ओर भागगया जब जड़भरत ने उक्त कार्य करने के उपरान्त लौटकर अपने स्थानमें उक्त बच्चेको न पाया तब उसके स्नेहसे अत्यन्त पीड़ित होकर बड़ा पश्चात्ताप किया कि कैसा सुन्दर हरिण मेरे हाथलगा था वह न मालूम कहां चलागया उसके विना मुझको क्लेशहै निदान उस बच्चेकी प्रीति में जड़भरत के शरीरका नाशहुआ और दूसरे जन्म में हरिण का तन पाकर वनमें विचरनेलगे परन्तु ज्ञान व ध्यानका वीज उनके मनसे नहीं मिटाथा कि जिसके प्रकाश से एक दिन उनके मनमें आई कि पूर्वजन्म में मैं तपस्वी था और इस ब्रह्मके ध्यान के विना एक श्वासभी वृथा न खोताथा परन्तु अव हरिणकी योनिमें प्राप्तहोकर फल मूलका भी अप्राप्त होना केवल हरिण की प्रीतिका कारण है इससे अव मुझको उचित है कि संसार की किसी वस्तुमें प्रतिबन्ध की निवृत्ति के लिये प्रीति न करूं जव ऐसा विचार जड़भरत के मनमें उत्पन्न हुआ तव ज्ञानकी भविष्यत इच्छाकरके विचार करनेलगे कि अव इस शरीर को त्यागना चाहिये यह विचार के यमुना किनारे पर पहुंचे कि उसी समय एक ब्राह्मण स्नान से निश्चिन्त होकर फूल तोड़कर देवता की पूजाकर रहाथा जड़भरत इस चरित्र को दूरसे देखकरके अपना शरीर त्याग ब्राह्मण के घरमें जन्म लेतेहुये जव दो वरस की अवस्था को प्राप्तहुये तव से अपने माता पिता व भाई बन्धु किसीके वुलाने से उत्तर न देनेकी वृत्ति धारण की और इसी मौनवृत्ति से नौ दश वरस की अवस्था को

पहुँचे तब उनके माता पिता को बड़ा सन्देह हुआ कि जाना जाताहै हमारा पुत्र गूंगा और मूढ़है और वे लोग जिस कामको कहते थे जड़भरत कभी नहीं करते थे और अपने चित्तमें सदा आनन्दित रहते थे जब भाइयोंने देखा कि जड़भरत किसी काम का नहीं है तब एक दिन वन क्रीड़ा के लिये लिवालेगये और खेत सींचने की इच्छा करके खेतकी मेड़पर पहुँचे परन्तु मेड़ उस खेतकी टूटीथी कितनाही यत्न किया परन्तु उस मार्गसे बहतेहुये जलको किसी प्रकार बांध न सके तब लाचार होकर आपस में विचार करनेलगे कि इस जड़भरत से कुछ काम नहीं होता लाओ इसी को बांधकी ठौर डालदें और यह विचार करके जड़भरतको बांधके स्थानपर डालदिया और ऊपर से मिट्टी डालकर खेत सींचा और खेतको सींचने के पीछे जड़-भरतको उसीदशामें छोड़ अपने घरचलेआये परन्तु इसअवस्था को जड़भरत ने अपने मनमें कुछ भी खेद न माना और अपने दोनों खुलेहुये नेत्रों से आनन्दपूर्वक वनका कौतुक देखते रहे कि इतनेमें उसदेशका राजा जो प्रतिवर्ष कालीजीको एक मनुष्य का बलिदान चढ़ाताथा बलिढूंढ़ता हुआ आ पहुंचा, वह चाहता था कि कोई बाहरी मनुष्यमिले तो उसीका बलिप्रदानकरूं परन्तु कोई विदेशी मनुष्य दिखाई न पड़ता था कि अकस्मात् उसकी निगाह जड़भरतजी पर जापड़ी और इनको हृष्ट पुष्ट चैतन्य शरीर पानी के बांध में मिट्टी से दबाहुआ देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और अच्छा बलि विचाकर उनको उस मिट्टी से निकाला और पूछा कि तू कौन है जब जड़भरतजी ने कुछ भी उत्तर न दिया तब वह इनके दोनों हाथ बांधकर भवानी के मन्दिर में लेगया और खड्ग उठाकर जैसेही चाहा कि इनकी गर्दनपरमारें कि इकबारगी मन्दिरसे बड़ा घोरशब्द हुआ और उसके पीछे देवीने स्वयंप्रकट होकर राजा को इनके मारने से निवृत्तकिया और कहा कि रे मूर्ख! तू इनको बलिदान करने के लिये लाया

है इनके चरित्र को तू नहीं जानता, यदि ये चाहैं तो मेरा और तेरा दोनों का संहार होजावे, यह सुनकर राजा ने जड़भरत जी को छोड़दिया जब जड़भरतजी इस बन्धनसे छूटे और फिर भी निश्शंक हो आनन्द से उसी वन में विचरने लगे कि इतने में एक दूसरा राजा जो कपिलमुनि के आश्रमपर सांख्यशास्त्र पढ़ने के लिये पालकी में सवार चला जाता था और जिसकी पालकी के दो कहार थकजाने के कारण पालकी के बोझ व अपनी चाल से लाचार हो रहे थे यकायक उसकी दृष्टि जो इधर पड़ी तो देखा कि एक मनुष्य अतिबलवान् और हृष्टपुष्ट उसी वनमार्ग में चला जाता है सेवकों को आज्ञादी कि इसे पकड़लाओ एक तो मिला अब दूसरे की खोज में जो इधर उधर दृष्टि फेरी तो वामदेव भी इनकी दृष्टि के सम्मुख आगये तब उनको भी बली जानकर सेवकलोग राजा के पास पकड़लाये और राजा की आज्ञानुसार दोनों के कन्धोंपर उस सुखपालका बांस धरा के चलतेहुये, परन्तु ये दोनों तपस्वी इस नई व्याधिमें जिसका कभी स्वप्न में भी नाम न सुना होगा फँस जाने के कारण व बोझ के भार से पैर ठीक २ न धरते और धीरे २ चलते थे, तब राजा ने कहा कि जल्द २ चलो परन्तु वे दोनों तपस्वी राजा की बातको कुछभी ध्यान में न लाते थे, कभी चलते और कभी खड़े होजाते थे, निदान उनकी यह दशा देखकर राजा अति क्रोधितहुआ और बहुत से कठोर वचन इन दोनों तपस्वियों को सुनाकर बड़ा क्लेशदिया परन्तु इन दोनों के मुखपर कुछ भी ग्लानि के चिह्न दर्शित न हुये, जब राजाने उन की यह व्यवस्था देखी तो अपनी बुद्धिके बलसे अनुमानकिया कि ये दोनों पुरुष कोई महात्मा मालूम होते हैं, निदान इसी विचार से पालकी पृथ्वीपर रखवादी और शीघ्रही अपने राज्यसुख के अहंकारको छोड़कर सुखपाल से पृथ्वी पर उतर आया और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगा कि हे महाराज! आपके इस

शील शान्ति व आचरण से लक्षित होता है कि आप कोई महात्मा पुरुष हैं इससे मेरे इस अनुचित कर्म से जिससे आपको इतना क्लेश सहना परा क्रोध न करके मुझको इस अपराध से क्षमा दान दीजिये—तब जड़भरत ने उत्तर दिया कि तुझपर कौन क्षमा करे तेरे सुखपाल के लादने का बोझ मेरे कन्धोंपर हुआ और कन्धों का कटिपर व कटिका भार जांघोंपर व जांघों का बोझ चरणोंपर व चरणों का बोझ पृथ्वी पर हुआ इससे तू मुझसे क्या क्षमाकराता है अपने इस अपराध की पृथ्वीसे क्षमा कराओ हे राजन् ! यह तुमने वृथा समझ रक्खाहै कि मैं सुखपालपर चढ़ाहूं देखो सुखपाल लकड़ीका है और लकड़ी वृक्षकी है तुमको लज्जा नहीं आती कि वृक्षपर चढ़के पालकी पर अपना चढ़ना बतलाते हो तब राजाने पूछा कि हे महाराज जड़भरतजी ! दया करके मुझको भी इस अहङ्कार से छूटने का उपाय बताइये कि सुखको प्राप्तहोऊं तब जड़भरतजी ने कहा कि हे राजन् ! जिसतरह तू सुखपाल में बैठा है और सुखपाल तुझ से भिन्न है इसी तरह अपने शरीर में भी विचार की दृष्टि से देख कि तू इस शरीर में केवल स्थितही है परन्तु यह तुझ से भिन्न है जब तुझे ऐसा भासित होगा तेरा अहंकार स्वयं नाश होजायगा तब राजाने पूछा कि महाराज यदि मैं समझूं कि मैं शरीर से भिन्नहूं तो कौनहूं तब जड़भरतने कहा कि तू वही है जो कहताहै कि मैं कौनहूं तब राजा अवाक् होरहा तब जड़भरतजीने कहा कि हे मूर्ख ! रिभु और निदाघ की कथा जो मैं तुझे सुनाता हूं उसको ध्यान लगाके श्रवणकर ॥

अथ ऋभु और निदाघ की कथा प्रारंभ ॥

ऋभु ब्रह्माजीके पुत्र एक दिन निदाघ अपने शिष्य को देखने के लिये जब उनके आश्रम परगये तब निदाघ ने जो कि दशहजार वर्ष से ऋभुजी के शिष्य थे अपने गुरुको

देख उठ खड़े हुये और साष्टांग दंडवत् कर और शास्त्रानुसार विधिपूर्वक उनका पूजन करके उच्चासन पर बिठाकर विनय की कि हे महाराज! आपकी जिस वस्तु में रुचिहो भोजन कीजिये तब ऋभुजीने कहा कि मुझे मीठे भोजन से अधिक प्रेम है यह आज्ञा पाकर निदाघने अपनी स्त्री को भोजन तय्यार करने की आज्ञादी और वह उनकी आज्ञानुसार नानाप्रकार के भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, लेह्य व्यंजन बनाकर ले आई और ऋभु जीने आनंदपूर्वक भोजन किये तत्पश्चात् निदाघ ने विनय पूर्वक उनसे पूछा कि हे महाराज! इस भोजन करने से यदि आपकी तृप्ति हुई हो तो कृपा करके दासके चित्तको अनुमोदित कीजिये तब ऋभुजीने उत्तर दिया कि मुझमें तो क्षुधा और तृप्ति दोनों में से कोई भी नहीं है किसलिये कि जब अग्नि तत्त्व भोजन की इच्छा करता है तब पृथ्वी तत्त्वपर उष्णता करती है तब भोजन की चाहना होती है इसी को क्षुधा कहते हैं और भोजन कर चुकता है तब तृप्ति होती है यह सम्पूर्ण शारीरिक धर्म हैं फिर मुझको क्षुधा से क्या प्रयोजन है तब निदाघ ने पूछा कि आप कहां रहते हैं व कहां जाइयेगा तब ऋभुजीने उत्तर दिया कि मैं आकाश की नाईं सर्वव्यापी हूं आना, जाना मुझ में कुछ भी नहीं है, मैं देश, कालसे मुक्त हूं, तू और सर्व नहीं एक मैं ही हूं हेराजन्! साधन सम्पन्न मुक्त-रूप है, जड़भरत ने कहा कि हे राजन्! ऋभुजीने जो कुछ निदाघसे कहा यह सब परमार्थ है। तब ऋभुजीने कहा कि हे निदाघ! तू यह समझ कि सम्पूर्ण चर अचर में एकही पुरुष व्याप्त है, यदि तू यह शंका करे कि वह पुरुष कैसा है जो सब में व्याप्त है और मैं कौनहूं तो तू यह समझ कि सर्वव्यापी तूही है निदान इस प्रकार ऋभुजी निदाघ को उपदेश करके वनको चलेगये व कुछेक समय के व्यतीत होने पर फिर घूम आये और नगर के बाहर अपना आसन किया जब निदाघने

यह खबर पाई कि महाराज ऋभुजी आये हैं और वे नगर के बाहर उतरे हैं तब तुरंत अपने हाथी पर सवार होकर उनके पास पहुंचा और हाथ जोड़कर विनयकी कि हे कृपानाथ ! आप यहां क्यों स्थित हैं नगरको पधारिये तब ऋभुजीने उत्तर दिया कि मैंने नगर और प्रजा व राजा तो कभी देखाही नहीं है इससे तुम मुझको दिखलाओ कि ये किस प्रकार के होते हैं तब निदाघने निवेदन किया कि हे महाराज ! मैं राजा हूं और ये लोग सब मेरी प्रजा हैं और यह नगर सब के बसने को और यह हाथी मेरे चढ़ने के लिये है परन्तु मेरी मुक्तकी इच्छा है तब ऋभुजीने कहा कि नगर और हाथी इत्यादि सांसारिक पदार्थ सब दृष्टिमात्र हैं जब आंख बन्द होजाती है तब कुछ भी दृष्टि नहीं आता तब निदाघ ने फिर विनयकी कि हे महाराज ! सबलोग तो यही जानते हैं कि संसारमें प्रकट भी है कि मैं हाथी के ऊपर सवारहूं और यह मेरे नीचे है तब ऋभुजीने कहाकि हे राजन ! मैंने ऊपर और नीचे भी नहीं देखा कि कैसाहै तब निदाघ ने उनके चरणों पर गिरकर फिर विनयकी कि हे महाप्रभु ! आप आचार्यहैं इससे आपकी दृष्टिमें कुछ भेद नहीं है परन्तु मैं कामना करके ग्रसित हूं इससे मेरी दृष्टि में भेद है अब कृपा करके मुझे वह उपदेश दीजिये कि जिससे मैं कामना से मुक्त होकर आत्मा को पाऊं तब ऋभुजीने निदाघकी भक्ति व प्रेम देखकर उत्तर दिया कि मैं तेरे उपदेशही के निमित्त फिर आया हूं अब तू मेरे साथ प्रीति कर और मेरे निकट रह तब निर्मल होगा यही मैं तुझे उपदेश देताहूं और परमार्थरूप आत्माको एकही जान कि वह अधिष्ठान रूप है । इस प्रकार ऋभुजी निदाघ को उपदेश देकर अपने स्थान को चलेगये और निदाघ यह उपदेश पाकर अद्वैत में लीन हुआ और मनुष्यों और पशुओं में एक अभिन्न आत्मा देखने लगा कि ये सर्वरूप हैं और मैं अद्वैत स्वरूप हूं—जब यह कथा यहां तक पहुंची तब

जड़भरत ने राजा से कहा कि हे राजन्! तुमभी ऐसाही समझो आत्मा से भिन्न कोई वस्तु नहीं है और जिसके ऐसा ज्ञान है उसको प्रकट में सब नाम, रूप भासते हैं परन्तु ज्ञानकी दृष्टि में वही एक सर्वान्तर्यामी है जैसे जल में तरंग इत्यादि नानाप्रकार के विकार दिखाई देते हैं परन्तु वास्तव में जल एकही पदार्थ है तैसेही नाम रूप केवल देखने व सुनने मात्र है परन्तु इन सब वस्तुओं का तत्त्व एकही परब्रह्म है, तेरी दृष्टि में इस कारण भेद है कि तेरी बुद्धिके विचार से भिन्न २ भासते हैं इससे तुम ऐसा मत समझो बल्कि यही समझो कि आत्मा एकही है और ब्रह्मासे लेकर चींटी पर्यन्त यह सब उसी एक आत्माका प्रकाशहै इसलिये कि अच्युतसे विशेष कोई वस्तु नहीं है यदि पूछो कि वह अच्युत कौन है, तो मैं और तुम और सम्पूर्ण चराचर जगत् जो दृष्टिमात्र व समझ में आता है वही एक अच्युत है। मुझको ऐसा अभेद जानकर संशय व भेद मन से दूरकरके व परमार्थ में चित्त लगाकर देखो कि आत्मा आकाशकी नाईं सर्वव्यापी है और जिसको यह ज्ञान प्राप्त हुआ है वह यत्न विनाही स्वरूप को प्राप्तहुआ है जब जड़भरत ने राजाको इसप्रकार उपदेशकरके उस के चित्तका बोध किया तब राजा ने सुखपाल को त्यागदिया और जड़भरत के साथ वनको चलागया और अद्वैत होकर सबका संग किया और जड़भरत फिर गूंगे बनकर अपने घरमें लौट आये और यहां उनके भाइयोंने फिर भी पूर्वोक्त नानाप्रकारसे क्लेश दिया लेकिन उसको जड़भरत कुछ भी न समझे जब इसप्रकार नानाभांति की दुर्गति होनेपर भी जड़भरत ने कुछ उत्तर न दिया तब उनके पिताने अपने और पुत्रों को समझाया कि अब इसको किसी प्रकारका दंड व क्लेश न देना यदि यह मूढ़ है तब भी मेरा पुत्र व तुम्हारा भाई है इसको दण्ड देना वृथाहै तब उन लोगोंने निज पितासे कहा कि जो यह लोह व पत्थर की तरह मौनसाधे है

इसी से हमलोग इसको दण्ड देते हैं और इसको यही योग्य है तब उनके पिताने फिर समझाया कि यदि ऐसा भी है तब भी इसको दण्ड देना उचित नहीं है फिर उठकर जड़भरतका हाथ पकड़कर अपने स्थान पर लेआया और उनके शरीरपर हाथफेर कर पूछा कि हे पुत्र! तुम बोलते क्यों नहींहो क्या तुमको काल का भय है मैं तो तुम्हें योगेश्वर देखताहूं क्योंकि योगेश्वरलोग ही दुःख व सुखको समान समझते हैं अब यह बताओ कि मैं इस संसार से किसतरह पारहोऊं, जब मैं शरीर त्याग करूं तब तुम गयाजी में जाकर मेरा श्राद्ध करना कि जिससे मैं मुक्त होजाऊं यह सुनकर जड़भरतने कुछ भी उत्तर न दिया इसी समयान्तरमें वे कहार भी राजा के सुखपाल में लगे हुये थे आपहुंचे और जड़भरत के पिता को उन्हें उपदेश करते देखकर बोले कि हे महाराज! अभी किञ्चित् विलम्ब हुआ है कि इसने हमारे राजा को ऐसा उपदेश करके विरक्त कर दिया कि वह अपना सुखपाल त्यागकर और अवधूत बनके वनको चलागया उन कहारों की यह वार्ता सुनकर फिर पिताने जड़भरत से कहा कि हे पुत्र! मुझको भी संसारसे मुक्त होनेका कोई यत्न बताओ कि जिससे मैं भी भवसागर पार होजाऊँ तब जड़भरतजी उपदेश का उचित समय जानकर पहिले हँसे फिर रोनेलगे यह हँसना और रोना देखकर उनके पिताने समझा कि यह बुद्धिमान् है तब उनसे बोले कि हे पुत्र! यह तेरा हँसना और रोना किसलिये है तब जड़भरत ने उत्तरदिया कि रोना इसलिये है कि चतुराई से कुछ न पाया बहुत वेद और शास्त्र पढ़े और पंडित भये परन्तु परमार्थ का खोज न पाया और हँसना इस कारण है कि द्वैत का भ्रम निवृत्त हुआ परन्तु हे पिता! मेरे इस हँसने और रोने से तुमको क्या प्रयोजन है तब उनके पिताने कहा कि मेरा भी यह प्रयोजन है कि मेरी भी तृष्णा निवृत्त होजावे तब जड़भरत ने कहा कि यदि तृष्णा से मुक्त होने की

इच्छा रखते होतो तुम भी योग और प्राणायाम करो वह योग अनात्म और आत्म दो प्रकार का होता है पहिले मैं तुमको आत्मयोग का विवर्ण वतलाता हूं उसको चित्त लगाकर सुनो तब उनके पिताने कहा कि हे पुत्र! नहीं मुझसे दोनों प्रकार के योगोंका विवर्ण विधान से वर्णन करो तब जड़भरत ने कहा कि शरीर से साधन करके जो परमार्थ चाहता है इसको अनात्म-योग कहते हैं देखो जव शरीर और शारीरिक धर्म दोनों मिथ्या हैं तव जो वस्तु उस मिथ्या से उत्पन्न होगी वह किस प्रकार सत्य होसक्ती है इसी तरह अनात्म से कुछ भी सिद्ध नहीं हो-सक्ता। अथवा शरीर वहुत काल तक स्थित रहे तो भी उससे कुछ प्रयोजन नहीं निकलता मैं अपने शरीर को वहुत जानता हूं और मुझे इसके पूर्व जन्म के कई शरीर याद हैं परन्तु इन शरीरों से कोई परमार्थ नहीं दिखाई पड़ा इससे ऐसा योग करो कि विना आत्मा जो सारभूत है उसको न देखो—यदि यह जानो कि आत्मा कैसा है तो वह चैतन्य और आनन्द स्वरूप है व अन्तर वाहर पूर्ण है इस भीतर वाहर को त्यागो यही आत्म-योग है हे पिता! शुभ अशुभ का भेद अपनी दृष्टि से उठाओ क्योंकि आत्मा अभेद है तव पिताने कहा कि मैं पापी कैसे आत्मत्यागी होऊं तव जड़भरत ने कहा कि तू भूत, भविष्यत, वर्तमान नहीं है गोविन्दही है इससे पापी व पुण्यात्मा कैसे हो सक्ता है तेरी आदि और अंत को कोई नहीं जानता तव पिताने कहा कि इसी कारण से कहताहूं कि जीवहूं तव जड़-भरत ने कहा कि सच तू अजीव है तुझ में अतीत पद नहीं यदि कहो कि जीव है तो शरीर जीव से है, वर्णाश्रम तेरा क्या है तव ब्राह्मणने उत्तर दिया कि मैं जीवविषे वर्णाश्रम क्या वताऊं तव जड़भरत ने कहा कि हे पिता! जव जीवविषे वर्णाश्रम ही नहीं है तव पाप पुण्य कैसे हो सक्ता है, जवतक वर्णाश्रम का विवेक चित्तमें रहता है तभी तक पाप पुण्य

का विचार है और जब वर्णाश्रम को मिथ्या जाना तब धर्म अधर्म कहां रह सक्ता है तब ब्राह्मण ने फिर पूछा कि जब वर्णाश्रम ही मिथ्या है तब शुभ अशुभ कर्म जो शरीर से होते हैं उनका भोग कौन करता है तब जड़भरत ने कहा कि शुभ और अशुभ कर्म तो शरीर से होते हैं जब उस शरीर को अग्नि में जलादिया तो इससे विशेष और क्या दंड हो सक्ता है कि जिसने शुभ, अशुभ कर्म किये वह जलादिया गया, आत्मा तो वर्णाश्रम से न्यारा है उसको शुभ और अशुभ कर्म की चिन्ता किसी प्रकार नहीं होसक्ती इससे उचित है कि तुम सदा प्रसन्न और मग्न रहा करो तब पिताने पूछा कि मैं किस प्रकार निश्चिन्त व मग्न रहूं मैं तो मृत्युके डरसे सूखा जाताहूं तुम कहते हो कि यह कुछ नहीं है मैं तो इस क्लेश से निवृत्त होने के लिये यज्ञ करता था तब जड़भरत ने कहा कि पहिले तुमको उचित है कि यज्ञ कर्त्ता का विचार करो कि कौन पुरुष है तब यज्ञ करो तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि यज्ञ कर्त्ता तो मैं ही हूं तब जड़भरत ने पूछा कि तुम कौनहो शरीर हो अथवा जीव? तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं जानता हूं कि मैं ब्राह्मण हूं, ब्राह्मण वर्ण को कहते हैं, आत्मा में रंग प्रवेश नहीं करते आत्मा अरूप और साक्षी है और शरीर रूपवान् होकर नाशमान है, फिर जो वस्तु नाशमान है और उसके साथी भी नाशमान हैं तब वर्णाश्रम कहां रहसक्ता है, यह केवल बुद्धि के भ्रम से वर्णाश्रम भासित होता है जब यह भ्रम निवृत्त होकर ज्ञान प्राप्त होजाता है तब वर्णाश्रम व पाप पुण्य और सुखका क्लेशस्वयं निवृत्त होजाता है इससे शरीर से चिन्ता दूर करके ब्रह्मको प्राप्त होजावो, तब जड़भरत ने कहा कि जब आत्मामें ही वर्णाश्रम नहीं है तो शरीर में कैसे रह सक्ता है, क्योंकि तुम कहते हो कि मैं ब्राह्मण हूं। तुम शुभ अशुभ की चाहना व चिन्ता को त्याग कर गोविन्द का भजन करो परन्तु चिन्ता तभी दूर होती है कि जब यह

इच्छा रखते होतो तुम भी योग और प्राणायाम करो वह योग अनात्म और आत्म दो प्रकार का होता है पहिले मैं तुमको आत्मयोग का विवर्ण वतलाता हूं उसको चित्त लगाकर सुनो तब उनके पिताने कहा कि हे पुत्र ! नहीं मुझसे दोनों प्रकार के योगोंका विवर्ण विधान से वर्णन करो तब जड़भरत ने कहा कि शरीर से साधन करके जो परमार्थ चाहता है इसको अनात्म-योग कहते हैं देखो जव शरीर और शारीरिक धर्म दोनों मिथ्या हैं तव जो वस्तु उस मिथ्या से उत्पन्न होगी वह किस प्रकार सत्य होसक्ती है इसी तरह अनात्म से कुछ भी सिद्ध नहीं हो-सक्ता। अथवा शरीर वहुत काल तक स्थित रहे तो भी उससे कुछ प्रयोजन नहीं निकलता मैं अपने शरीर को वहुत जानता हूं और मुझे इसके पूर्व जन्म के कई शरीर याद हैं परन्तु इन शरीरों से कोई परमार्थ नहीं दिखाई पड़ा इससे ऐसा योग करो कि विना आत्मा जो सारभूत है उसको न देखो—यदि यह जानो कि आत्मा कैसा है तो वह चैतन्य और आनन्द स्वरूप है व अन्तर वाहर पूर्ण है इस भीतर वाहर को त्यागो यही आत्म-योग है हे पिता ! शुभ अशुभ का भेद अपनी दृष्टि से उठाओ क्योंकि आत्मा अभेद है तव पिताने कहा कि मैं पापी कैसे आत्मत्यागी होऊं तव जड़भरत ने कहा कि तू भूत, भविष्यत, वर्तमान नहीं है गोविन्दही है इससे पापी व पुण्यात्मा कैसे हो सक्ता है तेरी आदि और अंत को कोई नहीं जानता तव पिताने कहा कि इसी कारण से कहताहूं कि जीवहूं तव जड़-भरत ने कहा कि सच तू अजीव है तुझ में अतीत पद नहीं यदि कहो कि जीव है तो शरीर जीव से है, वर्णाश्रम तेरा क्या है तव ब्राह्मणने उत्तर दिया कि मैं जीवविषे वर्णाश्रम क्या वताऊं तव जड़भरत ने कहा कि हे पिता ! जव जीवविषे वर्णाश्रम ही नहीं है तव पाप पुण्य कैसे हो सक्ता है, जवतक वर्णाश्रम का विवेक चित्तमें रहता है तभी तक पाप पुण्य

का विचार है और जब वर्णाश्रम को मिथ्या जाना तब धर्म अधर्म कहां रह सक्ता है तब ब्राह्मण ने फिर पूछा कि जब वर्णाश्रम ही मिथ्या है तब शुभ अशुभ कर्म जो शरीर से होते हैं उनका भोग कौन करता है तब जड़भरत ने कहा कि शुभ और अशुभ कर्म तो शरीर से होते हैं जब उस शरीर को अग्नि में जलादिया तो इससे विशेष और क्या दंड हो सक्ता है कि जिसने शुभ, अशुभ कर्म किये वह जलादिया गया, आत्मा तो वर्णाश्रम से न्यारा है उसको शुभ और अशुभ कर्म की चिन्ता किसी प्रकार नहीं होसक्ती इससे उचित है कि तुम सदा प्रसन्न और मगन रहा करो तब पिताने पूछा कि मैं किस प्रकार निश्चिन्त व मगन रहूं मैं तो मृत्युके डरसे सूखा जाताहूं तुम कहते हो कि यह कुछ नहीं है मैं तो इस क्लेश से निवृत्त होने के लिये यज्ञ करता था तब जड़भरत ने कहा कि पहिले तुमको उचित है कि यज्ञ कर्त्ता का विचार करो कि कौन पुरुष है तब यज्ञ करो तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि यज्ञ कर्त्ता तो मैं ही हूं तब जड़भरत ने पूछा कि तुम कौनहो शरीर हो अथवा जीव? तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं जानता हूं कि मैं ब्राह्मण हूं, ब्राह्मण वर्ण को कहते हैं, आत्मा में रंग प्रवेश नहीं करते आत्मा अरूप और साक्षी है और शरीर रूपवान् होकर नाशमान है, फिर जो वस्तु नाशमान है और उसके साथी भी नाशमान हैं तब वर्णाश्रम कहां रहसक्ता है, यह केवल बुद्धि के भ्रम से वर्णाश्रम भासित होता है जब यह भ्रम निवृत्त होकर ज्ञान प्राप्त होजाता है तब वर्णाश्रम व पाप पुण्य और सुखका क्लेशस्वयं निवृत्त होजाता है इससे शरीर से चिन्ता दूर करके ब्रह्मको प्राप्त होजावो, तब जड़भरत ने कहा कि जब आत्मामें ही वर्णाश्रम नहीं है तो शरीर में कैसे रह सक्ता है, क्योंकि तुम कहते हो कि मैं ब्राह्मण हूं। तुम शुभ अशुभ की चाहना व चिन्ता को त्याग कर गोविन्द का भजन करो परन्तु चिन्ता तभी दूर होती है कि जब यह

पूर्ण निश्चय होजावे कि मैं शरीर नहीं हूं बल्कि स्वयं गोविन्दहूं जब ऐसा ज्ञानहोजावेगा तब गोविंद में और तुममें कुछ भी अंतर न रहेगा. इसीको आत्मबोध कहते हैं। हे पिता! अब तेरे पिंड के निमित्त कौन गयाजीमें जावे मैं तो वह पुत्र नहीं हूं कि तुम्हारा शरीर नाश होजानेपर भी आवागमनमें बना रक्खूं बल्कि मेरी तो यह सम्मति है कि तुम पितृलोक में भी न जावो क्योंकि जो पितृलोक में जाता है वह एक दिन फिर भी गिरकर उत्पन्न होता है जब यह शरीरही तुम्हारा नहीं है तब पिंड से तुम क्या प्रयोजन रखते हो इस वार्तालापको सुनकर ब्राह्मणने कहा कि हे पुत्र! मैं तो जानता था कि तू मूढ़ है परन्तु तू बड़ा बुद्धिमान् है अब पिंडदान का नाश न कर पिंड केनाशहोजाने से मैं प्रेतयोनिको प्राप्त होऊंगा और मुक्ति भी प्राप्त न होगी, मैंने गृहस्थाश्रम में इसी कारण से वासलिया था कि मेरे पुत्र उत्पन्न होवे और मेरा देहान्त होने पर मुझे मुक्त करे तब जड़-भरत ने कहा कि मैं ऐसा तुम्हारा पुत्र नहीं हूं कि तुमको प्रेत करूं अथवा पितृ करूं हां यदि तुम मेरी बात पर ध्यान धरकर चित्त से सुनो तो मैं तुमको इसी क्षण में मुक्त करके तुम्हारे स्वरूप में पहुंचादूं। हे पिता! जब दृष्टि शरीर से उठती है तभी प्रेतत्वको प्राप्त होता है (इसीको प्रेत होना कहते हैं) इससे हे पिताजी! मैं तुमको शरीर से पृथक् करके सत् चित् आनंद में लगाताहूं तब ब्राह्मण ने कहा कि जैसे तू भ्रष्ट है वैसेही मुझ को भी भ्रष्ट किया चाहता है, तू मेरा पुत्र है और मैं तेरा पिता तुझसे बड़ा हूं इससे तेरी बात मेरे चित्त में नहीं आती यह मैं अवश्य जानता हूं कि कर्म प्रधान है तब जड़भरत ने कहा कि हे पिता! तुम सत्य कहते हो! मैं तो अवश्य भ्रष्ट हूं क्योंकि मैं नाम, रूपसे मुक्त हूं परंतु जो तुम भी संसार से पार होना चाहो तो भ्रष्ट होजाओ तब पिता ने पूछा कि पहिले तू क्यों पत्थर की नाईं जड़ हुआ था बोलता क्यों नहीं था तब जड़भरत

कहा कि इसके पूर्व मैंने कितनेही जन्म लिये हैं कि जिन में
बुद्धि भी अपूर्व रही परन्तु उस बुद्धि और जन्मों से कुछ भी
सिद्ध न हुआ तब मैंने बोलना बन्द करके मौन रहनाही उत्तम
समझा यदि तुमको निश्चयहोवे तू कुछ नहीं जानताहै तो और पुत्रों
सेकहो कि वे मुझसे शास्त्रार्थ करें हां यहमैं वेशक नहीं जानताहूं
कि मैं जड़भरतहूं और तुममेरे पिता हो, मैं सम्पूर्ण पदार्थों को
सत् चित् आनन्द स्वरूपही जानताहूं तब पिताने कहा कि हे पुत्र!
अब काल से जिसप्रकार मेरी निवृत्ति होवे वह उपाय बताओ
क्योंकि वह महाबलवान् है उससे मेरी रक्षा किस उपायसे क-
रोगे तब जड़भरत ने कहा कि यह कालका भय केवल शरीर
धारियों को है जब शरीर का भ्रम हृदय से दूर होजाताहै तब
वही निर्भ्रम होना उसका रक्षक है नहीं तो जब काल शिरपर
आपहुंचा तब रक्षा चाहना किसकामका है इससे जो तुम स्थिर
चित्त होकर व ध्यान लगाके सुनो तो मैं तुम्हारी ऐसी रक्षाकरूं
कि जिससे तुम्हें काल केवल भ्रममात्र समझ पड़े और मेरे इस
वचन को वही सुनेगा जो निर्भय होगा और जो सांसारिकभोगों
में आसक्त है उसको मेरा यह कथन कभी नहीं रुचेगा। हे पिता!
तुम और मेरे सब भाईलोग इसबातको ध्यान से विचार कर
देखो कि मेरे इस कथन से मेरा कुछभी प्रयोजन नहीं है मैं तुम
से केवल इस लिये कहताहूं कि जिससे यह जीवन, मरण का
भ्रम जो तुम्हारे चित्त विषे लगा है उसका संदेह फिर कभी
तुम्हारे चित्तमें उत्पन्न न होवे, हे पिताजी! योग करनेवालों को
कालका भय कभी नहीं होता इससे जो तुम इस भय से निर्भय
होना चाहोतो योग करो। अल्पबुद्धियों को सदा इस बातकाही
विचार रहता है कि मैं यह हुआ और यह और होगा उनको
जीवन मरण का भय कभी नहीं होता वेलोग यह कभी नहीं
जानते कि हम कहां से आये और कहां जावेंगे वे सदा इसी
भ्रममें बंधे रहतेहैं कि यह मेरा वर्णाश्रम और यह जाति और यह

थी कि वामदेव भी आकर पहुँचगये और बोले कि यह बड़े आश्चर्य की वार्ता है-कि हृषी की चाहना है हृषीकेश को देखूं-तब जड़भरतने कहा कि हे पिताजी! वामदेवजीके कथनपर ध्यान दीजिये देखिये ये क्या कहते हैं, तब जड़भरतजीके पिता ने उत्तर दिया कि जैसे तुमहो वैसेही वामदेव भी हैं परन्तु यह बताओ कि मैं कौन हूं। तब वामदेवजी ने कहा कि तू हृषीकेश है इस अहंकार द्वैत को मध्य से उठादेवो-तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं तो एक से शत्रुता व दूसरे से मित्रता का बर्ताव रखता हूं और हृषीकेश का शत्रु व मित्र आदि सब जीवों में समान भाव है फिर मैं हृषीकेश कैसे हो सक्ता हूं तब वामदेवजी ने कहा कि यदि सब में समान भाव न होता तो सबसे मित्रता करता शत्रुता न करता इस कारण से कि वह सर्वव्यापी होने से मित्रता व शत्रुता सब में पूर्णरूप से विद्यमान है और वही सर्वान्तर्यामी तुममें भी व्याप्त है इससे अहङ्कारको मध्य से उठाकर कहो कि तुम कौन हो तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं अपने को ईश्वर किस प्रकार से कहूं क्योंकि ईश्वर काम क्रोधादि रहित निर्विकार है और मैं इन सांसारिक विकारों में बंधा हूं तब वामदेवजी ने समझाया कि तुमको तो विषमता भासती है तुम्हारा काम,क्रोध कैसे निवृत्त होवे, तुमतो सर्वविषे समरूप हो ऐसा नहीं है कि मनसे राग और क्रोध के वश होकर द्वेष करो यह भ्रम अपने चित्त से दूर करो, तब ब्राह्मण ने आश्चर्यितहोकर पूछा कि यदि आपका कथन सत्य है तो सन्तलोग राग द्वेष का त्याग किसलिये बतलाते हैं, तब वामदेवजीने कहाकि संतलोग जिस वस्तु से कार्य और कारण दोनों का नाश होता है उसको त्याग करते हैं परन्तु किसी पदार्थ का त्याग करना उचित नहीं है क्योंकि ये संपूर्ण वस्तुयें ब्रह्म में विद्यमान हैं किञ्चिन्मात्र भी ब्रह्मसे भिन्न नहीं हैं इससे हे ब्रह्मन्! तुमभी ब्रह्मसे भिन्न होने का अहंकार मत करो यह संपूर्ण शारीरिक पदार्थ हृषीकेशही के हैं तुमको

उनके शुभ और अशुभ से क्या प्रयोजन है तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हे वामदेवजी ! तुम्हारे कथन से ज्ञात होता है कि शरीर हृषीकेश है और इसकी चाहना मुझको है इससे निश्चित होता है कि हृषीकेश मैं ही हूं इस कथन को सुनकर वामदेव जी अवाक् होगये तब जड़भरतजी बोले कि हे पिताजी ! यही योग कालके नाश का उपाय है देखो मैं तुम्हारा ऐसा पुत्र हूं कि तुमको जीवतही मुक्त करदिया तब ब्राह्मण ने कहा कि यह तुम वृथा झूठ बकते हो न तुम मेरे पुत्रहो और न मैं तुम्हारा पिता हूं यह अहंकार रूपी भ्रम केवल चार पहर दिन जो कि जाग्रद-वस्था है इसी में भासित होता है रात्रि को जब शयन करतेहो तो उस सुषुप्ति दशामें यह कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ता और इस कुटुंब की व्यवस्था तो चलती हुई नौका के समान है जैसे नौका पार पहुंचती है तो सब बटोही अपनी २ बाट चलकर अंतको अपने २ घर में पहुंचते हैं यही गति इन सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों की है यह विचारकर क्षणेक मौन होगये फिर अति आश्चर्यित होकर शोचने लगे कि अब क्या करूं और कहूं या सुनूं यदि सर्वमयी वासुदेवही है तो सबके निषेध का कारण क्या मैंही हूं हे जड़भरत ! इस विचारांश से मेरी दशा अब जड़ वस्तु के सदृश होगई परंतु इतना कथन और है कि जब मैं स्वयंहृषीकेशही होगया तब मुझमें जड़ और चैतन्य का निवेश किस तरह हो सक्ता है, तब वामदेवजी बोले कि हे जड़भरत ! धन्य है तुमको कि तुमने पिता पुत्रभाव के पर्दे को इस तरह नाश किया कि आज तक किसी ने इस भेद का विवरण करके निवृत्त नहीं कर पाया था. तब जड़भरतजी बोले कि इससे जन्म-रूपी वृक्ष में मोक्षरूपी फल फलित पाकर उसके आनंदरूपी रस के पान से अपनी भ्रमरूपी तृषा शान्तकी तब वामदेव जी बोले कि हे ब्रह्मन् ! तुमकौन हो. यह सुनकर ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हेरूप, हे हृषीकेश ! तुम इन्द्रियों के स्वामी होकर किस से

थी कि वामदेव भी आकर पहुँचगये और बोले कि यह बड़े आश्चर्य की वार्त्ता है—कि हृषी की चाहना है हृषीकेश को देखूं—तब जड़भरतने कहा कि हे पिताजी ! वामदेवजीके कथनपर ध्यान दीजिये देखिये ये क्या कहते हैं, तब जड़भरतजीके पिता ने उत्तर दिया कि जैसे तुमहो वैसेही वामदेव भी हैं परन्तु यह बताओ कि मैं कौन हूं। तब वामदेवजी ने कहा कि तू हृषीकेश है इस अहंकार द्वैत को मध्य से उठादेवो—तब ब्राह्मण ने कहा कि मैं तो एक से शत्रुता व दूसरे से मित्रता का बर्ताव रखता हूं और हृषीकेश का शत्रु व मित्र आदि सब जीवों में समान भाव है फिर मैं हृषीकेश कैसे हो सक्ता हूं तब वामदेवजी ने कहा कि यदि सब में समान भाव न होता तो सबसे मित्रता करता शत्रुता न करता इस कारण से कि वह सर्वव्यापी होने से [illegible] शत्रुता सब में पूर्णरूप से [illegible]

जो इतने इतिहास तुमसे वर्णन किये उनसे तात्पर्य यह है कि तुम आत्मस्वरूप होजावो और यह निश्चय करो कि हृषी केश के विना कोई वस्तु किञ्चिन्मात्र भी नहीं है, अब इस ब्राह्मण के इतिहास को जो मैं तुमसे कथन करताहूं चित्त लगाकर श्रवण करो—वामदेवजी ने ब्राह्मण से पूछा कि हे विप्रवर ! आप कौन हैं, यह सुनके वह ब्राह्मण अवाक् होगया कुछभी उत्तर न देसका तब उस ब्राह्मण की मौन दशा देखकर वामदेवजी बोले कि मौन मत हो और यह बताओ कि तुम्हारा स्वरूप क्या है तब ब्राह्मण ने कहा कि हे वामदेव ! तुमको लज्जा भी नहीं आती कि आपही आप हो और पूछते हो कि तुम कौनहो इस वार्त्ता के सुनने से वामदेव कुछ उत्तर न देकर मौन होगये तब जड़भरत जी ने उत्तर दिया कि हे वामदेवजी ! मेरा पिता इस तरह नाश हुआ कि उसका अंश किञ्चिन्मात्र भी अवशेष न रहा इसी समयान्तर में अवधूत दत्तात्रेयजी भी वहां आपहुंचे और बोले कि देखो "शिवरूप" अद्वितीय है तब ब्राह्मण ने पूछा कि हे दत्तात्रे[illegible] जी ! शिवरूप अद्वितीय है तो उसको कौन देख सक्ता है त[illegible]

उनके शुभ और अशुभ से क्या प्रयोजन है तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हे वामदेवजी! तुम्हारे कथन से ज्ञात होता है कि शरीर हृषीकेश है और इसकी चाहना मुझको है इससे निश्चित होता है कि हृषीकेश मैं ही हूं इस कथन को सुनकर वामदेव जी अवाक् होगये तब जड़भरतजी बोले कि हे पिताजी! यही योग कालके नाश का उपाय है देखो मैं तुम्हारा ऐसा पुत्र हूं कि तुमको जीवतही मुक्त करादिया तब ब्राह्मण ने कहा कि यह तुम वृथा झूठ बकते हो न तुम मेरे पुत्रहो और न मैं तुम्हारा पिता हूं यह अहंकार रूपी भ्रम केवल चार पहर दिन जो कि जाग्रद-वस्था है इसी में भासित होता है रात्रि को जब शयन करतेहो तो उस सुषुप्ति दशामें यह कुछ भी दिखलाई नहीं पड़ता और [illegible] व्यवस्था जो चलती हुई नौका के समान है जैसे देखा तो तुम नहीं, "यहां तेरा देखना..." कि मैं इस बातको जानता था कि सतयुग में एक दत्तात्रेयनाम अवधूत है सो वह दत्तात्रेय तुम नहीं हो यही मुझको देखनाहै तब ब्राह्मण ने कहा कि जड़भरत और अवधूत दोनों मेंसे एक भी नहीं अब केवल मैं ही हूं, तब अवधूत ने कहा कि यदि मैं ही नहीं तब तुम कहां हो तब ब्राह्मण ने कहा कि इसी से तुम नहीं हो कि अवधूत नाम से रहित हो तब अवधूत ने कहा कि हे संतो! सबलोग भगवान् की भक्ति को करो इसलिये कि गोविन्द की भक्ति परमार्थ है और सत्संग का यही फल है कि एक श्वास भी भगवान् की भक्ति को न भूलो जैसे विषयी की इन्द्रियां दिनरात विषय को नहीं भूलतीं सदा उसीमें तत्पररहती हैं, इसी प्रकार आप लोग भी भगवान् की भक्ति को न भूलिये क्योंकि भगवान् के करने से द्वैत बुद्धि का नाश होकर सदा अचल व शान्त चित्त रहता है हे ब्राह्मण! अब भक्ति का स्वरूप कहिये तब ब्राह्मण ने कहा कि वासुदेव. हृषीकेश को ही एक समझना अन्यत् किसी वस्तु सांसारिकका भास न होना इसीको भक्तिकहते

हैं तब जड़भरत ने कहा कि सर्वव्यापी गोविंदजीही को जानना इसी का नाम भक्ति है तब बामदेव जी बोले कि भक्ति गोविंद के विषे है अन्यत् नहीं यह कथन अनुचित है तब पराशरजीने मैत्रेय जी से कहा कि हे मैत्रेयजी! अब आप यह बतलाइये कि भक्ति का स्वरूप कैसा है तब मैत्रेय जीने कहा कि जब मैं ही नहीं हूं तब भक्ति और भगवान् कहां है—अब आप अवधूतों का इतिहास वर्णन कीजिये तब पराशर जीने कहा कि अवधूत उनको कहते हैं कि जिनको गोविन्द से अन्यतर किञ्चिन्मात्र भी कोई वस्तु नहीं दिखाई देती यह जो सम्पूर्ण जड़ व चैतन्य मायिक पदार्थ हैं सब गोविन्दही का रूप भासित होते हैं इसस तुमभी यह निश्चय करो कि जो कुछ संसार में देखने और सुननेम आताहै सब गोविंदहीका स्वरूपहै तब मैत्रेयजीने कहा कि जब मैं आपही नहीं हूं तो यह निश्चय कौनकरे तब पराशर जीनेकहा कि यदि तुम अपनेको नाशवान समझते हो तो यह भी पूर्णरूप से निश्चयकरो कि सब संसार नाशवान् है केवल एक गोविन्द ही अविनाशी है जड़भरतका इतिहास सम्पूर्ण हुआ॥

अब तपस्वी का इतिहास प्रारम्भ करते हैं॥

पराशर जी बोले कि एकसमय हम और अवधूत दत्तात्रेयजी उत्तराखण्ड को चलेजाते थे जब बदरिकाश्रम के निकट पहुंचे तब क्या देखा कि एक तपस्वी पञ्चाग्नितापरहा है, जब वह अपने नित्यनियम से निश्चिन्तहुआ तब उसने हम लोगों से प्रश्न किया कि आपलोग कहां से आते व कहांको जायँगे··तब जड़भरत ने उत्तर दिया कि तुम अग्नि में जलो तुमको हमारे आने व जाने से क्या प्रयोजन है परन्तु यह शोचो कि गोविन्दके भजनके विना जितने सांसारिक व पारलौकिक कर्महैं सब मिथ्या व अभिमान मात्र हैं इससे गोविन्द का भजन करो जिससे शुद्ध होकर द्वैत की मलिनताका अँधेरा नाश होवै, जो श्वास

गोविन्द के भजनसे रहित निकलती है उसको श्वास मत समझो वह श्वास अन्य वायु के समानहै और वह वायु जिसतरह मरी खाल (धौंकनी) से निकलती है उसी के समान है, और जिह्वा जो मांसका टुकड़ा है इसको बिना भजन गोविन्दजी के मुखमें रखना उचित नहीं है, जिस समय वाक् इन्द्रिय उत्पन्न हुईथी उससमय उसने यह नियम किया था कि मैं मुखमें स्थित होकर गोविन्द के भजन के सिवाय मिथ्यावाद न करूंगी, हे तपस्वी! वाक् इन्द्रिय कहती है कि जो तुम मनको विषयों से रोककर आत्मपरायण करोगे तो मैं तुमको विष्णुधाम में पहुंचाऊंगी, यदि मन आत्मासे विमुख होवे और वाक् से राम राम कहाकरे तो इससे कुछ कार्यकी सिद्धिनहीं होती बल्कि यहव्यर्थ शरीर को कष्टदायक कार्य है, जब मन पाप, पुण्यसे मलिन है तो हाथ में माला लेकर मुख से राम राम करने से क्या कार्य सिद्ध होगा क्या माला और जिह्वा ये दोनों चीजें हृदयकी मलिनता को दूर करके निर्दोष करदेंगे कदापि नहीं, यदि एकश्वास भी निराश होकर गोविंद का भजन करोगे तो गोविन्दरूप होजावोगे और उसी का जीवन सुफल है जो गोविन्दजी से स्नेह रखता है और जो मन आत्मस्वरूपमें निस्सन्देह लगा है उसी को प्रसन्नता प्राप्त है श्रीभगवान् का वाक्यहै कि जो कोई क्षणमात्र मेरे वास्तवस्वरूपका अभेद चिन्तवन करता है वही मेरा स्वरूप होता है॥ मूर्ख व अज्ञानी लोग प्रारब्ध व कालको दोष देते हैं और कथन करते हैं कि जब प्रारब्ध व काल आवेगा तब भजन करेंगे, यह उनकी अत्यन्त मूर्खता व भूल है, भजन काल व प्रारब्ध के आधीन कदापि नहीं होसक्ता यह केवल पुरुषार्थ सेही सिद्ध होताहै, यह कदापि नहीं शोचता कि यह शरीरकाल का ग्रास है. हे मूर्ख! जब शरीर का नाश होजावेगा तब यह तेरी चाहना क्या काम करेगी मरनेकेपीछे जब इन्द्रियां जड़ होजातीहैं तब केवल पछिताय बाकी रहजाता है, जिसकी इन्द्रियां

मन और विषयों से रुकके आत्मपरायण हुई हैं उसी का मन भी आत्मपरायण होता है, हे तपस्वी! तुम पूछते हो कि तुम कहां से आये व कहां जावोगे इस विषय में मैं आपको क्या उत्तर दूं देखो यह नाशवान् शरीर केवल दृश्यमात्र है, न कहीं आता है न जाता है, जल के बुद्बुदे की भांति उत्पन्न होकर सदा उसी में लय होजाता है यह कहकर हम उठखड़े हुये तब तपस्वी ने पूछा कि कहां जाते हो तब जड़भरतजीने उत्तरदिया कि जब तुम अतीतत्व का अहंकार और तपका अभिमान त्याग करोगे तब मैं तुमको एक इतिहास सुनाऊंगा तब तपस्वी ने कहा कि जिससमय आप लोगों का दर्शन व सत्सङ्ग हुआ उसी समय सम्पूर्ण अहंकार का नाश इसतरह होगया जैसे अग्निके सत्सङ्गसे लकड़ी का रूप किञ्चिन्मात्र अवशेष नहीं रहता, इस वचन को सुनकर जड़भरतजी ने उत्तर दिया कि अब मेरे इस कथन को ध्यानदेकर सुनो और समझो कि आश्रम,व लालवस्त्र और पात्र अतीतत्व नहीं है अतीत उसे कहते हैं जो सब पदोंसे अतीत होजावे और तत्पद और त्वं पदका अभिमान जिस में रञ्चकमात्र न रहजावे हे तपस्वीजी! अब आप यह बतलाइये कि आपने किस वस्तुको त्याग कर अतीतपद धारण किया है। तब तपस्वी ने उत्तर दिया कि मेरी बुद्धि नष्टहोगई इससे अब मुझको इस बात का ज्ञान नहीं है जो आपके कथनानुसार बतलासकूं कि मैं कौन वस्तु छोड़कर अतीत हुआहूं--तब जड़भरतजी ने कहा कि अब मैं तुमको एक इतिहास नारदजी का सुनाता हूं उसको श्रवण करो—

नारद ऋषिका इतिहास॥

एक समय ब्रह्माजी के पुत्र सनकादिक और जय व विजय नाम श्रीविष्णुके पारषद् अर्थात् द्वारपाल गङ्गाजी के सन्निकट बैठे हुये श्री जाह्नवीजी की उत्तम २ तरङ्गों को देखकर प्रसन्नता

पूर्वक आपस में कुछ वार्त्ता करते थे कि उसी समय नारदजी भी आ पहुंचे और परस्पर दण्डप्रणाम व कुशल प्रश्न पूछकर वेभी उस समागम में स्थित हुये तब सनन्दन ने प्रश्न किया कि हे नारदजी! यह बतलाइये कि तुम कहां से आये व कहां जावोगे और तुम्हारी स्थिति किस वस्तुमें है और तुम कौन हो तब नारदजी ने उत्तर दिया कि मैं विष्णुलोक से आताहूं और उन्हीं विष्णुमें मेरी स्थिति है और उन्हीं में जाऊंगा और मैं भी स्वयं विष्णुरूपहूं जैसे जल में बुद्बुद और स्वर्ण में भूषण की आकृति होती है वही दशा मेरी आपके समक्षमें भासित होती है परन्तु असल में मैं विष्णुरूपही हूं नारदके इस कथन से सनन्दनको वड़ी प्रसन्नता हुई और खुशहोकर बोले कि हे नारद! तुम कौनहो और कहां से आते व कहांको जावोगे तब नारदजी ने उत्तर दिया कि यह प्रश्न आप किससे करते हैं यहां इसका कौन सुननेवाला है तब सनकने कहा कि यदि कोई श्रोतानहीं है तब भी यह बतलाइये कि तुम कौनहो तब नारदजीने प्रतिउत्तरमें सनक से पूछा कि आपही बतलाइये कि कौन हैं, यह वचन सुनकर सनक अवाक् होकर मौनहोगये तब सनत् और कुमार दोनोंने मिल के नारदजी से पूछा कि हे देवऋषि! तुम कौनहो और तुम्हारा नाम क्या है और तुम कौन वस्तुहो, तब नारदजी ने उत्तर दिया कि जब विष्णुजी को यह भ्रमहुआ कि मैं कौनहूं तो उनके इस भ्रमको निवृत्त करने की सामर्थ्य है, क्योंकि पंचभूत व अहङ्कार और माया यह पुरुष से प्रकट हुये हैं यातो यह सब जड़ हैं या पुरुष में अध्यस्थ हैं तब पुरुष को कौन कहे कि तू यह या वहहै, और तुमने जो पूछा कि तुम्हारानाम क्या है सो सुनो कि सम्पूर्ण नाम विष्णुजी ही से सिद्ध होते हैं कि जिनकी सत्ता से श्रवण शब्द को सुनते और नेत्र देखते हैं और सम्पूर्ण इन्द्रियां अपने २ व्यवहार में तत्पर रहती हैं मैं वही विष्णुहूं तब जय, विजय ने कहा ऐसा न कहिये हम जाकर

अपने प्रभु विष्णु भगवान् से कहेंगे कि नारद कहते हैं कि मैं विष्णुहूं तब नारदने उत्तरदिया कि हे जय, विजय! यह बात तुम किससे कहोगे तुमभी स्वयंविष्णुरूप हो जो कुछ तुमने सुना वह सब विष्णुही ने सुना है तुम विष्णुसे भिन्न नहीं हो तब जय, विजय ने कहा कि हे नारदजी! तुम जब विष्णुजी के समीप जाते हो तब तो उनको दण्डवत् प्रणाम करते हो और यहां स्वयं विष्णुरूप बनते हो यह क्या बात है तब नारदजी ने कहा कि जो दण्डवत् करता है और जिसको दण्डवत् की जाती है यह दोनों विष्णुही के रूप हैं क्योंकि सम्पूर्ण कार्यों का कर्त्ता एक ईश्वर ही है इस उत्तरको सुनकर जय, विजय अवाक् होकर मौन होगये- तब जड़भरत ने पूछा कि हे तपस्वी जी! अब मुझे यह बतलाइये कि मैं कौनहूं और कहांसे आया व कहां जाऊंगा तब तपस्वी ने उत्तर दिया कि अब आपके उपदेश से मुझको निश्चय हुआ कि न कोई आता है न जाता है एक अद्वितीय गोविन्दही सम्पूर्ण जड़ व चैतन्य में पूर्णरूप से विद्यमान है यह तप केवल भ्रम है हमने इसके करने में अपना समय वृथा व्यतीत किया ज्ञानरूप पञ्चाग्नि से काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहङ्कार इन पांचोंको क्यों नाश न किया॥ तपस्वीका इतिहास समाप्तहुआ, शिव! शिव!!

अब ब्राह्मण का इतिहास प्रारंभ करते हैं॥

पराशर जी बोले कि पूर्वकाल में एक ब्राह्मण क्रियावान् व धर्मज्ञ अपने द्विजकर्म में परायण था उससे उसकी स्त्री ने यह प्रश्न किया कि हे महाराज! कृपा पूर्वक मेरे मुक्ति होनेका कोई सुगम उपाय बतलाइये कि जिससे मैं इस आवागमन के फन्दसे निवृत्त होजाऊं, यह शरीर नाशवान् होकर सदाकाल के फन्देमें फँसा रहता है इसका कोई समय नियत नहीं कि कबतक स्थित रहेगा और कब नाश होजायेगा यदि इसी समय नाशहोजाय

तो मैं अपने स्वरूप के मिलने से भी निराश हूं- यह सुन-कर ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि कालका यही धर्म है कि जब जिस जीवधारी के आता है उसी समय उसको शरीर से मुक्त करताहै इसविषय में चिन्तासे छूटनेसे क्या प्रयोजनहै और कर्म से क्या सिद्धि है शरीर से छूटजाना इसी को मुक्त कहते हैं सो यह आप से आपही काल पाकर छूट जाता है इसलिये कर्मों से क्या प्रयोजन है तब स्त्रीने कहा कि हे महाराज! यमपुरके मार्ग में एक वैतरणी नाम नदी अति भयंकर व बहुत लंबी चौड़ी है मैं उससे किसतरह पार उतरूंगी तब ब्राह्मण ने कहा कि तूने यह कभी देखा अथवा सुना है कि कोई उस नदी में अब तक पड़ा है, परन्तु यह अवश्य कथन सुनाई पड़ता है कि उससे पार होना है, इससे तुम इस विषय में कुछ भी चिन्ता न करो यदि तुम को यमदूत उस नदी में छोड़देंगे तो तुम धर्मराज के सवाल जवाब से अनायास छूटजावोगी परन्तु ऐसा कदापि नहीं होसक्ता, वे किंकर जो प्राणी को लेने आतेहैं उनका केवल इतना धर्म है कि प्राणियों को मार्ग से नघाय कर धर्मराज के सन्मुख लेजाके खड़ा करदेवें क्योंकि वे लोग अपने स्वामी की आज्ञा भङ्ग नहीं करसके इससे तुम निश्शंक होकर यह निश्चयकरो कि यह तृष्णा जो शरीर में लगी हुई है यही वैतरणी नदी है जिस प्राणी ने इस तृष्णा का त्याग किया उसको वैतरणी नदी से कुछ भी भय नहीं है तब स्त्री ने पूछा कि हे महाराज! जो यमपुरी के मार्ग में खांड़े की धारके समान तीक्ष्ण व अतिदारुण कंटक पड़ते हैं कि जिनसे उन प्राणियों को नाना प्रकारके क्लेश सहकर विपत्तियां भोगना पड़ती हैं उनसे वे लोगही निवृत्त होकर सुख पूर्वक पहुंचते हैं कि जिन्हों ने अश्वदान, पादुका दान किया व करते हैं तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि हमको तो घोड़ा और जोड़ा दान करने की कुछ भी सामर्थ्य नहीं है इससे जो क्लेश यमकिंकरोंको होगा वही तुमको भी होगा तब स्त्री ने

कहा कि हे महाराज ! उस मार्ग में विपत्तिजनित जो क्लेश होता है वह केवल प्राणियों को ही होता है किंकर गण उससे मुक्त हैं अर्थात् वह क्लेश उन किंकरों को कदापि नहीं होता तब ब्राह्मण ने समझाया कि हे मतिमंद ! तू यह नहीं समझती कि यह पंचभौतिक शरीर तो मरने के पश्चात् यहां ही पड़ा रहता है अथवा जलकर भस्म होजाता है और जैसे यमका सूक्ष्म रूप है तैसेही तेरा भी स्वरूप होजायगा फिर तुझको किस प्रकार से मार्गजनित क्लेश प्राप्त होगा तब स्त्री ने कहा कि हे महाराज ! ग्रीष्म ऋतु में जो पुरुष पौशाला बिठाता अथवा कलसको शीतलजलसे भरकर दान करताहै उसको अति भयंकर मार्ग में जल पीने के लिये मिलता है तब ब्राह्मण ने कहा कि यमकिंकरों को तृषा निवारण करने के लिये जिस स्थान पर जल मिले तुम भी उसी स्थान पर जल पीकर अपनी प्यास बुझालेना तब स्त्री ने उत्तर दिया कि मुझको यमकिंकर जल नहीं पीनेदेंगे तब ब्राह्मण ने कहा कि हे मूर्ख ! इस बात को यम किंकर भी जानते हैं कि संसार की उत्पत्ति ईश्वर से है और प्रारब्ध भी ईश्वराधीन है यमकिंकरों की यह सामर्थ्य नहीं है कि प्राणी को जल पीने से रोकसकें किसी शास्त्र में यह लेख नहीं है कि जल यमराज का है॥ और यदि यमकिंकर तुमको जल न पीने देंगे तो भी कुछ चिन्ता नहीं क्योंकि यह शरीर पंच-तत्त्व मय है जब जलका नाश हुआ तब और तत्त्व भी नहीं रह सक्के वे भी नाश होजायंगे जब पांचों तत्त्वों का इस तरह से नाश होजायगा तब तुम यमकिंकर व यमराज के सवाल जवाब से बच जाओगी। तब स्त्री ने कहा कि जब यमकिंकर तुमको धर्मराज के समीप लेजावेंगे और वे तुमसे पाप पुण्य का हाल पूछेंगे तब क्या उत्तर दोगे तब ब्राह्मण ने कहा कि प्राणी जाग्रत् अवस्था में जिस वस्तु का विचार करता है वही स्वप्न में भी अनेक रूप धारण करके प्रतीत होती है तूने जीवनावस्था में जो पाप पुण्य

का संकल्प अपने चित्त में किया है वही संकल्प मरने के पश्चात् भी तद्रूप प्रकट होगा क्योंकि मनके निश्चय से जो कर्म शुभ अथवा अशुभ करता है उसी के फलको प्राप्त होता है ऐसेही तुमने कर्म व कर्म के फल व उसका फल देनेवाले यमराज को मनसे संकल्प किया है वही तुमको प्राप्त होगा और जो अपने को मूल के बिचार से देखे तो न पाप है न पुण्य न धर्मराज है न किंकर है मुझमें तो ये दोनों बिषय नहीं हैं फिर पूछना और कहना कौन करे तब स्त्री ने कहा कि मैं पाप व पुण्य को क्या विचारूं चित्रगुप्त जो सब प्राणियों के कर्मों के लिखनेवाले हैं वे स्वयं बिचार करके लिख लेवैंगे तब ब्राह्मणने उत्तर दिया कि सत्य कहो तुमने चित्रगुप्त को कभी देखा है ? हेनिर्बुद्धे ! यह संपूर्ण बिचार तेरे अहंकार का है जो तूने अपने मनमें बिचारकर उसका अभ्यास किया है वही प्रकट होता है, और अपने से अतिरिक्त दूसरे को देखना इसी को अहङ्कार कहते हैं यदि प्राणी इस अद्वैताभाव को त्यागकर सबको एक ब्रह्ममय जानता रहे तो पाप, पुण्य व उत्तर, प्रश्न ये कुछ वस्तु नहीं हैं, तब स्त्री ने कहा कि हे स्वामिन् ! मैं अहङ्कार का किस प्रकार से त्यागकरूं तब ब्राह्मण ने उत्तर दिया कि भक्तियोग करके श्री गोविन्दमें लय होनेसे अहङ्कार का नाश होताहै इससे तुम अहङ्कार से छूटने के लिये भक्ति, योगकरो. यदि पूछो कि भक्तियोग क्याहै तो सुनो, अपने मनमें इस बातका पूर्णरूप से निश्चय करलेवे कि एक अद्वितीय श्रीनारायणही है इससे अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है, व न होगा, और जिस पुरुष ने अपने को श्रीगोविन्द भगवान् में लय कियाहै उसको किसी दूसरेसे कुछ भी प्रयोजन अवशेष नहीं है. यदि कालसे निर्भय होना चाहो तो अहङ्कार का परित्याग करो क्योंकि सम्पूर्ण शरीरमें भीतर व बाहर सब स्थानों के विषे एक हृषीकेश भगवान्ही पूरितहैं. तो,मैं और यह संसार व काल कहां है इससे हृषीकेश का भजन करो जिस से हृषीकेश

रूप होजावो, तब स्त्रीने कहा कि जब तुम कहते हो एक हृषी-केशही है तो उसकाभजन कौनकरे तब ब्राह्मण ने कहा कि भजन करना इस कारण से कहा कि हृषीकेश को भ्रमहै कि यमपुरी जाऊंगा, हे मूर्ख! जब एक भगवान्‌ही पूर्ण है तब काल कहां और किसको कालका भय होवे इससे यही निश्चय करो कि एक भगवान्‌ही है और मैं भी श्रीभगवान्‌ही हूं अब कहो कि तुम कौनहो तब स्त्रीने कहा कि हे स्वामी! मैं हृषीकेशहूं मैंने अच्छीतरह समझ लिया है कि मैं नहीं हूं तब ब्राह्मण ने कहा कि यदि तू हृषीकेश है तो मैं भोग किससे करूंगा तब स्त्री ने उत्तर दिया तू सदाभोक्ता होकर सम्पूर्ण इन्द्रियों को भी भोग देता और उनसे भोगलेता है और तेरे आनन्दसे उनको भी आनन्द है तब और भोगसे क्या प्रयोजन रखता है तब ब्राह्मण ने कहा कि तू मेरी स्त्री नहीं है अब मैं अतीत होता हूं तब स्त्री ने कहा कि मुझको तेरे साथ कब मेलथा जो अब अतीत होता है यह परम्परा से चलीआती है कि कभी भर्त्ता, रहजाता है और उसकी स्त्री उससे पहिले मरजाती है और कभी स्त्री पहिले मरजाती और उसका पति पीछे मरता है इस परस्पर संयोग व वियोग से तुम आपही आप अतीत हो फिर अतीत होना और क्या वस्तुहै जिसकी तुम चाहना करते हो यदि अतीतही होना है तो ऐसे अतीत होवो कि जिसमें त्याग और ग्रहण कोई वस्तु न होवे ब्राह्मण ने कहा कि हे रूप! अब मेरे रूपकहो तब स्त्री ने कहा कि यही रूप तेरा है कि जो तूही है इस वार्त्तालाप के अवसान में पराशरजी मैत्रेयजी से बोले कि हे मैत्रेयजी! वह ब्राह्मण की स्त्री किंचित् काल में अपने स्वरूपमें लीन होगई और तू कहता है कि मेरा क्या रूपहै, इससे तेरा यही रूपहै कि तूही है, परमहंसों का धन परमहंसों कोही प्राप्तहोताहै और जो अस्थि और त्वचा में बँधेहैं उनको आश्चर्य होताहै ॥ इति ब्राह्मणका इतिहास समाप्त। शिव! शिव! शिव!!!

श्रीगणेशाय नमः॥

हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्मणेनमः ॥

अब राजा मान्धाता का इतिहास प्रारम्भ करते हैं ॥

पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! पूर्वसमयमें मान्धाता नामी एक राजा हुआ वह एक दिन अर्धरात्रि को अपने शयनागार में सुखसेजपर सोते समय क्षुधासे व्याकुल होकर उठ बैठा और अपनी रानी से क्षुधा के निवारणार्थ कुछ भोजन मांगा तब उस की रानी ने उत्तर दिया कि तुम्हारा इतना रात्रि और दिन का समय भोजन और शयन मेंही व्यतीत हुआ परन्तु परमार्थ कुछभी हाथ न आया रानीसे इस वचन को सुनकर राजा बोल उठा कि हे रानी! वह कौन कर्महै जिससे परमार्थ प्राप्त होवे तब रानी ने उत्तर दिया कि हे राजन्! अब कामनाहीन सन्तजनों का सत्संग करो कि जिससे कुछ परमार्थ की प्राप्तिहोवे यह सुनकर राजा उसी शय्यापर बैठाहुआ सुखसे श्रीविष्णु२कहनेलगा और रानीसे बोला कि यदि इस समय श्रीविष्णुभगवान् कृपाकरके आजावें तो उनके सन्मुख क्या भेंट रक्खी जावेगी तब रानी ने कहा कि तन, मन, रसना उनके अर्पण कीजियेगा तब राजा ने कहा कि यह शरीर तो रुधिर, मज्जा, अस्थि और त्वचा से पूरितहै और रसना भी मांसका टुकड़ा है जोकि थूक से भरा है और मन संकल्प विकल्प का रूपही है इससे ये सम्पूर्ण क्या वस्तुहैं जो अर्पण करेंगे तब रानी ने कहा कि लाल और मोती इत्यादि रत्न अर्पण कीजियेगा तब राजा ने कहा कि हमारी तुम्हारी दृष्टिमें यह माणिक, मोती इत्यादि रत्नहैं परन्तु वास्तव में ये सब पत्थर के टुकड़े हैं यह भी उनके योग्य नहीं है तब रानी ने उत्तर दिया कि आप हँसी क्या करते हैं सोचो तो ऋषि और मुनि व सन्तजन सहस्रोंबरस योग व समाधिद्वारा अनेक युक्तियोंसे विष्णुभगवान् का ध्यान करतेहैं परन्तु तबभी उनके दर्शन

दुर्लभहैं वे विष्णुभगवान तुमको तत्कालही ध्यान करने से किस तरह प्राप्त होसक्के हैं तब राजा ने कहा कि यह तुम्हारा कथन सत्यहै परन्तु सन्तलोग कहतेहैं कि जो पुरुष जिस समय कामनाका त्याग करताहै उसको उसीसमय विष्णुभगवान् प्राप्तहोतेहैं और श्रीकृष्णमहाराजने भी भगवद्गीता में अर्जुन से ऐसाही कहा है यथाः—सर्व्वधर्म्मान्परित्यज्यमामेकंशरणंव्रज। अहंत्वांसर्व्वपापेभ्योमोक्षयिष्यामिमाशुच॥ जब राजा ने इस प्रकार कथन किया और भगवत्प्रेम की अग्नि उसके हृदय में प्रज्वलित हुई तब रोदन करके प्रेमकी अधिकता में विह्वल होकर अचेत होगया फिर किञ्चित्काल में जब होशआया तब जिधर दृष्टि उठाकर देखता है उधर उसको विष्णुही दृष्टि पड़ते हैं तब पराशरने कहा कि हे मैत्रेयजी! देखो राजा शय्यापर सोताथा परन्तु जब उसने निश्चय और प्रेम से देखा तब उसीका संकल्प विष्णुरूप होकर उसको दर्शित हुआ तब राजाने कहा कि हे विष्णुभगवान्! आप मेरे गले में लगजाइये कि जिससे आपके निर्दोष शरीर में यह मेरी मलिनदेह स्पर्श होने से निर्म्मल होकर पाप, पुण्यसे शुद्ध होजावे यदि आप कहें कि तूने असंख्य जीव हतन किये हैं तो मैंने आपही की आज्ञानुसार राज्यकिया है और मैं अविद्या के वशीभूत होकर अपने को राजा मानतारहा यह अति मूर्खता थी मैं कहांहूं जहां हैं वहां आपही विराजमान हैं, तब विष्णुभगवान् प्रत्यक्ष दर्शन देकर राजा के सन्मुख खड़ेहुये कि जिनके रूप अनूप लावण्यनिधान, सच्चिदानन्दघनके दर्शन करते ही राजा अचेत होकर मौन होगया और वाक्यस्फूर्ति की सम्पूर्ण शक्ति दूरहोगई कुछ भी मुख से न बोल सका, परन्तु अत्यन्त हर्ष से पूरित होकर यह कहनेलगा कि मैं स्वयं विष्णु हूं॥ हे मैत्रेयजी! वह राजा आपे में न रहा अर्थात् ऐसा विह्वल हुआ कि उसके तनमन की सब सुधि जाती रही और सम्पूर्ण पदार्थ उसको विष्णुरूपही दिखाई देने लगे

तब विष्णुभगवान् बोले कि हे राजन्! जो तेरी इच्छा हो वह
वरदान मांगले मैं तेरी इच्छा पूरी करूंगा तब राजाने प्राथना
पूर्वक नम्रता से विनय किया कि हे महाराज! मेरी सम्पूर्ण का-
मनायें आपके दर्शन से पूरी होगईं अब मुझको किसी वस्तु की
चाह नहीं है क्योंकि जितने सांसारिक व पारलौकिक पदार्थ व
सुख हैं वह सब आपही का स्वरूप हैं ऐसे दर्शन को पाकर अब
कुछ बाकी नहीं रहा जिसकी कांक्षा मुझको अवशेष होवे—तब
विष्णु भगवान् बोले कि अभी तू कहताथा कि जब विष्णु भग-
वान् आवेंगे तो मैं उनको क्या भेंट दूंगा इससे वह वस्तु जो
भेंट देने की तेरी इच्छा हो लेआव परन्तु मैं सम्पूर्ण भेंटके प-
दार्थों से उत्तम भेंट तेरे अहंकार अर्थात् शरीराभिमान को उ-
त्तम समझताहूं वही मुझको दे॥ तब राजा ने कहा कि हे म-
हाराज! जब तक मुझ में अहंकार विद्यमान है तभी तक आप
के चरण कमल मेरे हृदयमें हैं जब अहंकार नाश होजावेगा तब
आपके चरणारविन्दोंको मैं कहां रक्खूंगा इससे आप दयापूर्वक
इन अहंकार और ममता दोनोंको लीजिये और आपभी जाइये
क्योंकि तुम तभीतक थे जबतक मुझ में अहंकार था और जब
तक मुझमें अहङ्कार था तभी तक मुझ में सेवक व सेव्य भाव
भी था जब अहंकार नाश होगया तब हम और तुम कहांहैं यह
वचन कहकर, राजा भगवत्स्वरूप में लीनहोगया और विष्णु
भगवान् भी अन्तर्द्धान होगये—तात्पर्य यह है कि जैसे राजाने
जब विष्णुजी का संकल्प किया तब विष्णुजी प्रकट हुये और
जब एक स्वरूपहुआ तब विष्णुजी गुप्त होगये इससे कार्य और
कारण केवल सङ्कल्प मात्र हैं यह संसार मनोमय है अर्थात् जब
जिसने जाना कि संसार है तब सर्व पदार्थ सम्पूर्ण सांसारिक
पदार्थ प्रकट होजाते हैं और जब जिसने मन से संसारको
असार जान लिया तब सम्पूर्ण संसारका नाश उसको भास
मान होता है॥ तब पराशरजी ने मैत्रेयजी से कहा कि

मैत्रेयजी ! जब राजाने संसारको नाशवान् समझ लिया तब उ सीसमय आपको जानकर स्वरूप में लीन होगया। परन्तु मैंने तुमको इतने समय तक उपदेश किया लेकिन तुममें मेरा उपदेश किञ्चिन्मात्र भी प्रवेश न हुआ हे प्यारे ! यह शरीर पुराना घड़ियाल है इसकी प्रीति को त्यागकर अपनेको आपही से जानो॥ मैत्रेयजीने कहा कि हे पराशरजी! यह जो सर्वतत्त्वज्ञान आपने कथन किया इसको मैंने पूर्ण रूपसे जाना इससे भासित होता है कि आत्मा से अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं है परन्तु कृपापूर्वक इतना और भी समझाइये कि जब ब्रह्मासे लेकर पिपीलिका पर्यन्त सब जीव कालकी फांसी में बँधे हैं तो मैं इस दुस्तरकाल फांससे कैसे छूटूं तब पराशरजी ने कहा यही प्रश्न जो तुमने कियाहै एकसमय नकुलने भीमसेनसे किया था कि जिसप्रकारमैं यमपुरी को न जाऊं वह उपाय वर्णन कीजिये तब भीमसेनजी ने उनकी शंका निवृत्ति करने के हेतु नकुल से यह वर्णन किया था कि हे नकुल ! एक समय यकन नाम ऋषीश्वर जो मेरे गृह में आये थे उनसे मैंने भी यही प्रश्न कियाथा इस विषय में जो कुछ उन्हों ने मुझको समझाया था मैं वह सब तुमसे कहता हूं—अब आगे यमकिंकर का इतिहास प्रारम्भ होगा, राजा मान्धाता का इतिहास समाप्त हुआ॥

अथ यम और यमकिङ्कर का इतिहास प्रारम्भ॥

एकसमय यमकिंकर ने धर्मराज से पूछा कि हे भगवन् ! तुम्हारा भय प्राणियों के चित्तसे जिसप्रकार निवृत्त होवे वह दया करके मुझ से वर्णन कीजिये तब धर्मराजजी ने उत्तरदिया कि यह हमारा भय प्राणियों की अज्ञानता से उत्पन्न होता है और जब ज्ञान के द्वारा उनको आत्मस्वरूप का भास होजाता है कि आत्माही सर्वत्र है तब उनको हमारा भय किञ्चिन्मात्र भी नहीं रहता सो इस सम्पूर्ण भयके निवृत्तकर्त्ता श्रीविष्णु

भगवान् ही हैं जे पुरुष श्रीविष्णुभगवान् की शरण में प्राप्त होते हैं वे हमारे पास कदापि नहीं आते और यह जो रूपका अभिमान है सो रज्जु में सर्प के समान भ्रममात्रहै और यही अभिमान जन्म मरणरूप बन्धनका हेतु है जो पुरुष नामरूप से दृष्टि को निवृत्त करता है वह ही निर्यतन मुक्त होता है और जो पुरुष विष्णुभगवान् को जानता है वही वैष्णवहै, स्नानकरने व छापा तिलक लगाने और नग्न रहने से कोई पुरुष वैष्णव नहीं होता है विष्णुका जानना क्या है कि विष्णु हमहीहैं जैसे स्वर्ण के भूषण स्वर्ण से भिन्न नहीं हैं तैसे ही यह सम्पूर्ण चराचर संसार मनुष्य देवतादि तिर्यग्योनि यह सब केवल एक विष्णु गोविन्दजी ही के रूपहैं, हे किंकर! तुमने जो यह प्रश्नकिया कि प्राणी के चित्तसे तुम्हारा भय किसप्रकार निवृत्तहोवे इसके उत्तर में यह समझना चाहिये कि जो पुरुष इस सांसारिक दृष्टि को उठाकर अपने धर्म और भगवद्भजनमें स्थित रहकर ब्रह्मा से लेकर तृणपर्यन्त सबमें एक आत्माही को पूर्ण जानताहै वह हमारे भयसे रहित होजाता है और जो शत्रु व मित्र में एक आत्माही को देखता है उसी को अभेद मुक्ति प्राप्त होती है और सम्पूर्ण चराचर जड़ व चैतन्य में श्रीविष्णुभगवान् को एक रस व्याप्त जानके दूसरी वस्तु का अध्यारोपण करता है इसी को अभेद मुक्ति कहते हैं हे किंकर! मनरूपी शीशा को द्वैतरूपी मल से रहित करके स्फटिकमणि की नाईं स्वच्छकरो जैसे स्फटिकमणि स्वयंरूप रहित होकर सब रूपों में मिलजाती है इसीप्रकार स्वच्छ मनभी शत्रु मित्रसे रहित होकर सब प्राणियोंमें एक सर्वात्मा को व्याप्त देखताहै हे किंकर! यह निश्चय करके मानो कि श्रीवासुदेव भगवान् से भिन्न किञ्चिन्मात्र भी कोई पदार्थ नहीं है और यह सम्पूर्ण माया जाल का जो प्रपञ्च है इसको उन्हीं भगवान्का प्रकाश समझो यदि तुमको मुक्तिकी इच्छा होवे तो इस पंचभौतिक शरीर के विषयोंको विषकीनाईं

त्याग करके यह दृढ़ निश्चय जानों कि जो कुछ देखने सुनने कथन करने में आता है वह सब श्रीविष्णुभगवान् ही हैं तब यमकिंकरने उत्तर दिया कि हे भगवन्! जब हमलोग किसी प्राणी के जीवको बांधकर यहां ले आते हैं तब यह नहीं जानते यह स्वरूप उसका क्या है और पाप व पुण्यका लेखा किससे पूछते और पाप व पुण्यका फल किसको देते हैं तब धर्मराजने कहा कि यह तुम्हारा प्रश्न अकथनीय है इसके विवरण से तुम्हारा क्या प्रयोजन है तब किंकरने कहा कि बड़े आश्चर्य की बात है कि जिसके ऊपर हम और आप आज्ञा करते हैं और उसी का चित्त में चिन्तवन रखते हैं वह नेत्रों से दिखलाई नहीं देता, निश्चयहोता है कि स्वर्ग नरक, प्रश्न उत्तर और जो आप आज्ञा करते हैं कि इसको पाप के फल से नरकमें डालो और हम आपकी आज्ञा मानकर उसको नरक में डालते हैं यद्यपि उसके रोदन करने और दुःख के शब्द को सुनते हैं परन्तु कुछ भी विचार नहीं करते वास्तव में उसके स्वरूप में कुछ हानि व वृद्धि नहीं है, वह दुःख सुखमें एकरस रहता है और शास्त्रद्वाराभी निश्चित है कि यह जीव दुःख व सुख, पाप व पुण्य सम्पूर्ण शारीरिक धर्मों से रहित है इसको काल फांस से भी कुछ प्रयोजन नहीं यह व्यवहार आपका केवल भ्रम और सङ्कल्पमात्र है तथापि आप जो मेरे इस सन्देहको निवृत्त न करेंगे तो हमकिसी को दण्ड व किसी शरीरसे कुछ प्रयोजन न रक्खेंगे तब धर्मराज ने उत्तर दिया कि जीव कर्म के बन्धन में फँसा है तब यमकिंकर ने कहा कि अब मैंने यह समझ लिया कि यह जीवहै परन्तु कृपाकरिके यह बतलाइये कि इसका रूप शुक्ल व श्याम किस प्रकार का है तब धर्मराज ने कहा कि कर्त्ता ईश्वरको कहते हैं हम नहीं जानते कि वह क्या करता है तब यमकिंकर ने कहा कि यदि आप कर्त्ता के कर्मको नहीं जानतेहो तब आपको पाप, पुण्य व शुभ, अशुभ का कैसे निश्चय होताहै तब धर्मराज ने

कहा कि यदि यह गुप्तज्ञान हम तुमसे प्रकटरूप से वर्णन करें तो हमारी यमपुरी का सम्पूर्ण व्यवहार नाश होजायगा इससे चुप रहो किञ्चिन्मात्र भी इसकी वार्त्ता न करो तब यमकिंकर ने उत्तर दिया कि हमको धिक्है और हमारे इस दण्ड व फांसी धारण करने को भी धिक्है कि हम यही नहीं जानते हैं कि यह जीव क्या है और अपने को यमकिंकर मानरक्खा है तब धर्म्म-राजने कहा कि हे मूर्ख! तुमको इससे क्या प्रयोजनहै अपनाकाम करो और सदा गोविन्दजी का भजन करो जिससे सम्पूर्ण उप-द्रवोंसे रहित होगे और जब तुम्हारे भजन करनेसे गोविन्दजी प्रसन्नहोंगे तब सम्पूर्ण कामनारूपी मल तुम्हारे मनके वे नाश करके तुम्हारे चित्तको निर्मल करदेंगे और जब चित्त शुद्ध हो-जावेगा तब तुम ज्ञानद्वारा अपने वास्तव स्वरूपको स्वयं प्रत्यक्ष देखोगे तब यमकिंकर ने कहा कि जब अपने को न जाने और गोविन्द का भजन करे तो उस भजन से क्या प्रयोजन सिद्ध होगा तब धर्मराजने कहा कि ऐसा तो कभी नहीं हुआ है कि पहिले आपको जाने तब गोविन्द का भजन करे तब यमकिंकर ने कहा कि हम आपको नहीं जानते हैं और हमको भजन से कुछ काम है अब आप यह बतलाइये कि हमारा स्वरूप क्या है तब धर्मराजने कहा कि इस वार्त्ताको हमसे न पूछो वशिष्ठजी इसका उत्तर देंगे तब यमकिंकर ने कहा कि मुझको वशिष्ठजीसे क्या प्रयोजनहै हमारे तो ईश्वर आपही हैं हमको दूसरे से क्या प्रयोजनहै यदि आप हमारे इस प्रश्नका उत्तर यथार्थ न समझा-वेंगे तो हम अपना शरीर त्यागदेंगे तब धर्मराजने उत्तरदिया कि अभी तुम्हारा अन्तःकरणशुद्ध नहीं बिना अन्तःकरणकी शुद्धता के उपदेश करनादोषहै इससे तुमको उचितहै कि बदरिकाश्रम में जाओ और सम्पूर्ण कामनाओं को त्यागकर के तपकरो तब स्वयं तुम्हाराचित्त शुद्ध होजावेगा और चित्तके शुद्ध होने से अपने स्वरूपको आपही से जानजाओगे तब यमकिंकर ने पूछा कि हे

प्रभो! मन क्या वस्तु है जो शुद्धहोवे तब धर्मराजने उत्तर दिया कि मन एक मणिरूप है जोकि राग, द्वेष, शोकरूपी मलसे मलिन होकर अहङ्काररूपी बन्धन में बँधा है जो कि आपको शरीर मानके काम, क्रोधरूपी शत्रु के वशमें होरहा है क्योंकि जब यह मनस्थूल शरीर के साथ अध्यास करता है तब शारीरिकधर्म जरा, मृत्यु अपने में आरोपित करता है और जब प्राणोंके साथ अध्यास करता है तब क्षुधा पिपासा जो प्राणके धर्म हैं वह अपने मन में आरोपित करता है और जब मनके साथ अध्यास करता हैं तब हर्ष, शोकादिक मनके धर्म अपने में आरोपितकरता है और जब ऐसा अभिमान होता है कि हम शरीरहैं अथवा यह शरीर मेरा है तब सर्व धर्म आकर प्राप्त होते हैं इससे हम तुमको एक इतिहास इस विषय में सुनाते हैं उस को श्रवणकरो कि जिसका मन शुद्ध होता है उसकी ऐसी व्यवस्था होती है ॥

राजा शिखण्डध्वज का इतिहास ॥

शिखण्डध्वजनाम एक राजा सूर्यवंश में हुआ था जोकि एक चक्रराज्य करके प्रजापालन और न्याय करने में शास्त्र के अनुसार सम्पूर्ण वर्त्तावकरता था एक दिन वह राजा अपने स्वभाव के अनुकूल किसी वनमें शिकार खेलने को गया और सम्पूर्णदिन वन में घूमता फिरा परन्तु कोई मृग उसके हाथ न आया निदान निराश होकर खाली हाथ अपने घरको फिराआताथा कि रास्ते में एक सियार दृष्टिपड़ा राजा ने चाहा कि इस को वाणमारकर शिकार करें तब वह सियार राजा और वाणको देखकर हँसने लगा इस सियार के अन्त समय की ऐसी हँसी को देखकर राजा ने वाणछोड़कर उससे पूछा कि हे सियार! इस समय ऐसे कष्टसे ग्रसित होने पर तुम्हारे हँसने का क्या कारण है तब सियार ने उत्तर दिया कि हे राजन्! मेरे हँसने

का निमित्त यह है कि जब तुम्हारे बाण से हमारे प्राण त्याग करेंगे तब तीनोंलोक का नाश होजावेगा तब राजा सियार के इस आश्चर्य जनक वचन को सुनकर चकित होके सियार से बोला कि हे सियार! मैंने तुम्हारे सदृश अनगिनत मृगों का शिकार किया परन्तु संसारका किञ्चित्रोम का विनाश न हुआ अब तुम्हारे मारने से इस संसार का कैसे नाश होजावेगा तब सियार ने उत्तर दिया कि हे राजन्! जबतक हम हैं तभीतक तीनों लोकहैं और जब हम न रहेंगे तब यह संसार कहांहै इस कारण से जीवमात्र के वध करने से तीनोंलोक के वधका अपराध होताहै तब राजा इस उत्तर को सुनकर व अपने मनमें लज्जित होकर विचार करनेलगा कि यह सत्य कहता है तब उस को छोड़कर और अपने राजसिंहासन पर आकर व अन्तःकरणसे सम्पूर्ण भोगोंकी कामना को त्यागकर दिया उस समय गन्धर्व जो प्रतिदिन गान करने आतेथे आये उनको देखकर राजाने कहा कि देखो मनुष्य का जीवन केवल श्वासमात्र से है इसलिये बुद्धिमान् मनुष्यको चाहिये कि इसको भोगों की इच्छासे व्यर्थ न निकालें, हमको इस मिथ्या व्यवहार की कुछ भी रुचि नहींहै इस प्रकार गन्धर्वों से कहकर उनको गान से मना किया और रानी को बुलाकर बोला कि हे रानीजी! अब मुझको वैराग्य प्राप्तहुआ है इससे हम अतीत होजावेंगे तब रानीने कहा कि हे स्वामिन्! इससे और उत्तम क्या वस्तु है परन्तु एक हमारी इस विनय को श्रवण करके फिर जो आपकी इच्छाहोवे वह कीजियेगा, अर्थात् यदि आप अतीत होवेंगे तब भी अभिमानरूपी फांसी से मुक्त न होंगे और वही शरीराभिमान इस समय गृहस्थाश्रम में रहनेसे विद्यमान है और जब आप गृहस्थाश्रम का त्याग करेंगे तब तुम्हारे अन्तःकरण अर्थात् हृदयमें इस अभिमान की और भी वृद्धिहोगी कि हमने राज्यका त्यागकर दिया ईश्वर हमारे ऊपर अनुग्रह करेगा तब

राजाने कहा कि हे प्रिये ! यह तुम्हारा कथन सत्यहै परन्तु त्याग करने से इतना सुख होताहै कि चित्त अनेक प्रकारके विक्षेपसे रहित होकर शान्त होजाताहै, गोविन्द जी के भजनके विना मन संकल्प विकल्प से रहित नहीं होता है जो और अज्ञानी हैं वे लोग विचारपूर्वक त्याग करके फिरभी अहङ्कार में फँसते हैं कि अव मैं सव कुछ करके सर्वकर्मों से रहित हुआहूं अव तुम जो कहो वह करें तव रानीने कहा कि पहिले अपने को राज्य में मिलाहुआ सिद्धकरो फिर पीछेसे जो तुम्हारी इच्छा होवे उसके अनुसार वर्त्ताव करना तव राजाने कहा कि अव हम क्या यत्न करें और किसकी शरण में जावें कि वह हमको उपदेश करे तव रानीने कहा कि अव आप दृढ़ सन्धानकरके इस उपदेशको सुनिये जोकि मैं आपसे कथन करतीहूं—कि आपके हृदयमें जो यह स्मृति जिससे यह भासित होताहै कि यह स्त्री है यह मेरी रानी है इसको अपने मनसे दूरकीजिये—तव राजाने कहा कि हमारे हृदय में वैराग की अग्नि ऐसी प्रज्वलित हुई है कि स्त्री और पुरुष हमारी दृष्टिसे भस्महुईहैं जो पुरुष परमात्मा के सन्मुख नहीं है वह इस अनित्य शरीर पर जोकि मल व मूत्रसे पूरित है दृष्टि स्थित करते हैं और जो परमात्माके सन्मुखहै वह इन्द्रकी अप्सरा के देखने की इच्छा नहीं करता है और तुम्हारा संकल्प क्या करेगा तव रानी ने कहा कि हे राजन् ! देखो कि यह तुम और तुम्हारा क्या है यह सर्व संसार नेत्र खोलने से भासता है जव नेत्र हुये तव न तुम हो न कोई तुम्हारा है और जव तुमही नहीं हो तव किस पदार्थ का ग्रहण और त्याग करतेहो तव राजा रानी के कथन को सुनकर और अपने मनसे सर्व कर्मोंको त्याग कर शान्त चित्तहुआ और अपने भृत्यों अर्थात् दरवानोंसे कहा कि यदि कोई पूछे कि राजा कहाँ है तव तुम उत्तर देना कि राजा मरगया इस प्रकार कहकर राजा अपने महल के भीतर एकान्त स्थानमें स्थितहुआ उसकी रानी दश हजार वरस

तक नित्य नवीन शृङ्गार करके उसकी सेवा शुश्रूषामें जिसतरह सदा तत्पर रहती थी रहनेलगी परन्तु राजा के हृदय में विषय की प्रीति नहीं रही क्योंकि वह सर्वदृश्य मिथ्या जानता था और कहता था कि यह अस्थि व मांसकी मूर्त्ति यहां क्यों आई है यदि हम नहीं हैं तब तुमसे हमको क्या प्रयोजनहै तब सबको निश्चय हुआ कि हमारा राजा बावेला होगयाहै तब रानीने कहा कि कोई पुरुष कदापि चिन्ता न करे राजा प्रसन्नहोके आनन्द संयुक्तहैं जब अर्धरात्रि व्यतीत हुई तब राजा उठकर प्रेम से ऐसा रुदन करनेलगा कि जिसके नेत्रके जल के प्रवाह से हम अर्थात् अभिमानरूपी मलधोगया और निर्मल होकर राजा फिर बोले कि यदि मैं कहूं कि हस्ती मेराहै यह सर्व मिथ्या है यदि कहूं कि घोड़ा और सेना मेरीहै तो यह भी मिथ्याहै और यदि यह कहूं कि स्त्री और पुत्र मेरे हैं तब केवल भ्रममात्र है जब इस प्रकार सब सांसारिक पदार्थ भ्रममात्र दर्शित होतेहैं तो मैं किसकी शरण में जाऊं जो इनसे मेरी रक्षाकरे जब कि यह शरीर कि जिसके पालन के लिये अनेक प्रकार के यत्न व पाप, पुण्य किया वह भी सत्य नहीं है तब यह हमारा अभिमान जिससे सम्पूर्ण वस्तुयें अपनी दिखलाई देती हैं मिथ्या हैं हे विधाता ! मैं नहीं जानताहूं कि मेरा स्वरूप क्याहै और मैं इस पिंजड़ेरूपी शरीरसें पक्षीकी नाईं क्यों फँसाहूं और यह मनुष्य का शरीर जो स्वच्छ चिन्तामणिके सदृशहै इसको मैंने कीचड़में क्यों फँसा रक्खाहै काहेते कि मैंने अपने स्वरूपको नहीं जाना हे रानी! हमारी व्यवस्था अब इसप्रकार जानो जैसे एक साधु नदी के तीरपर बैठाहुआ नदीके जलमें बुद्बुदों को उठतेहुये देखकर उन बुद्बुदों से बोला कि हे बुद्बुदो ! तुम हमसे मित्रता करलो कि जिससे हम और तुम दोनों जने एकसे होकर रहें साधु के इस वचन को सुनकर बुद्बुदने ऐसा उत्तर दिया कि जिससे साधु के नेत्रोंसे जलप्रवाह बहनेलगा कि इसी समयान्तर में एक पर-

महंसजी भी आ पहुंचे और साधु को रुदन करते देखकर बोले कि हे साधो ! तुम क्यों रोतेहो तब साधु ने उत्तर दिया कि हे महात्माजी ! मैंने जल बुद्बुद से मित्रता की थी वह मेरा मित्र नाश होगया इससे मैं इस असह्य मित्र वियोगसे दुःखित होकर रोताहूं तब परमहंसजी ने उपदेश दिया कि हे मूर्ख ! तुम इस जलबुद्बुद के नाश होजाने से क्यों रोतेहो अपने विषे ध्यान करके देखो तब तुम्हारा यह रोदन करना उचित है देखो यह जो तुम्हारा शरीर पंचभौतिक पदार्थों से बनाहै यह स्वयं नाशवान्है और इसमें जलबुद्बुद की तरह जो तुम्हारी जीवनाधार श्वासका आनाजाना है यह विलीयमान है इसका तुमको शोच सदा करना चाहिये हे रानी ! जब परमहंसजी के इस उपदेश से मुझको ज्ञानहुआ कि मेरे तनकी साक्षात् जलबुद्बुदाकार दशाहै तब मैं अपने शरीर को मिथ्या, असार व नाशवान् समझकर पश्चात्ताप करनेलगा कि हाय ! मैं इस निर्मल जीवात्माको नाहक इस मिथ्या व नाशवान् शरीरके स्नेहरूपी फन्देमें फँसाकर इस दशाको प्राप्तहुआ मैंने अपने स्वरूपको आजतक नहीं पहिंचाना हा ! अतिखेद है मेरे ऐसे पश्चात्ताप से युक्त इस असह्यक्लेशको देखकर रानीने कहा यदि आप इस शरीरको नाशवान् व मिथ्या समझते हो तो इससे मित्रता करना बड़ीही भूलहै इस से कदापि स्नेह न करना चाहिये तब राजाने उत्तर दिया कि परवश होकर इस पिशाचरूपी कामनासे जो मुझमें विद्यमान है इससे मुक्त होनेका कोई यत्न नहीं देखता हूं और न कोई ऐसा साहसी पुरुषही दृष्टि पड़ता है जो इस से छुटाकर मेरी रक्षा करे तब रानीने कहा कि कामना तो आप करतेहो और रक्षा दूसरे से चाहतेहो भला इसदशा में दूसरा पुरुष तुम्हारी रक्षा किस प्रकार कर सक्ता है आशा है कि यदि आप इसश्वास रूपी कामना से रहित होंगेतो स्वयं इसके बंधन से छूट जावेंगे तब राजा ने कहा कि यदि इस समय श्रीगोविंद

नारायणजी आकर प्राप्त होवें तो वह क्याकरें तब रानीने उत्तर दिया कि तुमतो कामनारूपी बन्धन में फँसे हो जब तक मनुष्य इससे मुक्तनहीं होता तबतक उसको गोविन्दजीका दर्शन कदापि नहीं होसक्ता फिर तुमको उनका दर्शन कैसे प्राप्त होसक्ता है। तब राजा ने उत्तर दिया कि मैं किससमय अपने राज्यसिंहासन पर बैठा कि अकस्मात् एक संत ने आकर मुझको दर्शन देकर सनाथ किया और यह उपदेश किया कि जो कोई पुरुष कामना के बंधन में फँसा हुआ कामना को त्याग करके यह दृढ़ निश्चय जाने कि यह संसार भ्रममात्र है मनोराज से अधिक नहीं है तब तत्क्षण इससे छूटजाता है और जबतक इस कामनारूपी आवरण (पर्दा) का जोकि जीव और ब्रह्मके बीचमें पड़ा है नाश नहीं होता तबतक गोविंदजीका दर्शन मिलना अति दुष्कर है और जब इस कामनारूपी पर्दे का नाश होजाता है तब यावत् दृश्यमान पदार्थ हैं सब गोविन्दरूपही दर्शित होते हैं हे रानी! मेरा मन इससमय कामनासे मुक्त हुआहै यदि मुझको श्रीगोविंद जीका दर्शन प्राप्त होजावे तो कुछ आश्चर्य नहींहै और श्रीगोविंद भगवान् का स्वयं वाक्य भी है कि यदि कोई जीव कामना से रहित होकर मेरी शरण में प्राप्त होता है तब मुझ में और उस प्राणी में कुछ अन्तर नहीं रहता हे रानी! इस समय मुझको दर्शित होताहै कि न मैं हूं न कोई मेरा है और मेरी यह सम्पूर्ण इन्द्रियांजो नेत्र,श्रवण और नासिका आदि हैं सब नाशवान् और असत्य हैं अन्तकाल में यह सब हमको त्याग देवेंगी इससे इस समय यदि कोई मुझको स्वर्गलोक या पितृलोक देवे तो उनलोकों के प्राप्तिकी मुझको किञ्चित् भी इच्छा नहीं है यदि इससमय श्रीगोविन्दजीका दर्शन मुझको प्राप्त होवे तो मैं उनको क्याभेंट दूंगा तब रानी ने कहा कि सम्पूर्ण अंग गोविन्दजीकी भेंटकरदी-जियेगा तब राजाने उत्तरदिया कि हेरानी! मैंने तो गोविंदजीकी भेंट के निमित्त अपने सम्पूर्ण शरीर को निश्चय कररक्खा है कि

यदि यह शरीर जो मेरा विषय वासना व मायिक पदार्थों में मिल· कर मलिन होरहा है उनकी भेंट करदूंगा तो यह निर्मल होकर स्वच्छ होजावेगा तब रानी ने उत्तर दिया कि आपके इस शरीर की भेंट देनेसे गोविंदजी को क्या मिलेगा क्योंकि इसके ऊपर चर्म और भीतर अस्थि व रुधिरादिक विकार भरेहुये हैं फिर गोविंदजीही इसको भेंट स्वीकार करके क्या करेंगे तब राजाने कहा कि यह तुम्हारा कथन सत्यहै परन्तु हे रानी! मैं उन किरीट मुकुटधारी गोविन्दजी के दर्शन पाकर कब सनाथ हूंगा इतना कहकर राजा प्रेम में मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरपड़ा कि इस प्रेम विह्वलता में उसका वचन बंद होगया और कुछभी कथन· मात्र की शक्ति न रही जब रानीने देखा कि राजा अचेत होकर पृथ्वीपर गिरगया और ऐसा भासित हुआ कि मृत्यु को प्राप्त हुआहै तब उनका शिर उठाकर हे राजन्! हे राजन्!! करके कईबार उच्चस्वर से पुकारी, जब दोघड़ी के उपरान्त राजा की मूर्च्छा जगी तो रानी को उत्तर [illegible] लगा कि तुम यह क्या वृथा कथन करके राजा शब्द से पुकारती हो न कहीं राजा है न रानी है केवल एक अद्वितीय विष्णुभगवान् गोविंदजीही सब स्थानों में पूर्णरूप से विद्यमान हैं जब रानीने इसप्रकार राजा के कथन को सुनकर अपने हृदय में अनुसंधान किया कि राजाके इस कथनानुसार ज्ञात होता है कि अब इनकी अविद्या का निर्मूल हुआ तब राजाको पृथ्वीसे उठाकर बोली कि हे महाराज! श्री विष्णुभगवान् आये हैं उठके उनके दर्शन कीजिये तब राजा ने उत्तर दिया कि हे रानी! न कहीं विष्णु हैं न मैं उनसे भिन्नहूं केवल एक अद्वितीय अविनाशी सर्वव्यापी अलख अगोचर सब सांसारिक पदार्थ जड़ व चैतन्य सबमें स्वयंरूप से पूरित होकर पूर्ण रूपसे टिकाहै तब रानी ने कहा कि तुम अतीत होजावो तब राजा ने उत्तर दिया कि अतीत होना शरीर का धर्म है सो मैं शरीरी नहीं हूं जो अतीत होजाऊं इसप्रकार रानी से वार्ता·

लाप करके राजा फिर अवाक् होकर मौन होरहा जब एकपहर रात्रि अवशेष रही तब राजा ने अपने दोनों हाथ ऊपर को उठाकर अंगिड़ाईली और विष्णुभगवान् उसीसमय राजा के हृदय में आकर विद्यमान हुये कि जिनके शुभागमन से व उनके चरणों के चमत्कारिक प्रकाश से राजाका सम्पूर्ण गृह प्रकाशवान् होगया जब राजाने देखा कि विष्णुभगवान् हमारे हृदय में हैं और सम्पूर्ण मंदिर प्रकाशित हैं तब अपने को धन्यमाना—इस वार्तान्तर में धर्मराजने यमकिंकर से कहा कि जब राजा का मन द्वैतरूपी मल से शुद्ध होगया तब अद्वैत ज्ञानको पाकर इस व्यवस्था को प्राप्त हुआ यह सुनकर यम किंकरने कहा कि हे महाराज! अब दूसरी वार्ता न चलाइये कृपापूर्वक राजाकी कथा और भी वर्णन कीजिये तब धर्मराजने कहा कि तुमको इस इतिहासके सुनने से क्या लाभ है तुमतो स्वयं उस राजा के सदृश होकर परमानन्दको प्राप्त हो—तब यमकिंकरने पूछा कि हे भगवन्! जब राजाको विष्णुभगवान् का दर्शन प्राप्त हुआ तब उसने उन विष्णुभगवान् से क्या पूछा इसविषय में जो कुछ वार्तालाप हुआ होवे वह कृपा पूर्वक यथार्थ मुझसे वर्णन कीजिये किञ्चिन्मात्र भी गुप्त न रखिये—मैं तो गोविंद के सिवाय और जितने पदार्थ हैं सबको मिथ्या व अनित्य जानताहूं क्योंकि जब प्राणीको मृत्युलोक से लेकर आता हूं और रास्ते में उससे पूछता हूं, कि इससमय तुम्हारे माता, पिता व पुत्र, भ्रातृ इत्यादिक सहायक व स्नेही और तुम्हारा पराक्रम मालधन सुवर्णादि और तुम्हारा तेज कहां है जो इस समय तुम्हारी कुछ सहायता करे तब वह प्राणी कहता है कि इन पूर्वोक्त में से इससमय मेरा सहायक नहीं है—हे धर्मराज! सिवाय एक अद्वैत के और कोई दूसरा नहीं है वही सब स्थानों में आता और जाताहै, इसमें किञ्चित् भेद नहीं है और यह जीव अपने विचार से आपही मुक्त होजाता है इस अमृततुल्य इतिहास को आप दया करके निर्णय

के साथ मुझे सुनाइये इसप्रकार यमकिंकर के सविनय वचन सुनकर धर्मराज ने उत्तरदिया कि जब राजा ने श्रीगोविन्द भगवान् को अपनी भुजा के भीतर लिया तब अपने अहंकार व शरीराभिमान से रहित होगया तब श्रीविष्णुभगवान् ने कहा कि हे राजन् ! वह भेंट जो तुमने मेरेलिये विचारीहै वह मुझेदो श्री विष्णुभगवान् के यह वचन सुनकर राजा मौन होगया तब फिर विष्णुभगवान् ने पूछा कि हे आत्मरूप ! तुम क्यों नहीं बोलते तब राजा ने उत्तर दिया हे महाराज ! मैंने अपना अहंकार आपकी भेंट किया है प्रभो ! जो कुछ हो तुम्हीं हो मैं कुछ भी नहीं हूं तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि हे राजन् ! यदि तुमने अहंकार हमको देदिया तब तुम असत्य हुये क्योंकि इसी अहंकार से सर्व संसार प्रकाशित होता है और जब मैं और तू का नाश होगया तब संसार कैसे रह सक्ता है तब राजा ने उत्तर दिया कि अहंकार आप से भिन्न है मैं जानता हूं कि आप से भिन्न किञ्चित् नहीं है तब विष्णुभगवान् बोले कि यदि मुझ से अतिरिक्त नहींहै तो अहंकार कहां है इस वचनको सुनकर राजा विष्णु में लीन होगया तब विष्णुभगवान् ने फिर भी पूंछा परंतु राजा उनके वचन का उत्तर न देसका जिसतरह कि जलमें जलडालदेने से एकरूप होकर जुदा रूप नहीं भासता इसीप्रकार राजा विष्णुभगवान् के रूप में अपने को अभेद जानकर जल के संमेलन के सदृश लीन होगया तब रानी श्रीविष्णुभगवान् से बोली हे महाराज ! तुमने मेरे पतिको मारडाला तब विष्णु भगवान् ने रानी को समझाया कि हे मेरे रूप! राजा मोक्ष है क्या जन्म मरण से रहित हुआ है, तब रानी ने उत्तर दिया कि जिस तरह आपने मेरे पतिका नाश किया है उसीप्रकार से मेरा भी विनाश कीजिये क्योंकि पतिके विना स्त्री का जीवन निरर्थक व दोषयुक्त है तब विष्णुभगवान् ने कहा कि तुम स्त्री कहां हो जो कोई तुमको स्त्री कहता है वह बड़ा मूर्ख है इसलिये कि तुम

ने तो मुझको अद्वितीय और अभेद निश्चित कियाहै तब रानी ने पूछा कि हे विष्णुभगवन्! आपका स्वरूप क्या है, तब विष्णु भगवान् ने उत्तर दिया कि मैं सत्, चित्, आनंदस्वरूप होकर अद्वितीय व पूर्ण ब्रह्म हूं तब रानी ने पूछा कि हे महाराज! इस उपरोक्त अपने रूपके शब्दों का अर्थ मुझको समझाइये कि जिस से मुझे भी भासित होवे तब विष्णुभगवान् ने उत्तर दिया कि सत् उसको कहते हैं जो भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों काल में एक सा रहकर कभी नाशको न प्राप्तहोवे, और चित् उसको कहते हैं जो आप स्वयं प्रकाशवान् होकर सम्पूर्ण जीवधारियों को भी प्रकाशित करे, और आनंद उसे कहते हैं जो कि निरुपाधि, निरतिशय, आनन्दस्वरूप होवे और जिसमें दुःख का लेशमात्र भी न होवे, और अद्वितीय उसको कहते हैं जो सजातीय, विजातीय, स्वगति भेद और द्वैतकी गंध से रहित होवे तब रानी ने कहा कि यह मैं पहिले से ही जानती थी कि आप निर्विकार हैं परन्तु अब आपके मुखसे श्रवण करने से यह और निश्चय हुआ कि सम्पूर्ण वैकारिक पदार्थोंका रूप भी आपही हैं क्योंकि यह जो रूप आपने वर्णन किया सो द्वैत सापेक्ष्यक है असत् के लिये सत् और जड़के लिये चैतन्य व दुःख के लिये आनंद है तब श्रीविष्णुभगवान् हँसकर बोले कि हे मेरे रूप! हमीं को ब्रह्म कहते हैं और सर्वरूप मेराही है तब रानी ने कहा कि हे भगवन्! आपका उपदेश अमृत है मैं आपसे भिन्न किञ्चित् पदार्थ नहीं जानती हूं तब विष्णुभगवान् ने कहा कि तुम मिथ्या भाषण करतीहो यदि केवल मही हौं तब मुझको कौन जानताहै और मुझसे परे कौन है तबरानी ने उत्तर दिया कि यदि जानना आप में नहीं है तब न जानना भी आप में नहीं है अर्थात् केवल एक आपही हैं तब विष्णुजीने कहा कि यदि संसार का आदि अंत, मध्य मैंही हूं और सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों के उत्पत्ति, पालन और नाशका कारण भी मैं ही हूं और मुझसे अतिरिक्त

किंचित् पदार्थ नहीं है तब तुम क्या हो तब रानी ने कहा कि आपमें भी तो पूर्णदृष्टि नहीं है यदि आपमें पूर्णदृष्टि होती तो आप द्वैतभाव कदापि सिद्ध न करते अब आप जो अपने को सर्वरूप वर्णन करते हैं वह सर्वरूप क्या है कृपापूर्वक सविस्तर वर्णन करके मेरे संदेह को निवृत्त कीजिये तब विष्णुभगवान् ने कहा कि अब इससे आगे वचन नहीं है तब रानी ने कहा कि इसी बुद्धि से हमारे पतिका विनाश किया है अब हमारे प्रश्न का उत्तर देकर मेरी संदेह निवृत्त कीजिये तब विष्णुभगवान् ने रानी को समझाया कि तुम्हारा वचन हँसने के योग्य है पहिले तो तुम कहती थीं कि मुझ में वचन की शक्ति नहीं है और अब कहती हो कि हमारे प्रश्न का उत्तर दीजिये तब रानी ने कहा कि मैं अपने रूपको नहीं जानती हूं कि मेरा रूप क्या है तब श्री विष्णुजीने कहा कि तुम्हारे इस वार्तालापसे निश्चय होता है कि तुम मुझसे परेहो तब रानी ने कहा कि पर और अपर मुझे में कुछ नहीं है मैं केवल एक आत्मस्वरूप हूं तब विष्णुभगवान् ने उत्तर दिया कि हे मेरे स्वरूप! इतना वचन मत कहो जिसको आत्मस्वरूप प्राप्त होता है वह आप नहीं रहता और वह अहंकार से रहित होजाता है जैसे लोक में यदि किसी के पास कुछ पदार्थ रहता है तब उससे कोई पूछे कि तुम्हारे पास किञ्चित् पदार्थ है तब वह कहता है कि मेरे पास किञ्चित् भी नहीं है इसी तरह छिपाता है परन्तु तुमको जो हमारा रूप प्राप्त हुआ उसको तुम बारंबार अपने मुखसे उच्चारण करती हो यह बड़े आश्चर्य की बात है। इस वचन को अपने हृदय में विश्वास करके निश्चय मानो कि यदि मैं हूं तब तुम नहीं हो और यदि तुम नहीं हो तो चित्तको भ्रम में फंसाती हो चुपरहो इससे अधिक बोलने की अब कुछ आवश्यकता नहीं है आत्मज्ञान से तृप्त होरो कि विचार के विना और कोई वस्तु सुखदायक नहीं है जब इतनी वार्ता होचुकी तब धर्मराजने यम किंकर से कहा

कि जो पुरुष कालके भयसे रहित होने की इच्छा करे वह श्री विष्णुजीको अभेद जाने और भ्रमरूपी अहंकारको त्याग देवे और जिसके हृदय में पूर्णरूपसे यह ज्ञान प्राप्त होगया है उसको यमराज के त्रासले किञ्चिन्मात्र भी भय नहीं प्राप्तहोता इस प्रकार राजा का इतिहास सुनकर विष्णुभगवान् रानी से बोले कि यह दृढ़ विश्वास करके समझो कि मैं सर्व व्यापी हूं मुझसे भिन्न कोई पदार्थ अथवा स्थान नहीं है तब यम किंकर ने कहा कि हे महाराज! इस इतिहासके सुनने से अभी मेरी प्रत्याशा पूर्ण नहीं हुई इससे कृपा पूर्वक इसको विधिपूर्वक समझाइये कि जिससे मेरी आशा पूर्ण होवे तब धर्मराजने कहाकि इसके सुनने से तुम्हारा क्या अभिप्राय है तुम आनंद पूर्वक भजन करो कि जिसके करने से चित्त शुद्ध होकर निर्मल होजावो भजनके प्रताप से अन्तःकरण निर्मल होता है इसलिये कि इसके कथन करने से तीनों लोक नाश होते हैं अब तुमको स्वर्ग नरक की कुछ वार्ता पूछने की इच्छा होवे तो हम वह भी तुमको सुनावें तब यम किंकरने उत्तर दिया कि जैसे कोई पुरुष मछली को जलसे निकाल कर दूधकी नदी में डाल देवे तो वह दूधकी नदी उस मछली को किञ्चित् भी सुख देनेवाली न होगी बरन उस मछली को जलके बिछुरने से अत्यन्तक्लेश प्राप्तहोगा अर्थात् जिसको जिस वस्तु की चाह होतीहै वही उसको सुखदायक होतीहै और अनवाञ्छित पदार्थ यदि अमृत के तुल्य होवे तो भी उसकी दृष्टिमें हलाहल के तुल्यहै हे महाराज! मेरी तो इच्छाहै कि आत्मस्वरूपको प्राप्तहोऊं परन्तु कथन करतेहैं कि तुम स्वर्ग, नरक की कुछ वार्ता पूछो वह हम तुमको समझावें मेरी इच्छाके प्रतिकूल आपमुझसे वार्तालापकरतेहैं इससे मुझे निश्चयहोता है कि केवल मूर्खोंके ही मोहनेके लिये तुम धर्मराज और मैं किंकरहूं यह केवल भ्रममात्र मिथ्या से कल्पितहै कि हम भी कुछहैं तब धर्मराजने कहा कि तुमको हमसे डरना चाहिये भृत्यों (नौ-

करों) को स्वामी के साथ बराबरी करना यहकर्म अति अनुचि-तहै तब किंकर ने उत्तर दिया कि आप मेरे स्वामी और मैं आप का दासहूं इससे यदि आप मेरे स्वामीहैं तो महाराजा का इति-हास मुझे पूर्ण रीति से ज्ञानकराइये कि जिससे मेरे चित्तका भ्रम निवृत्तहोवे मैंने कुछ सूक्ष्म रूपसे थोड़ा सा तुमको उपदेश दिया कि जिसके श्रवण से तुमको यह निश्चय हुआ कि धर्म-राज नहींहै यदि हम इसको विस्तारपूर्वक तुमसे कथन करेंगे तब तुमको पूर्णरूप से यह प्रतीत होजायगा कि यह तीनों लोक केवल कथनमात्रहैं और नीतिशास्त्रमें भी लेखहै कि राजाको नोकरों के साथ विवाद करना उचित नहींहै हे किंकर! चौरासी लाख नरक और चौरासी लाख स्वर्ग ये सब मेरे आधीनहैं इसमें से तुमको जिस स्थानकी इच्छा होवे वह मांगो हम तुमको तुम्हारी इच्छानुसार देसक्ते हैं तब यम किंकर ने कहा कि हे प्रभो! स्वर्ग और नरक यह दोनों स्थान केवल अभिमान मात्र भ्रमरूप हैं प-रन्तु श्री विष्णुभगवान् से अतिरिक्त कोई स्थान नरक स्वर्ग कहीं नहीं है अब यदि आप मुझपर दया रखते हैं तो कृपापूर्वक उस राजा का वृत्तान्त कथन कीजिये तब धर्मराज ने कहा कि अब अपने काम में प्रवृत्त होवो और अपने कार्य के निमित्त जो कुछ पूछो वह हम तुमको सुनावैं परन्तु जो तुम राजाका वृत्तान्त पूछते हो यदि यह वार्ता हम तुमसे यथावत् वर्णन करेंगे तो उसके सुनने से तुम्हारे हृदय में जो यह छोटे बड़े अर्थात् नीच, ऊंचका अभिमान है वह बिलकुल नाश होजायेगा. हे किंकर! वह राजा मुक्त होगया यदि तुम वैसे न हुये तो दोनों ओर से जातेरहे इससे तुम श्रीगोविंदजी को शुद्धस्वरूप अभेद समझो कि जिससे तुमभी शुद्धहोकर अपने इष्टस्वरूप को प्राप्त होजाओ यदि तुम निर्मल नहीं हो तो मेरे कथन से तुमको कुछ भी लाभ नहीं होसक्ता, यदि पुरुष विचार न करे तो ब्रह्मा व विष्णुके उप-देश करनेसे भी कदापि मुक्त नहीं होसक्ता उनके उपदेश से अ-

पुरुषको कुछ लाभही होसक्ताहै और जो पुरुष अहङ्कारको त्याग करके यह निश्चयकरताहै कि मैं और यह सम्पूर्ण जगत् आत्मा ही है आत्मा से भिन्न कुछभी नहीं है वही पूर्ण मुक्त है और यदि गोविन्द और उस सन्तकी समता करे तो मिथ्या है यह केवल भ्रममात्र है श्रीगोविन्दजी उत्पत्ति, स्थिति और लय इन स्वभावों से युक्त हैं और वह सन्त निर्विकार है तब किंकर ने फिर भी प्रार्थना की कि हे महाराज! आप निर्मल और अशुद्ध इन दोनों वस्तुओं के झगड़े को छोड़कर उस राजाका इतिहास मुझको श्रवण कराइये इस के श्रवण करने की मुझको बड़ी अभिलाषा है कि जिससे गोविन्द के वचन को सुनके मैं मुक्त होजाऊं मैं शुद्ध और अशुद्ध इन दोनों से रहित होना चाहताहूं इस वार्ताको सुनके धर्मराज ने उत्तर दिया कि यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो ध्यान लगाकर श्रवण करो मैं तुमसे इस इतिहास को यथार्थ वर्णन करता हूं॥

राजा शिखण्डध्वज की कथा प्रारम्भ॥

उस राजाने कहा कि हे विष्णुभगवान्! हम नहींहैं जो कुछ हो सो आपही हो अर्थात् आदि, मध्य और अन्त सब आपही हो तब श्रीविष्णुभगवान् ने कहा कि यदि सम्पूर्ण पदार्थों का आदि, अन्त और मध्य मैं ही हूं तब तुम क्या वस्तुहो और तुम से क्या प्रयोजनहै तब राजा ने कहा कि यह जो कहा है सो बुद्धिने कहा है और आप के दर्शन से हमारे "हं, मम" अभिमान का नाशहुआ यदि हम न रहा हो तब क्या कहूंगा जो कहते हो सो आपही कहते हो श्रीविष्णुजी ने कहा कि तुम जो कुछ चाहो वह वरदान मुझसे मांगलो मैं तुम को दूंगा तब राजा ने कहा कि तुम्हारे बिना मैं तुमसे क्या मांगूं हमारे मन में तो आपही हैं आप से व्यतिरिक्त कोई पदार्थ किञ्चिन्मात्र भी नहीं है यदि आप मुझपर दयालु हैं तो यही वरदान दीजिये

कि मेरी बुद्धिमें आपसे अतिरिक्त कुछभी निश्चय न भासे और न मेरे नेत्रोंसे सिवाय आप के कोई वस्तु दर्शित होवे–तब श्री गोविन्दजी बोले कि जब समस्त कामनायें तुम्हारी नाशको प्राप्त होंगी तब तुम्हारी स्वयंअभेददृष्टि होजावेगी क्योंकि कामना ने ही बुद्धिको आवरण किया है जब कामना नाश होजावेगी तब स्वयं आत्मस्वरूप होजावोगे तब राजा से कहा कि हे महाराज! अब आप दयाकरके कामना से निवृत्त होनेका उपाय भी मुझ को सुनाइये तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि अपने को ईश्वर से भिन्न न समझना यह कामना से निवृत्त होने का सरल उपाय है और लोकमें भी प्रसिद्ध है कि जब कोई किसी के साथ प्रीति करता है और दूसरा कोई पुरुष उन प्रीतिमान् पुरुषों की प्रीति व सङ्गति के छुड़ाने का यत्न करता है तो वे स्नेही पुरुष उसके रोकने को कुछ भी नहीं जानते न प्रीतिका त्याग करते हैं तो बड़े ही आश्चर्य्य की बात है कि हमारे साथ या पूर्ण प्रीति करके अपने को भिन्न जानना और कामना के करना कब योग्यहै, यदि कोई अतिमन्द कहै या अपमान करे तो शोक न करे यदि कोई स्तुति, व मानकरे तब हर्ष न करे दोनोंसे रहितहोवे जो पुरुष इस अस्थि और चर्म के पिण्ड शरीर में अहङ्कार करता है या यहसमझताहै कियह देहहै व निन्दासे शोक और स्तुतिसे हर्ष करताहै उसको आत्मज्ञानी नहीं कहते हैं हे राजन्! तुम मुझसे ऐसीप्रीति करो कि जिसमें तं, त्वं, उपास्य, उपासक और दास व ईश्वरका भेदभाव न होवे जैसे आत्मा आकाशकी नाईं भीतर व बाहर सब स्थानों में व्याप्तहै इसीप्रकार आकाशसे गुप्त व प्रकट मुझको सब प्रकार पूर्ण जानो नाम और रूपसे भिन्न नहीं हूं और भूत वर्तमान, भविष्यत् में भी मैं ही विद्यमानहूं जैसे कि फेन, तरंग, बुदबुद जलसे भिन्न नहीं हैं इसी तरह चर और अचर संसार भी मुझ से भिन्न नहीं है यदि तुम कहो कि यथावत् निश्चय नहीं होता और कैसे होवे उचित है कि इन्द्रियों को विषयों से

निग्रह करने में यत्न करिके विषयों की प्रीतिको विषकी नाईं त्याग करके मुक्त होवो जीवनकी इच्छाको करिके मुझ से दया परमात्मा से विमुख हुआ है और कामना के वश है जीवना सोई है जो हमारे चिंतवन में होवे, और जो पुरुष जन्म से लेकर मरण पर्यन्त द्रव्य, धन, धान्य के संपादन में यत्न करता है वह व्यर्थ जीवता है द्रव्य आदिकों की प्रीति केवल दुःख रूप है क्योंकि यह द्रव्य आदिकों की प्रीति अनित्य और सदा दुःख का कारण रूप है क्योंकि जब मनुष्यकी जीवनावस्था में किसी प्रकार से द्रव्यका नाश होजाता है अर्थात् चोरके चुरा लेने या राजा के डांड़ लेने से अथवा द्रव्य को छोड़कर पुरुषके मरजाने से या जिसी किसी प्रकार से द्रव्य का वियोग होता है इसीसे दुःखरूप है इससे इसको अनित्य व दुःखका कारण समझकर इसकी प्रीति व संपूर्ण सांसारिक कामनाओंका स्नेह भी परित्यागकरके मुझमें लय हो जिससे अनायास मेरा स्वरूप होजावो यह लोकमें प्रसिद्धहै कि यह काष्ठ इतने तक है जबतक कि अग्निको नहीं प्राप्तहोता और जब अग्निसे मिलगया तब अपने स्वरूपको त्याग कर अग्निरूप होजाता है हे राजन्! जब तुम अपने को मुझसे भिन्न जानोगे तो जन्म मरण के बंधन में सदा फंसते रहोगे और जब इस कुविचारका परित्याग करके यह जानोगे कि एक चैतन्यही पूर्ण है तब निस्संशय मेरा रूप होजावोगे हे राजन्! जो कोई पुरुष मरने के भय और जीवनेकी इच्छासे एक क्षण श्री विष्णुका वचन कहता अथवा सुनता है और कहता है कि मैंने इतने समय तक गोविन्दका भजन किया और संपूर्ण दिन रात विषय परायण रहता है परन्तु हम विषय परायण हैं ऐसा किञ्चित् नहीं कहता। तुमको उचित है कि ऐसा समझो और सम्पूर्ण कामनाओं का परित्याग करके मुझको आकाशकी नाईं सब स्थानों में भीतर. बाहर व मध्यमें पूर्ण जानकर विचाररूपी नेत्रों से देखो कि सारे व आत्मानन्द एक मैं ही हूं तुम कहां हो

यदि तुम नहीं हो तब श्रम काहेको करतेहो तब राजा ने कहा कि हम और भीतर बाहर व आपसे अतिरिक्त ये कहां हैं तब विष्णुजी ने कहा कि सर्व मैं ही हूं अतिरिक्त कहां है, तब राजा ने कहा कि क्या चिन्ता है यदि कामना है तो तुम्हीं हो यदि हम नहीं हैं तब मुझको भ्रम कहां है, तब विष्णु भगवान् ने कहा कि एक क्षण कामनाको त्याग करके हमारी शरणमें प्राप्त होवो और मुझसे अतिरिक्त किसी वस्तुको किंचिन्मात्र भी न समझो और निश्चय करलो कि यह संपूर्ण संसार गोविंदके ही प्रकाश से प्रकाशित है जैसे जलका तरंग केवल जलही है तैसे ही यह सम्पूर्ण स्थावर, जंगम जो दृश्यमान् है सब विष्णुही रूप है अरु तुम व्यर्थ इस मिथ्या संकल्प में फंसकर कदाचित् किसी क्षण में भी आत्मपरायण नहीं होते हो और यह देखते व सुनतेहो कि अमुक मरा और अपने हाथ से जलाते हो और विचार नहीं करते हो कि एक दिन हमारीभी यही व्यवस्थाहोगी। जो विषयी पुरुषों के साथ खेलकर यही निश्चय करता है कि जो पुरुष द्रव्य धनादिको अधिक संपादन करता है वह उत्तम है और वही बड़ा बुद्धिमान् है। निश्चित जानो कि जो पुरुष आत्मस्वरूप को साक्षात्कार करता है वही उत्तम है और वही बड़ा बुद्धिमान् है हे राजन्! तुमको बाह्यवृत्ति पुरुषोंका सत्संग उचित नहीं है तेज और ऐश्वर्य अपना आत्मस्वरूप की प्राप्ति से जानो और यह भी निश्चय करो कि आत्मस्वरूप मैं ही हूं और श्रुति स्मृति भी यही कहती हैं कि आत्मा तुम्हीं हो उस पुरुष को जिसे आत्म निश्चय हुआ है वह सांसारिक उपद्रवोंसे रहित होता है सोई प्राण सुफल है जो कहे कि श्रीनारायण गोविंदही है क्योंकि यह प्राण चिंतामणि है। हे राजन्! व्यर्थ कामना की कीच में न फँसो और वास्तव स्वरूप को प्राप्तहोकर भक्ति करो तब राजा ने कहा कि यदि हम किञ्चित् होवें तो भक्तिकरें और यदि हम किञ्चित् स्वरूप से भिन्नही न होवें तो

भक्ति कौन करे तब श्रीविष्णुजी ने कहा तथापि भक्ति उत्तम है क्योंकि यह अपने से भिन्न न देखना अभेद भक्तिहै ॥ तब राजा ने कहा कि हे भगवन्! आपके वचन से बड़ा आश्चर्य होताहै काहेते कि यदि आप होता है तब कर्म करता है और जो भगवत् से भिन्न नहीं है तो कर्म कौन करे तब श्रीविष्णुजीने कहा कि हे राजन्! भक्ति तीन प्रकारकी है अर्थात् उत्तम, मध्यम और अधम. प्रतिमाका पूजना और एक व्यक्तिको ईश्वर मानना अधम भक्ति है और ईश्वरसे भिन्न अपने को उपासक जानकर भजन करना मध्यम भक्ति कहलाती है और परमेश्वर से अतिरिक्त कुछ भी न जानना और ज्ञानके बिना और कर्मकी इच्छा न करनी, व अद्वैत दृष्टि से रहित होना यही उत्तम भक्ति कहलाती है। ऐसी भक्ति न करै कि भक्ति को और आपको भिन्न जाने यह उत्तम भक्ति नहीं है इसको दम्भ कहते हैं तब राजा ने कहा कि हे भगवन्! जब सर्वमय तुम्हीं हो तो हम कहां हैं जो भक्ति करें, तब विष्णुभगवान् बोले कि हमही हैं भक्ति भी हमही करेंगे क्योंकि अब हमारी इच्छा संसार रचनेकी हुई है निश्चय करके जानो कि सर्व कर्म मुझी से उत्पन्न हुयेहैं द्वितीय वस्तु किञ्चित् नहींहै मैंही भक्तिहूं और मैं आपही भक्ति करूंगा क्योंकि कर्त्ता एक मैंही हूं। हे राजन्! तुम भक्तिको करो यहही परमानन्दरूप है तब राजा ने कहा कि यदि तुम्हीं हो भक्ति न करूंगा तो क्या होगा, तब विष्णुजी ने कहा कि भक्तिके बिना सुख नहीं होता तब राजाने कहा यदि एक अद्वितीय आपही हो तब दुःख सुख कहां है। तब श्रीविष्णुभगवान् ने उत्तर दिया कि दुःख व सुख केवल भक्ति कराने के लियेहै यदि भक्ति न करोगे तो दुःख व सुख को प्राप्त होवोगे! तुम कहां हो एक मैंहीं हूं तब राजाने कहा अब हमारा भ्रम नाश होगया क्योंकि मैं नहीं हूं आप हीहो तब श्रीविष्णुजी बोले कि यही भक्तिहै? तब राजाने कहा कि बिना द्वैतके भक्ति नहीं होती और मैं आपके बिना कुछभी

नहीं देखताहूं मैं बड़े आश्चर्य्य मेंहूं कि भक्ति कौनकरे तब श्रीभगवान्जी बोले कि विना दास्यके अभेदभक्ति है तब राजाने कहा कि आपका वचन अनन्त है जो मैं कहताहूं कि विना दास्य के भक्ति कौन करे। आप कहते हो कि अभेदभक्ति है यह आप का सिद्धान्त हमारी बुद्धि में नहीं आताहै, हे भगवन्! इस संसार रूपी बन्धनसे कैसे मुक्तहोवें यह उपाय कहिये और बड़ा आश्चर्य है कि यदि मैं नहींहूं तब क्या मुक्तहों और क्या मुक्तका उपाय करों तब विष्णुभगवान्जी ने कहा कि यदि मैंही हूं अर्थात् आपही आपको उपदेश करताहूं तो उसपुरुषको जिसको जीवन्मुक्ति प्राप्तहुई होवे ऐसा योग्य नहीं है कि भक्तिका त्यागकरे इतना कहके विष्णुभगवान् अन्तर्द्धान होगये जब राजा ने देखा कि विष्णुभगवान् अन्तर्द्धान होगये तब निश्चय किया कि मैं और यह जगत् अद्वितीय विष्णुरूप है इसमें किञ्चित् भेद नहीं है॥ राजा शिखण्डध्वज का इतिहास समाप्त हुआ॥

अथ यमकिंकर का इतिहास प्रारम्भ।

धर्मराज ने कहा कि हे यमकिंकर! यदि तुमको सिद्धान्त अद्वैतनिष्ठा इस इतिहास का ग्रहण हुआ है तो अपने स्वरूप को अनायास प्राप्त होगे तब यमकिंकरने कहा कि मनकी स्थिति स्वरूप के प्राप्त होनेके विना दुस्तर है क्योंकि वाक्यसे श्रीवासुदेव नारायणका नाम उच्चारण करताहूं और मन पाप पुण्यमें विक्षिप्त है सो भजन नहीं है जो पुरुष कामना व कर्म और फल की इच्छा से रहित हुआ है वह आत्मस्वरूप को प्राप्त होय तो होय। हे राजन्! अब कहिये मैं क्या हूं और मेरा रूप क्या है तब धर्मराज ने उत्तर दिया कि अब हम तुमको फिर भी समझाते हैं कि यह प्रश्न हमसे न करो श्रीगोविन्द भगवान् की मुझको आज्ञा है कि न्याय करो यह आज्ञा नहीं है कि वेदान्त उपदेश करो यदि मैं इस आज्ञाका उल्लंघन करूंगा तो मुझको

अनिष्ट होगा इसी वार्त्तालापान्तर में वसिष्ठ मुनि भी आ पहुँचे जो कि तेज व प्रकाश में द्वितीय ब्रह्मा के समान दिखाई देते थे कि जिनके शिरादि सर्व अंग रोम रहित थे और जिनके नेत्रोंका प्रकाश सूर्य के समान रक्तवर्ण भासित होता था मृगचर्म कांधे पर ओढ़े व दोनों हाथों में दण्ड कमण्डलु धारण किये हुये नारायण का नाम उच्चारण करतेहुये प्रातःकालके सूर्यके समान प्रकाशवान् रूपसे आपहुंचे कि जिनको देखकर यमपुरीकी सभा ने उठकर प्रणाम करके पूजाकी तब यमकिंकर ने धर्मराजसे पूंछा कि हे महाराज! आपने जो कथन किया कि अज्ञानी व अशुद्ध मनको स्वरूपकी प्राप्ति दुस्तर है और शुद्ध मनको सुगम है इससे मुझको यह संदेह हुआ कि शुद्धी और अशुद्धी क्या वस्तु है और वह किसमें है इसका भेदभी कृपा पूर्वक समझाकर इस मेरे सन्देह को भी निवृत्त कीजिये तब धर्मराजने उत्तर दिया कि इन शुद्धी और अशुद्धी दोनों वस्तुओं का अधिष्ठान आत्मा है इस वचनको सुनकर पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! धर्म के इस वाक्यको सुनकर यमकिंकर को धैर्यहुआ परन्तु विलम्ब के पश्चात् उस किंकरने यह प्रश्न किया कि हे महाराज! आत्मा क्या वस्तु है पुरुष है अथवा स्त्री है तब वसिष्ठजी ने उत्तर दिया कि यह प्रश्न तुम्हारा सत्य है अर्थात् आपहै तब द्वितीय भी है यह मनवाणी का विषय नहीं है जब वचन अर्थात् शब्द होनेसे द्वैत प्राप्तहोता है यदि द्वितीय नहीं है तो आपही कहां है इस वचन के श्रवण करने से यमकिंकर के सम्पूर्ण संशय निवृत्तहुये और अत्यन्त प्रसन्नता को प्राप्तहुआ तब धर्मराज ने कहा कि यह सब पद आत्मासेही सिद्ध होतेहैं क्योंकि प्रकाशक आत्मासे भिन्न कोई दूसरा पदार्थ नहीं है और आत्मा ई. त्वं. एक. दो इन शब्दों की प्रवृत्ति से रहित है तब वसिष्ठजी ने कहा कि यदि आत्मा में शब्दकी प्रवृत्ति नहीं है तब आत्मा व परमात्मा कैसे कहेजाते हैं तब धर्मराज मौन होगये और

वसिष्ठ महर्षिजी ने यमकिंकर को उत्तर दिया कि जो तुम्हारा प्रयोजन होवे वह हमसे पूछो इसी वार्त्तान्तर में गौतम ऋषीश्वर और याज्ञवल्क्यजी दोनों आ पहुंचे तब गौतमजी ने पूछा कि हे वसिष्ठजी ! प्रथम तो आप यह बतलाइये कि मेरा स्वरूप श्वेत व श्याम दो रंगों में से किस प्रकार का है तब वसिष्ठजी ने उत्तर दिया कि मैं नहीं जानताहूं कोई श्रोता भी है, द्वैतकी मुझमें प्राप्ति नहीं इससे क्या कहूं और किससे कहूं तब गौतम ने कहा कि तुमको वक्ता और श्रोता कैसे दिखाई देताहै इस भेदको मैं नहीं जानताहूं क्योंकि यह आपही आप है तब वसिष्ठजी ने कहा कि यदि वक्ता व श्रोता नहीं है तब तुमने किस तरहसे सुना तब गौतमजी मौनहोरहे और याज्ञवल्क्य जी बोले कि सर्वोपरि सिद्धान्त एक वाक्य यहहै कि एक अद्वितीय आत्मा है और आत्मा से अतिरिक्त जो पदार्थ दिखलाई देताहै वह भ्रममात्र है तब यमकिंकर ने कहा कि मैं अबतक सत्य असत्य नहीं जानताहूं कि यह क्या चीजहै इस से निर्णय करके मुझे समझाइये तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि जिससे संसारकी उत्पत्ति, स्थिति, लयहोती है उसको सत्य जानो तब किंकर ने कहा कि तरङ्ग जल से उत्पन्न होताहै परन्तु बुद्धिमान्लोग उस को जलसे किञ्चित् भिन्न नहीं जानते तैसेही यह सम्पूर्ण संसार सत्य से उत्पन्न होताहै और सत्यरूपही है आप इसको असत्य कैसे कहते हैं तब याज्ञवल्क्यजी ने कहा कि तुम अज्ञानरूपी बन्धनमें फँसेहो अभीतक तुमको ज्ञान नहीं हुआ, तब किंकरनेकहा कि न मैं ज्ञानी हूं न अज्ञानी यह सम्पूर्ण तुम्हीं हो याज्ञवल्क्यजी ने कहा कि यदि तुम हमको भिन्न नहीं जानतेहो तो मुझमें ज्ञान, अज्ञान काहेको सिद्ध करतेहो तब तो किंकर अवाक् होगया व उसी समय व्यासजी आ पहुंचे और बोले कि जो पुरुषसंसार से मुक्त होनाचाहे वह गोविन्द की भक्तिकरे तब याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया कि मुक्ति योगमें होती है तब व्यासजी ने कहा

कि जिसकी मुक्ति हुई है भक्ति सेही हुईहै भक्ति का त्यागनहीं होता है काहेसे कि भक्ति से कामना नाश होती है तब याज्ञ-वल्क्यजीने पूछा कि आत्मा एक है या दो तब व्यासजीने कहा अद्वितीय आत्मा एक है और कहां है जो दो होवें तब याज्ञवल्क्य जीने कहा कि मुझको एकवार कहने से निश्चय नहीं होती है क्योंकि यदि एकहै तो एक साधन से साक्षात्कार क्यों नहीं होता कोई योगमें प्रवृत्त है कोई जपमें कोई कर्मसें इससे हम किसप्र-कार निश्चय करें यदि एक होता तो भिन्न २ साधनों में क्यों प्रवृत्त होता तब वसिष्ठजीने कहा कि हे याज्ञवल्क्य इसका वि-वरण मैं तुमको सुनाता हूं ध्यान से सुनो और निश्चय करो कि सम्पूर्ण कर्म एक क्रियासे और एक कर्त्तासे सिद्धहोतेहैं सो कर्त्ता आकाशवत् पूर्ण और शरीर मृदंगवत् नाना तैसेही जब योगकरता है तब आपही है और जब भोग करता है तबभी आपही है यह केवल द्वैत रूप उपाधिके भेदसे भिन्न भिन्न दर्शितहोताहै वास्तव में एकही है शरीर उपाधियों से युक्तहै इससे साधना भी भिन्न२ हैं, शरीर उपाधि से भिन्न होनेपर एकही उपासना से मुक्तहै जैसे जलका एकही स्वरूपहै वह मीठे और खट्टे वृक्षों में पहुंचकर मीठे और खट्टे स्वादु को प्राप्त होजाता है लेकिन अपने स्वरूप को कदापि नहीं बदलता तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि योगसे श्री गोविन्द में प्राप्त होताहै, तब वसिष्ठजीने कहा कि सत्य ऐसेही है परन्तु जब योग से उत्थान होता है तब मन अनेक प्रकार फैलता है और महा दुःख को प्राप्त होताहै और ज्ञान योग ऐसा योग है कि यह खाने, बैठने और चलने में सदा एकही तरहका बना रहता है क्योंकि यह तत्त्वाभिमान से रहित होता है तब याज्ञवल्क्यजी ने पूछा कि जो पुरुष शरीरका कर्म नाशकरताहै उसका शरीर यथावत् नहीं रहता है तब वसिष्ठजी ने कहा कि विज्ञान का शरीर केवल दर्शन मात्र है शरीर उसको नहीं देखता जैसे जली हुई रस्सी का स्वरूप देखने मात्र है यदि उससे कोई

काम कराना चाहे तो कुछभी नहीं होसक्ता तैसेही आत्म ज्ञानी का शरीर है तब याज्ञवल्क्य जीने कहा कि तुम्हारा नाम योगवासिष्ठ है इससे तुमको उचित है कि योग को स्थित करो तब वसिष्ठजीने कहा कि हम क्याकरें जो पुत्रहमारे योगको नहीं मानते हैं तब याज्ञवल्क्यने कहा कि तुमको पुत्रों से क्या प्रयोजन है तुम आप मानो तब वसिष्ठजीने कहा जानता हूं मैं कि अभिमान मात्र है और मिथ्याहै फिर हम असत्य को क्या मानें तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि तुम्हारे कहने से मुझको भ्रम उत्पन्न होता है इससे पहिले यह बतलाइये कि योग को हमने उत्पन्न किया है या सनातनहै तब वसिष्ठजीने कहा कि यह सत्य है कि इसको तुम्हीने कल्पित किया है विचारकरो तो जो योग कर्म होताहै उसे कर्त्ताही करताहै यदि कर्त्ता न करे तो कर्म किसतरह और कहां होसक्ताहै तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि तुम पक्षपात से योग को खण्डन करके ज्ञानको स्थापित करतेहो तब वसिष्ठ जीने पूछा कि अपना और अतिरिक्त मुझमें कहां है परन्तु इन दोनों में से जो सत्य हो उसीको हम मानते हैं यदि योग है तो भी शुभहै परन्तु ज्ञान तो स्वतः सिद्धहै और योग कर्त्ता के करने से सिद्ध होता है इससे अनित्यहै तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि इनदोनों में कौन पदार्थ सत्यहै तब वसिष्ठजीने कहा कि आत्मा सत्य है तब पराशरजीने कहा कि हे मैत्रेयजी ! मैंने उस सभा में जाकर कहा कि यह सर्व नहीं है केवल एक मैंही हूं तब वसिष्ठ जीने कहा कि तुम ऐसा मत कहो. तब मैंने कहा कि मैं इसीसे कहताहूं कि एक अद्वितीय मैंहीहूं द्वैत मुझमें कुछभी नहीं है तब वसिष्ठजीने कहा कि किस महात्मा के सत्संग से तुम्हारी भेद दृष्टि नाश हुई है तब हमने कहा कि द्वितीय कहांहै जिससे कि मैं संगकरूं असङ्ग केवल एक मैंहीहूं तब याज्ञवल्क्यने कहा कि योग करनेवाला मुक्त है असंग दृष्टि योगसे होती है तब मैंने कहा कि तुम्हारी भाग्य में योग होवे परन्तु मुझको योगकी इच्छा

नहीं है क्योंकि मैंने एक समय विष्णुभगवान् से कहाथा कि तुम योग करो जिसके करनेसे विष्णुपदसे भी अधिक उच्चपद तुमको प्राप्त होवे तब विष्णुभगवान् बोले कि मुझमें न्यूनाधिक्यकी प्राप्ति नहीं है और न सजातीय विजातीयका भेदहै और मैं सुगति भेद से रहित एक अद्वितीय हूं विष्णुजी के इसवाक्यको श्रवणकर के मेरी योग बुद्धि नाश होगई और यह ज्ञान भासित हुआ कि यदि ज्ञान सत्य होता तो स्वतः क्यों न होता यह तुम्हारा कर्म कर्ता से धीरे धीरे होता है हे याज्ञवल्क्यजी ! अब आप योग व भोग को त्यागकर यह बतलाइये कि तुम्हारा स्वरूप क्या है तब याज्ञवल्क्यजीने उत्तर दिया कि मैं प्राचीन योगी हूं तब मैंने कहा कि तुम प्राचीन योगी हो सो तो मैंने जाना परन्तु अब यह बतलाइये कि तुम्हारा स्वरूप क्या है तब याज्ञवल्क्य जीने कहा कि बड़े आश्चर्य की बात है कि मैं क्रिया पूर्वक पूरक, रेचक, और कुंभक करताहूं परंतु आपको नहीं जानता हूं कि मेरा स्वरूप क्या है तब मैंने कहा कि जो स्वरूप के प्राप्त होने की इच्छा होवे तो योग को त्याग और कुछ मत करो और जो हम कहते हैं उसको सत्य समझ के निश्चय करो तब तुमको स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होगा तब याज्ञवल्क्य ने कहा कि श्रवण, मनन, निदिध्यासन इनका भेद साक्षात्कार मुझको अच्छी तरह से समझाइये तब मैंने कहा कि गुरुशास्त्र द्वारे सत्य शास्त्र को श्रवण करना यही श्रवण है और श्रवण को वेदान्त युक्ति से और अपनी (उहापोः) अर्थात् शंका निवृत्तिकरके बारंबार विचारना मनन है विचार करके जो सिद्धान्त जीव ब्रह्म की एकात्मताका निश्चय हुआ है ब्रह्माकार वृत्ति चित्तको एकाग्र करके बारंबार करनी निदिध्यासनहै और निश्चय दृढ़ संशय. असंभावना वि- परीत भावना से रहित होना है तब साक्षात्कार होता है यथा- र्थ स्वरूप को जानताहै जैसे प्रह्लाद को पिता ने अत्यंत कष्ट दिया और प्रह्लाद ने अपनी निश्चय का त्याग नहीं किया इसी

तरह जो पुरुष निश्चय करता है उसको ऐसा फल होता है और उसकी जिस तरफ दृष्टि पड़ती है उसके चित्त से स्त्री पुरुष के भेदका ज्ञान दूर होकर दशोदिशा और दिनरात्रि सर्वमयी केवल गोविन्दही गोविन्द दृष्टि पड़ताहै हे याज्ञवल्क्यजी ! यदि तुमको स्वरूप प्राप्त होने की इच्छा है तो योग को त्याग करो और गोविन्द में लय होजावो, तब याज्ञवल्क्यने उत्तरदिया कि नाम रूपको प्राप्त हुये जो गोविंन्द हैं उनको किस प्रकार देखूं तब हमने कहा कि किसी प्रकार भेद श्री गोविन्दजी में मत समझो जब मनुष्य व तिर्यगयोनि आदि भिन्न भिन्न रूपों में अभेद दृष्टि करोगे तब एक परमेश्वर ही लखाई पड़ेगा जैसे यद्यपि स्वर्ण के भूषण भिन्न भिन्न नामों से प्रकट हैं परन्तु वास्तव में एक स्वर्ण ही है जैसे अनेक वृक्षों के अनेक नाम रूप हैं परन्तु वास्तव में काष्ठ एकही है तैसेही यह सर्व द्वैत दृश्य है केवल एक गोविन्द ही अद्वितीय और आदि, मध्य और अंतमें एकही है तब याज्ञवल्क्यजी मौन होकर अवाक् रहगये जैसे नदी में पूरआने पर कूप गढ़ा व नाला क्योंकर बचसक्तेहैं अर्थात् सम्पूर्ण लयको प्राप्त होजाते हैं तब गौतमजी बोले कि मुक्त होने का एक यही उपाय है कि श्री नारायण, नारायण मुखसे सदा उच्चारण करके उन्हीं के भजनमें मग्न रहे अर्थात् वारवार नारायण, नारायण मुखसे कहाकरे इसीको मुख्य भजन समझो तब मैंने कहा कि नारायण नारायण तो सब कोई कहता है परन्तु सुख नहीं मिलता नारायण को भिन्न जानना अभेद भजन नहीं है, श्रीनारायण मुखसे न कहे अरु अभेद जाने इस शरीर का आसरा श्री नारायण ही है. परन्तु यह भी कहते नहीं बनता क्योंकि नारायण अद्वितीय हैं और जो वस्तु अद्वितीय है उसका आसरा क्योंकर करें, तब वसिष्ठजी ने कहा कि ऊर्ध्व. अधः और गुप्त, प्रकट सब स्थानों में नारायणही हैं मैं कहताहूं कि वेसदा स्वतः मुक्त हैं तब गौतमजीने कहा कि मेरी इच्छा है कि मैं अब संन्यास को त्यागकरके

विरक्त होजाऊं फिर मैंने कहा कि विरक्त उसे कहते हैं कि जो किसी से प्रीति न करे, अरु तुमतो संन्यासको त्याग करके विरक्त होतेहो, तब तुम विरक्त नहीं हुये क्योंकि तुम एकको छोड़ते और द्वितीय को ग्रहण करते हो और विरक्त उसको कहते हैं जो संन्यास को त्यागकर किञ्चित् पदार्थ का ग्रहण न करे, तब गौतमजी ने कहा कि विरक्त लोग कमंडलु मृगछाला और मेखला आदिक रखते हैं उन्हीं की तरह मैं भी विरक्त होऊंगा तब मैंने कहा कि तुम्हारी बुद्धि हँसने के योग्य है, भला विरक्त को इन सम्पूर्ण वस्तुओं से क्या प्रयोजन है जो पुरुष अभिमान मात्र से रहित है उसी को विरक्त कहते हैं तब याज्ञवल्क्य जीने उत्तर दिया कि प्राणायाम करना योग है विना योगके मुक्ति किसतरह होसक्ती है और यह सम्पूर्ण योगीन्द्र व मुनीन्द्र भी योगही मुक्त हुये हैं तब व्यासजी ने पूछा कि प्राणायाम कितने प्रकार से करना चाहिये, तब याज्ञवल्क्य ने कहा कि प्राणायाम पूरक १ कुम्भक २ रेचक ३ प्रकारका है जब यह सिद्ध होताहै तब अन्तष्करण सम्पूर्ण वासनाओं से रहित होकर शुद्ध होताहै तब व्यासजीने कहा कि अनेक योगी मरे और उनके शरीर में भी चर्म, मांस, अस्थि सम्पूर्ण शरीरों की नाईं दिखलाई देतेहैं फिर योगी किसप्रकार शुद्धि करते हैं हे याज्ञवल्क्यजी! भक्ति के विना और किसीप्रकार से सुखनहीं मिलताहै, गोविन्दजीकी भक्ति करनेसे गोविन्दही का रूप होजाताहै जिसतरह नदी में किसी बहतेहुये पुरुष को देखकर नदी के तीर पर खड़ा रहनेवाला पुरुष उस बहतेहुये से कहताहै कि तुम अपना हाथ मुझे पकड़ा दो तो मैं तुमको नदीमेंसे निकाल लूं परन्तु वह नहीं मानताहै और जलप्रवाह में डूबताहै तैसेही गोविन्द भगवान्ने भी वेदान्तमें अपनी भक्ति उपदेश की है कि संसारमें हमारे विना किञ्चित् पदार्थ नहीं है अर्थात् मैं सब में व सर्वत्र निरन्तरतामें विद्यमान् रहताहूं इसीनिश्चयको भक्तिकहते

हैं और इसीभक्तिसे आत्मज्ञान को प्राप्त होकर चिन्ता से रहित होताहै इसी भक्ति उत्कृष्ट अर्थात् उत्तमहै योग से अशुद्धहोता है और श्रीगोविन्दकी भक्तिसे गोविन्द रूपहोजाताहै तब याज्ञवल्क्य जीने पूछा कि यदियोग नकरे तो भीतरदृष्टि किसप्रकार फैलसक्ती है तब व्यासजीने उत्तरदिया कि जब तुम भक्ति करोगेतभी भीतर दृष्टि फैलकर प्रकाशित होगी योग के करनेसे हृदय में अन्धकार रहता है क्योंकि जब योग करताहे और बुद्धि से सम्पूर्ण अंडको देखताहै तब सिवाय चर्म, मांस, मज्जा के सिवाय और कुछ दृष्टि नहीं आता भीतर दृष्टि उसकी हुई है जिस मनसे गोविन्द के बिना किञ्चित् नहीं है इसीको दिव्यदृष्टि कहते हैं जो पुरुष विद्यमान् और भविष्यत के व्यवहार को देखे और कहै उसको कालदृष्टि कहते हैं दिव्यदृष्टि उसीकी है जो भगवान् को जाने हे याज्ञवल्क्यजी ! योग से भीतर नेत्र कैसे खुले हैं क्योंकि भगवान् से अतिरिक्त देखना यही तम है इससे जो पुरुष भीतर व बाहर एकरस होकर गोविंद का भजन करता है उसका द्वैत भ्रम नाशहोकर वह नारायण स्वरूप होजाता है इसीसे भक्ति उत्तम है इस वचन के सुनने से याज्ञवल्क्यजी मौनहोकर अवाक् होगये तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! व्यासके आगे कोई वचन उच्चारण करने को समर्थ नहीं कैसे होवे जो व्यास आप आनन्दरूप हैं एक याज्ञवल्क्य योगके मत किञ्चित वचन कहता है और कुछ काम नहीं करसक्ता तब व्यासजी बोले कि हे सभाके लोगो ! सब गोविंद का भजन करो कि जिससे काल के भय से निवृत्त होजावो और यह भी निश्चय करो कि माता पिता, शत्रु मित्र सब गोविंदजीही हैं और अपने कर्मोंको त्याग करके और कर्मों में मनको मत लगाओ और सब इन्द्रियों के व्यवहार को करो परन्तु गोविंदजी के भजन को न भूलो जैसे चकोर नाम पक्षी चन्द्रमा से प्रीति करना और अग्नि को खाना है और हृदय प्रीति व ध्यान चन्द्रमा का रखना है इसीसे

अग्नि उसके जलाने को समर्थ नहीं होती, इसीतरह भजन करने से मुक्त होजावोगे, तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि जबतक तुरीया में मनकी स्थिति नहीं होती तबतक किसीप्रकार का सुख प्राप्त नहीं होता इसीसे तुरीया अति उत्तम है तब व्यास जी ने कहा कि तुम तुरीया कहतेहो और मैं जाग्रत् को भी तुरीया समझता हूं इसलिये कि ये सब गोविंदजीही से उत्पन्न हुई हैं इसीसे जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया ये सर्व अवस्था श्री गोविंदजीही हैं जिसको श्रीगोविंदसे प्रीति है वह और किसीसे कुछ भी प्रयोजन नहीं रखता वरन वह गोविंदरूपही है ॥ इति श्रीयमकिंकर संवाद समाप्त हुआ ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ ॐनमः ॥

॥ तृतीय अंश प्रारम्भ ॥

॥ ब्रह्मसूत्र का इतिहास ॥

मैत्रेयजी बोले कि हे भगवन्, पराशरजी ! अब कृपापूर्वक मुझको यह बतलाइये कि शरीर, श्रवण, पाद, रुधिर व मांस, चर्म. अस्थि, व मन बुद्धि. चित्त अहंकार इनमें से मैं कौन हूं तब पराशर जीने उत्तर दिया कि हे प्रिय मित्रवर ! ये उपरोक्त संपूर्ण वस्तुएं जड़रूप होकर तब तुम्हारेही प्रकाश से प्रकाशित हैं इसको तुम पूर्ण रूप से समझो और तुमको क्या समझाऊं परन्तु इस विषय में एक इतिहास मैं तुमको श्रवण कराताहूं उसको मन व चित्तसे ध्यान देकर श्रवण करो अब ब्रह्मलोक का इतिहास प्रारंभ करते हैं। एक समय मुझको इस विषयकी इच्छा हुई कि मैं ब्रह्माजी के पास जाकर उनसे प्रश्न करूं कि जगत् क्या. क्या

प्रभु विधातृजी ! इस संसार समुद्र से किस तरह उत्तीर्ण होऊं फिर संकल्प विकल्प मेरे चित्तमें इस तरह के उत्पन्न हुये कि यदि श्री ब्रह्माजी इस प्रश्न के उत्तर में मुझसे पूंछेंगे कि जिस संसारार्णव से उत्तीर्ण होने के लिये तुम्हारा प्रश्न है उस संसार समुद्र में पानी कहां है कि जिसमें तुम डूबते हो तब मैं निरुत्तर होजाऊंगा इसलिये संसार समुद्र का जल निश्चय करना मेरा प्रथम कर्तव्य है तत्पश्चात् ब्रह्मलोक में जाना उचितहै. हे मैत्रेय जी ! अब आप कृपापूर्वक मुझे यह समझाइये कि इस संसार समुद्र में पानी क्या वस्तु है तब पराशर जीने उत्तर दिया कि यह वासना क्या वस्तु है तब मैत्रेय जी बोले कि आपही कृपापूर्वक इसका भेद मुझे समझाइये तब पराशर जी बोले कि मैंने यह निश्चय किया है कि यदि ब्रह्माजी पूछेंगे कि संसार समुद्र में पानी कहां है तब मैं उनको यह उत्तर दूंगा कि हे प्रभो ! यह अहंकार जिससे जीव अपने शरीर में मग्न रहता है यही पानी है फिर विचार किया कि यदि ब्रह्माजी पूछेंगे कि अहंकार है उससे तुम्हारा क्या प्रयोजन है तब मैं कहूंगा कि मेरी यह इच्छा है कि इस संसारार्णव से पार होऊं तब ब्रह्माजी यही उत्तर देंगे कि अहंकार तो तुम्हारा ही है और उसीसे तुम पार होना चाहते हो इसविषय में मुझसे क्या पूंछतेहो तब मैंने विचार किया कि मैं बिना किसी की सहायता के स्वयं भवसागर से पार होजाऊं तो अति उत्तम है इस विषय में ब्रह्माके पास जाने का कुछ प्रयोजन नहीं है, फिर मैंने अपने मनमें अनुमान किया कि संसार समुद्र से पार होने के लिये प्रथम तो दृढ़नौका चाहिये क्योंकि पुष्ट नौका के बिना पार उतरना अति दुस्तर है इसलिये ब्रह्माजी के पास प्रथम नौकाके अर्थ प्रश्न करना उचित है फिर विचार किया कि कोई नौका बनाय तो देगा नहीं, यही उत्तर देगा कि आपको और ईश्वर को भिन्न भिन्न जानना इस द्वैत का त्याग करो जब इन दोनों पदों का त्याग करोगे तब सुखी होगे

यह अभिप्राय बिचार कर फिर शोचने लगे कि यह बड़े आश्चर्य की बात है कि समुद्र तो एक अहंकार है और जीव व ईश्वर रूपी अभिमान ये दो नौका हुईं इसलिये एक नाव उत्पन्न करना उचितहै यह बिचार कर दृढ़ संधानाकिया कि हम नहीं हैं और जीव अभिमान से रहित होना यदि हम नहीं हैं तब द्वैत ईश्वरही कहां रहा फिर बिचार किया कि यदि हमही नहीं हैं तब नाव और संसार समुद्रसे क्या प्रयोजनहै यह बिचारकर फिर भी मुझे किञ्चित् आश्चर्य प्राप्त हुआ कि हम सब सम्पूर्ण भ्रम संशय से रहितहुये हे मैत्रेयजी ! तुमने कभी एकक्षण मात्रभी कामना से रहित होकर श्रीगोविंदजी का भजन न किया और सदा यही निश्चय करते रहे कि कोई क्रिया करनी है और कुछ त्याग करनाही योग है परन्तु कभी श्री गोविन्दजीकी भक्ति का उपाय न किया यदि किञ्चित् वाक्य तुमसे हमने कहा तब तुमने उस वाक्य को श्रवण भी न किया यदि धन, धान्य व ऐश्वर्य की प्राप्ति का उपाय होता तो तुम प्रीतिपूर्वक एकान्त स्थित होकर अवश्य चित्त लगाकर श्रवण करते, और मन लगाकर उस धन. धान्यादि के सुख प्राप्तिके अर्थ शीघ्रही अधिक यत्न करते हो कि शीघ्र प्राप्तहोवे हे मैत्रेयजी ! विद्वानों का सत्सङ्ग करो और कहो कि तुम्हारा स्वरूप क्या है तब मैत्रेयजी ने उत्तर दिया कि मैं ब्रह्मरूपहूं तब पराशरजी ने पूछा कि वह ब्रह्म कहां है तुम नाम रूपमें विक्षिप्त हो और कहते हो कि मैं ब्रह्महूं तब मैत्रेयजी ने उत्तर दिया कि तुम सत्य कहतेहो यदि ब्रह्म,पूर्णको कहतेहैं तब भी तो वह नानारूपमें वही पूर्णरूपसे पूरितहै तब पराशरजीबोले कि मन्दभाग्य क्या तुमको कालसे भी कुछ भय नहीं है यह सम्पूर्ण राजर्षि और देवर्षि उस कालसे डरतेहैं तब मैत्रेयजीनेकहा कि भय तब होवे जब हम ब्रह्म से भिन्न किञ्चित् भी निश्चयकरें यदि आदि और अन्तमें ब्रह्मही है तब कालरूप भी नहीं है जो कोई किसीको दुःख देताहै तो उसको अवश्य दुःख प्राप्तहोताहै इससे ब्रह्म सर्वत्र

उनके शिरकी जटा एक वृक्षमें अटकरही तब अवधूतने विचारा कि सम्पूर्ण चराचर स्थावर, जङ्गममें सदा शिवजीही पूर्णरूपसे व्याप्तहैं और जब शिवजी सर्वत्र व्याप्तहैं तो शिवजी ने शिवही को पकड़ा है कैसे चलें हमारे समीपही उस वनके एक नगर था श्रीभगवतीजी ने वहां के राजासे स्वप्न में कहा कि हमको नर बलि चाहिये वह शीघ्रही देवो तब प्रातःकाल राजाने अपने नगर में मुनादी पिटवादी कि कोई द्रव्यलेकर अपना शरीर मुझे देवे परन्तु किसीने इस बातको मंजूर न किया तब राजा अत्यन्त शोकसे पीड़ित होकर शिकार खेलने के लिये वनकी ओर चला और चलते चलते उस स्थानपर पहुंचा कि जहां अवधूत दत्तात्रेयजी विद्यमान थे राजा ने इनको अत्यन्त हृष्ट पुष्ट व अकेले देखकर इनसे पूंछा कि तुम कौन हो तब अवधूतने उत्तर दिया कि शिवोहं अर्थात् मैं शिव हूं इस वाक्यके सुनने से राजा को निश्चित हुआ कि बावला और मूर्ख है तब अपने भृत्य अर्थात् नौकरों को आज्ञादी कि इसको रस्सों से बांधलो और नौकरोंने तत्क्षण अपने स्वामी की आज्ञानुसार दत्तात्रेयजी को रस्सों में बांध लिया परन्तु इस बन्धन दशा में भी दत्तात्रेयजीके चित्त को कुछ शोक व दुःख का आवरण न हुआ जिसतरह मुक्त दशा में दुःख व सुख से रहित थे वैसीही दशा उनकी बनी रही कुछभी अंतर न पड़ा इसका हेतु यह है कि वे अपने चित्त में यह समझते थे कि मैं तो कोई वस्तुही नहीं हूं जो मुझको क्लेश होवे यह मेरा सम्पूर्ण शरीर शिवरूप है और बांधनेवाले और बन्धन भी शिवरूपही हैं इससे उनको यह प्रतीत हुआ कि शिवने शिव को बांधा है. और राजा के नौकर लोग इसतरह से अवधूत को बांधकर देवीके मंदिरमें लेकरपहुंचे और देवीजीकी मूर्तिकेसन्मुख लेजाकर खड़ा करके अवधूत से पूछने लगे कि तुम्हारी माता और पिता कौन हैं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मेरे माता व पिता शिवही हैं फिर पूछा कि तुम्हारा वर्ण व आश्रम क्या है

तब भी अवधूत ने शिवही नाम बताया, इस वार्ता के सुनने से राजा अत्यन्त विस्मिय को प्राप्त होकर आश्चर्यित हुआ और बोला कि जो इसका वर्ण आश्रम नहीं है तो इसके बलिप्रदान करनेसे मुझको किञ्चित् दोष न होगा यह विचार के फिर राजा ने अवधूत से कहा कि हम देवीजीकी प्रसन्नता के हेतु तुम्हारा बलिदान करते हैं तबभी अवधूत ने उत्तर दिया कि शिव है तब राजाने अवधूत का शिर रस्सी से बांध और खड्ग लेके चाहा कि इसके धड़से जुदा करके देवीजी की भेंट करूं कि इसी अवसर में देवीकी प्रतिमा से शब्द होकर साक्षात् देवीजी प्रकट हुईं और राजा से बोलीं कि हे मूर्ख! तुमने ऐसे महात्मा पुरुष को दुःख दिया है कि जो अपनी इच्छा से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का नाश करसक्ता है क्या तुमको इतना भी ज्ञान नहीं है कि मैं इसको मारनेके लिये ले आयाहूं और खड्ग लेकर उनका शिर काटनेपर उद्यत है परन्तु उन महात्माजी को किञ्चित् शोक नहीं है वरन अपने शिरपर खड्ग रखने से पहिले जिस दशाको प्राप्त थे उसमें कुछभी भेद न पड़ा और एकरस बनेरहे जब इस कथाको पराशर जी मैत्रेयऋषीश्वरको यहांतक सुना चुके तब मैत्रेयजीसे बोले कि हे पुत्र! यह परमहंसी का इतिहास मैंने तुमको श्रवण कराया इसका तात्पर्य यह है कि जो पुरुष नाम, रूप के अभिमान से रहित होतेहैं उनकी यही दशा होती है, तुमभी कहते हो कि मेरा नाम, रूप नहीं है परन्तु यदि कोई पुरुष तुम्हारे कान, नाक और कोई अंग काटे तो तुम उसीसमय कहोगे कि मैं ब्रह्म नहीं हूं अभी तुम्हारी दृष्टि सत्यतन, बुद्धि और इन्द्रियों में विद्यमान है उससे भिन्न नहीं हुई है इससे गोविन्दजीका भजन करो कि जिससे निर्मल होकर स्वच्छ ज्ञान की प्राप्ति हो—जब राजा ने श्रीदेवीजीके ऐसे वाक्य और जड़भरत की यह दशा देखी तब अवधूत को उक्त बन्धन से छोड़कर अंजुली बांध नम्र भाव से विनय पूर्वक यह प्रार्थना की कि हे महाराज! मुझसे अनजान में

यह दोष हुआ है इससे आप कृपा करके क्षमा कीजिये तब अवधूतने कहा कि हे शिव ! तुमसे भिन्न कौन है जो इसको क्षमा करे तब राजाने पूछा कि हे अवधूत ! अब दया करके मुझको नाम, रूप के अभिमान से भिन्न होनेका उपाय बतलाइये कि मैं इनसे किसप्रकार रहित होऊं तब अवधूत ने विचार किया कि बड़े आश्चर्य की बात है कि केवल आपही है दूसरा कोई नहीं और त्यागने की इच्छा करताहै, यह सोचकर बोले कि हे राजन् ! वैरागकरके यह निश्चय करो कि श्रीगोविन्द के सिवाय और कुछ भी नहीं है और जब तुमको पूर्ण रूप से यह भासित होजावेगा तब नाम, रूपात्मक संसार भ्रम तुम्हारा स्वतः नाश को प्राप्त होजावेगा हे राजन् ! यह दृढ़ निश्चय करो कि न राजा है न प्रजाहै यह केवल एक अद्वितीय शिवही का रूप सर्वत्र विद्यमानहै तुमको केवल अभिमान वश जो तुम्हारे अन्तःकरण में स्थित है यह भासित होता है कि हम जीव होकर शिव से भिन्न हैं यही अभिमान सम्पूर्ण अनर्थों का हेतु है इसको त्याग करके शरीर से विचार करके देखो कि यह शरीर क्या वस्तु है कि जिसके ऊपर चर्म और भीतर मांस व नाड़ी और रुधिर व अस्थि से पूरित है तुम ऐसे वैकारिक शरीरको अपना रूप जानते हो और कहते हो कि यही हमहैं जब यह मृतक होताहै तब सम्बन्धी लोग कुटुंबी इत्यादि कहते हैं कि अब यह प्रेत होगया इसको शीघ्रही घरसे निकालो और जबतक इसको दग्ध न करें तबतक खाना पीना दोष है. और स्त्री जो सदा इसके साथ भोग व क्रीड़ा करती वहभी इस मृतक दशा को देख भयभीत होकर रोती गिरती उठती इससे भागती है और मध्य रास्ते में जाकर कोरा घड़ा फोड़ते हैं और यह कहते हैं कि न तुम किसी के और न कोई तुम्हारा है अब तुमसे रिश्ता टूटगया तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रयजी ! जो यह जानता है कि यह कुटुम्ब मेराहै वह ऐसा निर्णय हुआ, अब तुमको योग्यहै कि तुम अपने जीतेहीजी यह रिश्तारूपी संपूर्ण

घट फोड़डालो अर्थात् सबलोगों से मुक्त होजाओ—और सुनो कि इस संसारिक देहके मृतक होने उपरान्त जब चिता में मृतक शरीर को धरते हैं तब उसके मुखमें घृत डालकर यह यत्न करते व कहते हैं कि यह मृतक शीघ्रही जलजावे और यहां तक उस से भयभीत होतेहैं कि संकल्प के समय उसका बेटा सबसे पीछे रहता और उस मृतक शरीर में प्रेतभाव कल्पित करता है यह संसार की परम्परा पृथा है इससे हे मैत्रेयजी ! तुम इस देहाभिमान को जो सदा में उक्त दशाको प्राप्तहै विलीयमान समझकर इसका त्याग करके श्रीगोविन्दजीका भजन करो और उन्हीं गोविन्दजी को सर्वव्यापी समझकर उनके भजन में लीन होवो हे प्यारे! यहवार्ता प्राणी मात्रके कारणसे है मैत्रेय तो जीवन्मुक्तहै, तब मैत्रेयजी बोले हे महाराज ! अब आप ब्रह्मलोक में जाने की इच्छा पूर्ण होनेका इतिहास वर्णन करके मेरे हृदय को आनन्दित कीजिये तब पराशरजीबोले कि मैं ब्रह्मलोक में गया और वहां जाकर देखा कि दक्षप्रजापति बैठे हैं वे हमको देखकर हँसे और फिर मुझसे पूछा कि हे पराशर ! तुम यहां अर्थात् ब्रह्मलोक में किसलिये आये तब मैंने कहा कि हे महाराज ! मैं यहां अपने स्वरूपको प्राप्त होने के लिये आयाहूं, तब उससभा में जो योगीश्वर लोग बैठे थे उन्होंने मुझको देखकर कहा कि हे पराशर ! यदि तुमको अपने स्वरूप के देखने की इच्छाहै तो योगकरो तब मैंने कहा कि मैं आपके कथनानुसार योग अवश्य करूंगा परन्तु उसके करने की विधि मुझे मालूम नहीं है यदि आप कृपाकरके उसका यत्न मुझे उपदेश कीजिये तो उस उपायको समझकर अवश्य योग करूंगा यहसुनकर योगेश्वर मौनहोगये फिर मैं उनसे विदा होकर आगे चला तो वहां देखा कि सनकादिक ऋषीश्वर बैठे हैं उन्होंने मुझको देखकर बड़े आश्चर्य से पूछा कि हे पराशर ! बड़े तअज्जुब की बात है कि तुम अपना स्वरूप जानने के लिये यहां आये हो कहिये ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय कहां हैं

तब मैंने उत्तर दिया कि यदि मैं ही हूं तो आपही आपको क्यों नहीं जानता हूं जैसे आप कहते हैं कि हाथ, पैर, नेत्र और कान हमारे हैं तैसे मैं भी वह हूं ऐसे स्वरूपको जानूं तब सनकादिक बोले कि जो दृश्य है वह मिथ्या केवल संकल्प मात्र है और जो दृश्यसे परेहै वह सत्य है यह दृश्यका देखना देखना नहीं है क्योंकि आदि अन्त जोहै वह ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय जीव ईश्वर यह सत्य स्वरूप है यही सत्यस्वरूप तुम्हारा है, तब मैंने कहा कि यदि यह जीव सत्यस्वरूप ब्रह्महै और यह मुक्त स्वरूप मेराहै तब कामना करताहूं सो वह क्योंकर प्राप्त नहीं होता तब सनकादि ऋषीश्वर बोले कि हे पराशरजी ! कामना धर्मचित्त की है और तुमको अचित कहते हैं इससे जो तुम कामनाकी इच्छा करते हो वह तुमको कैसे प्राप्तहोवे क्योंकि यह वस्तु निरंजन कारण से उत्पन्नहोती है सो निरंजनहीहै क्योंकि यह कार्यकारण का अभेद है हे मैत्रेयजी ! तुम भी अपने स्वरूप को जानो और श्रवण करो फिर हम सनकादि से आगे चले फिर हम ब्रह्मा के पास पहुंचे वहां जाकर देखा कि ब्रह्माजी अपने ध्यान में बैठे हैं तब हमने दंडकी नाई गिरकर अपने मनमें यही धारणा करने

यदि आपही आप है तब स्थित किस विषे होगा आपही आप है तब ब्रह्माजीने हँसकर कहा कि हे पुत्रो ! एक अद्वितीय मैं ही हूं और पराशर कहते हैं कि हमारा स्वरूप क्याहै किसी ने ऐसा नहीं कहा है कि बीजसे वृक्ष भिन्न है और संपूर्ण संसारका बीज मैं हूं और सब मुझीसे सिद्धहोते हैं और उत्पन्न भी मुझी से होते हैं हे पराशरजी ! तुम ऐसा मत कहो कि हमारा स्वरूप क्या है तब मैंने कहा कि तुम नहीं कहते हो कि हमारा स्वरूप हमी है तुम ब्रह्मा कहते हो और मैं पराशर कहता हूं तब ब्रह्माजी ने मौनहोगये और कुछ भी उत्तर न दिया कि इसी समयान्तर में वशिष्ठजी भी आपहुंचे कि जिनको देखकर संपूर्ण सभाके लोग उठखड़ेहुये और प्रणाम करके विधिपूर्वक पूजन किया फि पूछा कि हे वशिष्ठजी ! तुम्हारा पुत्र कहता है कि मैं पिताक पुत्र नहीं हूं देखो यह ब्रह्माके साथ कैसे उत्तर और प्रश्न करता और बराबरी करता है तब वशिष्ठजी ने कहा कि मैंने इस पुत्र को बहुत समय तक उपदेश किया कि तुम योग करो परन्तु यह कहता है कि भ्रम मात्र है मुझे नहीं मालूम कि इसका क्या प्रयोजन है यह अभागा है हमारा कहना नहीं मानता है मैं इसको मराहुआ जानता हूं तुम भी इसको कुछ उपदेश करो कि जिससे यह सत्‌मार्गपर चले तब सब लोगों ने कहा कि जब अपने पिताका उपदेश नहीं मानता है तो और लोगोंका कहना कैसे मानेगा तब भृगुजीने कहा कि हे वशिष्ठजी ! पराशर भाग्यवान् है और तुम भाग्यहीनहो. इसलिये कि पराशर अपने स्वरूप को प्राप्त है और तुम कहते हो कि योग करके स्वरूपको प्राप्तहोवो तब वशिष्ठजीनेकहा कि यह हमारापुत्र हमारे उपदेशको किसतरह माने जब इसकी संगति तुम ऐसे पुरुषोंकी है इनसे मेरी समझ में यह मेरा लड़का मरगया, परन्तु मैं सबको इसीप्रकार देखता हूं कि स्वतन्त्र हैं क्या आपही आपहैं ? तब भृगुजीने कहा कि हे व- शिष्ठ ! तुम्हीं मरे हो हम सबलोग जिन्दा हैं क्योंकि यह संपू

कर्म योग अथवा सर्व शरीर से होतेहैं और शरीर नाशवान् और असत्य है और तुम सत्य मानते हो तब वसिष्ठजीने देखा कि पराशर तो ब्रह्माजीसे वार्ता करतेहैं तब ब्रह्माजीने कहा हे वसिष्ठ! तुम पराशरजीको उपदेश क्यों नहीं करतेहो तब वसिष्ठजी बोले कि मैं क्या करूं यह मेरा उपदेश नहीं मानता है आप हमारे पितामह हैं आपही कुछ उपदेश कीजिये तब ब्रह्माजीने कहा कि तुम क्या उपदेश करतेहो तब वसिष्ठजीने कहा कि मैं इससे कहताहूं कि यह सम्पूर्ण वासना त्याग करके योग करे तब पराशरजीने उत्तर दिया कि मैं यथावत् कहता हूं परन्तु ये कहते हैं कि योग करो और मैं पूछता हूं कि मैं क्या हूं जबतक मैं आपको न जानूं योग किसप्रकार से करूं काहेसे कि स्वरूपही कारण है और योग से लेकर सर्व कर्म कार्यहै कारण के बिना जाने कार्य की सिद्धि नहीं होतीहै तब वसिष्ठजीने कहा कि स्वरूपका देखना योगसे होताहै वार्तासे नहीं होता तब मैंने कहा कि हे ब्रह्मा जी! इसीसे मैं वसिष्ठ का कहना नहीं मानताहूं कि वे मिथ्या कहते हैं यदि मैंही स्वरूपहूं तब किसको देखूं तब वसिष्ठजी ने कहा कि जो देखना नहीं है तो किस प्रयोजन से यहां आयेहो और पूछते हो कि हमारा स्वरूप क्या है तब मैंने कहा कि इसी वास्ते पूछते हो कि यह सबलोग क्या कहते हैं, परन्तु हमको निश्चय हुआ कि ये सम्पूर्ण लोग दग़ाबाज़ हैं यथार्थ नहीं कहते,

आंखोंसे दिखाई तो देताहै परन्तु असत्य है तैसेही यह संसार असत्य है कि अज्ञानी लोग इसी संसारमें पच पचकरकर मरतेहैं हे पराशरजी ! उससे प्रीति करना चाहिये जो सत्यस्वरूप होवे तुम निश्चय जानो कि मैं शरीर नहींहूं तब हमने पूछा कि हे ब्रह्माजी! यह जो बहुतसे पुरुष अतीत होकर वनमें क्लेशभोगते हैं इनकाभेद निश्चित नहीं होता कि ये लोग किसवस्तुका परित्याग करके अतीत हुये हैं यदि यह निश्चय करो कि गृहस्थी से अतीत हुयेहैं सो तो अनायास होजाते हैं कभी पहिले पुरुष मरजाता और स्त्री शेष रहती है और कभी पहिले स्त्री मरजाती और पुरुष शेष रहता है सो ये सब लोगही गृहस्थी को त्यागकर अतीतहुये हैं तब ब्रह्माजी ने कहा कि हे पराशरजी ! अतीतत्व का जानना बहुत कठिन है और यह तो सबही लोग कहते हैं कि गृहस्थी को त्यागकर वनमें जाना इसी को अतीत होना कहते हैं परन्तु ऐसे अतीत हो कि शरीर नहीं हूं और न यह शरीर मेरा है जिस पुरुष ने अपने शरीर का अभिमान त्याग दिया वही अतीत है और सर्वका त्याग यही है कि मैं पराशर नहींहूं और यदि तुम पराशर नहींहो तो सर्वपद जो तुम कहते तो यह कहां है पुण्य व पाप तब होता है जब कि यह कहे कि मैं हूं और जब मैंही नहीं हूं तब पुण्य व पाप कौन कहसक्ता है तब मैंने कहा कि हे ब्रह्माजी ! पराशर नहीं है तुमहीं हो और यदि तुमहीं हो तो कैसे कहते हो कि मैं पराशरजी हूं तब ब्रह्माजीबोले कि यदि मैं ब्रह्महूं तो जीव कौनकहै जीव और ब्रह्म मैंही कहता हूं तब मैंने कहा कि यदि तुमहीं हो तब कर्म क्यों कहतेहो इसी वार्तालाप के होते समय में मीमांसाभी आकर प्राप्तहुये और बोले कि जो मनुष्य जिस कर्मको करताहै वह उसीके फलको प्राप्त होताहै अर्थात् जिसतरह से कर्म करता है उसी तरह से उसके फलको भोगता है कर्मही प्रधान है इस प्रकार से कथन करके व ब्रह्माजी को नमस्कार करके फिर बोले कि हे महाराज

ब्रह्माजी! अब कृपापूर्वक बतलाइये कि यह हमारा कथन सत्य है अथवा असत्य है तब ब्रह्माजी बोले कि यदि सर्व पदार्थों व सांसारिक विषयों में मैंहींहूं तब यह कथन भी मेराही समझना चाहिये इस तरह का प्रत्युत्तर ब्रह्माजी से सुनकर मीमांसाजी चुप होरहे कुछ भी मुख से न बोलसके तब वैशेषिक ने आकर उत्तर दिया कि सभी मिथ्या कहते हैं और मैं ब्रह्महूं यह प्रत्यक्षही है कि ज्ञान और अज्ञान दो कालहैं और जितने चराचर स्थावर जङ्गमादि सांसारिक पदार्थ देखने व सुनने में आतेहैं सबही कालके आधीन हैं और उसीकाल के आश्रयीभूत होरहे हैं हे ब्रह्माजी! अब आप कहिये कि यह हमारा सिद्धान्त सत्य है अथवा मिथ्या तब ब्रह्माजी ने उत्तर दिया कि यह तुम्हारा कथन सत्यहै, तब मैंने कहा कि हे ब्रह्माजी! जब तुमहीं हो तब काल क्या है और इसके आधीन कौन वस्तुहै तब ब्रह्माजी बोले कि यदि हमने कालको सिद्ध किया है तब कथनमात्र से क्या संशय है यह तो सब तरह से एकही सिद्ध है तब वैशेषिक भी अवाक् होकर चुप रहगया तब न्याय ने आकर कहा कि देखो संपूर्ण संसार ईश्वर केही आधीन है इसलिये कि ये कर्मशरीर से होते हैं परन्तु काल कर्म की उत्पत्ति नहीं करता है यदि ईश्वर इच्छा करे तो कालका भी नाश होसक्ता है वही ईश्वर सम्पूर्ण शुभाशुभ कर्म व लौकिक पारलौकिक सम्पूर्ण व्यवहारों में सर्वत्र व्याप्त है. तब मैंने कहा कि ईश्वर क्या वस्तुहै तब न्यायने उत्तर दिया कि जिससे तुम उत्पन्न हुयेहो उसीको ईश्वर कहते हैं तब मैंने कहा कि मेरा उत्पादक कोई नहींहै मैं स्वतःसिद्धहूं तब न्याय ने कहा कि तुम स्वतः सिद्ध कदापि नहीं होसक्के कहीं सूर्यके प्रतिबिम्ब का उत्पन्नकर्ता त्रसरेणु (परमाणु, जर्रा) होसक्ता है तब मैंने कहा कि यह तुम्हारा कथन सत्य है परन्तु यह तो सोचो कि वह परमाणु जिसके सकाशसे मुझमें व्याप्तहै नहीं उस परमाणु का उत्पादक मेरे हृदयमें विद्यमान है और

हमभी उससे किञ्चित् भिन्न नहीं हैं फिर वह हमको किसप्रकार त्याग सक्ता है परन्तु तुम्हारे कथनानुसार यह सिद्ध होताहै कि एक मैं हूं और एक कोई अन्यभी मुझमें विद्यमान है और वेद में इसप्रकार लिखाहै कि नारायण अद्वितीय है इससे इन दोनों तुम्हारे और वेदके वाक्यों से भ्रम उत्पन्न होकर एकका दूसरा खण्डनकर्ता मालूम होता है यह परस्पर का विरोध अज्ञानता का है तब न्याय ने कहा ईश्वर तो संपूर्ण संसार को नाश कर-सक्ताहै तब मैंने पूछा कि संसार क्या वस्तुहै तब न्यायने उत्तर दिया संसार ईश्वर के कर्त्तव्य (काम) को कहतेहैं तब मैंने फिर पूछा कि कर्त्तव्य (कार्य) क्या वस्तु है तब न्याय ने उत्तर दिया कि जैसे बुद्बुदे और जलतरङ्ग होतेहैं इसी प्रकार सब जगत् ईश्वर सेही समझो तब मैंने कहा कि यदि इसमें कुछ अन्तर हो तो मुझको सुनाइये तब न्यायने उत्तर दिया कि जब सर्वत्र सारवस्तु जलही है तब अन्तर कैसे होसक्ता है तब मैंने फिर पूछा कि अन्तर अर्थात् भेद कहां है तब न्यायने उत्तर दिया कि यह जीव पराधीन है और ईश्वर स्वतन्त्र है यह दोनों कदापि एक नहीं होसक्के इसी द्वैतबुद्धि को भेद समझो तब मैंने कहा कि जब जीव ईश्वर सेही उत्पन्नहुआ है तब भिन्न किस प्रकार कहाजावे तब न्यायने उत्तर दिया कि जीव अल्पज्ञहै और परमेश्वर सर्वज्ञ है एक यही भेद जीव और ईश्वर में विद्यमान है तब मैंने कहा कि यह आपका कथन निस्संदेह ठीक है परन्तु यह तो बतला-इये कि जब यह जीव ईश्वरही से उत्पन्न हुआ अर्थात् उसी पर-मेश्वर का अंश है तब भिन्न क्योंकर समझा जावे हां अल्पज्ञ तो अवश्यहै परन्तु भिन्न कदापि नहीं होसक्ता यदि कहो कि जब यह जीव शरीरको त्यागजाता और शरीर पड़ारहताहै तब वास्तव में इन दोनोंकी भिन्नता दर्शित होतीहै या नहीं. देखो इसी उप-रोक्त कथानुसार साबितहै कि यह शरीर कदापि जीव नहीं होसक्ता अब यह बतलाइये कि जीवका स्वरूप क्याहै तब न्यायने उत्तर दिया

कि जीव कर्त्ताका अंशहै तब मैंने कहा कि ईश्वरही का अंशहै या किसी और का तब न्यायने कहा कि मैं अभी तुम्हारा शिर काटूंगा क्योंकि तुम एक परमाणुको जो किसीप्रकार सूर्यकी समानता नहीं करसक्ता सूर्य बतलातेहो इसीसे तुम्हारावध करना उचित है कहीं इस जीवका ईश्वर से सम्बन्ध होसक्ताहै, तब मैंने कहा कि मैं तो स्वयं विना शिरका हूं तुम क्या कहोगे तब न्यायने ब्रह्माकी ओर देखकर पूछा कि हे ब्रह्माजी! यह हमारा सिद्धान्त सही है या कि इसमें कुछ भेद है तब ब्रह्माजीने उत्तर दिया कि यह तुम्हारा कथन सत्य है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! तुम जानते हो कि ब्रह्माजी सत्य किसलिये कहते हैं वह अपने में सब कर्मोंकी स्थिति करते हैं इसीलिये किसीका खण्डन और मण्डन नहीं करते तब मैंने कहा कि जब न्याय कर्मों के अनुसार होता है तब कौन कर्म है कि जिसका न्याय करेगा तब ब्रह्माजी ने कहा कि हम स्वयं न्याय करते हैं तुम चुप रहो तब पातंजलि शास्त्र बोला कि वेदका कथनहै कि जो पुरुष प्रणव अर्थात् ॐ को लेकर योग करता है वह जीवन्मुक्त है तब मैंने कहा कि प्रणव स्वयं सिद्धहै उसको कौन योग करे परन्तु तुम कहो कि प्रणव क्या होता है तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि प्रणव मुझसे परे है हम उसके भेद को वर्णन करनेमें असमर्थ हैं तब मैंने कहा कि जो वस्तु सर्वकाल और सनातन है उसको कौन कहसक्ताहै तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि इस क्रिया को योगी करते हैं तब मैंने कहा कि योगी कैसे होता है यह जो शरीर में भस्म मलता है इसीको योगी कहतेहैं अथवा कोई और है तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि योगी उसको कहतेहैं जो अहं. मम को जलाकर उस की भस्म अपने शरीर में मलकर अपने स्वरूप के साथ योग करताहै तब मैंने पूछा कि भस्म को योगी किसके साथ मलता है तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि यह कथनमात्र से तुमको मालूम नहीं होसक्ता इस विषयको जब तुम योग करोगे तब जानोगे

तब मैंने कहा कि आपका कथन सत्य है परन्तु यह तो बतला-
इये कि जब योग नहीं करता है तब क्या है तब याज्ञवल्क्यजीने
कहा कि मैं नहीं जानता हूं तब मैंने कहा कि यदि आप नहीं
जानते हैं तो किसके वास्ते योग करते हैं तब याज्ञवल्क्य ने कहा
कि योग बिना मुक्ति का प्राप्त होना अति दुस्तरहै तब मैंने कहा
कि अब कृपा करके योग के करनेका उपाय वर्णन कीजिये कि
जिसको समझकर मैं योग करूं तब याज्ञवल्क्य जी बोले कि यदि
तुम हमारे शिष्य होजावो तो हम तुमको योग उपदेश करें और
जो हम कहैं वह अंगीकारकरो और यदि तुमको योग करने की
इच्छाहै तो सूक्ष्म भोजन और अल्प शयन व कम बोलनेकी
साधना करो कि जिससे सम्पूर्ण इन्द्रियां तुम्हारे वशमें होजावें
तब मैंने पूछा कि इस तुम्हारे उपदेश से क्या लाभ हुआ सम्पूर्ण
तो स्वयं असक्त होसक्ते हैं जब कि दो तीन दिन कुछ न खावे
अथवा अल्प भोजन करे तब सबही इन्द्रियां सुस्त और असक्त
होजावेंगी और इन्द्रियों के असक्त होनेसे अंग स्वयं असक्त हो-
कर सुस्त और मिथ्या होजावेंगे और सम्पूर्ण संसारिक व्यवहारों
से रहित होजावेंगे और जब अंग शिथिल होजाते हैं तब क्रोध
और तामस अधिक बढ़ताहै तब याज्ञवल्क्य जी बोले कि इसीलिये
मैं तुमको उपदेश नहीं करताहूं और जानताहूं कितुम बिना गुरुके
हौ हे मूर्ख ! यह नहीं समझता कि योगसे आत्मा शुद्धहोतीहै तब
मैंने कहा कि हे महाराज ! मैं इस विषय से अज्ञानहूं अब आप
दया करके मुझे यह समझाइये कि योग करने से मन किसतरह
से शुद्ध होताहै तब याज्ञवल्क्यजीने कहा कि शरीर के भीतर
पांच प्राण अर्थात् प्राण १ अपान २ व्यान ३ समान ४ उदान ५
ये बसते हैं और उनके कार्य भिन्न भिन्न हैं यथा प्राणवायु ह-
मेशा बाहर को निकलता है और अपान भीतर को जानेवाली
वायु को कहते हैं जब प्राण वायु को बल करके अपान वायु के
साथ भीतर को खींचते हैं तब वही प्राण वायु अपान होजातीहै

तब मैंने कहा कि हे याज्ञवल्क्यजी ! योग करने से और क्या सिद्ध होता है तब याज्ञवल्क्यजीने उत्तर दिया कि योगीजन जिह्वा को लम्बी करके अर्थात् जीभ को बढ़ा करके और भीतर से नासिकाके छिद्रको बन्द करके सदा अमृत पान करते हैं तब मैंने कहा कि यह आपका कथन निश्चय करके सत्य है अर्थात् योगीजन जब प्राण को भीतर करतेहैं तब शरीर में अग्नि नीचे जाने को मार्ग न पाकर ऊपर को प्रवेश करतीहै और जब अग्नि ऊपर को बढ़ती है तब उसकी उष्णता से मज्जा शीश में से पि- घलकर जिह्वापर आती है और योगीजन उसको अमृत समझ कर पान करते हैं हे याज्ञवल्क्यजी ! मैं तुम्हारा शिष्यहूं अब कृपाकरके मुझे उपदेश कीजिये तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि तुम परमेश्वर से विमुख हो जो परमेश्वर से विमुख होवे वह तुमको उपदेश करे मैं तुमको उपदेश नहीं करसक्ता ब्रह्माजी आकर तुम को उपदेश करेंगे तब मैंने प्रार्थना की कि हे महाराज ! ऐसा कहीं नहीं होता है कि गुरु शिष्य को त्याग देवे अच्छा फिर भी आप दया करके मुझे समझाइये कि योगीजन किसके साथ योग करते हैं तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि योगी योग करके दशवें द्वार को कि जहां कोटि सूर्यका प्रकाश है और वही दशवें द्वार का स्थान ईश्वरकी स्थिति का स्थान है उसको प्राप्त करते हैं इससे तुमभी योग करो कि जिससे उस स्थान को पहुंचो तब मैंने कहा कि झूठ न बोलिये वहां प्रकाश किसतरह से विद्यमान है जब यह वहां जाताहै तब प्रकाश होताहै, जब यह शरीर मृत्यु को प्राप्त होता है और जलाया जाता है तब भी मैंने किसी के शिर से प्रकाशको निकलते नहीं देखा तुम किसप्रकार से शिर के भीतर प्रकाश बतलाते और देखते हो और जो कहते हो कि ईश्वर में जाकर मिल जाता है यह क्या बातहै तब याज्ञवल्क्य जीने कहा कि हे योगी ! इसकी चिन्ता न करो योग सनातनहै तब मैंने कहा यह बिलकुल झूठ है तब ब्रह्माजी बोले कि तुम्हीं

एक योग नहीं करते हो और सब लोग भी योग करते हैं क्योंकि योग सनातन है तब मैंने कहा कि यदि योग सनातन है तब तुम अद्वितीय किसप्रकार से होसक्ते हो तब ब्रह्माजी बोले कि यदि सर्व मैंहीहूं तब योग भी मैंही हूं तब मैं मौन होगया औ एक घड़ी के व्यतीत होने पर फिर भी मैंने प्रश्न किया कि क्याहूं तब ब्रह्माजी बोले कि हे पराशर! तुम नित्य और अनित्य का विचार करो इसी वार्त्तान्तर में कपिलजी भी आकर प्राप्त हुये और बोले कि तुम इसीसे अपने प्रयोजन को नहीं प्राप्त होते क्योंकि तुम नित्य और अनित्यका विचार तो करतेही नहींहो देखो जो पुरुष अपने स्वरूपको प्राप्त हुआहै वह सांख्य से प्राप्त हुआ तब मैंने पूछा कि हे कपिलजी! नित्य और अनित्य किसको कहते हैं तब कपिलजी बोले कि यह शरीर अनित्य है क्योंकि यह तीन गुणों से उत्पन्न हुआहै और इन तीनों गुणों की उत्पत्ति अहंकार से है तब सम्पूर्ण अनित्य है और इन तीनों का प्रकाशक नित्य और सार है तुम उस नित्य को प्राप्त होकर सुखी होवो तब मैंने कहा कि अब एक सत्य और दूसरा असत्य हुआ और ब्रह्माजी कहते हैं कि एक हमीं हैं तो हम दोनों को किसप्रकार से निश्चित करें तब कपिल मुनि बोले कि जब सांख्य प्राप्त होताहै तब अनायास स्वरूप को प्राप्त होजाता है तब मैंने कहा कि मेरा स्वरूप क्या है तब ब्रह्माजीने कहा कि तुम्हारा स्वरूप तुम्हीं हो तब व्यासजी कैसे? व्यास जो आपस्वरूपही हैं उन्होंने आकर ब्रह्माजी को प्रणाम किया और कहा कि एक अद्वितीय नारायण हैं उनसे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं तब मैंने कहा कि सत्य कहिये कि नारायणजी हैं अथवा कोई दूसराभी है तब व्यासजीने कहा कि नारायण से अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है वह आपही व्यापित तब मैंने कहा कि यदि द्वितीय नहीं है तो एक कैसे कहते हो तब व्यासजी ने कहा कि यदि एक न कहें तब शब्दकी प्रवृत्ति का अभाव होगा वाक् इन्द्रिय के व्यवहार से

रहित करके मुखको बन्दकरो हे पराशरजी! तुम्हारे कथन से यह निश्चय होताहै कि मौनरहना योग्यहै तब मैंने कहा कि हे व्यासजी! विद्वानों की स्थितिको वेदभी नहीं जानसक्ता क्योंकि वेद त्रिगुण स्वरूप हैं और सन्त लोग त्रिगुण से रहित अर्थात् निर्गुणरूप हैं अब और कुछ आप के कहने व सुनने की आवश्यकता नहीं इतने कथन से निश्चय होगया आपका उपदेश ऐसाहै, पराशरजी इस वाक्यको सुनकरअवाक् होगये और कुछ न कहसके हे मैत्रेय जी! जब व्यासजी मौन होगये तब ब्रह्माजी बोले कि हे पराशरजी! तुमने अपने को बहुत श्रेष्ठ और उत्तम समझते हो यह नहीं समझते कि इस शरीरको जो चर्म, मांस, रुधिर और अस्थि का समूह होकर कालके गालमें जोकि तीनोंलोकका राजा है सदा विद्यमान् रहता है इसपर अभिमान करना वृथाहै देखो मैं सम्पूर्ण संसारके उत्पन्न और प्रलय करने की शक्ति रखकरभी कभी इन बातों अर्थात् अपने कार्यपर अभिमान करना कदापि स्वप्न में नहीं रखता इसलिये कि मुझको भलीप्रकार यह ज्ञान है कि यह शरीर अन्त में एक दिन अपने धर्मोंके सहित अवश्य कालका ग्रास होगा इस लिये इन नाशवान् शरीर पर तुमभी अभिमान न करो मैं पराशरहूं कहिये तुम्हारा स्वरूप क्या है तब मैंने कहा कि हे ब्रह्मा जी! मुझमें स्वारसक्रिया है मुझमें पराशर के अंशका किञ्चिन्मात्रभी लेश नहीं है मैं स्वयं अन्तर्यामीहूं तुम स्वयं समझसक्ते हो कि मुझमें कोई अंश पराशर का किसीप्रकार से भी नहीं है, तब मैं अपनेको स्वयं श्रेष्ठ व उत्कृष्ट किसप्रकारसे जानसक्ताहूं

तो मिथ्या है तुम इसको कैसे बूझ निश्चय करते हो तब मैंने कहा कि नाश क्या है और मिथ्या किसको कहते हैं केवल एक सत्यरूपही सर्वत्र विद्यमानहै तब ब्रह्माजीने कहा कि तुमने उस को देखा है तब मैंने कहा कि वह दृश्य व दर्शन नहीं है वह स्वयं आपही आपहै तब ब्रह्माजी बोले कि भजन करो तब मैंने पूछा कि भजन क्या चीज़है तब ब्रह्माजीने कहा कि तुम कामना के बन्धन में फँसेहो और मुझसे भजनकी रीति पूछतेहो जबतक तुमको परम निर्वाण प्राप्त न होगा तबतक भजनका आनन्दकिसी प्रकार से भासित नहीं होसक्ता तुमतो आश्रम में निमग्नहोकर पुण्य और पापकर्मोंमें फँसेहो तुमको गोविन्दके भजनकाआनन्द कैसे दिखलाई देवे—गोविन्दके भजनकाआनन्द यही है कि अपने को गोविन्दसे भिन्न न समझो क्योंकि गोविन्द सुख निराश की आशहै हे पराशरजी ! जिस समय तुम सम्पूर्ण काम और कामों के फलकी आशको त्यागकर निष्कामहोके आत्मस्वरूपके सन्मुख होजावोगे उसीसमय सब देवता कांपेंगे अर्थात् प्रथम अवस्था में काल काँपता है फिर दूसरी अवस्था में मैंभी उससे भय करता हूं इसलिये कि वह हमारी आज्ञा से रहित होता है तीसरी अवस्था में सम्पूर्ण देवते उससे डरने लगतेहैं और चौथी अवस्था में श्रीभगवान् स्वयं उसके सन्मुख आकर प्राप्त होते हैं हे मैत्रेय जी ! ब्रह्माजीके इस कथन को सुनकर मुझको अति हर्ष प्राप्त हुआ और उन्हीं ब्रह्माजीके सत्सङ्ग से अतिलाभ और दुर्लभ दोनों के भेदको समझा तब ब्रह्माजीने कहा कि जिस समय वह पुरुष सम्पूर्ण सांसारिक धारणाओं को त्याग आत्म परायण होकर जिज्ञासा करता है तब प्रथम मुझको भय प्राप्त होताहै कि अब हमारा नाशहोजावेगा इसलिये कि गोविन्द की स्थिति अन्तःकरणके मध्य में है और जब अभेदज्ञान की निष्ठाहोतीहै तब मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार भी अपने इन व्यवहार से रहित होजाते हैं हे पराशरजी ! तुमभी इस मार्ग में प्रवृत्त होकर निश्चय करो कि

मैं आपही आप हूं और स्वरूप भी मैंहीहूं तब मैंने कहा कि मैं निश्चय करताहूं कि सम्पूर्ण ब्रह्महीहै तब ब्रह्माजी बोले कि यदि सम्पूर्ण पदार्थ ब्रह्महीका स्वरूप है तब तुम्हारा प्रयोजन सिद्धहुआ तब मैंने कहा कि प्रथम चित्त कहाजाता था और कामना करताथा परन्तु अब निश्चय हुआ कि जितने चराचर स्थावर जङ्गम व दृश्य अदृश्य पदार्थहैं सब में गोविन्दजीही का स्वरूप वर्त्तमान है इस विचार से चित्तको शान्ति प्राप्तहुई तब ब्रह्माजी बोले कि अब तुम अहङ्कार को त्यागकरके गोविन्दजी का भजन करो तब फिर मैंने पूछा प्रथम मुझको यह उपदेश कीजिये कि भजन क्या वस्तु है तब ब्रह्माजी बोले कि गोविन्द का भजन इसको कहते हैं कि गोविन्दही को देखना, व गोविंद जीही को सुनाना व उन्हीं गोविन्दजी का नाम उच्चारण करना और श्री गोविन्दजी को सर्वव्यापी जानना व उनसे अतिरिक्त किसी वस्तुको न जानना न देखना न श्रवण करना अर्थात् सर्व-मयी गोविन्दजीही जानना उनसे अतिरिक्त सांसारिक पदार्थ किञ्चिन्मात्र भी अलग न जानना हे मूर्ख ! यह मनुष्य शरीर चिन्तामणि है कि जिसको गोविन्दजी ने आत्मज्ञान प्राप्त होने के लिये दियाहै और जब आत्मज्ञान प्राप्त होताहै तब वह पुरुष स्वयं भगवत में लीन होजाताहै इस वास्ते नहीं दिया कि अपने को अभिमानरूपी समुद्र में बहाकर स्वरूप से अप्राप्तरहो तुम से पाखण्डियों से कंस हजार गुन धन्यहै कि वह श्रीकृष्णचन्द्र से वैरभाव रखकर भी भोजन के समय गोविन्दही का नाम लेकर कहता था कि हे गोविंद ! तुम्हीं हो इसीप्रकार बैठने, उठने व विहार आदि सम्पूर्ण सांसारिक कार्योंमें गोविन्दजीही का चिन्तवन किया करता था और श्रीकृष्णचन्द्रही निशिदिन मनमें ध्यान रखता था यदि तुम कंसकी तरह वैरभावसेही उन की भक्तिकरो तब भी कृतार्थ होजावोगे इसलिये तुमको योग्य है कि गोविन्दजी से भक्ति और किसी वस्तुको न प्राप्तहोवो

कंस यद्यपि देखने में कृष्णसे बैरभाव रखता था परन्तु अन्तःकरणसे मित्रता और प्रीति रखताथा देखो कंसने अपना प्राणतक देदिया लेकिन आग्रहको नहीं छोड़ा अर्थात् यहसमझता रहा कि मैं कुछ चीज़ नहींहूं जो कुछ है वह कृष्ण ही हैं यदि तुम ऐसी प्रीतिभी गोविन्दजी से करोगे तो गोविन्दजी तुमको कदापि परित्याग न करेंगे तब मैंने कहा कि हे ब्रह्माजी! तुम्हारे इस कथन से मेरी बुद्धि जातीरही और मैंने निश्चय किया है कि सम्पूर्ण सांसारिक व पारलौकिक जितने पदार्थ दृष्टि, श्रवण और कथन द्वारा निश्चित होतेहैं सब गोविन्दजीहीका स्वरूपहैं तब ब्रह्माजी बोले कि हे मित्र! गोविन्द आपही आप हैं मैं और तुम कोई चीज़ नहीं हैं तब मैंने कहा कि श्रीगोविन्दही हैं मैं उनसे कदापि भिन्न नहीं हूं तब ब्रह्माजी ने कहा कि जब तुमहीं नहीं हो तब तुमको भजनसे क्या प्रयोजनहै तब मैंने कहा कि मैं अपने कोही नहीं जानताहूं कि मैं क्याहूं परन्तु श्रवणमात्रसे जानताहूं कि मैं जीवहूं लेकिन मुझे यह भी ज्ञान नहीं है कि जीव क्या वस्तुहै तब ब्रह्माजी ने कहा कि जब तुम अपने कोही नहीं जानते हो तब जीव और ईश्वरका किसतरह से निरूपण करतेहो देखो जो तुमहो वही भगवान् है तब मैंने कहा कि यदि मैं भगवान्हूं तो तुमको क्यों नहीं जानता कि तुम कौन हो तब ब्रह्माजी ने उत्तर दिया कि तुम ब्रह्मको किसप्रकार जानसको अभी तुममें उसके जाननेकी शक्ति भी तो नहीं है अर्थात् तुमने ज्ञानके मार्ग को किञ्चिन्मात्र भी जानाहै और यदि तुम्हीं हो तो किसको जानतेहो और तुमको कौन जानताहै तब अद्वैतमें जानना नहीं बनना अब तुम यह निश्चय करके जानो कि मैंही हूं मुझसे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं है और जब तुमको यह निश्चय होजावेगा तब तुम जन्म, मरण व आवागमन से रहित होकर मोक्ष होजावोगे हे पराशरजी! तुम सम्पूर्ण कार्य्य करो और उन में गोविन्दजी को जानकर उनके फलकी आशा कभी न करो गोवि-

न्दजी कथनहै कि जितना नेत्र मूँदने में देरहोती है यदि उतनी ही देर पुरुष कामना से रहित होकर मेरे सन्मुख होवे अर्थात् पलमात्र भी निष्काम होकर मुझमें चित्त लगावे तो अनायास मेरारूप होजावे तब पराशरजी बोले कि अब कुछ और प्रश्न करो तब मैंने कहा कि मेरी यह इच्छा है कि श्रीगोविन्दजीके मुखारविन्द से उच्चरित कुछ वाक्य श्रवणकरूं तब ब्रह्माजी बोले कि श्रीगोविन्दजीके दर्शन करें तो यह दृढ़ निश्चय करो कि सम्पूर्ण पदार्थों में व मुझमें श्रीगोविन्दजीही का वासहै मैं कुछ भी नहीं हूं इसी समयान्तरमें विष्णुभगवान् भी गरुड़ पर सवार होकर आपहुंचे कि जिनका स्वरूप देखकर सम्पूर्णसभा उठखड़ी हुई और दण्डवत् प्रणामकिया परन्तु उनको देखकर अपने स्थान से किञ्चिन्मात्र भी न हिला, इसलिये कि मैं उस समाजमें न था इसलिये कि मैं अहङ्कार से भिन्न होकर उससमय विष्णुमें लय था और विष्णुभगवान् ब्रह्माजीके पास आकर स्थित हुये तब सम्पूर्ण देवताओं ने उनकी स्तुतिकी तब ब्रह्माजी बोले कि तुम तो शिवरूप हो मैं तुम से क्या कहूं तुमसे भिन्न अब कोई पदार्थ नहीं है तब विष्णुभगवान् बोले कि हे मेरेरूप! पराशर को यह भ्रमहुआ है कि मेराख्प क्या है इस वाक्य के सुनने से मुझको आश्चर्य उत्पन्न हुआ और निश्चय जाना कि विष्णुजीही हैं तब ब्रह्माजी बोले कि हे नारायण! तुम पराशरका वृथा नाम रखतेहो तुम स्वयंरूपहोकर अपने मुखारविन्दसे उच्चारण करतेहो कि यह मेरा स्वरूप क्याहै और पराशर कहांहै तब नारायणजी हँसकर बोले कि हे ब्रह्माजी! यदि मैं पूर्णहूं तो पराशर भी मैंही हूं जो तुम हममें और पराशर में भेद देखतेहो इस से निश्चित होता है कि तुम्हारी भेददृष्टि अभी निवृत्त नहीं हुई तब ब्रह्मा जी बोले कि संसारका कारण आपही हैं और जो वस्तु संसारमें उत्पन्न हुई उस सबका कारण तुम्हीं हुये और जब सबका कारण तुमहुये तब भेददृष्टि भी तुम्हींसे उत्पन्नहुई तुम्हारे सिवाय

और कौन पदार्थ है कि जिससे भेददृष्टि उत्पन्न होगी, इस कथन से तुमको लज्जाभी नहीं आती तब विष्णुभगवान् बोले कि लज्जा तब करूं कि जब कोई दूसरा मध्यमें होवे और जब मैंही सर्वत्र व्यापतहूं तो लज्जा किससे करूं इसतरह से विष्णु भगवान् के वचन सुनकर ब्रह्मजी अवाक् होकर मौन होगये जब यह वार्तालाप यहांतक पहुंचा तब पराशरजी मैत्रेयजी से बोले कि हे मैत्रेयजी! तुमभी संतहो कुछ कथनकरो तब मैत्रेयजीने उत्तर दिया कि हे पराशरजी! यह तुम्हारा कथन ब्रह्माकी सभा में उचित है क्योंकि उस सभा में ब्रह्मा और विष्णु इस विषय को पूर्णरूप से समझते व सुनते हैं और मैं इस विषय से अनभिज्ञहूं इससे क्या कहूं तब पराशरजीने उत्तर दिया कि तुम मुझीको विष्णु स्वरूप जानो तब मैत्रेयजीने कहा कि अभी विष्णुजीने कहाथा कि मुझमें द्वैत नहीं है मैं लज्जा किससे करूं फिर ब्रह्माजीसे क्यों कहा कि तुम्हारे में भेद है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! तुमबड़े बुद्धिमान्हो तुम्हारी वाक्य सुनकर ब्रह्माजीको कुछ भी उत्तर न आया और तुम विष्णु भगवान् के कथन में भी दोष निकालतेहो परन्तु विचार करके देखो कि जब विष्णुजीने ब्रह्माजीसे कहाथा तब ब्रह्मा व विष्णुही थे अथवा और भी कोई दूसरा विद्यमान था, तब मैंने कहा कि जब ब्रह्मा विष्णुरूप थे तब ब्रह्मा को विष्णु ने किसप्रकार जाना तब पराशरजी बोले कि अब आप ज्ञात, ज्ञान, ज्ञेय और त्रिपुटीरूप संसार का भेद वर्णन कीजिये कि यह क्या वस्तु है तब मैत्रेयजीने उत्तर दिया कि जिससे तुमको संपूर्ण सांसारिक व पारलौकिक पदार्थों का भेद भासित होता है उसको ज्ञान और चित्स्वरूप को ज्ञाता और आत्मा को ज्ञेय समझो तब पराशरजीने पूछा कि हे महाराज! मैंने आपके कथनानुसार इस भेद को तो जाना परन्तु अबकृपा करके यह भी बतलाइये कि इस त्रिपुटी का प्रकाशक कौन है तब मैत्रेय जीने उत्तर दिया कि सर्व कर्मों का कर्ता प्रकाशक है

इसी से निश्चित होता है कि प्रकाश का कारण भी एकही है तब पराशरजी बोले कि जब सर्व कार्यों का कर्त्ता एक विष्णुजी ही हैं तब संसारको क्यों कहतेहो तुम्हारे इस कथन से तो मूर्खता दर्शित होती है तब मैत्रेयजी बोले कि मैं तुम्हारे इस कथन में मैं क्या शंका करूं जो कोई कहता है वही सुनता भी है तब पराशर जी बोले कि यह तुम्हारा कथन किसीप्रकार से अनुचित नहीं है अर्थात् मैं आपही कहता और आपही सुनताहूं हे मैत्रेयजी! अब मैं तुमको ब्रह्मसूत्र सुनाताहूं उसको ध्यान से सुनो—जब ब्रह्मा जी मौन होगये तब मैंने कहा कि हे विष्णुजी! तुम कहतेहो कि पराशर रूप हमारा है इस कथन से तुमको लज्जा नहीं आती अब यथार्थ कहिये कि आपका क्या रूप है तब विष्णुजी बोले कि यही रूप हमारा है और हमभी शिवरूप हैं तब मैंने कहा कि यदि आप शिवरूप हैं तो पराशर कहां रहा तब विष्णु भगवान् ने उत्तर दिया कि पराशर भी मैं ही हूं तब मैंने फिर पूछा कि जब तुम कहते हो कि पराशर मैं ही हूं तो फिर यह वचन तुम्हारा कथन किसप्रकार से योग्य होसक्ता है कि मुझको भ्रम हुआ तब श्री विष्णु भगवान् बोले कि यह संपूर्ण कर्म मुझी से उत्पन्न होते हैं यदि मैंने यह कथन किया इसमें तुमको क्या संशय है, तुम अपनेको ईश्वर मानते हो इसमें तुमको लज्जा नहीं आती तब मैंने कहा कि अब कुछ न कहिये चुप रहिये मैं तुम्हारा उपासक नहीं हूं विष्णु का उपासक शिव है मैं तो अपने स्वरूप को जानता हूं मुझे तुमसे क्या प्रयोजन है मेरे स्वरूप में तो अहं त्वं की प्राप्तिही नहीं है जो पुरुष स्वरूप से भ्रष्टहैं वे तुमको जानते हैं तब विष्णुजीने कहा कि हे पराशर! ऐसा मत कहो तब मैंने कहा कि मुझको किसी से लज्जा अथवा भयनहीं है क्योंकि मैंही एक अद्वितीयहूं तब ब्रह्माजी हँसकर बोले कि हे विष्णुजी! आप निरंजन हो आपसे भिन्न कोई पदार्थ किञ्चिन्मात्र नहीं है इस कथन को सुनकर विष्णु भगवान् अवाक् होकर

मौन होगये कि इसी समयान्तर में शिवजी जो कि पद और अपद के भेद से रहित थे आकर प्राप्त हुये और बोले कि हे ब्रह्मा, और विष्णुजी! पराशर कहां है एक अद्वितीय मैंही हूं तब विष्णु भगवान् बोले कि यदि शिवही सर्वमय है तब विष्णु भी शिवहीरूपहैं तब शिवजीने उत्तर दिया कि अहं, मैं अद्वितीय हूं मुझमें विष्णु कहां हैं विष्णु तो विश्वरूप कहते हैं मुझमें विश्व कालेश मात्रभी नहीं है मैं स्वयं निर्मलरूपहूं तब विष्णुभगवान् बोले कि विष्णु शिवरूप हैं क्योंकि जो शिवको अभेद जानता है वही शिव है तब शिवजी बोले कि मैं ऐसा विष खाये हुये हूं कि तुमको भी विष में मिलाकर खागया और इसीकारण से मेरा शिव नाम हुआ तब विष्णुभी शिवमें कैसे होसक्ते हैं विना शिवरूपके और किंचिन्मात्र भी नहीं है अर्थात् सर्वत्र एक शिवही है तब विष्णुजी बोले कि हे शिवजी! विष्णु शिव कदाचित् नहीं होसक्ते शिव आनंदको कहते हैं वह आनंद दुःख का सापेक्ष्य है और विष्णुमें सुख और दुःख दोनोंका भान नहीं है तब पराशर जी बोले कि हे मैत्रेय! तुमभी कुछकहो तब मैत्रेयजी बोले कि जो तुम कहतेहो वही मैं सुनता हूं तब पराशर जी बोले कि न विष्णु हैं न शिव हैं एक केवल मैंही हूं और यह तो प्रसिद्धही है कि सबके आदि ब्रह्मा और विष्णु व शिव हैं ये, सब मुझी से सिद्धहोते हैं, तब शिवजी बोले कि ऐसा मत कहो ब्रह्मा पूर्ण ब्रह्मको कहते हैं सो मुझमें पूर्ण और अपूर्ण दोनों में से कुछ भी नहीं है इसलिये कि मैं भेद और अभेद दोनों से रहित हूं तब ब्रह्माजी बोले कि विष्णु और शिवसे जो अतीत है वह मैं हूं ये कार्य और कारण दोनों पदार्थ मुझही से सिद्ध होते हैं और जो मैंने यह कहा कि विष्णु और शिव मुझीसे सिद्ध होते हैं वह अभी तक अशुद्धहै क्योंकि मैं आपही आपहूं तब शिवजी बोले कि हे विष्णु अब आप अपना स्वरूप वर्णन कीजिये तब विष्णु भगवान् बोले कि मैं अपना स्वरूप किससे वर्णन करूं परंतु अब

तुम्हारे पूछने से मैं अवश्य तुमको समझाऊंगा देखो यह जो संपूर्ण दृश्यमात्र जगत् है सब मेराही स्वरूप है और सब लोग भी ऐसाही कथनकरते हैं कि जगत् ब्रह्म है परन्तु हे शिवजी! तुम्हारा क्या रूप है उसको तो बतलाइये तब शिवजीने उत्तर दिया कि रूप और अरूप मेरा कुछभी नहीं है तब ब्रह्माजी बोले कि तुम अपनेको अपनी सत्तासे भिन्न जानते हो परन्तु मैं यह समझताहूं कि रूप और अरूप मुक्त और असुक्तमैंहीहूं और स्थूल व सूक्ष्म भी हमीं हैं तब ब्रह्मा और विष्णुजी दोनों देवते मिलकर हँसे और इनका हँसना देखकर शिवजी हाथ जोड़कर विष्णुजी से पूंछने लगे, हे मैत्रेयजी! चित्तको समाधान करके इस प्रसङ्गको श्रवण करो तब मैत्रेयजी ने पूछा कि महाराज! मन कहां है कि जिसको समाधान करूं परन्तु कृपापूर्वक यह बतलाइये कि शिवजी ने क्या प्रश्न किया तब पराशर जी बोले कि चित चैतन्य से भिन्न है तब मैत्रेयजी ने कहा कि मनहै न चित्तहै अब आप ब्रह्मसूत्र कथन कीजिये तब पराशरजी बोले कि जब चित्तही नहीं है तब किसप्रकार से पूछते हो कि ब्रह्मसूत्र कथन कीजिये तब मैत्रेयजी ने उत्तर दिया कि मुझको इस,उस और समानता व नीचतासे कुछ प्रयोजन नहीं है अब आप ब्रह्मसूत्र कथन कीजिये कि सुननेकी मेरी अभिलाषा है तब पराशरजी बोले कि शिवजी ने कहा कि वचनही द्वैत है इससे मौनहोरहो तब विष्णुजी मौन होगये तब शिवजीबोले कि हमारे प्रश्नका उत्तर आप न देकर क्यों मौन होरहे हैं इतना कहकर शिवजीभी मौनहोगये इसप्रकार जब शिव और विष्णु दोनों मौन होगये तब ब्रह्माजी बोले कि हे शिवजी! तुमतो मौनको उत्तम समझके सप्टहोरहेहो परन्तु मौनमें इतना बोलनाहै कि जो कथन मात्र सें न आसके मौनसे भ्रमका नाश नहीं होना जो पुरुष भ्रम से रहित हुआ है वही मौनहै तब श्रीशिवजी बोले कि तुम्हारा यह कथन तो निस्संदेह सत्यहै परन्तु जब बुद्धिहीनहीं है तब क्या

कहाजावै जो पुरुष शरीर से आनन्दित रहकर सुफल है उसी को वचन के उच्चारण करने की शक्तिभी है और जिस पुरुष के मनही वश में नहीं है वह इसप्रश्नका उत्तर नहीं देसक्ता इससे इससंवादसे क्या प्रयोजनहै जो स्वरूपहै वह कहनेमें नहीं आता और जो कहनेमें आताहै वह तुच्छहै तव विष्णुभगवान् बोले कि आपका कथन सत्यहै परन्तु यह आप नहीं जानते हैं कि मुमुक्षु को पहिली अवस्था में उचित है कि ज्ञानकरे या श्रवण मन्तव्य निदिध्यासन करे जव स्वरूप को जाना तव सफल हुआ परंतु विना विचार के ज्ञान प्राप्त नहीं होता तव कहना उचित समझ कर शिवजी बोले कि जव आपही हे तव कथन से क्या प्रयोजन है और तुम्हारा कथन है कि स्वरूप को पाकर सुफल होता है यदि ज्ञानकी वृत्ति नहीं है तव स्वरूप का जानना भी नहीं है और जव स्वरूप काही ज्ञान नहीं तव तुम्हारा रूपही कहां है तव विष्णुजीने कहा कि स्वामी और सेवक आपही हे तव शिव जी बोले कि जव आपही हे तव क्या कथन करें तव विष्णुजी बोले कि यदि मौन रहना उचित समझो तो आपका यह विचार अनुचित है क्योंकि यह वाक्य इन्द्रिय का यही कथन विषयहै कि कर्म है यदि वाक्य उच्चारण से प्रयोजन न होता तो अनन्त शब्दोंकीही उत्पत्ति न होती,यह वाक्य केवलगोविन्दजीका भजन करने के लिये उत्पन्नहुई हैं परन्तु जो पुरुष विना किसी आश्रय के गोविन्दजी का भजन करता है उसीको परमानन्द की प्राप्ति होती है क्योंकि कामना के नाश के विना मुक्ति नहीं होती और यह ग्रहण और त्याग दोनों केवल दुःखही का रूपहै इसलिये हे शिवजी ! अहङ्कार का त्याग करके गोविन्द का भजन करो कि जिस से आवागमन से रहित होकर मुक्त होजावो क्योंकि हमारे भजन के प्रभाव से अपने को क्या अहङ्कार को भी न देखोगे और जब आपको न देखोगे तव ग्रहण और त्याग स्वयं निवृत्त होकर आवागमन से रहित होजावगे देखो जिस वाक्य

से ॐनमो वासुदेवनारायण उच्चारण नहीं होता वह जिह्वा कथनमात्र को जिह्वा है परन्तु असल में मांसका टुकड़ा व चर्म समझना चाहिये कि वह निष्प्रयोजन मुख में लगाहै इसलिये हे मित्रो! कामना का त्यागकरके भजन करो क्योंकि शरीर स्वप्नवत् क्षणभंगुरहै अर्थात् एकक्षणमात्रमें इसका नाश होजाता है इसलिये नारायणके भजन का त्याग न करो यदि तुम भजन करोगे तो तुमको संसाररूपी सर्प कभी न डसेगा गोविन्दजी का भजनही इससंसाररूपी समुद्र में नौका है जब तुमको यह निश्चित होजावेगा कि विष्णुही सर्वव्यापी व अन्तर्यामी है तब संसारसमुद्र का तुमको भान भी न होगा न नौकाकी आवश्यकताही होगी और अहङ्कार को त्यागकर अपने को कुछ भी न समझना यही गोविन्दजी का भजन है तब शिवजी बोले कि विष्णुसे विष्णुरूपी फांसीमें फँसता है यदि शिवजी का भजन करे तो मुक्त होजावे क्योंकि शिव किसी एक स्थानपर स्थित नहीं रहते अर्थात् सर्वत्र सर्वस्थानों व पदार्थ चराचर जङ्गम में विविध स्वरूपधार के व्याप्तहै तब विष्णुजी बोले कि यदि शिवजीका स्थान नहीं है तब शिव कहांहैं हे महाराज! शिवजी तुम्हारा भी स्थान है तब शिवजी बोले कि आपही स्थान बतलाइये तब विष्णुजी बोले कि शिवका अर्थ आनन्दहै और इसीको स्थान कहतेहैं इसलिये कि वह स्वयंआनन्द स्वरूप हैं तब शिवजी बोले कि मैं प्राचीन अतीतहूं और गृहस्थ हो इसलिये कि तुम बड़ेभाई हो तब विष्णुजी बोले कि गृह इसी को कहते हैं कि सब हमींहैं तब शिवजी बोले कि तुम्हारा स्वरूप चतुर्भुजी है अथवा और भी किसीप्रकार का है तब विष्णुभगवान् बोले कि यदि एक मैंहीहूं तब चार किसतरह से होसके हैं और भुजा कहां है हे मेरेरूप! तुम समझ लो कि यदि तुम न होते तब तुमही तुमहो ऐसा न कहते तब शिवजी बोले कि यदि हम नहीं हैं तब तुम कहांहो तब विष्णुजी ने उत्तर दिया कि हमारे

में तुम कहां हो केवल हमीं हैं इसतरह उत्तर देकर
कि हे शिवजी ! तुम श्रीविष्णुजी का भजन करो तब
कहा कि जब मुझको किसीप्रकारका कष्ट प्राप्तहोवे तब
जन श्रीगोविन्दजीका करूं सो मैं दुःख सुख व
न्यारा हूं अर्थात् ये सब मुझको किसीप्रकार बाधित नहीं
विष्णुभगवान् : तुम्हारी भक्तितो उत्तमहै परन्तु यह भीतो
इये कि जब आपकी भक्ति उत्तमहै तो अधम कौनवस्तु
ष्णुजीने उत्तरदिया कि जो कोई मुझसे अतिरिक्त
को अधम समझना चाहिये तब शिवजीबोले कि
चीजहै तब विष्णुजी बोले कि अतिरिक्त इसीका नाम है
विष्णु विद्यमानहूं परन्तु तुम कहतेहो कि तुम विष्णु
फिर शिवजीबोले कि यह तो तुम स्वयंअपने मुखारवि
हो कि मैं विष्णु नहीं हूं कोई दूसरा तो नहीं कह
ष्णुभगवान् बोले कि हे पराशरजी ! अब आप
आपका निश्चय क्या है तब मैंने उत्तर दिया विचार
बतलाइये कि मैं कौन हूं इस तुम्हारे कथन विषयहै
श्चयकरलेंगे तब विष्णुभगवान् बोले तो अनन्त
मैंनेकहा कि मैं दिगंबर हूं इसी से जीका भज
बतलाइये कि मैं किससे लज्जाकरूं आत्म
रूप है तब विष्णु भगवान् बोले कि हमा
कहा कि हे शिवजी ! तुम्हारा क्या रूपहै तब
हमारारूप विष्णु है तब मैंने कहा कि शिव है न विष्णु है
शिवरूप में ही हूं हे मैत्रेयजी ! उस सभाके संवाद से प
श्चित हुआ कि आत्मा से अतिरिक्त कोई वस्तु किंचिन्मात्र
नहीं है अब कहिये कि आपको भी इस विषय में निश्चय
या नहीं तुमतो भ्रमसे रहित होकर सदा एकरस रहते हो
लिये कि भगवान् ने वामनरूप धारण किया है क्या माया
रूप धारण किया है ऐसा न होवे, यदि तुम निरसंशय ए

आत्मज्ञान का सुख जितना प्राप्तहोताहै उसको जिह्वासे वर्णन नहीं होसक्ता क्योंकि यह अनन्त और निरतिशय है. और काल का भय ऐसा भयानकहै कि यदि कोई किसीसे कहे कि अमुक दिन तुम्हारा देहान्त होगा तो उस पुरुषको पहिलेहीसे शोक प्राप्तहो-जाता है और ज़िन्दगी उसको कठिन होजाती है और जिस पुरुषने इस मिथ्यासंसारको त्यागकर आत्मज्ञान को प्राप्त किया है उसके चित्तसे कालका भय सम्पूर्ण संशय सहित नाश को प्राप्त होजाता है और सोते समय गोविन्दही का नाम उच्चारण करता है और बोलने में भी विष्णुभगवान् काही कीर्त्तन करता है और चलने, फिरने, बैठने, उठने, खाने, पीने इत्यादि यावत् सांसारिक कार्यहैं सबमें श्रीगोविन्दजीहीका रूप देखताहै क्योंकि यह आनन्दरूप आत्माको प्राप्तहोकर जिसजगह बैठताहै बैठाही है जब चलताहै तब चलताहीहै और रोताहै तब रोताहीहै और सो-ताहै तब सोताहीहै जब हँसताहै तब हँसताहीहै क्योंकि सर्व व्य-वहारमें आनन्दरहताहै परन्तु यह अखण्डसुख उससमय प्राप्तहोता है जब कि निष्कपट होकर निश्चलबुद्धिसे जानताहै कि आत्माही सब में पूर्ण है और सुख से हर्ष व दुःख से शोक न करे और अपने को शरीरसे भिन्न जाने जब जीवके शरीरसे भिन्न जानता है तब शान्ति आतीहै और जब शारीरिक धर्मोंसे रहित होताहै वही मुक्तहोता है व हर्ष और शोक से मुक्तहोकर इन्द्रियों और तत्त्व और गुणको तत्त्व देखता है सो दृष्टिभेद करके देखो कि यह सम्पूर्ण तुम्हीं से सिद्ध होतेहैं नहीं तो कहांहैं आपही नाम रखकर आपही उसमें फँसाहै यह सम्पूर्ण भेद शुभ और अशुभ तुमको इसी निमित्त से होताहै कि तू आत्मज्ञान को नहीं जा-नता और अपनेको शरीर मानकर हर्ष, शोकके बन्धनमें फँसता है हे मूर्ख ! अच्छी तरहसे देख कि तुम्हारे भिन्न कौनहै और जब भ्रमका आवरण नाश होता है तब निस्संशय आपही आपहै हे मैनेपखी ! यह सम्पूर्ण मेरे उपदेश कि जिनपर तुम्हारा निश्चय

नहीं है तुम्हारे सन्मुख व्यर्थ हैं अर्थात् जब कोई उपदेश किसी की समझ में न आवे तब उसको उस उपदेश का करनाही व्यर्थ है और जो कर्म मैं तुमको उपदेश करता हूं तुम्हारे निकट सब व्यर्थ होता है इससे अब मैं तुमसे कुछ भी उपदेश न करूंगा हमारा वाक्य अद्वितीय है वह उसी पुरुष को लाभ दायक है कि जिसकी मति अद्वितीय होवे सांसारिक सुख मनुष्यों को ऐसे हानिदायक हैं जैसे कि कुत्ते के लिये सूखे हाड़—अर्थात् जैसे कुत्ता वेमांस की सूखी हड्डी को अपने मुख में लेकर दांतों से वारंवार दवाता है और हड्डी सूखी होने के कारण उसके तालू में छिदकर खून आने लगता है कि जिस खून को कुत्ता उस हड्डी से निकला हुआ जानकर और भी आनंद में आकर उस सूखी हड्डी को चबाकर आनंद मानता है परंतु यह नहीं जानता कि यह मेराही खून है इसीतरह जिन मनुष्यों को सांसारिक सुख क्लेश दायक हैं उनको मेरी वाक्य क्या सुख दायक होगी तब मैत्रेयजी बोले कि इतिहास वर्णन कीजिये तब पराशरजी बोले कि तुमको इतिहास से क्या प्रयोजन है मैं वाह्य दृष्टि नहीं हूं तुम्हारे अन्तष्करण को जानता हूं तुम अहंकार में फँसे हो तुम्हारे पाखंड को अच्छीतरह से जानता हूं तुम्हारी कामना अनेकप्रकारके सकाम कर्मों में लगी है इसलिये मैं तुमको जब तक इन वासनाओं से निवृत्त हुआ न देखूं आत्मज्ञान किसतरह से उपदेश करूं परन्तु फिरभी तुमको समझाता हूं कि न मैं हूं न तुमहो न यह संसारही है केवल एक अद्वैत आत्माही सार है यह तुम पूर्णरूप से निश्चय करो तब मैत्रेयजी बोले कि अभी आप कहते थे कि मैं तुमको उपदेश नहीं करूंगा परन्तु अब उपदेश करतेहो यह क्या बात है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! मैंने आजतक किसी को इसलिये उपदेश नहीं किया था कि मेरे उपदेश से किसी की कामना सिद्ध नहीं होती. और जब किसी पुरुषकी कामनाही सिद्ध नहीं होती तो कहना व न

कहना वरावरहै अपने चित्त से अनुमान करो कि जो पुरुष अपने प्रयोजन सिद्ध कर लेता है वह मौन हो जाताहै इसी को मौन कहते हैं और जब मैंने कहा और तुमको निश्चय न हुआ तो इस कथन से क्या प्रयोजन निकला सब लोग कहते हैं कि संत-लोग अपना मूल मंत्र अर्थात् असली उपदेश किसी को नहीं बतलाते हैं उनका यह कथन बिलकुल सत्य है, संतों का उपदेश इसी लिये होताहै कि उनके कथन को सुनकर उसपर निश्चय करे और जब सुनकर यथावत् निश्चय न किया और संतों के वाक्यको न माना इसी को छिपाना कहते हैं संतलोग और वेद पुकारकर कहते हैं कि संपूर्ण संसार व सांसारिक पदार्थ नाश-वान् हैं केवल एक विष्णुही नाशरहित व अद्वितीय है यदि इन संत और वेदों के कथनपर निश्चय न करे तो संतोंके कथन और वेद के वाक्यों में क्या दोष है उनपर विश्वास न करके उनको दोष लगाना मिथ्याहै जो वेद में लिखा है वह सब सत्यहै और संतोंके वाक्यभी किसीप्रकार से अनर्गल नहीं हैं इसलिये कि संतों के वचन और वेद के लेखसे यही साबित होताहै कि संपूर्ण सांसारिक पदार्थ नाशवान् हैं और आदि, अंत व मध्य सबपदार्थों में केवल ब्रह्मही का प्रकाशहै इस वेद वाक्य को मैंने तुमसे यथा-वत् वर्णन किया परन्तु तुमको विश्वास व निश्चय नहीं होता यही संतों से दुराभाव है हेमैत्रेयजी ! ब्रह्मा के सदृश कोई वि-द्वान् न होगा श्री विष्णुभगवान् का कथन है कि जब केवल मैंही हूं तब कोई प्राणी अंतर किसप्रकार से रखसक्ता है यदि मेरे इस कथन और ब्रह्मा के वाक्यपर सब लोगोंका विश्वास है कि ब्रह्माका कथन सत्यहै और विश्वास नहीं करतेहैं इसी से वेद और संतोंके सिद्धान्त का रहस्य छिपाहै और सर्व से छिपा-बना यही है कि स्वरूपचैतन्य है और बुद्धि को स्वरूपमें प्राप्ति नहीं है तो भगवान् का भजन करो और निश्चयकरो कि भग-वान् के बिना किंचित् वस्तु नहीं है यह मनुष्यका शरीर चिन्ता-

मांगीहै सो तुमको प्राप्त हुआ है परन्तु तुम इसशरीर की महिमा और गुणों को नहीं जानते हो और संसारको त्यागते हो इससे तुमको लज्जा नहीं आती यह निश्चयकरो कि शरीर की स्थिति श्वास पर है जब श्वास निकलगई तब संपूर्ण पदार्थ जो तुमने अभिमान से कल्पित किये हैं वह स्वप्नके पदार्थ समान मिथ्या हो जावेंगे—हे मैत्रेयजी! जबतक तुम हो तबतक खाने और पहिनने की चिंता न करो और प्रसन्न मनहोकर गोविंदका भजनकरो और यह निश्चयकरो कि सर्वत्र गोविंदही है और यदि कामना से तृप्त न हुआ जो चक्रवर्ती राजा मरजाता है और संपूर्ण पदार्थ व छत्र और राज्य व प्रजा सब सामग्री बनी रहतीहै और आपचला जाता है तब तुम अभिमान व अज्ञान की ग्रंथि जो तुम्हारे हृदयमें स्थितहै उसको त्याग करो तब सब कामना स्वयंनाश होजावेंगी व तुम निर्भय होकर गोविंद का भजन जो कल्याण करताहै सो करो जो तुम्हारी प्रारब्धि में है किसी प्रकार से न्यूनाधिक्य और अन्यथा नहीं होसक्ता और यदि कामना करोगे तब भी वही है और तुमको यह मनुष्य का शरीर जो परमेश्वरने कृपा करके दियाहै वह स्वर्गलोक पितृलोक और परलोक परायण हो शरीर की स्थिति प्रारब्ध के आधीन है इससे तुमको क्या कामहै कि जो इसशरीर के निर्वाह की कामना और यत्न करते हो शरीर के निर्वाह के लिये प्रारब्धहै इसकी कभी चिन्ता न करना चाहिये तुम इसविषय में क्यों चिन्ता करते हो निर्भय होके गोविंदजी का भजनकरो क्योंकि जीना श्वाससे अधिक नहीं है श्वास जो बाहर जाती है उसकी यह आश नहीं कि फिर भीतर आवे या न आवे फिर निश्चय रखते हो और कहते हो कि वैराग्य करूं हे मैत्रेयजी! तुम ऐसा वैराग्य करो कि गोविंद से अतिरिक्त और कुछ भी न देखो और न जानो तब मैत्रेयजी बोले कि मैं भजन गोविंद जी का किस तरहसे करूं मुझको मन, बुद्धि व चित्त, अहंकार ये भजन नहीं

करनेदेते हैं तब पराशर जी ने कहा कि तुम मुझको केवल पाखंडी दिखाई देते हो कभी मन और बुद्धि ने तुमको मना किया और कहा है कि भजन न करो तुम जो मन और चित्त से भगवान् होते हो सो कहो कि मन बुद्धिका क्या रूपहै तब मैत्रेयजी बोले कि मेरी दृष्टि में मन और बुद्धि का स्वरूप नहीं भासित होताहै कि किस तरह का है तब पराशरजीने उत्तर दिया कि इसी से मैं तुम्हें पाखंडी कहताहूं जिसका स्वरूप ही लक्षित नहीं होता वह भजनको किसप्रकार से मना करेगा परन्तु यह तुम्हारे मनका संकल्प विकल्प है और उसी के ऊपर अहंकार करते हो इससे तुम संकल्प का त्याग करो और आपही आप गोविंद हो इससे अधिकतर परमार्थ नहीं है तुमको उचित है कि मन और बुद्धि की ओर कदापि दृष्टि न करो कि जिसमें संकल्प विकल्प कुछ भी नहीं है वही अनीति है वही गृहस्थ है काल का वचन है कि मेरी फांसी सम्पूर्ण संसारी जीवधारियों के गलेमें दृढ़ता से पड़ी है वह किसी के काटने से नहीं कटती परन्तु वह पुरुष उस फांसी से निर्मुक्त होताहै कि जिसके हृदय में यह दृढ़ निश्चयहै कि ब्रह्मा से लेकर पिपीलिका पर्यन्त सब जीवों में एक अद्वैत नारायणही का वास व प्रकाश है अर्थात् एकही आत्मा है उससे अतिरिक्त किञ्चिन्मात्र भी नहीं है तब मैत्रेयजी बोले कि मैंने तुमको अनेकप्रकार और अनेक युक्तियों से उपदेश किया अब तुम यदि न्याय करके व चित्तको एकाग्र करके न विचारो तो मेरा क्या दोषहै इस विषयमें हम एक ब्राह्मण का इतिहास तुमसे वर्णन करते हैं उसको ध्यान देकर श्रवण करो—पूर्व काल में एक ब्राह्मण ने एकहजार वर्षतक विष्णु भगवान् की उपासनाकी तब विष्णु भगवान उसकी उपासना देखकर प्रसन्न हुये और उस विप्र के सन्मुख आकर बोले कि हे विप्रजी ! मुझमें और अपने में तुम किञ्चित् भेद न देखकर यह जानो कि जो कष्ट तुम करतेहो वह सब मुझीको प्राप्त होना

है इस लिये कि मैं तुम्हारे अन्तर्गत व बाहर सब स्थानों में परिपूरित हूं तुम मुझको अपना रूप व अपने को मेरा स्वरूप निश्चय करके जानो और प्रसन्न वदनहो विष्णु भगवान्के इस कथन को सुनकर ब्राह्मण अपने मनमें विचार करने लगा कि मैंने सुना है कि जब कोई पुरुष ईश्वरके भजन में प्रवृत्ति करता है तब देवता उससे ईर्षा करके उसके भजन में बाधक होकर उसका चित्त भजनसे हटा देते हैं यह विचार के विष्णुजी से बोला कि हे असुर! मैं मूर्ख नहीं हूं कि जो तुम्हारी माया से अपने निश्चय और कर्मको त्यागदूं तुम जहांसे आयेहो वहींको पधारो नहीं तो मैं तुमको अपनी योग अनल से भस्म करदूंगा तब विष्णु भगवान् ब्राह्मणके इस कथनको सुनकर प्रसन्न हुये और बोले कि यदि कोई अपने आग्रह अर्थात् हठको न त्यागे तो उससे हमारा उपदेश करना व्यर्थहै इतना कहकर उसविप्र के सन्मुख से विष्णु भगवान् अन्तर्द्धान होगये हे मैत्रेय जी! इससे तुम अपनेको आपहीजानो और मुक्तहोओ,हरिःॐतत्सत्॥

इति ब्रह्मसूत्रइतिहास समाप्तम्, शिव! शिव!!

श्रीगणेशाय नमः

हरिःॐतत्सद्ब्रह्मणे नमः

अथ कच और उसके पिता बृहस्पति ब्राह्मणका इतिहास प्रारम्भ॥

एक समय कच अपने पिता बृहस्पतिजी से बोला कि हे तात! मैं सांसारिक और शास्त्रोक्त दोनों प्रकार के व्यवहारों को तो भलेप्रकार से जानता हूं परन्तु अपने स्वरूपको नहीं जानता हूं कि वह क्या और किस प्रकारका है इस विषय में मुझे बहुत

बड़ी सन्देहहै सो आप मुझको अपना प्रियपुत्र जानकर कृपादृष्टि से मेरे इस सन्देहको रूपका विवरण भलीप्रकार समझाकर निवृत्त कीजिये कि जिसके ज्ञात होने से मैं संशय रहित होकर सुखी रहूं जब बृहस्पतिजी ने अपने पुत्र के इसप्रकार से विनययुक्त वचन सुने तब उसकी सन्देहकेछुड़ाने के लिये बोले कि तुम ध्यान धरकर अद्भुत व अपूर्वविष्णु क्याहै और तुम कौनहो इसभेदको श्रवणकरो देखो यह सम्पूर्ण चराचर जगत् जो तुम्हारी दृष्टि में अनेक प्रकारके संकल्प विकल्प उत्पन्न करताहै केवल प्रकाशरूपहै परन्तु इसके प्रकाशक तुम्हीं चैतन्यरूप से आदि अन्त रहित विद्यमान हो व अतिलघु पिपीलिका से लेकर हस्ती तक सबमें तुम्हाराही प्रकाशहै और तुमको सबलोग उसका प्रकाशक कथन करते हैं इस विषय में ब्रह्माके मुखसे सुनेहुये सारस और उसकी स्त्री के वार्तालापको तुम्हारी सन्देह निवृत्त होनेके लिये तुम्हें सुनाताहूं तुम स्थिरचित्त होकर व ध्यान धरके श्रवणकरो मुझे आशा है कि इस इतिहासके श्रवण करने से यह तुम्हारा संदेह छूटजावेगा तब कच हाथ जोड़कर बोला कि हे पिताजी! आप उस इतिहास को सविस्तर मुझको अपना प्रियपुत्र जानकर पुत्रभाव से श्रवण कराइये मैं उसके सुननेके लिये सब कामोंको छोड़कर व सम्पूर्ण सांसारिक विषयों से अपने चित्तको खींचकर सावधानता से कान लगाकर श्रवण करनेपर उद्यतहूं तब बृहस्पतिजी बोले कि एक समय एक सारसपक्षी ने अपनी स्त्रीको समझाया कि हे प्रियाजी! अर्थात् हे मेरे रूप! यह जो संपूर्ण संसार अनेक प्रकारके रंगबिरंगे रूपों से दर्शित होता है यह बिलकुल अस्थिर व नाशवान् है इसको पूर्ण रूपसे असार समझकर मृगतृष्णा के जलकी नाईं केवल भ्रममात्रही समझकर यह जो अधिष्ठान ब्रह्म, मन, वाणी व सर्व इन्द्रियों का दृश्यनहीं है यह निश्चय जानो कि जो अधिष्ठानहै वही सत्है तब उसकी स्त्री अर्थात् सारसिन बोली कि जो मन, वाणी का दृश्य नहीं है

उसपर किसप्रकार से निश्चय होवै तब सारस ने कहा कि मेरे हेरूप! जब दृष्टि अधिष्ठान में जाती है तब निश्चय होता बिना अधिष्ठान के दर्शित हुये निश्चय कदापि नहींहोसक्ता तब सारसिन ने उत्तरदिया कि अधिष्ठान क्याहै और कौनहै तब सारस बोला कि जो कहता है कि अधिष्ठान क्या और कौनहै उसीको अधिष्ठान कहते हैं तब सारसिनने पूछा कि अधिष्ठान क्या वस्तु है तब सारस ने कहा कि वही है जो कहता है कि क्या है और कौन है तब उसकी स्त्री बोली कि वह जो कहता है कि मैं हूं परन्तु अपने स्वरूप को नहीं जानती हूं तब सारस बोला कि तेरा सत् चित् आनन्दस्वरूपहै तब सारस की स्त्री हँसकर बोली कि हे निर्बुद्धि! यह सम्पूर्ण लक्षण जो तूने अपनी अज्ञानता से मुझ में स्थित किये हैं सो तो द्वैत से युक्त हैं इसलिये कि बिना असत् के सत्का भान किसी प्रकार नहीं होता सत् और असत् इन दोनों का परस्पर व्यवहार ब्रह्माजी ने स्थापित किया है और इसी प्रकार चित् भी अर्थात् जड़ उचित के बिना कदापि नहीं रहसक्ता और जहां आनंद का वास होताहै वहांही दुःख भी रहताहै सो मैं इन सम्पूर्ण वैकारिक पदार्थों से रहित होकर शुद्ध रूपहूं परन्तु मुझको अपना स्वरूप निश्चित नहीं है इससे दया करके यह बतलाइये कि मेरा स्वरूप क्याहै इसीसमयान्तर में श्रीभगवान् विष्णु जी के वाहन गरुड़जी भी आ उपस्थित हुये और बोले कि संपूर्ण चराचर, स्थावर, जङ्गम आदि में सर्वत्र श्रीनारायण विष्णु भगवान् पूर्णरूप से पूरित हैं और उन में द्वैतकी गंध भी नहीं है तब सारस ने पूछा कि हे गरुड़जी! आप के मुखारविंद से ऐसा कथन अनुचित जानपड़ता है कि द्वैत निश्चय होताहै जब केवल विष्णुही हैं तब जगत् कैसे होसक्ता है आपके इसवचन को मेरी स्त्री कदापि प्रतीति न करेगी तब गरुड़जी बोले कि तुम्हारी स्त्री अज्ञान है देखो एक तब कहा जाताहै जब दूसरा भी होवे और जब केवल स्वरूपही है तब एक

और दो किसी प्रकार से कथन व श्रवण अथवा देखने में नहीं आसक्ता हे सारस! जो पुरुष अपने मुखसे विष्णुको कथन करता है वह विष्णु के रूपको कदापि नहीं जानता इसलिये विष्णु भगवान् मन व वाणी से अगोचर हैं यह स्वरूपका कथन केवल अज्ञान से होताहै श्रीविष्णु भगवान् एक अद्वितीय हैं, तब सारस ने कहा कि हे गरुड़जी! यदि सर्वत्र विष्णुको व्यापक मानके सब लोग स्वयंब्रह्म अर्थात् आपही आप कहते हैंतो कुछ चिन्ता की बात नहीं है हां यदि विष्णुभगवान् का नाम सब लोग अपने चित्त से भुलादेवें तो पूर्णरूप से निश्चितहै कि वे लोग सम्पूर्ण क्लेशका भाजन होंगे इसकथन को सुनकर गरुड़जी बोले कि मेरा उपदेश अज्ञानी लोगों के लिये कदापि नहीं है इसको ज्ञानी पुरुषही समझ सक्ते हैं और उन्हींके लिये यहमेरा कथन उचितभी है तब सारस बोला कि अभीतक तुम्हारी दृष्टिद्वैत बुद्धिसे नहीं हटी, यह सम्पूर्ण दृश्यमात्र जो तुमको दर्शित होताहै यह सर्व जगद्व्यापी घटघट बासी अन्तर्यामी श्रीविष्णु भगवान्ही का रूप है और जब सर्व चराचर स्थावर जंगमादि के अन्तर व बाहर उन्हीं सच्चिदानंद विष्णुभगवान् का रूप विद्यमान है तब ज्ञानी और अज्ञानी का भेद किसी प्रकार से निश्चित नहीं होसक्ता अर्थात् अनालि सिद्ध होताहै बड़े आश्चर्य की बातहै कि तुमको अबतक स्वरूपका परिज्ञान न हुआ और सांसारिक पदार्थों की विलक्षण दशाओं के भ्रमणमें ग्रसितहो इसी वार्तान्तर्गत कागभुशुंडिजी भी आकर उपस्थित हुये और गरुड़जी व सारस के परस्पर उत्तर प्रतिउत्तर को सुनकर बोले कि तुमलोग अपने निश्चित व शुद्ध स्वरूपसे इस बातपर पूर्णरूप से विश्वासकरो व ध्यान देकर देख व समझभी लो कि ब्रह्मासे लेकर पिपीलिका पर्यन्तयावत् चराचर स्थावर, जंगम पदार्थहैं उनमें एक श्रीरामचन्द्रजी ही पूर्णरूपसे पूरितहैं दूसरे किसीपदार्थका किञ्चिन्मात्र भी लेश नहीं है तो फिर किसप्रकार उनके स्वरूप व अंश से

भिन्न हो सक्तहो-तब काग भुशुंडिजी बोले कि मैं तो तनमन से उन्हीं का किंकरहूं तब गरुड़जी बोले कि इस कथन से तो रामही पुरातन ठहरा और यदि आदि, अंत व मध्यमें केवल रामही पूर्ण है तो तुमने अपनी दुर्बुद्धि और अज्ञान से अपने को दास मानता है यदि अन्तर व वाहर व मध्यमें सर्वत्र रामही पूरित हैं और उनके सिवाय दूसरा कोई नहीं है तब वृथा अहंकार करते हो कि मैं भी कुछ हूं तुम पूर्णस्वरूपके ज्ञानसे रहितहो तब कागभुशुंडिजी इस कथन को सुनकर विचार करनेलगे और अपने को रामसे भिन्न न जानकर निश्चयकर लिया कि यह जो मैंने अपने स्वरूपको राम रूपसे भिन्न जाना था यह विलकुल मेरा देहाभिमान और मिथ्या संकल्प विकल्प है हे गरुड़जी! मैंही रामरूपहूं इसलिये कि मैं अखंड अद्वितीय हूं मैंने केवल अज्ञान के वश होकर वृथा अभिमान किया था कि मैं कागभुशुंडि हूं तब गरुड़जी बोले कि मैं विष्णुजी के चरणों में जाकर कहूंगा कि कागभुशुंडिने भक्ति को त्याग दिया है इस लिये कि वह अपने को ही स्वयंविष्णु मानता हैं तब कागभुशुंडिजी बोले कि जो कुछ मेरा कथन है और जहां तक मेरी समझहै उसमें किञ्चिन्मात्र भी भेद नहीं है वह विलकुल सत्य है परन्तु विष्णुजी के समीप कहना क्या योग्यहै उसीसमय में हंस जो कि ब्रह्माजी के वाहनहैं आकर प्राप्त हुये और बोले कि अहंब्रह्मास्मि तब कागभुशुंडिजी ने कहा कि हे गरुड़जी! देखो हंसक्या कहता है कि मैं स्वयंब्रह्म हूं और यदि मैंने अपने को स्वयंब्रह्म कहा तो इसमें क्या संदेह है मैं निस्संदेह विष्णु रूपहूं तब गरुड़जी बोले कि तुम्हारे प्रभु के सन्मुख हंस कहे कि मैंने नहीं कहा और मैं साक्षी दूंगा तब तुम क्या करोगे तब कागभुशुंडिजी बोले कि मैं उत्तर दूंगा कि हे विष्णु जी! आप मुझसे प्रकट हुयेहैं उसी समय को कि जिसके पंखों से प्रणव अर्थात् ॐकार का शब्द प्रकट होता था आकर उपस्थित हुये और बोले कि यह संपूर्ण जगत् मेरेसे

प्रकाश से प्रकाशित है और मैंही इसका प्रकाशकहूं तब कागभुशुंडिजी बोले कि हे मयूर ! तुम अपने मुख से ऐसा मत कहो और यही कहो कि सम्पूर्ण रामरूपही है तब मयूर ने कहा कि हे कागभुशुंडि ! यह बतलाओ कि तुम्हारा राम किस जगह विद्यमानहै तब कागभुशुंडि जी बोले कि वह रामरूप मेरे रोम रोम में व्याप्तहै और यह जो कुछ प्रकाशहै सब उसी रूप का प्रतिबिम्बहै तब मयूर ने पूछा कि तुम्हारे इस कथन से तो निश्चित होताहै कि रामरूप के द्रष्टा तुम्हींहो और रामसे परे उत्कृष्ट हुआ तब गरुड़जी बोले कि हे मयूर! रामरूप तो एकही है परन्तु तुम ने उसको त्रिपुटीरूप वर्णनकिया अद्वितीयमें त्रिपुटी का भान संभव नहीं होसक्ता तब मयूरने उत्तरदिया कि हे गरुड़जी ! तुमको अपने स्वरूप की ही अप्राप्ति है और यदि सर्वत्र रामही है तो त्रिपुटी भी रामही है हे गरुड़जी ! जो आत्मा से उत्पन्न हुआ है वह केवल आत्मारूपही है जैसे मृत्तिका के अनेक घटादि पात्र बनायेजाते हैं परन्तु वास्तव में वह केवल मृत्तिका रूपीही हैं और जो पुरुषआत्मा से अतिरिक्त कुछ मानताहै उस को धिक्कार और उसके शीशपरक्षार है तब कागभुशुंडिजी बोले कि हे मयूर ! जैसे मनुष्यों में चांडाल नीचहै इसीतरह पक्षियों में तू भी नीचहै हे नष्टबुद्धे ! जब रामही सर्वत्र है तब एक और दो क्याकहूं तब मयूरने कहा कि अब तुमको उचित है कि तुम दोनों मेरे शिष्यहो जावो तब कड़ाकुल अथवा कुंज ने आकर उत्तरदिया कि हे मयूर ! जबतक प्रणव क्या तीनों गुणका त्यागनकरेगा तब सुखी नहीं होसक्ता क्योंकि प्रणवही से तीनों देवता अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु व महेश और दशइन्द्रियां व चतुः अन्तःकरण और चतुर्दशदेवता इन्द्रियों के रक्षक उत्पन्नहुये हैं और स्थूल व सूक्ष्म संपूर्ण जगत् का कारण प्रणव अर्थात् ओम् ही है जबतक इस कारणरूप प्रणवको कार्य के सहित बुद्धि से निवृत्त न करोगे तो मृगतृष्णा के जलकी भांति मिथ्या न

जानोगे तब तक आत्मानन्दकी प्राप्ति न होगी तब मयूरने उत्तर दिया कि जो लोग अज्ञानी हैं व स्वरूप से भ्रष्ट हैं वेही प्रणव के त्याग की इच्छा करते हैं जैसे कोई मृगतृष्णाको नदी जानकर पार उतरने के लिये कपड़े उतारता है तैसेही प्रणवका त्याग करना है काहेते कि प्रणवआत्मस्वरूप आत्मस्वरूप में त्याग व ग्रहण कदापि नहीं बनता और मांडूक्योपनिषद् में प्रणव और ब्रह्मकी एकता व अभेदता लिखी है और प्रत्यक्ष में भी देखो कि हमारे सम्पूर्णपंखों में प्रणव प्रकट है तब कुलंग ने उत्तर दिया कि प्रथम तो तुम ने यह कहा कि एक अद्वितीय हों और अब कहते हो कि मेरे सम्पूर्णपंखों में प्रणव प्रकट है तुम्हारे इस कथन से निश्चित होताहै कि अद्वितीय कुछ वस्तु नहीं है और इसी कथनानुसार यह भी सिद्ध होता है कि तुम भ्रममें पड़ेहो इस तुम्हारे वचनको कोई विद्वान् सन्त कदापि नहीं मानसक्ता तब मयूर ने उत्तर दिया कि तुम अज्ञानी हो कि जिससे इस कथन को मयूरका कहाहुआ मानतेहो यदि ज्ञान दृष्टि से देखो तो यह निस्संदेह दर्शित होगा कि जो कुछ कहताहै वह आपही कहता है तब सारस ने उत्तर दिया कि हे मयूर ! तुम आत्माकी प्राप्ति से रहित हो यदि आत्मा प्राप्ति से रहित न होते तो तुम को यह किसी प्रकार से भी भासित न होता कि यह कथन कुलंग का है तब कुलंग ने उत्तर दिया कि तुमको भी आत्मस्वरूप की प्राप्ति नहीं है तब मयूर ने कहा कि हे सारस ! तुमभी अज्ञानी हो क्योंकि कुलंग के कथनसे निश्चित होताहै कि तुम को भी आत्मस्वरूप की प्राप्ति नहीं है यदि तुम ज्ञानी होते तो इन सन्तों को कदापि आत्मभ्रष्ट न कहते जो पुरुष ज्ञानी होते हैं उसको आत्मा से अतिरिक्त किञ्चिन्मात्रभी कोई पदार्थ भासित नहीं होता तब सारस निरुत्तर होकर मौनहोगया तब गरुड़ बोले कि हे हंस ! तुम यह बतलाओ कि तुमने स्वरूप देखा है कि नहीं यदि देखा है तो वर्णन करो और यदि नहीं देखा है तो

निर्णय करो यद्यपि आत्मा मन, वाणीका विषय नहीं है तथापि सत्य २ वतलाओ कि आत्माको तुमने देखाहै या नहीं तब हंस ने उत्तर दिया कि हे गरुड़ ! इस वार्तालाप से निश्चित होताहै कि तुमको भी आत्मज्ञान की प्राप्ति नहीं है देखना व न देखना केवल कथनमात्रही है कि मैंहूं मुझमें कौनवस्तुसत्यहै कि जिसको में देखूं अथवा न देखूं क्योंकि देखना त्रिपुटी के विना नहीं होता और एक अद्वैत में त्रिपुटी का कहना अज्ञान और दुर्बुद्धि है तब गरुड़जी बोले मेरे वचनको श्रवणकरो तबहंसने कहा कि मेरे तो श्रवण इन्द्रीही नहीं हे परन्तु कथनकीजिये तब गरुड़जीबोले कि मैं विना वाक्इन्द्रिय के कहताहूं कि यदि मैंहीहूं तब त्रिपुटी भी मैंहीहूं तब हंसबोला कि यदि मैं अद्वितीयहूं तब त्रिपुटी कहां है काहेते मैं एक और दो से रहित पूर्णहूं इसमें श्रुति का प्रमाण है (एकोदेवो नारायणः इति) दो और एक कहना अज्ञान से है इसतरह आपसमें वार्तालाप करके दोनों मौनहोगये तब कुलंग बोला कि मैं तेरा शिष्यहोताहूं मुझे कुछ उपदेशकर कि अनादि एक रसतूही है आप और द्वितीय अवहोता है तब मयूरने उत्तर दिया कि हे कुलंग ! तू मेरे उपदेशको चित्तसे सुन मैं तुझे ऐसा उपदेश करूंगा कि तू न रहेगा तब कुलंगने कहा कि हे महाशय ! यदि मैंही न रहूंगा तब तीनोंलोक भी न रहेंगे आपनिर्वाण उपदेश कीजिये कि जिसके श्रवण करने से मैं बन्ध और मुक्त से रहितहोजाऊं तब मयूर ने उत्तरदिया कि हे सम्पूर्ण सन्त-मंडली के सन्तलोगो ! मेरे वाक्यको श्रवणकीजिये तब सम्पूर्ण पक्षियों ने उत्तर दिया कि हमलोगों में कहने व सुनने की शक्ति नहीं है परन्तु आप कथन कीजिये तब मयूरबोला कि यह बात निश्चितहै कि तुम लोगों में कहने और सुनने की शक्ति किञ्चिन्मात्र नहीं है परन्तु मैं तुम सबको निर्वाणका उपदेश करताहूं कि जिससे तुम संपूर्णकार्य व कारणों से रहितहोजाओ तब संपूर्ण पक्षियों ने निवेदन कि महाराज यहां उपदेश और

उपदेष्टादो में से कोई भी नहीं है तब मयूरने उत्तरदिया कि हे कुलंग ! मुझमें वाण और निर्वाणदो में से कोई पदार्थ नहीं है मैं आपही आपहूं मेरी नमस्कार मुझीको है यह तीनोंलोक मुझे नमस्कार करते हैं और संपूर्ण जगत् में मैंही संपूर्ण पदार्थों का भोक्ताहूं दिन, रात, मनुष्य और देवता मैंही हूं और सर्वदर्शन हमाराहै और ब्रह्मा, रुद्र और विष्णु इनतीनों का भी प्रकाशक मैंहीहूं इसी समयान्तरमें चकई और चकवा का जोड़ा भी आकर उपस्थितहुआ और उनमें से चकवाबोला कि जो दृश्यहै सो नाशहै इससे मेरी नमस्कार मुझीको है इस आचरण को देखकर सब बोलउठे कि चकवा नाशी है हमारी नमस्कार हमको है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! संतोंकी नमस्कार ऐसीही होती है इतनी वार्तासुनने के पश्चात् कचने अपने पिता से पूछा कि हे पिताजी ! बृहस्पतिजी कैसे संतथे कि उन्हों ने ऐसा नमस्कार किया तब बृहस्पतिजी बोले कि हे पुत्र ! वे संत सत्यवक्ता थे और जो चकवे ने यह कहा कि सब जगत् नाशवान् है मैंही एक अविनाशीहूं इसके अभिप्रायको श्रवणकीजिये यह जो पंचभौतिक आत्मा व पांचोतत्त्व और इन्द्रियां व अन्तःकरण व तीनोंगुण और सर्व जो सम्पूर्ण क्षेत्र कहाजाता है यह सम्पूर्ण नाशवान् है और जो चकवे ने यह कहा कि क्या मैं क्षेत्रज्ञहूं सो क्षेत्रज्ञ उस को कहते हैं जो संपूर्ण (क्षेत्र) जगत् को सत्ता, स्फूर्ति देके आप क्षेत्र का जाननेवालाहोकर सब से भिन्नरहे और सबने कहा कि चकवा नहीं है हमीं हैं और हमलोग क्षेत्रको उठाकर अपने स्वरूपको प्राप्तहुये थे. इन सबका कथन अद्भुत और आश्चर्यरूप है इसको श्रवण करो कि चकवाने क्या कहा है प्यारे ! चकवी को मन देखो इसी को विकार करते हैं और मैं निर्विकाररूपहूं यदि चकवी और मैं प्रकृतिपुरुषहूं उत्पत्ति व स्थिति इसी प्रकृति की योजना से है नहीं तो मैं निर्विकार पूर्ण ब्रह्महूं और यदि चकवी की प्रकृति को अपने में लयकरूं तो

सम्पूर्ण संसारका नाश होजावेगा, एक अद्वितीय स्वयंसिद्धि निर्विशेष सदास्थितहूं इसलिये कि मैं निराश्रय स्थितहूं और शास्त्रसे मेरानाश नहीं है, आत्मासत्स्वरूप हैं, अब आपलोग यह बतलाइये आप सबलोग प्रकृति से भिन्न हैं या उससे युक्त हैं तब पक्षियोंने कहा कि हे चकवा! जो तूहै तो प्रकृति नहीं है और जो मायाहै तो तू नहीं है इसलिये कि बुद्धिकी वृत्ति एक है उससे पुरुषको सिद्ध करो अथवा प्रकृतिको तब चकवे ने उत्तर दिया कि अद्वैतमें शब्दकी प्रवृत्ति नहीं है इसी वास्ते प्रकृति को साथ लियाहै इस वार्ता को सुनकर सबने उत्तर दिया कि अभी तुमको आत्मा की प्राप्ति नहीं है इसलिये कि तुम्हारी दृष्टि अभीतक माया में लीनहै तब चकवा ने उत्तर दिया कि आप लोगों का कथन सत्यहै मुझे बेशक आत्माकी अभी तक प्राप्ति नहीं है देखो आत्माकी प्राप्ति द्वैतहै परन्तु मुझमें तो प्राप्ति और अप्राप्ति कुछ भी नहीं है और आप सबलोग आत्मा को प्राप्त होचुके हैं निदान चकवे के इस वचन को सुनकर सब मौन होगये तब चकवेने देखा कि सब अवाक् होगये तब फिर बोला कि देखो तुम सब लोग मेरे शिष्यहो तब सब पक्षियों ने मिलकर उत्तर दिया कि जिस स्थानमें किसी की प्राप्तिही नहीं है वहां गुरु और शिष्य का होना असम्भवहै तब चकवाने फिर उन सम्पूर्ण पक्षियों को उत्तर दिया कि देखो जो कुछ कथनमात्र है वह सब मुझी से है फिर मैं उसके बन्धन में किसप्रकारसे आ-सक्ताहूं तब हंसने उत्तर दिया कि प्रथम मेरे एक वाक्य को सुनिये कि जिसमें वचन नहीं है. और जो वचनही नहीं तब मैं और तुम कहां. इससे उचित है कि पहिले तुम चकवा के शरीर को छोड़ो और मैं इस हंसके शरीरका परित्याग करूं तत्पश्चात् हमारा और आपका वार्तालाप होवे जब शरीर का परित्याग करोगे तभी आनन्द प्राप्त होगा तब चकवा ने उत्तर दिया कि जब तुम कहोगे कि मैं हंस नहीं हूं तब चकवेका आपसे आपही

पारित्याग होजायेगा तब हंसने उत्तर दिया कि मैं तेरा द्रष्टा होकर तेरे सन्मुख उपस्थितहूं तुझको मेरे सन्मुख ऐसी बातचीत करते लाज नहीं आती देख यदि स्वरूपहै तब सर्व अर्थात् सांसारिक पदार्थों का होना किसप्रकार से सम्भव है और उनसे क्या प्रयोजन है और अद्वैत में सर्वका कहना भी अनर्गलहै इससे कहो कि मैं अद्वितीयहूं तब चकवे ने उत्तर दिया कि यदि केवल मैंहीहूं तो सर्व कहने में क्या हानिहै केवल कथनमात्र से बंधन कदापि नहीं हो सक्ता तब सारस ने उत्तर दिया कि तुम्हारे इस कथनसे निश्चित होताहै कि तुमको आत्मा की प्राप्ति नहीं है और अभी तक तुम्हारी बुद्धि बन्ध से नहीं छूटी है क्योंकि तुम्हारा कथनहै कि केवल कहनेसे बंध नहीं होता तब चकवे ने उत्तर दिया कि मैं सादृश्यसे रहितहूं और तुम ऐसा कहते हो कि तुझमें बंध मुक्तहै इससे निश्चित होता है कि तुम अज्ञानके भ्रममें फँसेहो और मैं सिवाय अपने द्वितीयके नहीं देखताहूं तब सारसने उत्तरदिया कि हे चकवा! तू मेरा स्वरूप है और जो तूने कहा कि मैं अद्वितीयहूं सो सत्य है क्योंकि अद्वितीय में प्रश्न उत्तर नहीं बनता तब मयूरने उत्तर दिया कि तुम दोनों मेरे शिष्य हो क्योंकि सर्वत्र मेराही प्रकाश है और तुम मुझमें हो अर्थात् चकवा, मयूर और सारस तीनों नहीं हैं जो कुछ है सो मैंहीं हूं इससे इस वचनको सुनो और अपने हृदय में धारणाकरके परमानन्दको प्राप्त होवो और मैं, तू से छूटकर निजस्वरूप में जामिलो तब सर्व ने कहा कि हे मयूर! मुझमें दुःख और आनन्द दो पदार्थों में से कुछ भी नहीं है इसी को निर्वाण भी कहते हैं तब हंसने कहा कि हमारा निर्वाणउपदेश सुनकर मुक्त हो तब सर्व ने कहा कि मुझमें बन्धमुक्त दोनों नहीं हैं स्वमहिमा स्थितहूं अर्थात् मैं अपनी महिमा स्वयंस्थितहूं इसप्रकार आपसमें वार्तालाप करके सर्व मौनहोगये कुछ भी शक्ति वचन उच्चारण करने की न रही कि कुछ भी बोलें इसी मौनदशा

उनको पांचसहस्त्रवर्षं व्यतीतहोगईं परन्तु अवाक् व चित्त संभ्रमितहोने के कारण यह भी निश्चित न हुआ कि एक घड़ी व्यतीतहुई अथवा नहीं इसी समयान्तर में कोकिला पक्षी आकर उपस्थितहुआ और बोला कि मैं आत्म अज्ञानियों की सभाके बीच में आयाहूं यह सर्वभ्रमहै मुझको कोई नहीं देखता कि मैं कौनहूं और सब जानते हैं यह मौन रहना अतिउत्तमहै परन्तु यह लोग नहीं समझते कि बोलना और मौनरहना दोनों अहंकार का साक्षात्‌रूप हैं अर्थात् स्वयं अहंकारही हैं तब कुलंग ने उत्तरदिया कि हे कोकिला ! मैं तुझसे कुछ वार्तालाप करना चाहताहूं परन्तु तूने जो अपने को कोकिला मानरक्खाहै तू इस अभिमानको त्यागकर और मैंने जो अपने को कुलंगमानाहै मैं इसे त्यागकरूं तब मेरी तेरी परस्पर दशाहोने से हम तुम दोनों मिलकर संवादकरें तब कोकिला ने कहा कि मुझमें तो त्याग और ग्रहणकी शक्तिही नहीं है न मुझमें अतिरिक्त कोई वस्तु है कि जिसका मैं परित्याग और ग्रहणकरूं और यदि तुम्हारा मन कर्मों के बन्धनमें फंसाहै तो तुमको आत्मानन्दकी प्राप्तिअति कठिनहै तुम्हारे इस कथनसे निश्चितहोताहै कि तुमको आत्मा की प्राप्ति कुछ भी नहीं है तब कुलङ्गने उत्तर दिया कि जब तक आत्माकीप्राप्ति न होवे तबतक स्वरूप कैसे प्राप्तहोसक्ता है अब यह बतलाओ कि हे कोकिला ! तुमकौनहो ? तब कोकिलाने उत्तर दिया कि मैं वही हूं कि जिसे तुम कहते हो कि तुम कौनहो सर्व दर्शन मेरा है और मुझमें दर्शन नहीं है तब मयूरने उत्तर दिया कि मैं तो इन दोनों सहितहूं और यदि मैंहूं तो दर्शन, अदर्शन कहां है वह कौनसी वस्तु है कि जिसमें यह और वह का विकल्प नहीं है तब कोकिलाने उत्तरदिया कि जो पुरुष विचाररूपी नेत्रोंसे हीनहै वह आत्माको कदापि नहीं देखता कोकिला के इस कथन को सुनकर मयूर ने कहा कि हे कोकिला ! अब आप कृपा करके किञ्चिन्मात्र आत्मनिर्णय कीजिये तब कोकिलाने उत्तर दिया

कि यदि आप लोगों ने उसे देखा होवे तो मैं उसका निर्णय करूं मैं उसके कथनसे बिलकुल अशक्तहूं यदि तुम लोग प्रत्यक्ष देखो तो तुमको निश्चय होजावे कि आत्मा में किस प्रकार का सुख कोकिला के इस वचनको सुनकर सब लोग मौन होगये परन्तु उन सब मौनावस्था देखकर फिर भी कोकिला ने उनको समझाया कि "ब्रह्माहं अस्मि" अर्थात् ब्रह्म मैंहूं और मैंही सब का गुरूहूं तब हंसने उत्तर दिया कि हे कोकिला ! तुम में गुरू और शिष्य कैसे प्रतीत होताहै तब कोकिला ने उत्तर दिया कि यदि मैं ब्रह्महीहूं तो गुरू और शिष्य ये दोनों पद मुझी में कल्पित हैं तब मयूरने कहा कि मैं तुम्हारा शिष्य होताहूं परन्तु प्रथमावस्था में मैं तुम्हारा नाश करूंगा तब कोकिला ने उत्तर दिया कि यह सम्पूर्ण मेरीही लीला है तब हंस बोला कि यह आप क्या कहते हैं कि मैं बिना वाक् के बोलताहूं और बिना कानों के सुनताहूं और बिना चित्त के चिन्ता करताहूं व बिना बुद्धिके निश्चय करताहूं इससे क्या कहूं कि इसमें कहना और सुनना दोनों नहीं हैं अर्थात् मैंही कहता और मैंही सुनताहूं यह संपूर्ण दृश्य मिथ्या होकर केवल दृष्टिआत्मा सत्यहै तब कोकिला ने उत्तर कि प्राण सप्रकाश है यदि कुछ प्राणसे भिन्न होय वह कहिये तब गरुड़जी बोले कि वेद कहते हैं कि प्राण जड़है तब कोकिला बोला कि मेरा वचन सत्य हुआ कि वेद पुराण को प्राणही सिद्ध करता है और दूसरा कोई नहीं और प्राण स्वयं सिद्धहै यह सुनकर सब लोग आश्चर्यितहुये और कहने लगे कि हम लोग आत्मसुख में मग्न थे यह कोकिला प्राणवादी कहांसे आया कि जिसने सबको शङ्का में डालदिया तब सर्वने कहा हम तुम्हारा सिद्धान्त नहीं मानते इस वाक्य को सुनकर कोकिला बोला कि मैं अद्वितीयहूं मेरे बिना कौन है जो मेरे सिद्धान्तको माने जो तुमभी शब्द ब्रह्ममें निश्चय रखते हो बड़े आश्चर्यके वानहै जो आश्चर्यितहोतेहो प्राण स्वयं प्रकाशितहै प्राणके बिना

और जो निश्चय कियाहै उसको त्याग करो तब आनंद की प्राप्ति प्राण की तुमको प्राप्तहो तब मयूरने हँसकर व प्रसन्नता से पंख फैलाकर व झाड़कर उत्तर दिया कि हे कोकिला! सुषुप्ति में प्राण कहां है तब कोकिला बोला कि प्राणके बिना सुषुप्ति के अज्ञान और सुख और सोने की व्यवस्था कौन कहताहै तब मयूरने पूछा कि तुरीया जो सर्वका अधिष्ठानहै उसमें प्राण कहां है तब कोकिलाने उत्तरदिया कि तुरीया शब्द को भी प्राणही सिद्धकरताहै तब हंसने कहा कि ब्रह्माजी का कथनहै कि प्राण मुझ से उत्पन्न हुआहै इसका वेद साक्षी है जो प्राण सर्वइन्द्रियों सहित ईश्वर से उत्पन्न हुये हैं और ईश्वर यही आत्माहै इससे सर्व आत्मा है तब कोकिलाने उत्तरदिया कि यह आपने बहुत अच्छा कहा कि प्राण नारायणसे उत्पन्न हुआ है और नारायण भी प्राणहै इस वचनको सुनकर सर्व क्रोधित होके बोले कि शब्द दूर क्या मन वाणी के अगोचर को वाणी से योग्य, अयोग्य कहना अज्ञानहै तब कोकिला ने उत्तरदिया कि शब्द योग्य, अयोग्य प्राण से है मैं प्राणरूप स्वतन्त्रहूं तब मयूरने कहा सत् कभी असत् नहीं होसक्ता तब कोकिला ने कहा कि मैं सत्हूं और असत् अनन्तशक्ति रखताहूं यदि मैं चाहूं तो मिथ्या का सत्करूं, कहो हम सब प्राणहैं तब मयूरने कहा कि जो वस्तु कथन मात्र है उसकी स्थिति कभी नहीं होती तब कोकिला ने उत्तर दिया कि प्राणहै तब मयूरने कहा कि मौन क्या है कोकिला ने उत्तर दिया कि प्राणहै तब हंसने कहा कि प्राण भ्रममात्र है ब्रह्माजी बोले कि प्राण पर प्रकाशहै इसलिये कि प्राण कार्य है और मैं उसका कारणहूं तब कोकिला ने कहा कि ब्रह्मा भी प्राणहैं तब हंसने पूछा कि जड़ व चैतन्य में क्या सम्बन्धहै तब कोकिलाने उत्तर दिया कि जड़ और चैतन्य दोनोंका प्रकाशक एक प्राणही है तब सारस बोला कि हे नारसिंह! उचितहै कि तुम आत्मा की प्राप्ति में ऐसी दृढ़ हो जैसे कि कोकिला प्राणवाद में दृढ़है

निश्चय करो कि वेद और शास्त्र कहते हैं कि प्राण जड़ और तुच्छ है वन्ध्या के पुत्रकी नाईं तब भी कोकिला अपने प्रण से नहीं टरती तब सारासेन ने उत्तर दिया कि मुझमें तो बुद्धि नहीं है मैं निश्चय कैसे करूं तब कोकिला बोली कैसे कहताहो कि वेद और शास्त्र कहता है यही शब्दको त्याग करो जो कहना है सो प्राणही कहताहै इससे वेद और शास्त्र सब प्राणही है प्राण स्वयं प्रकाशवान् अद्वितीय है इसी संवाद में थे कि जल कुक्कुट आपहुँचा और बोला कि जिस समय ईश्वर सर्व जगत्को लय करताहै तब प्राण कहां है तब कोकिला ने उत्तर दिया कि प्राणही ईश्वरहै वह अपने को आपही में लय करलेता है तब जल कुक्कुट ने कहा कि ईश्वर से सब चराचर जगत् उत्पन्न हुआ और सबका कारण वही है इससे प्राणभी उसी से उत्पन्न हुआ है पुरुषसे प्रकृति और महत्तत्त्व अहङ्कार त्रिगुणात्मक होकर क्या ब्रह्मा, विष्णु होकर सम्पूर्ण जगत् बनाया यदि जिस स्थान व अधिष्ठान में महत्तत्त्व, अहङ्कार नहीं है तहां प्राण कहां है तब कोकिला ने उत्तर दिया कि अहङ्कारादि सबको प्राणही सिद्ध करताहै तब जलकुक्कुट ने कहा कि प्रकृति में प्राण कहां है तब कोकिलाने उत्तर दिया कि प्रकृति के विना प्राण कौन कहे मेरे निश्चय में पुरुष भी प्राणही है और ब्रह्मा भी प्राणहै इस बात के सुनने से सब आश्चर्यित हुये तब गरुड़जी बोले कि ब्रह्मादि में प्राण कहां है तब कोकिला ने उत्तर दिया कि ब्रह्मस्वरूप है और प्राणभी अरूपहै तब कुलङ्गने कहा कि जीव में प्राण है, ईश्वर में प्राण नहीं है तब कोकिला हँसकर बोली कि प्राण ईश्वर को सिद्ध करताहै, सर्व जगत् मुझसे उत्पन्न हुआ है और मुझी में लीन होजायगा. हे मित्रो ! इसमें कुछभी संशय न करो यदि सर्व प्राणही है तो क्या भयहै कोकिला की इन बातों को सुन सब मौन होगये तब गरुड़जी ने काकभुशुण्डि से कहा कि हे काक-भुशुण्डि ! तुम कहते हो कि हमने सहस्रवर्ष भक्तिकी है उस में

अब कोकिलाके प्रश्नका उत्तर दीजिये तब काकभुशुण्डिजी बोले कि मैं सन्तों की सभामें आयाहूं मुझमें बुद्धि नहीं रही और विना बुद्धिके कहा नहीं जाता इससे क्या कहूं जब इतने सन्त उत्तर देनेको समर्थ नहीं हैं तब मेरी क्या शक्तिहै जो उत्तर देसकूं तब कोकिलाने कहा कि पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर दीजिये नहीं तो कर्मत्यागकरके योग करो मैं योगीहूं तब हंसने कहा कि तू पक्ष लेकर कहताहै, आश्चर्य की बातहै कि निष्पक्षियों में स्थितहूं और चाहताहूं इसलिये कि पक्ष शरीरही तकहै वह अब नाशहुआ तो पक्ष कहां रहा जब मैं योग करताहूं तब योग होताहै नहीं तो योग नहीं होता क्योंकि योग स्वयंसिद्ध नहीं है तब कोकिलाने पूछा कि क्या योग किसी वस्तु के जुड़ने का नामहै यदि जुड़नेका नामहै तो जुड़ना प्राणसे होताहै इस से निश्चितहै कि प्राण सर्वत्र विद्यमान है तब सर्पने कहाकि मैं तुझ को अभी मारडालूंगा और मारकर फिर तुम से पूछेंगे कि अब तुम्हाराप्राण कहां है तब कोकिलाने उत्तरदिया कि प्राणको मारने की किसी को शक्तिनहीं है वह इस शरीर से निकला और तत्क्षण दूसरे शरीरमें प्रवेश करगया प्राणस्वयं प्रकाशवान् है तब हंस बोला कि हे वादी! यही जगत् ब्रह्मरूपहै प्राण कहां है तब कोकिलाने उत्तर दिया कि इस संवाद से भी प्राणही सिद्धहुआ. इसलिये कि ब्रह्मपूर्ण और अरूप को कहते हैं और पूर्ण अरु अरूप सर्वत्र प्राणही है तब सबने आपस में सलाहकी कि ब्रह्माजी के पास जाकर इस बातका निर्णय करना चाहिये कि जो कुछ ब्रह्माजी कहें वह सत्यहै तब कोकिलाने उत्तर दिया कि यदि ब्रह्माजी तुम लोगोंका पक्षपात करेंगे तब मैं कदाचित न मानूंगी तब सबने कहा कि जो ब्रह्माजी कहेंगे वही प्रमाणहोगा तब बृहस्पति ने कचसे कहा कि हे पुत्र! इसप्रकार आपस में वार्तालाप करके सम्पूर्ण पक्षी ब्रह्मलोकमें ब्रह्माके पास गये तब कचने उत्तरदिया कि हे पितः! वे सब कौन संत थे कि

जो कोकिलाका उत्तर न देसके तब बृहस्पतिजी बोले कि हे पुत्र! निश्चय का यही फल है कि असत् को सत् करके दिखावे फिर सबलोग ब्रह्मा के पासपहुँचे और दंडवत् प्रणाम करनेलगे तब ब्रह्माजी जो सर्वान्तर्यामी उनकी व्यवस्था देखकर अपने पुत्र वसिष्ठजीसे बोले कि इन पक्षियों का प्रश्नोत्तर श्रवणकरो कि ये लोग क्या कहते हैं वसिष्ठजीको इतना समझाकर ब्रह्माजी बोले कि हे पक्षो! तुम लोग यहां किस निमित्तआये तब पक्षियोंने उत्तर दिया कि हमलोगों को निश्चय है कि आत्मासे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं और कोकिला का कथनहै प्राण सर्वत्र व्यापहै इस से आपसमें २ निर्णय इस विषय का समझाकर हमलोगों के आपसके झगड़ेको निवृत्तकीजिये क्योंकि आप इसमार्ग को भलीप्रकार जानते हैं तब ब्रह्माजी बोले कि तुमलोग कुछ प्रश्न उत्तर करो तो हम तुम्हारी उस शंका का समाधानकरें इतनी बात ब्रह्माजी से सुनकर सबसे पहिले हंसबोला कि हे ब्रह्माजी! मुझे भासितहोताहै सर्व मैंहीहूं और यह सब आभास मेरा है तब गरुड़जी बोले कि हे ब्रह्माजी! यदि आप सब के प्रकाशक हैं परन्तु मैं आपका द्रष्टाहूं तब मयूरबोला कि ब्रह्मा मैंहूं हे ब्रह्मा जी! मेरी बातको सुनिये कि सर्वदृश्य मैंहीहूं फिर गरुड़ने उत्तर दिया कि मैं इन सर्व और चराचर का प्रकाशकहूं तब कुलंग बोला कि हे गरुड़! तुममेरीही सत्तासे उड़तेहो मुझ में तुम में प्रकट कुछ भेद नहीं है सर्व मैंहीहूं तब ब्रह्माजी हँसकर मरीचि आदि अपने सब पुत्रों को एकत्रित करके बोले कि हे पुत्रो! इन पक्षी के वाक्यको श्रवणकरो कि यह लोग क्या कहते हैं तुम सबलोग जानते थे कि जगत् की उत्पत्ति हमलोग ही करते हैं पर तुमलोग आत्मविचार में धन्यहो तुम सब बड़े हो यह पक्षी भले हैं फिर पक्षियों से बोले कि हे पक्षियो! तुम सब धन्यहो इसलिये कि तुम लोगों ने मेरे स्वरूप को साक्षात् जान लिया तब कुलंगने उत्तरदिया कि हे ब्रह्माजी! मुझ आपमें समता नहीं

दिखाईपड़ती क्योंकि आपही ने सम्पूर्ण जगत्को उत्पन्नकिया है परन्तु उस जगत् में किसीको भला और किसीको बुरा क्यों कहतेहो और यदि भला और बुरा कहतेहो तो वह सब भलाई व बुराई तुम्हीं में है तब ब्रह्माजी हँसकर बोले कि तुम कौनहो तब कुलंगने उत्तरदिया कि मैं आत्मा हूं जिससे ब्रह्मा, विष्णु और महेश उत्पन्नहुये हैं और यह तीनों देवता प्राण से हैं और प्राणमाया है वही माया शरीरहै और मैं शरीर का द्रष्टाहूं इस लिये आपको नमस्कारहै, ब्रह्माजी कुलंगके इस वचनको सुनकर बहुत प्रसन्नहुये और बोले कि यही तेरा वाक्य मेरी नमस्कार है जो मुझको त्रिगुण और मायासे अतीत स्वप्रकाशजानाहै काहे से जो तीनोंगुण केवल कथनमात्रहैं नहीं तो केवल अद्वितीय मैंही हूं. फिर गरुड़ से पूछा कि तुमने विष्णुजी से कुछ सुनाहो सो कहो तब गरुड़जीबोले सर्व विष्णुहैं तब मयूरने कहा कि विष्णु को मैंने प्रकटकिया है तब सब पक्षियों ने कहा कि हे ब्रह्माजी ! प्राण स्वयंप्रकाशित है अथवा दूसरे के प्रकाश से प्रकाशवान् है तब ब्रह्माजीबोले कि प्राण स्वयंप्रकाशवान् नहीं है वह दूसरे के प्रकाश से प्रकाशित है परन्तु कोकिला उपाधि करके चाहती है कि प्राण सत्यहो॰ तब कोकिला अपने दोनों हाथ ऊपरको उठाकर उच्चस्वर से बोली कि हे ब्रह्माजी ! आज तुम्बड़ाई को त्यागकर निम्नताको प्राप्तहुये कि मुझमें उपाधिवतलातेहो, जब कि तुम ब्रह्माहो और संपूर्ण पदों का तुम्हीं ने स्थापितकिया है तब ब्रह्माजीबोले कि हे कोकिला ! तू क्रोधित न हो और विचार करके देख कि प्राण किस तरहसे स्वप्रकाशरूप होसकाहै तब

उत्पन्नहुये हैं भूत, भविष्यत, वर्तमान और पंचभूत सब वही है इससे प्राण क्याहै तब कोकिला ने उत्तरदिया कि तुम ईश्वरहो और सब कर्म तुम्हीं से हैं, जो प्राण कुछ नहीं है तो तुम्हारा कर्म भी वंध्या के पुत्रकी नाईं तुच्छहै और जो आपने कहा कि प्राण श्रीनारायण से है तो इस आपके वचन से प्राणही स्थिन हुये, क्योंकि कार्य व कारण में कुछ भेद नहीं है यदि प्राण श्रीनारायणका कार्य है तो प्राणही श्रीनारायण हुआ और आपने वेद में कहाहै कि प्राण मुझसे उत्पन्नहुये हैं यह सत्यहै अथवा मिथ्या तब ब्रह्माजीबोले कि प्राणसे कर्महोते हैं पर प्राण और कर्मकथन मात्रहै यदि एक अद्वितीय मैं ही हूं तब दोनों वही तब कोकिला बोली कि यह सर्वसभामिथ्यावादी है जब कि वृद्धशिरोमणि मिथ्यावादकरें तो सब छोटे मिथ्याकैसे न कहें हे ब्रह्माजी! यदि आप कुछ स्वरूप करके सतहो तो अपना स्वरूप वर्णनकरो तब ब्रह्माजीबोले कि जिसको स्वरूप का ज्ञान नहीं है उससे स्वरूप का वर्णन करने से क्या लाभहै और जिसको स्वरूप का ज्ञान है उससे भी कहना योग्य नहीं है इसलिये कि अज्ञानी और ज्ञानी दोनों से विलक्षण मुमोक्षु उपदेश का अधिकारी है तब कोकिला ने उत्तरदिया कि यही विपरीतताहै, यदि आप अद्वितीय हो तब ज्ञानी और अज्ञानी नहीं बनता है और ज्ञान बिना त्रिपुटी के नहीं होता यदि परमार्थ करके एक अद्वितीय मैं ही हूं तब तीनोंलोक कहांहैं. ब्रह्माजी उठखड़ेहुये और बोले कि तुम्हारा उत्तर हम नहीं देसक्ते इसलिये हम, तुम दोनों चलें विष्णुजी के पास चलें तब ब्रह्माजी सबपक्षियों को साथ लेकर विष्णुजी के पासचले जब ब्रह्माजी सबपक्षियों समेत क्षीरसमुद्र पर जो विष्णुजी का स्थानहै वहां पहुंचकर श्रीविष्णुभगवान की स्तुति करनेलगे कि हे भगवन्! आप सम्पूर्ण चराचरके अग्ररूपहो और सबके अधिष्ठानाहो. कोकिला बोली कि मेरी स्तुतिसुनिये कि आप मुझसे उत्पन्नहुये हैं और यह चतुर्भुजी स्वरूप और शंख

चक्र, गदा, पद्म भी मुझीसे पैदाहुये हैं मुझमें आवागमन नहीं है पर तुमकोवारंवार नमस्कार करती हूं ऐसा आवाहनकरो जिसमें आवाहन और विसर्जन दोनों नहीं हैं तव हंसबोला कि हे कोकिला ! यह स्तुति नहींहै निन्दाकरताहै तब कोकिलाने कहा कि तू अवतक अज्ञान में है मुझसे मतबोल देख ब्रह्माजी तेरे स्वामी खड़े हैं और विष्णुजी आते हैं इससे स्तुति व निन्दाका त्यागकर तव मयूर ने उत्तरदिया कि मैं आवाहनकरताहूं कि न कोई बुलानेवाला है और न कोई आनेवालाहै और न कोई आताहै न जाताहै यही मेरी नमस्कारहै, हे विष्णुजी ! आइये तुम्हारा आनाकैसाहे कि जिसमें न आनाहै न जाना तव कुलंग ने उत्तरदिया कि न हंस न कोकिला न मयूर न श्रीविष्णु न ब्रह्मा न रुद्र सर्व मैंही हूं अपने रूपको आपी बुलाता व बोलता हूं श्री विष्णुजी इन पक्षियों की वाक्य सुनकर जैसे प्रातःकाल का सूर्य पूर्व से उदयहोताहै उसीप्रकार से क्षीरसमुद्र से निकले कि जिनको देखकर सब उठखड़ेहुये और नमस्कार करके यथावत्पूजा करनेलगे तव विष्णुभगवान् ने उनकीभक्ति देखकर उनसे पूछा कि हे पक्षियो ! तुमकौनहो तव कोकिलाबोली कि मैं चैतन्य, स्वप्रकाशहूं और आपही का प्रकाश मुझमेंहै हे विष्णुजी ! तुमको मुझसे यह पूछतेलाज नहीं आती कि तुम कौनहो यह शरीर पञ्चभौतिक जड़रूपहै और आत्मावाक् का विषय नहीं है इससे तुमको कौन उत्तरदेवै कि यह है तव विष्णुजीबोले कि कहिये तो तुम्हारा क्या प्रश्नहै तव कुलंगने उत्तरदिया कि आप ने प्रश्नसे प्रथमही हमको उत्तरदिया कि तुमकौनहो अव हम क्याकहें क्योंकि आपस्वरूपके ज्ञानसे रहितहैं तो स्वरूपकेज्ञान का प्रश्न आपसे क्याकरें अव हम शिवलोकको जावेंगे. हमने सुनाथा कि वेदान्तरूप विष्णुक्षीरसमुद्र में हैं परन्तु देखलिया कि वेदान्त नहीं है केवल भ्रांति है तव विष्णुजी बोले कि मैं ईश्वरहूं और अनन्तशक्ति रखताहूं. यह सर्व पक्षी और ब्रह्मा

किसनिमित्त यहां आये हैं तब सर्व पक्षियों ने कहा कि प्राण स्वप्रकाश कारणरूपहै अथवा कार्य तब विष्णुजीने उत्तरदिया कि प्राणकार्य है यह सुनकर सबपक्षी प्रसन्नहुये और कोकिलाबोली कि इसी बुद्धिसे तुमको ईश्वर मानते हैं, भला प्राणकैसे कार्य होसक्ताहै तब विष्णुजी ने कहा कि जैसे तू कहे वैसाकहूं तब कोकिला ने उत्तरदिया कि अब आप ईश्वरहुये,कहिये कि प्राण कारणहै तब विष्णुजीबोले कि जो मिथ्याहो वह कैसे सत्य कहा जाय तब कोकिला फिरबोली कि मिथ्या क्यों कहतेहो जो सत्य हो वह कहो तब श्रीविष्णुजी ने कहा कि जब शरीर का नाश होजाताहै तब प्राण कहां रहताहै तब कोकिलाने उत्तर दिया कि इस सभामें दिनही रात होरहा है जो कोई कहे कि घटके फूटने से आकाशका नाश होताहै तो कैसे प्रतीत कियाजाय इससे जो शरीर नाश हुआ तो क्या हुआ प्राण ज्योंकात्यों रहताहै तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि जब सब जगत् मुझमें लीन होताहै तब प्राण कहां रहताहै, मैं निरंजन तथा असंग हूं तब कोकिला ने उत्तर दिया कि वह कौन है जो तुममें लीन होता है तब विष्णुभगवान् बोले कि मेरा अंशहै जैसे रविके अंश परमाणुहैं तब कोकिला फिर बोली कि हे भगवन् ! तुमने अपने को खण्ड खण्ड किया अखण्ड न हुये, यदि आपही का अंशहै तो उनका स्वरूप क्या है तब श्रीविष्णुभगवान बोले कि जैसे मैं अरूपहूं तैसेही मेरा अंश भी अरूप है तब कोकिला ने उत्तर दिया कि जो अरूप है सो प्राणहै यदि प्राणी अरूपहै तब प्राण स्वप्रकाश हुआ फिर विष्णु बोले कि जब पञ्चमहाभूत नाश होते हैं तब प्राण कहां रहता है तब कोकिलाने कहा कि पञ्चमहाभूत कैसे नाश होते हैं तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि पञ्चमहाभूत महत्तत्त्व अहङ्कार से उत्पन्न हुये हैं फिरभी उसी अहङ्कार में लीन होजायेंगे तब कोकिला ने उत्तर दिया कि जब पञ्चभूत आत्मा में लीन हुआ तब प्राण कहीं नहीं गया यदि नाश होता तो फिर

असत्य न होता तब विष्णुभगवान् ने पूछा कि पुरुष विषे प्राण कहा है यह प्रकाश प्रकृतिका है तब कोकिला ने पूछा कि प्रकृतिका प्रकाशक कौन है तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि प्रकृति मुझी से उत्पन्न हुई है तब कोकिला ने पूछा कि प्रकाशक आपका कौन है तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि स्वयंप्रकाशवान् हूं तब कोकिला बोली कि मिथ्या न कहो यह स्वप्रकाश प्राणही कहताहै इससे तुम प्राणसेही स्वप्रकाशहुये फिर विष्णु और ब्रह्मा पक्षियों के सहित शिवलोक को चले, तब पक्षियों ने मिलकर सलाहकी कि कोकिला को मारना उचित है क्योंकि धर्मशास्त्र में लेखहै कि जो एकसे अनेकको दुःख मिले तो उसको मारडालना उचितहै तब कोकिला बोली कि हे विष्णुजी ! सम्पूर्ण पक्षीगण कहते हैं कि कोकिला का मारडालना उचित है यदि मैं मरूंगी तो तीनोंलोक और आपभी न रहेंगे तब विष्णु भगवान् ने उत्तर दिया कि हे पक्षियो ! कोकिला को न मारो, और चलकर शिवजी के पास पहुँचे परन्तु शिवजी को किसी ने नमस्कार प्रणाम न किया सर्वने कहा कि हमारी नमस्कार हमारेही को है तब शिवजी बोले कि यह सर्व नहीं है केवल अद्वितीय मैंहीहूं सर्व मौनहुये तब शिवजी फिर पक्षियोंकी ओर देखकर विष्णुभगवान् से बोले कि हे मेरेरूप ! यह क्या लीला है तब विष्णुभगवान् बोले कि हे महाराज शिवजी ! आप सर्वज्ञ हैं और सबके हृदय में ज्ञानको जानते हो तब सब पक्षियों ने

हंसने कहा कि सर्व दृश्य मेरा रूपहै क्योंकि मैं सबका अधिष्ठान हूं तब मयूरने उत्तरदिया कि मैं रूप और अरूप दोनों से परेहूं तब कुलंगने कहा कि ये सब मेरे शिष्यहैं शिव इन लोगोंके इस वार्तालापको सुनकर ध्यान में लीन होगये तब कोकिलाने कहा कि प्राण स्वप्रकाशहै जब शिवजीका ध्यान उचाटहुये तब बोले कि हे कोकिला! तू धन्यहै जो दृढ़निश्चय करके असत्को सत् की नाईं किया, परन्तु हे कोकिला! तुम आपही न्यायसे विचार करो कि प्राण असत्यसे उत्पन्न हुआहै और यह सर्व सन्त हैं और तुम्हारेही रूपहैं इनको दुःख न दो तब कोकिला मौन होगई, यह इतिहास यहां तक पहुँचा और समाप्त हुआ अब ब्राह्मणका इतिहास प्रारंभ करतेहैं अब बृहस्पतिजी कचसेबोले कि हे पुत्र! निश्चय ऐसा चाहिये जिस पुरुषने अपने कहे के महत् को न जाना और न उसपर निश्चयकिया तो उसका सम्पूर्ण कहना और सुनना वृथा और तुच्छ है प्रथम अवस्था में श्रवण, द्वितीय में मनन अर्थात् विचारणा, तृतीयावस्था में निदिध्यासन अर्थात् उस पर निश्चय करना यदि इन अवस्थाओं में संशय इत्यादिक से रहित होकर दृढ़ न हुआ तो कहने सुनने से क्या लाभहै कहताहै कि मैं द्रष्टा ब्रह्मकाहूं और ब्रह्मसे परेहूं परन्तु इस कथनपर दृढ़ता नहीं, क्योंकि वह सुनकर कहता है कि अपने स्वरूप के विचार से आत्मानन्दको नहीं पाताहै इसीसे प्रश्नोत्तर करताहै हे कच! तुम सम्पूर्ण चराचर स्थावर जंगमादि यावद्दृश्यहैं सब को विष्णुही जानो अर्थात् यह सब विष्णुही है यदि प्रारब्धाधीन तुमको कोई दुःख देवे तो उसको भी विष्णुही जानो तब कच ने अपने पितासे कहा कि सर्वत्र विष्णुही है तो दुःख कौन देता है और किसको तब बृहस्पतिजी बोले कि श्रीविष्णु किसकोभी दुःख देताहै यद्यपि उसके स्वरूपमें द्वैत नहीं है तथापि यह जो दुःख देताहै ऐसा कहा जाताहै सो इसकी परीक्षाहै कि अपने निश्चय पर दृढ़ है अथवा नहीं, इससे हे पुत्र! तुमभी ब्रह्म निश्चयकरके

श्वास भी इस ध्यान को न त्यागो जो शरीर नाश होय तो भी अपनी दृढ़ता का परित्याग न करो शरीर को भी ब्रह्मही जानो क्योंकि अधिष्ठान और अध्यस्त और कार्य व कारण में किसी प्रकार का भेद नहीं है तब कचने कहा कि हे पिता ! शरीर जो पंचभौतिक होकर नाशवान् है उसको कैसे ब्रह्म जानूं तब बृहस्पतिजीने कहा कि तुझको मेरे कथनपर विश्वास नहीं है तो तेरा प्रयोजन किसतरह सिद्ध होगा यद्यपि यह तुम्हारा कथन कि शरीर पंचभौतिक व नाशवान् है यह सत्य है तदपि शरीर ईश्वर का भी नाशवान् है परन्तु यदि तुम शरीर को ब्रह्म निश्चय करोगे तब वर्णाश्रम व पिता पुत्र का अभिमान न रहेगा अहंकार निवृत्त होकर ब्रह्मस्वरूप में स्थिति होजावेगी इस उपदेश को मनमें दृढ़रक्खो तब कचने उत्तरदिया कि कुछ तप कहो तब बृहस्पति जी बोले कि हे पुत्र ! यही तप है कि शरीर, तत्त्व और इन्द्रियों को एक ब्रह्म जानना इसके सिवाय और कुछ तप नहीं है, पूर्ण तप अपने स्वरूप का पहिचाननाहै जब अपने स्वरूप को प्राप्त होजाता है तब कोई तप शेष नहीं रहता है जो तू करे, हे पुत्र ! तुम त्वंपद अर्थात् जीवकार्य के अभिमान को त्याग करके तत् पद, ईश्वर कारण में जो ब्रह्माहमस्मि इसप्रकार प्रवेश करो तब कच बोला कि हे महाराज ! सन्त कहते हैं कि पद क्या उपाधि के त्यागने से स्थाल अर्थात् परमाणु सूर्य नहीं होताहै परन्तु सूर्य के वास्तव निरुपाधिक में अभेद होजाते हैं, जैसे बूंद समुद्र में नहीं होसक्ता परन्तु जलरूपी है और आप कहते हैं कि बूंद अपने स्वरूप को त्याग करके समुद्र होजाताहै तो आपके कहने में और सन्तों के कहने में विरोध पड़ता है तब बृहस्पतिजी बोले कि हे कच ! वाणी के कहने से बंधना है त्वं पद, तत् पद और असिपद यह तीनों वाणी के कहने मात्रहैं और कहना वाणी का विषय तब कचने कहा कि यदि इन पदों से कुछ प्रयोजन सिद्ध न होता तो सन्तलोग ऐसा

क्यों कहते तब बृहस्पतिजी हँसकर बोले कि हे पुत्र! उन्होंने तुम्हारी दृढ़ता कराने के लिये कहाहै कि इस विचार करने से स्वस्वरूप की प्राप्ति होती है नहीं तो तीनों पद कथनमात्र हैं, वास्तव में कुछ भी नहीं, हे पुत्र! यदि यह तीनों पद वास्तव में न होते तो उपाधि होती परन्तु केवल कथनमात्र हैं तब कचने उत्तर दिया कि हे पिता! सन्तोंने जो विवरण करके तीन प्रकार अर्थात् तत् त्वम् असि अर्थात् जीव, ईश्वर, ब्रह्म कहा है सो देख करके कहाहै अथवा सुन करके कहाहै तब बृहस्पतिजी ने उत्तर दिया कि हे पुत्र! यह दृढ़ निश्चय करो कि सभी सुनकर कहतेहैं और आत्मा दृश्य नहीं है और एक आत्मा में दृश्य, द्रष्टा और एक दो अथवा तीन शब्द की प्रवृत्ति नहीं है इसलिये कि आत्मा मन, वाणी और सर्व इन्द्रियों का गोचर अर्थात् दृश्य नहीं है तब कचने कहा कि हे पिता! आपके कथनसे मुझे बड़ा आश्चर्य प्राप्त होताहै क्योंकि सन्तोंके कहेसे प्रपंचकी सिद्धि होतीहै और सर्व प्रपंच मिथ्या और तुच्छ वन्ध्या के पुत्रकी नाईं है इसीसे इन सन्तोंके सत्संगसे कुछ लाभ नहीं तब बृहस्पतिजी बोले कि हे पुत्र! सत्संग का त्यागना योग्य नहीं है क्योंकि संसाररूपीसमुद्रके पार होनेके लिये सन्तोंका संगही जहाजहै और स्वात्मविचार का साधन है यदि स्वात्मविचार की प्राप्तिहुई तब सत् और असत् दोनों कहां हैं इससे सत्सङ्ग इन्हींका दुर्लभ जानो तब कचने कहा कि हे पिता! अब आप उन पक्षियों की व्यवस्था कहिये कि कोकिला के मौन होनेके पीछे वह तीनों देवता अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और शिव क्या कहनेलगे तब बृहस्पतिजी बोले कि हे पुत्र! क्या कहूं कि तुमको मेरे कहनेपर विश्वास और निश्चय नहीं होता तब कचने कहा कि हे पिता! आप के वाक्य और उपदेश में बुद्धि नहीं रही इससे निश्चय कौन करे, सुनिये तुम और हम दोनों उपाधिहैं और मैं आत्मस्वरूपहूं और क्लेश, क्लेश से निर्विकारहूं और शरीर के धर्मसे जो काल, बृद्ध और

जरा अवस्था हैं तिन से अतीतहो, मुझमें दिन और रात नहीं है क्योंकि मैं उदय और अस्त से रहितहूं और अपने को स्वरूप जानताहूं जो सदा एकरसहूं अब आप ब्रह्मसूत्र कहिये यदि आप कथन करेंगे तो सुनूंगा परन्तु सुनना मुझमें नहीं है क्योंकि मेरे श्रवण इन्द्रिय नहीं है तब बृहस्पतिजी बोले कि हे पुत्र! मेरा सत्संग तुझको सफल हुआ आपको अर्थात् अहङ्कारको जलाकर आप अर्थात् आत्मस्वरूप होगया अब ब्रह्मसूत्र सुनिये, कि सर्व एक शब्द उच्चारण करनेलगे कि जो कुछ है सर्व हमीं हैं तब कुलङ्कने उत्तर दिया कि सत् और असत् मुझमें नहीं है तो उपाधिहोगी अर्थात् माया होगी तब सब पक्षियोंने कहा कि उपाधि भी हमलोगों में नहीं है क्योंकि सर्व हमीं हैं, धनी और दरिद्री भी हमीं हैं पापी, धर्मी सर्व चराचर हमहीं हैं तब कचने कहा कि ऐसा मतकहो कि मुझ में कहना और सुनना कुछ नहीं है तब बृहस्पतिजी बोले कि पाप और पुण्य, सत् और असत्, दिन और रात्रि, कर्त्ता और अकर्त्ता, भोग और भोक्ता सर्व हमीं हैं ऐसे कहने को उपादान कारण कहते हैं जैसे सम्पूर्ण घटआदि मृत्तिकाहीहै तब कोकिलाने कहा कि तुम सब ऐसेहो जैसे खाली घट मृत्तिकामें डालनेसे शब्द करताहै और जो पूर्णहै उसमें शब्द नहीं होता इतना सुनकर सब पक्षियोंने उत्तरदिया कि जो इतना सन्तोंने कहाहै क्या वे पूर्ण न थे तब कोकिला बोली कि ये सब मूर्खहैं इसलिये कि जितना कहना इन सब सन्तोंका है वह द्वैत अर्थात् भेदको सिद्ध करता है सन्त वही ज्ञानी होताहै जो निष्काम होवे यदि निष्कामहै तो क्या कहना और जो कहनाहै सो कामनाहै तब सब पक्षियोंने कहा कि जो निष्कामहै वह बोलता है या नहीं तब कुलङ्कने उत्तर दिया कि आप्तकाम बोलताहै परन्तु उसका साक्षी क्याहै तब मयूरनेकहा कि यह तीनों देवता ब्रह्मा, विष्णु और महेश आप्तकामहैं अथवा साक्षी तब कुलङ्कनेकहा कि सर्व आप्तकामहैं जो कोई कहे कि शरीर सकामहै

तो झूठहै क्योंकि जो जड़है वह पत्थरकी नाईंहै कामना से उस को क्या प्रयोजन है और आत्मा अशरीर है उसको कामना से क्या प्रयोजनहै इससे सभी आपत्कामहैं, जो शरीर और आत्मा दोनों आपत्काम हैं फिर कामना किसमें है तब कुलङ्गने कहा कि कामनाधर्म मनका है और मन असत् है इससे जो असत् का कार्यहै वह भी असत् है तब शिवजी बोले कि हे कुलङ्ग! तेरे माता और पिता कौनहैं तब कुलङ्गने कहा कि मैं आपही माता पिता और पुत्रहूं मुझमें द्वैतकी गन्ध नहीं है तब शिवजीने पूछा कि तेरा गुरू कौनहै तब कुलङ्गने कहा कि हे शिवजी! मैं आपही गुरू और शिष्यहूं तब शिवजीने कहा कि हे कुलङ्ग! तुमने यह विद्या किससे पढ़ी है तब कुलङ्गने कहा कि मैं आपही विद्यारूप हूं तो किससे पढ़ूं क्योंकि मैं स्वयं प्रकाशितहूं हे शिवजी! यह सम्पूर्ण मेराही रूपहै तब शिवजीने फिर पूछा कि हे कुलङ्ग! तेरा वर्ण क्या है तब कुलङ्गने कहा कि हे शिवजी! जब मैं आपही वर्णहूं तो क्या कहूं तब शिवजीने कहा कि वर्णउपाधिहै और तू निरुपाधि शुद्धहै तब कुलङ्गने कहा कि हे शिवजी! इतने वाक्य जो आपने कहे हैं सो वाचारम्भण अर्थात् कथनमात्र हैं इससे माया सिद्धहुई तब शिवजी ने कहा कि नहीं नहीं. यदि तुमने केवल कथनमात्र कहा तो क्या चिन्ताहै कहने से बन्धन में नहीं होताहूं इतना उत्तर देके फिर शिवजीने विष्णुजीसे कहा कि देखो कुलङ्ग क्या कहता है तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि यह पक्षी सबको मूलसे नाश करता है इसलिये कि मुमुक्षु प्रथम ज्ञानकी अवस्था में हम तीनों देवतों की उपासना और पूजा करता है और जब सिद्धि अर्थात् ज्ञानको प्राप्त होताहै तब हमलोगों को नाश करता है यह लोग हमारे शत्रुहैं इससे इनका वाक्य सुनना योग्य नहीं है तब ब्रह्माजी ने उत्तर दिया कि कुछ डर नहीं तब विष्णुजी बोले कि ज्ञानके आदि में पूजा उपासना प्रणव और तीनों देवतों की है फिर कहां है, हे ब्रह्माजी! इन पक्षियों को

अपना पुत्र न जानो वरन इनको अपना पिता समझो क्योंकि ये आपी आपहैं तब श्रीशिवजी बोले कि मैं तीनों लोकको ग्रास करताहूं परन्तु जिस पुरुष का अहङ्कार निवृत्त हुआ है वह मुझे उपसंहार करता है ॥

इति श्रीविष्णुजी इस विषे मुझसे सुनो, आगे इतिहास जड़-भरतका चलेगा इति कथा ब्राह्मण और कच समाप्तहुई ॥

श्रीगणेशाय नमः।

हरिःॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः।

अथ श्रीशिवजी औरब्रह्मा व विष्णुका संवादप्रारम्भ ॥

श्रीशिवजी ब्रह्मा और विष्णुसे बोले कि हम तीनोंलोकको ग्रास करतेहैं परन्तु जिस पुरुषका अहंकार दूर हुआहै वह हमको ग्रास करताहै, हे विष्णुजी! उस विषयमें एक इतिहास मुझसे श्रवणकरो ॥

अथ राजाभरतका इतिहास ॥

एक भरतनामी राजा हुआ कि जिसके नामसे यह भरतखंड प्रसिद्धहुआ। किसी समयमें वह अपने पुत्रको राज्यदेकर आप तप करने के लिये वनमें गया और वहां जाकर देखा कि वहुत से तपस्वी तप करतेहैं और वहुतेरे जपमें ध्यानावस्थित हैं और उन्हीं के मध्यमें एक तपस्वी आत्मविचार में मन लगाये है और तीनचार संतोंसे मिलकर संवाद करताहै यदि पूछो कि यह क्या है तो कहताथा कि न मैं हूं न तुमहो न यह तीनों लोकहैं,

शरीर व समष्टि और व्यष्टि व अभिमानी तृतीयपाद तीसरा लोक है यह तीनों लोक नहीं हैं एक चैतन्य श्रीविष्णुही है तब राजा भरत उस सन्त के पास प्रणाम करके बोले कि हे ब्रह्मरूप! मुझे इस अनित्य संसारसे वैराग्यहुआहै और आपकी शरण में आकर इसवास्ते प्राप्तहुआहूं कि आप दयाकरके मुझको ज्ञान उपदेशकीजिये क्योंकि ज्ञानके विना वैराग्य प्राप्त नहीं होता और जिसको वैराग्यहै उसको ज्ञान शीघ्रही सिद्ध होताहै और उसके अहं, अभिमान का भी नाश होजाता है, राजा के इस वचनको सुनकर वह संत उपदेश करनेलगा कि ज्ञान यही है कि एक विष्णु कोही पूर्ण और अभेद जानो तब राजा इस उपदेशको सुनकर मनन करके विचार करने लगा कि संतने जो उपदेश किया यह सत्य है सर्वत्र श्रीविष्णुही है परन्तु यह आशंका उत्पन्न हुई कि यदि सर्वत्र श्रीविष्णुही है तो हम क्या हैं, इस प्रकार अपने मनमें विचार करनेलगा कि हमभी विष्णुही हैं फिर विचारा कि ऐसा नहीं है हम विष्णुके जाननेवाले हैं परन्तु निश्चय नहीं कि मैं कौनहूं इस प्रकार मनमें शोच विचार कर फिर गुरु के पास जाकर बोला कि संत, हे भगवन्! हमारे इस संशय को निवृत्त कीजिये यदि आप पूछें कि तुम्हारे क्या संशय है तो हमारे यह बड़ी भारी संदेह है कि हम विष्णु के जाननेवाले हैं हमारा स्वरूप क्या है तब संत बोले कि तुम ब्रह्महो तब राजाने इस वाक्यको सुनकर फिर प्रश्न किया कि हे गुरुजी! जैसे हम ब्रह्मको जानते हैं वैसेही ब्रह्मको और सर्व पदको देखते और जानते हैं परन्तु अपने स्वरूप को नहीं जानते इससे कृपापूर्वक आप निर्णय करके निश्चय कराइये कि मेरा स्वरूप क्या है तब सन्त बोले कि यदि तुमको ज्ञान प्राप्त हुआ है तो मौनहो क्योंकि इससे अधिक कथन करने की वाणी में शक्ति नहीं है यदि पूछो कि क्या आत्मा मन, वाणी के विषे नहीं है या मन ... ...यों से उसकी प्राप्ति नहीं

है, यह तीनपद जीव, ईश्वर, ब्रह्म केवल कथनमात्र हैं और परमात्मा आनन्दस्वरूप कथनसे परे है, संतके इस वाक्यको सुनकर राजा भरत स्वरूप में लीन हुआ तब शिवजी बोले कि हे विष्णुजी! एक समय धर्मराज ने काल से कहा कि राजा भरत को लेआवो तब काल धर्मराजकी आज्ञा पाकर राजा भरत के पास आया और उनको देखनेलगा कि भीतर एक गोविंदही हैं भरत नाम किंचित् भी नहीं है तब काल आश्चर्यको प्राप्तहोकर विचार करनेलगा कि किसको लेजाऊं और इसी शोच विचारसे लौटकर धर्मराजके पास पहुँचा और बोला कि हे महाराज धर्मराज जी! सब संतों को मारो क्योंकि वे प्राणियों को हमारी फांसी से छुड़ाते हैं जब हम भरत के समीप पहुँचे तब देखा कि वहां भरत का अंश किञ्चिन्मात्रभी नहीं है कि जिसको आपके पास ले आवें तब धर्मराज और यमकिंकर दोनों मिलकर हमारे पास आये और बोले कि हे महाराज! भरत हमारे हाथ से गया किंचित् शरीर उसका नहीं रहा यदि पूंछो कि स्थूल, सूक्ष्म के अभिमान से रहित हुआ कहो कि हम क्या करें किसको लावें तब शिवजी बोले कि हे विष्णुजी! तब हमने राजा के पास जाकर देखा कि उसके मुखसे केवल गंगा के प्रवाह की तरह उच्चारण होताहै कि सर्व हमीं हैं परंतु शरीर के अभिमान से रहित होकर सर्वोहमस्मि उच्चारण करता है तब मैंने कहा कि हे राजन्! तुम धन्यहो कि जो अपने स्वरूप में प्राप्तहो परन्तु यह कहिये कि तुम्हारा स्वरूप क्या है तबभी राजाने किंचित् उत्तर न दिया तब हमने धर्मराजसे जाके कहा कि इस शरीरके भीतर भरतका कुछभी अंश नहीं है और हम ने फिर जाकर राजा से पूछा कि हे राजन्! तुम्हारा स्वरूप क्या है तब राजा ने उत्तर दिया कि हे शिव! बड़े आश्चर्यकी बात है कि आप स्वयंशिव होकर मुझ से पूछते हैं कि तुम्हारा स्वरूप क्या है, आपही निर्णय कीजिये कि तुमसे भिन्न क्या है जो तुमको उत्तर देवे इसमें निश्चय होना

है कि आप जानतेहो कि मैं भरत हूं यहां भरतकी गन्ध नहीं है कि जो काल का ग्रास होवे, हम कालको खाकर सुखी हुये इस लिये कि भरत अज्ञानको कहते हैं सो उस भारतको काल वश ज्ञान खायकर नाश करता हुआ अरु उस ज्ञानको हम खाकर विज्ञानरूप हुये हैं तब हमने कहा कि हम तुम्हारे पास आये हैं हमसे कुछ संबाद करो तब राजा बोला कि दूर और समीप हम में नहींहै फिर क्या कहें तब मैंने कहा कि त्रिशूल से तुम्हारा शिर काटूंगा तब राजाने उत्तर दिया कि मैंने अपना शिर आपही काटडाला है कि जिससे जन्म मरण के भयसे रहित हुआ हूं आपी आपु हूं हे श्रीविष्णुजी ! ऐसा पुरुष अहंकार से रहित हुआ जो है उसको किस तरह नाश करूं तब श्रीविष्णुजी इस कथनको सुनकर बोले कि हे श्रीशिवजी ! सर्व संसार की स्थिति हमारे अधीन है परन्तु जो पुरुष आपत्कामहै और कामना से भी रहित है सो पुरुष हमारी स्थिति करता है इस विषय में मुझ से एक इतिहास सुनिये ॥

॥ राजा के बेटे का इतिहास ॥

पूर्वकाल में एक राजा के एक बेटा पैदा हुआ कि जिससे वह बाल्यावस्था से अपने साथ रखकर बैठते उठते सोते जागते बोलते चालते खाते पीते सर्व काल में श्रीविष्णु श्रीविष्णु कहता रहता था एक दिन उस लड़के का पिता राजा अपने पुत्रसे बोला कि हे पुत्र ! जब अपने शरीर को त्यागेंगे तब हमारे पीछे कौन राज्य करेगा जब कि सबकाल में विष्णु विष्णु कहना और पिशाचकी तरह विष्णु के पीछे लगना इससे क्या लाभहै यदि कोई किसीको दो तीनवार पुकारे तब वह बहुत क्रोधित होताहै और आप जो रात दिन विष्णु का नाम पुकारा करते हैं क्या विष्णुजी तुमपर क्रोधित न होंगे तब राजपुत्रने उत्तर दिया कि हे पिता ! इसी से विष्णु उत्कृष्ट अर्थात् उत्तमहैं कि जो जितना विष्णुको

अधिक भजै उतना उससे अधिक प्रसन्न होते हैं निदान इसी प्रकार बहुत काल व्यतीत हुआ कि उस लड़के के पिता का देहान्त हुआ तब राजाका बेटा जैसे भजन करता था तैसे करता रहा पिताके मरनेसे किंचित् अभ्यासको न छोड़ा और किंचित् शोकभी न किया और राज्य नष्ट होगया हे श्रीशिवजी ! तब हमने उस राजा के बेटे से साक्षात्कार होकर अर्थात् आकाशवाणी से कहा कि हे पुत्र ! राजकर तुम्हारे राज की रक्षा और पालन हम करेंगे तब राजाके बेटे ने कहा कि हे विष्णुजी ! मुझ को तुम्हारे सिवाय कुछ भी अच्छा नहीं लगता न किसी वस्तु की कामना है तब हम राज्य को लेकर क्या करेंगे क्या तुमसे बढ़कर अन्यवस्तु राज्यादिक श्रेष्ठहै जो तुमको छोड़कर उस वस्तु को ग्रहणकरूं राज्यको हम सूखे तृणकी नाई तुच्छ जानते हैं हे शिवजी ! ऐसी व्यवस्था उस राजपुत्र की हुई कि वह राजपुत्र अनेकानेक वनों में घूमता हुआ अहर्निश श्रीविष्णु श्रीविष्णुके सिवाय और कुछ अपनी जिह्वापर न लाताथा और पूछने पर यही कहता था कि स्वयं विष्णुहूं निदान वनान्तर में घूमतेहुये अनसूया के पुत्र दत्तात्रेय अवधूत जोकि हमारा रूपहै उनसे समागम होगया और उन्होंने राजपुत्र से पूछा कि हे राजपुत्र ! तुम्हारा स्वरूप क्या है तब राजपुत्र ने उत्तर दिया कि मैं श्रीविष्णुका दासहूं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तुम्हारा स्वामी आश्चर्यरूप और उनके सेवक भी अतिआश्चर्यरूपहो इसलिये कि इतने समयतक भक्ति व भजन करनेपर भी तुम्हारी द्वन्द्वबुद्धिका परित्याग न हुआ न उस स्वामीनेही तुमको इस भेद उपाधि से निवृत्त करके मोक्षपद दिया तब राजकुमार ने कहा यदि मैं विष्णु हूं तब तुमभी विष्णुही हो अब कहिये कि इस उपाधिसे मन किस प्रकार से भिन्न समझाजाता है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि यदि तुमने सम्पूर्ण वस्तुओं में विष्णुकाही अध्यारोपण कियाहै तब मध्य में तुम कौनहो कि जो अपने को

दास मानते हो इसीसे तुमको भ्रम हुआ और निश्चय करतेहो कि मैं भक्तहूं और विष्णुको अपने नेत्रोंसे देखा है इस निश्चय से कदापि मुक्त न होंगे क्योंकि विष्णुको सर्वव्यापी जानकर अपनेको उनसे भिन्न मानतेहो विष्णुको भिन्न देखने से क्या लाभ है इसीतरह से अनादिकाल और अनेकजन्मों में विष्णुको भिन्न जानते और देखते रहोगे, हे राजकुमार ! यह शरीर मिथ्या और असत्य है जब मृतक होताहै तब इसकी तीन व्यवस्था होती हैं यदि कोई खागया तो विष्ठा होजाताहै और यदि रक्खा रहगया तो कृमि होजाताहै और यदि जलायागया तब भस्म होजाता है इससे इस अपने शरीरको ऐसाही समझकर इसकी प्रीति छोड़कर शरीराभिमान को त्यागदो और सच्चिदानन्दमें जो कारण अधिष्ठान तुम्हारा है उसमें प्राप्तहो, यदि तुम इस शरीर को न त्यागोगे तब यह शरीरही तुमको त्यागदेगा इससे उचितहै प्रथम तुम्हीं इसका परित्यागकरो हे पुत्र ! इस शरीर को स्वप्नकी नाईं व जलके बुद्बुदेकी तरह मिथ्या निश्चय करो जो पुरुष ज्ञानी हैं वह इसके साथ प्रीति नहीं करते इससे तुमभी इसकी प्रीतिको त्यागदो यह केवल देखनेमात्र है जिस समय शरीर नाश होताहै तब पांचभूत पांचोभूतोंमें प्रवेश करजाते हैं जो पुरुष आत्मस्वरूप को नहीं जानताहै वह फिर जन्ममरणके बन्धनमें नहीं फँसताहै तब राजपुत्रने कहा कि हे अवधूत ! मुझको शरीरसे वैराग्यहुआ है अब आप कृपाकरके ज्ञान उपदेश कीजिये तब अवधूतने कहा कि नामरूपका त्यागकर अपनेको सत्यरूप जानो और निश्चय करो कि जो कुछहैं वह आपही हैं तब राजपुत्रने उत्तर दिया कि यदि ऐसाहीहै तो मैं भ्रममें क्यों पड़ा हूं मैंने अपने रूपको अब जाना कि जो कुछहै हमींहैं तब अवधूतने कहा कि जब देखना और न देखना तुममें नहीं रहा तब तुमको स्वरूपमें [redacted] इस लिये कि तुमसे भिन्न कुछ नहीं है जो कुछ तुम देखते और जानतेहो सब तुम्हीं हो तब राजपुत्र स्वरूपमें लीनहुआ फिर

विष्णुजी बोले कि हे शिवजी! उसीसमय मैं भी जाकर पहुँचा और बोला कि हे राजपुत्र! यह अपना शरीर मुझेदे कि इसका पालन मैं करूं तब राजपुत्रने उत्तरदिया कि विष्णुजी तुम्हारी तो पालना और स्थिति तो मैं करताहूं क्योंकि मैं स्वयंप्रकाशयहूं और मेरेही प्रकाश से तुम प्रकाशित हो मुझको मुक्त आत्मा कहतेहैं तब मैं आश्चर्य को प्राप्तहुआ कि इस राजपुत्र को क्या हुआ कि यह सदा अपनेको दास कहताथा परन्तु आज स्वयंस्वामी बनताहै तब मैंने उससे पूछा कि हे राजपुत्र! तुम्हारा स्वरूप क्या है तब राजपुत्र ने कहा कि हमारा स्वरूप तुम्हींहो परन्तु तुम में भेदहै मैं अभेदहूं हे श्रीविष्णुजी! मैं अद्वितीयहूं, हे शिवजी! तब मैं अपने स्थानको चलागया, जो पुरुष सर्वकामनासे रहितहुआ है वह मेरा पालन करताहै, तब ब्रह्माजी बोले कि हे श्रीविष्णुजी! यह कहतेहैं कि ब्रह्मा सम्पूर्ण संसारको उत्पन्न करता है यह मिथ्याहै इसलिये कि आत्मा अद्वितीय है अरु स्वयंप्रकाश है इस में द्वैत किंचित् नहीं है यह निर्णय करके अपने २ स्थान को चलेगये ॥

इति श्रीशिव, ब्रह्मा और विष्णु का संवाद समाप्त ॥

ॐनमः ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

कागभुशुण्डिजी का इतिहास प्रारम्भ ॥

एक समय दुर्वासा जी अर्थात् अवधूत कागभुशुण्डिजी के स्थानमें गये और राजनगर के बाहर किसी स्थान में आराम करनेलगे. और कागभुशुण्डिजी शिकार खेलने के लिये वन में गये थे कि कागभुशुण्डिजी का राजकुमारनामी पुत्र वहां पहुँचा जहां कि अवधूत सोतेथे और उनको इन निश्चिन्ताई में

तब भी प्राप्त होता है जो न होना है उसकी इच्छाभी करो तब भी वह प्राप्त न होगा अब तुम जो अभिमान का परित्यागकरो तो मैं शहर में चलूं तब कागभुशुण्डजी बोले कि जिस शरीरसे मुझे नारायण प्राप्त हुये हैं उस अभिमानको किस प्रकारसे परित्याग करूं तब अवधूत ने कहा कि निश्चय होताहै कि तुमको मुझे शहरमें ले चलना पसंद नहीं है मैंने सुनाथा कि कागभुशुण्ड परमहंस है परन्तु देखने से निश्चित हुआ कि पूरा कौवाहै अब हमको तुमसे कुछभी प्रयोजन नहीं है इतना समय हमारा व्यतीत हुआ हमने सुनाथा कि कौवा बुद्धिमान् होता है परंतु विष्ठा पर बैठता है वह आंखों से देखा यदि तुम पूंछो कि विष्ठा क्या चीज़ है तो यही शरीर विष्ठा है जो पुरुष इस शरीरको उत्तम समझता है वही कौवा है हे कौवा! जिसका तू भजन करताहै वह मैंहीहूं राम मुझी को कहते हैं रामका भजन इसीको समझो कि ब्रह्मा से लेकर पिपीलिका पर्यंत सबमें रामही परिपूर्णहै सो मैंही हूं और कोई नहीं ऐसा निश्चय करना यही भजन है हे कागभुशुण्ड! यह समझो कि संपूर्ण संसार में आत्मारामही परिपूर्ण है परन्तु यह बुद्धि तुम्हारी भाग्य में किस तरह होवै कि पिता तुम्हारा काग और माता तुम्हारी हंसिनी है, तू यही जानताहै कि हमारे पास माया कहां है और क्यों नहीं आती देखो जब तुम आप मायारूपहो तो फिर माया तुम्हारे पास किसप्रकार आवे मिथ्या शरीर को सत्य जानना इसी को माया कहते हैं और तुम कहतेहो कि मैं दासहूं और राम मेरा स्वामी है यदि विचारदृष्टि से देखो तो तुम नहीं हो केवल गोविन्दही हैं अब कहिये माया किसको कहते हैं तब कागभुशुण्ड ने उत्तर दिया कि मोह को माया कहते हैं तब अवधूतने पूछा कि मोह क्या चीज़ है कि पुत्र और राज्य को अपना जानना इसी को माया कहते हैं तब अवधूतने कहा कि हे मूर्ख! शरीर को अपना और अपने को शरीर अर्थात् मैं शरीरहूं और शरीर मेरा है ऐसा

समझना इसी को मोह कहते हैं तब कागभुशुण्डिजी बोले कि त्वं पद माया नहीं है क्योंकि यह किञ्चित् अभिमानी हैं तब अवधूतने कहा कि त्वं पद जीव, माया, भूलमें क्या वस्तुहै तब कागभुशुण्डिजी बोले सन्तलोग यहबात कहते हैं कि तत्पदरूप मैं हूं क्या ईश्वरोहमस्मि में माया नहीं है तब अवधूत ने कहा कि जो पुरुष ईश्वरोहमस्मि ऐसा कहते हैं और धारणा धरते हैं उनको सुख प्राप्त होताहै क्योंकि जो कार्य को त्याग करके अपने को कर्ता का कारण जानता है और असिपद शुद्ध निर्वाण परमानन्दपद है सो विज्ञान से प्राप्त होताहै और उसीमें ब्रह्मसुख होताहै कि जिस में सुख और दुःखकी गन्ध नहीं है हमने सुनाथा कि तुम मायासे रहित हो परन्तु अब देखने से निश्चित हुआ कि केवल तुम मायारूपही हो यदि तुमको इच्छा होवे कि मुझे सन्तोंका सत्सङ्ग प्राप्तहो तो सन्तोंको तुमसे क्या प्रयोजन है सन्त आप्तकाम होते हैं वह लोग यह नहीं करते कि तुम्हारी द्रव्य लेवें अथवा तुमसे सेवा करावें हमको बड़ाआश्चर्यहै कि तुम ने इतने समयतक गोविन्दका भजन किया परन्तु तुमको कुछभी लाभ न हुआ वृथा कष्टसहतेरहे अब हम जाते हैं जब अवधूत ने जाने की इच्छाकी तब कागभुशुण्डि अवधूतके चरणोंपर गिरकरविनती करने लगे कि हे अवधूत! अबतक मैं जानताथा कि भक्तिही उत्कृष्टहै परन्तु अब आपकी कृपासे निश्चय हुआ कि आत्मज्ञान के विना सुख नहीं है अब आप दया करके मुझे आत्मज्ञान उपदेश कीजिये क्योंकि मैं संसाररूपी अग्नि से जरताहूं इस से हमारे शरीर की रक्षा कीजिये तब अवधूत ने कहा कि यदि मिथ्या संसारको त्यागकरके सुखीहो तो निश्चयकरो कि हमारा रूप है मैं उससे भिन्न नहीं हूं इसी वार्तालाप के होतेही वहां मीमांसा भी आकर उपस्थित हुये और बोले कि जबतक कर्म न करे तबतक रामरूप कैसे होवै कर्मकेही करनेसे रामरूप प्राप्त होताहै तब अवधूत बोले कि हे मीमांसा! कर्म शरीरही से होतेहैं

अथवा आत्मा करता है यदि तुम कहो कि कर्म शरीर करताहै तो आप जड़है आत्मा अक्रिय अर्थात् न करनेवाला और शरीरसे रहितहै या निरवयव है अर्थात् कोई अङ्ग नहीं है मीमांसा ! अब कहिये कर्म कौनकरै तब मीमांसा मौन होगये और उसी क्षण शक आकर प्राप्तहुआ और बोला कि यह सब कालके अधीन है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि यदि कर्म है तो कालके अधीन होता है यदि कर्म नहीं है तब कालको अक्रिय से क्या सम्बन्ध है तब वैसे शक मौनहुआ तब न्याय आकर प्राप्तहुआ और बोला कि जो है सो कर्त्ताही है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि यदि कर्म है तब कर्त्ता भी है और जब कर्म नहींहै या अक्रियहै तब कर्त्ता कैसे कहाजाय तब न्याय भी मौन होगया तब पातञ्जलि ने आकर कहा यदि योग न करे तब सुख कैसे प्राप्त होवे क्योंकि योगके विना सुख नहीं मिलता तब अवधूत ने उत्तर दिया कि कहिये योग स्वयं प्रकाशित अथवा स्वतः सिद्धहै या किसी के करने से होताहै तब पातञ्जलि ने कहा कि मैं ऐसा जानताहूं कि किसी के करने से होताहै तब अवधूत ने कहा कि योग से क्या लाभ है क्योंकि जो स्वयंसिद्ध नहीं है वह मिथ्याहै तब पातञ्जलिभी मौन हुआ तब सांख्य आकर प्राप्तहुआ और बोला कि नित्य और अनित्य के विचारके विना रूप कैसे जानेगा तब अवधूत बोला कि नित्य और अनित्य का विचार द्वैत लेकर है और आत्मा एक और द्वैतकी प्रवृत्ति से रहित अर्थात् शुद्धहै तब सांख्य भी मौन होगया तब सबसे पीछे सत् चित् आनन्द वेदान्तरूप राम धनुष बाण और शंख गदा हाथमें लेकर प्रसन्नहुये आनन्दचेष्टा में आकर प्राप्तहुये तब अवधूत बोला कि हे कागभुशुण्डि ! कहो हम रामरूपहैं यदि ऐसा न कहोगे अर्थात् अभेद निश्चय न करोगे तो मैं तुमको और तुम्हारे रामको भस्म करदूंगा तब श्रीराम जी हँसकर बोले कि हे कागभुशुण्डि ! तुम निर्भय व निस्संशय होकर कहो कि मैं रामरूप हूं अर्थात् सर्व चराचर संसार में एक

अद्वितीय और व्यापक मैंहीहूं तुम कहांहो यदि तुम नहींहो तब केवल रामही है कहो रामोहमस्मि अर्थात् मैं रामरूप हूं तब कागभुशुण्डि ने आनन्दपूर्वक प्रसन्नवदन होकर कहा रामोहमस्मि अर्थात् द्वितीय राम मैंहीहूं मुझसे अतिरिक्त और राम कोई नहीं है ॥

इति कागभुशुण्डिइतिहाससमाप्त ॥

हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ ब्रह्मसूत्र में ब्रह्मयज्ञ का इतिहास प्रारम्भ ॥

एक राजा पुष्करद्वीप में देवहूती के पुत्र कपिलमुनि के आश्रम में यज्ञ करने के लिये आया और प्रणाम और सेवा करके नम्रता से बोला कि हे ऋषीश्वर! हे गुरो ! कृपा करके यह बतलाइये कि यह संसार सत् है अथवा असत्, चैतन्य है या जड़है और आपका स्वरूप क्या है और मैं कौन हूं तब कपिलदेवजी बोले कि हे राजन् ! तुम धन्यहो जो ऐसा प्रश्न किया अब ध्यान धरकर इसके विवरण को श्रवण कीजिये देखो न मैंहूं न तुमहो न यह संसारहै केवल अद्वितीय भेदसे रहित एक ब्रह्महै कपिल मुनि के इस उत्तर को सुनकर राजा अतिआश्चर्य को प्राप्त हुआ और बोला कि हे महाराज ! यदि तुम नहीं हो न मैं हूं न यह संसार है तो ब्रह्म क्या है मैं ब्रह्मको नहीं जानताहूं कृपा करके मुझे समझाइये राजा के इस महानिस्सिन्न वचनको सुनकर कपिलमुनि बोले कि हे राजन् ! तुम्हारा कथन सत्य है देखो ब्रह्मके प्रकाशक तुमहो और तुम्हीं ब्रह्मके साक्षीहो तब राजाने पूछा कि हे महाराज ! मेरा स्वरूप क्याहै तब कपिल

मुनि बोले कि हे राजन्! सत् चित् आनन्द अद्वितीय स्वरू
तुम्हाराही है तब राजाने पूंछा कि मैं शरीरहूं अथवा कोई क
हूं तब कपिलमुनि बोले कि तुम शरीर नहींहो वरन शरीर
प्रकाशकहो तब राजाने हँसकर पूंछा कि हे महाराज! मुझ
यह अद्वैत पद कैसे है पहिले आप कहते थे कि तुम शरीर न
हो और अब कहतेहो कि तुम अद्वितीयहो इस आपके कथ
से तो दो पद एक चैतन्य दूसरा जड़ सिद्ध होतेहैं यह क्या भे
है तब कपिलमुनि बोले कि हे राजन्! तुम जबतक शरीर
अपनेसे जुदा न जानोगे तबतक कभी सुखको प्राप्त नहीं होग
सिवाय अहंकार शरीरके केवल कथनमात्र है और स्वरूप
जानना अतिदुस्तर है तब राजा ने कहा कि हे गुरो! आप कह
हो कि जाननेसे सुख होताहै सो जानना और कहना क्या वस्तु
है मैं इसके भेद से अनभिज्ञहूं इससे दयाकरके मुझे समझावो मेरे
भ्रम को निवृत्त कीजिये तब कपिलमुनि बोले कि हे राजन्!
तुम सत्य कहतेहो यदि तुम में जानना और सुनना होय तब
तो जानो तुम तो मन और वाणी से परेहो अब इसके विवरण
को सुनिये कहना वह है कि जो वेद और शास्त्र व सत्संग से
सुने वही कहे और जानना वहहै कि जो कुछ सुने उसपर निश्चय
करे और तद्रूपहो तब राजा ने पूंछा कि तद्रूप कैसे होता है तब
कपिलमुनि बोले किहेराजन्! जोतुम्हारी इच्छा तद्रूपहोनेकीहै तो
सुनो और जो कुछ मैं तुमसे कहताहूं उसको सत्य जानो आत्मा
निश्चय विज्ञान से होता है और विज्ञान ज्ञान से उत्पन्न होता
है और ज्ञान भक्ति से उपजता है और भक्ति शुभ कर्म या
निष्काम कर्म से पैदा होती है और निष्काम कर्म वैराग्य से
होता है हे राजन्! सर्व साधन का कारण वैराग्य ही है इसी से
वैराग्य सर्वोत्तम है क्योंकि वैराग्य सेही परम्परा ज्ञान के द्वार
से स्वरूप को प्राप्त होता है तब राजाने फिर पूंछा कि जब मैंही
स्वरूपहूं तो वैराग्य और निश्चय से क्या प्रयोजन सिद्ध है तब

कपिल मुनि बोले कि हे राजन्! यदि तुम्हीं हो तो निश्चय भी तुम्हीं करो तब राजाने कहा कि पहिले आप उपदेश करते हो कि तुम ब्रह्महो फिर निश्चय क्या कहते हो निश्चय कल्पना से होता है उसे हम कैसे करें यदि मैंही हूं तब निश्चय और न निश्चय करना मुझमें नहीं है हे भगवन्! अब कहिये कि क्या करें और किस वस्तु को निश्चय करें जब कि मझ से अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं है तब कपिल मुनि बोले कि जो कुछ करो स्व-स्वरूप करो और सब क्रिया को स्वरूपही जानो तब राजाने कहा कि मुझे जान पड़ता है कि यह शरीर कठपुतली की नाईं जड़ है फिर इस जड़शरीर में मेरा वास किस तरह होसकै है तब कपिल मुनि बोले कि वेद का वाक्य है कि जाग्रत् अवस्था विषे नेत्रमें और स्वप्नावस्था विषे कंठमें और सुषुप्ति अवस्थाविषे हृदय में और तुरीयावस्था में मूर्द्धि अर्थात् शिरमें स्थितहै तब राजाने कहा कि जो नेत्रादि चार स्थान शरीर में हैं और बाकी शरीर के अंगों में नहीं हैं तब कपिल मुनि बोले कि हे राजन्! जैसे सूर्यका प्रकाश सम्पूर्ण जगत् में सबको प्रकाशित करता है परन्तु सूर्यका दर्शन सूर्यके मंडल मेंही होताहै न कि दूसरेस्थान में तैसेही तुरीयावस्था ब्रह्मकी चैतन्यसत्ता सर्व अंगों में रोम रोम शरीर में व्यापक परिपूर्ण है परन्तु यदि तुरीया आत्मा का दर्शन करना चाहे तो नेत्र आदि चार स्थान में जाग्रत् आदि अवस्थामें होताहै सो तुरीया आत्मा तुम्हीं हो हे राजन्! और भी सुनिये कि जैसे मुख आदि का प्रतिबिंब स्वच्छ अर्थात् निर्म-ल काच आदि में पड़ताहै भीत आदि मलिन वस्तुमें नहीं पड़ता तैसेही शरीरमें स्वच्छ अर्थात् निर्मल स्थानों में प्रतीत आत्मा अर्थात् तुम्हारी होती है तब राजा बोला कि हे भगवन्! आजके दिन मेरा जन्म सफल हुआ और इससे पहिले अर्थात् आपके उपदेश से पहिले मुझ से जो जो कर्म हुये हैं वह केवल शरीरके अभिमान से हुयेहैं परन्तु अब मैं आपकी अनुग्रहसे देहके अभि-

मान से रहित होकर संसार से मोक्ष हुआ तब कपिलमुनि बोले कि हे मूर्ख! ऐसा मतकह अब तक तुझे ज्ञान नहीं हुआ क्योंकि तुझको अबभी द्वितीय दिखाई पड़ताहै क्योंकि तू कहताहै कि आपके अनुग्रह से संसार से मोक्ष हुआ ज्ञानीको अहं त्वं अर्थात् हम तुम की वृत्ति नहीं होती तब राजाने कहा कि अवश्य करके वह उपाय बतलाइये कि जिससे भेदवृत्तिका नाश होवे तब कपिलमुनि बोले कि सम्पूर्ण स्थावर जङ्गमादि चराचर में एक आत्माही देखना और जानना यही उस भेदके छूटने का एक उपाय है दूसरा कोई नहीं तब राजा बोला कि हे भगवन्! अब मेरी इच्छाहै कि मैं ब्रह्मयज्ञ करूं इसी वार्तान्तर्गत दत्तात्रेयजी आपहुंचे और बोले कि सम्पूर्ण संसार में एकमैंही परिपूर्णहूं तब मैत्रेयजी ने पूछा कि हे भगवन्, पराशरजी! बड़े आश्चर्यकी बातहै कि अवधूत भरतखंडमें था और कपिलमुनि पुष्करद्वीप जो सातवां द्वीप है वहां थे वे किसतरह पहुंचे तब पराशरजी बोले कि हे राजन्! सुनिये संत ब्रह्मवित् सम्पूर्ण संसारमें अर्थात् सब स्थानों में परिपूरित अर्थात् व्याप्तहैं जहां इच्छा करते हैं वहांही प्रगटहोते हैं इससे अवधूतके पुष्करद्वीपजानेमें कुछ आश्चर्य की बात नहीं वह ईश्वरका अंश योगकला से युक्त है और भी सुनिये अवधूत बोले कि चराचर स्थावर जङ्गमादि जो कुछहै सब मैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कि यदि सर्वत्र तुम्हीं हो तुम्हारा स्वरूप क्या है मनुष्य, देवता, पशु, पक्षी और प्रेत, पिशाचादि किस रूप में हो जब अवधूत को इस प्रश्नका उत्तर न आया तब मौनहोकर अवाक् होगये और राजा स्वरूपमें लीन होगया और यह जाना कि जो जो आत्मा, मन, वाणी का विषय नहीं है वह मैंही हूं तब कपिलमुनि भी सम्पूर्ण शरीर और शरीरके अङ्गोंसे परे निर्विकल्प समाधि में स्थित होगये और दोसहस्र वर्षतक कोई न बोले पीछे अवधूत हँसकर बोले कि पद और अपद ये भी दोनों मुझी सेहैं तब कपिलमुनि बोले कि जब पद और अपदभी तुम

सेहैं तो तीनरूप हुये तब अवधूत बोले कि तीनोंको मैंही सिद्ध करताहूं अथवा और कोई तबतक कपिलमुनि बोले कि हे राजन्! अब ब्रह्मयज्ञ कीजिये क्योंकि तुम्हारी इच्छासे अवधूत तुम्हारा स्वरूप आकर प्राप्तहुये हैं तब राजा बोला कि यज्ञका करना और न करना मुझमें नहीं है परन्तु यज्ञ अवश्य करूंगा तब कपिलमुनि बोले कि हे अवधूत! तुम्हारा क्या रूपहै तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मेरा रूप मुझसे क्या पूछतेहो तो नाम रूप मुझमें नहीं है यदि तुमको स्वरूप का ज्ञान नहीं है तो हजारों तरह से तुमको समझाने से भी कुछ लाभ नहीं है और जो तुमने जाना तो मौन होजावो कहनेका स्थान नहीं है तब कपिलमुनि बोले कि जानना और न जानना मुझमें नहीं है इतना कहकर मौनहोगये तब राजा बोला कि हे कपिलदेवजी! मौन न हूजिये सर्व रूप तुम्हाराहै इससे कुछ कहिये तब अवधूत बोले कि जबतक बुद्धि चिरस्थायी है तभीतक कुछ कहना सुनना है और जब विचारपूर्वक बुद्धि आत्मस्वरूपमें लीनहोगई तब जो अखण्ड सुख प्राप्त होताहै वह कथनसे बाहर है तब राजा बोला कि हे अवधूत! इससे निश्चय होताहै कि तुम बुद्धिके अधीन नहीं हो इस वचन को सुनकर अवधूत मौन होगये और उसी समय मुकुन्दजी आकर प्राप्तहुये और बोले कि हम उस वस्तुको कहतेहैं कि जिसमें कहना नहीहै वह क्याहै कि मैंही मैं हूं अर्थात् आत्माही है तब राजा ने पूछा कि तुम कौनहो और आत्माका स्वरूप क्या है तब मुकुन्दजी बोले कि मैं वही हूं

कपिलमुनि बोले कि तुममें तो नाम रूप नहीं है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि नाम, रूपमें भेद न जानो कि नाम रूप सबमैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कि तुम जो यह कहतेहो कि मैं अपने आपको कहताहूं दूसरे को नहीं और जो करता हूं सो आप को करताहूं परन्तु मुझ में क्रियाकी गन्ध नहीं है क्योंकि आत्मा अक्रेय और पूर्णहै हे अवधूत ! अब कहिये कि तुम्हारा क्या नाम है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मेरा नाम यही है कि न कपिलमुनि न अवधूत केवल मैंही हूं तब कपिलमुनि मौन होगये और दोहजारवर्ष आत्मा में ऐसे लीनहुये कि जिनको इस बातकी भी सुधि न रही कि वे दो हज़ार वर्ष एकघड़ी के समान बीती हैं या नहीं तब मुकुन्दजी बोले कि प्रथम अवस्था में प्रणव का नाश करतेहैं, प्रणव अर्थात् अकार, उकार, मकार, विश्व, तैजस, प्राज्ञ इन छहों को शास्त्र वेद की प्रक्रियापूर्वक जो पंचीकृत वार्तिक में लिखी है चैतन्यस्वरूप आत्मा में लय अर्थात् उपसंहार करते हैं तब कपिलमुनि बोले कि कहना सुनना प्रणव में नहीं है पीछे लय प्रणवके शब्द उच्चारण नहीं है तब अवधूत बोले कि हे कपिलजी ! तुम्हारे इस कथन से तो आत्मा प्रणव के आधीन हुआ आत्मा जड़ और प्रणव चैतन्य सिद्धहोता है सन्त कैसे कहते हैं कि बुद्धि नहींहै और कहताहूं बुद्धिको शक्ति है कि एक अक्षर आत्मा विषे कहे संतोंका वचन बुद्धिमान् कवि समझसक्ता है क्योंकि बुद्धिमान् बुद्धिके अधीन है और संत बुद्धिसे परे आत्मस्वरूप हैं, संतों का वचन वही जानता है जो आत्मानन्द समुद्र में मग्न है, यदि संतोंका वाक्य परोक्षज्ञानी सुनता है तब परोक्षज्ञान को प्राप्त होकर स्थितप्राज्ञ अर्थात् आत्मनेष्ठी होताहै और यदि भक्त अर्थात् अभेद उपासक संतों का वाक्य सुनता है तब परोक्षज्ञान को प्राप्त होता है तब मुकुन्दजी बोले कि यदि आपलोगोंका वाक्य ऐसाहै तो आपलोगों को क्या सुख मिलताहै तब अवधूतने उत्तरदिया कि मेरा वाक्य

ऐसा है कि जिसमें वाक्य की प्रवृत्ति नहीं है अर्थात् मन, वाणी का अगोचर है और कहताहूं सर्वस्थान में पूर्ण और अक्रिय हूं और सर्वसंसार का कारण अधिष्ठान व सर्व अन्तर्बाह्य इन्द्रियों का भोक्ता भी मैंहीहूं इससे सुखस्वरूप अपने को क्या कहूं कि वह मन और वाणी के भी कहने में नहीं आता इस से यही सिद्धान्त है कि मैंही हूं और मैंही संसारको चित्र विचित्र उत्पन्न करता और अपने में लय करताहूं तब कपिलमुनि बोले कि मैं क्या कहूं कि न तू है न मैं हूं केवल एक अद्वितीय मैंही हूं इस कथन को सुनकर सब बोल उठे कि अब कृपाकरके आत्मसुख वर्णन कीजिये तब कपिलमुनि बोले कि आत्मानन्द अनन्त है कि जो कहने और सुनने से परे है अन्तःकरण इन्द्रिय और पद अपद अर्थात् प्राप्ति अप्राप्ति सर्व मैंही हूं क्योंकि अभेद हूं मैं और शरीर यह भेद मुझमें नहींहै सर्व आपी आपहूं भेद और अभेद मुझमें नहींहै न दुःख व सुख मुझ में है क्योंकि मैं स्वयं सुखरूपहूं जब यह संवाद यहांतक पहुंचा तब पराशरजी मैत्रेयजी से बोले कि हे मैत्रेयजी ! संत जो आनन्द में मग्न थे वे आपस में संवाद करते थे परन्तु तुम कुछ भी नहीं बोलते उचित है कि जब एक बात मैं कहूं तो एकबात तुमभी कहो बिना संभाषणके तुम स्वरूप में किस तरह लीन होगे तब मैत्रेयजी बोले कि शिष्य का प्रश्न एक होताहै गुरु से बराबरी न करना चाहिये यदि गुरु से बराबरी करूं तो क्या लाभ है यह धर्म ब्राह्मण का नहीं है तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय ! सत्संग करो और तुम कहते हो कि जो जो पुरुष आत्मानन्दकी प्राप्तिकी इच्छा करता है वह अभिमानपने से रहित होता और ईश्वर होता है यही सुख है जो त्वंपद अर्थात् जीवत्व को त्याग करके तत् पद ईश्वरसे प्राप्त होता है. और वेदमें भी कहाहै कि त्वंपदके अभिमान से रहित होना यही परमसुख है इसलिये कि मुक्ति का हेतुहै तब मैत्रेय जी बोले कि त्वंपदके अभिमानको त्याग किया अर्थात् आप न

रहा तो क्या सुखहै क्योंकि जो अपनेको ईश्वर करने में ही सुख होता है तब पराशरजी बोले कि इससे परे कौन सुखहै कि पद अपदमें पूर्णहूं जिसको समता प्राप्त हुईहै उसका सुखवाणी के कहनेसे परेहै यह सुनकर मैत्रेयजी बोले कि ब्रह्मसूत्रकहो तब पराशरजी बोले अबतक तुम्हारा अज्ञान निवृत्त नहीं हुआ बिना ब्रह्मसूत्रके क्याहै जो कुछ मैं कहताहूं ब्रह्मसूत्रहीहै भेददृष्टिदूरकर-के और सब कहनेको ब्रह्मसूत्रही जानो तब कपिलमुनि बोले कि मैंहीहूं तब मुकुन्दजी बोले कि मैं नहीं हूं तब कपिलमुनि बोले कि वेदमें लिखाहै कि अद्वितीय ब्रह्म है इससे निश्चित होताहै कि मैंही हूं तब मुकुन्दजी बोले कि तेरी बुद्धि शास्त्र विषे फँसी है, सुखसिद्धान्त पूर्वभाग वेदका वेदवादी को है और पुराणका सुखपुराणवादी को है और तू कहता है कि वेद और सन्त दोनों का कहना एक है इसको कैसे मानें तब कपिलमुनि बोले कि किञ्चित् आत्मस्वरूप को कहो तब मुकुन्दजी बोले कि मैंने सुना था कि तू परमज्ञानीहै पर अब निश्चितहुआ कि तुमको ज्ञानकी गंध नहीं है यदि पूर्णब्रह्म है तब मध्य में तुम कहां हो तब कपिलमुनि बोले कि हे मुकुंद ! तुम सत्य कहतेहो जो मेरे स्वरूप में ज्ञानका ठिकाना कहां है तब अवधूत बोले कि न कपिल न मुकुंद सर्व मैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कियदि मैं नहीं हूं तो तुम कहांहो तब अवधूत बोले कि मैं स्वयंप्रकाशरूप हूं तब कपिलमुनि बोले कि यदि तुम स्वयंप्रकाशितहो तो क्या मैं स्वयंप्रकाशरूप नहीं हूं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि स्वयं प्रकाशरूप एक है अनेक नहीं इससे मैं तू कहां है केवल अद्वितीय मैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कि एक कहनेसे द्वैतसिद्ध होता है तब अवधूत बोले कि जब मैं आपही कहताहूं और आपही सुनताहूं तब द्वैत कहां है तब कपिलमुनि बोले कि कहना और सुनना शरीर के अधीन है तुझ में नहीं तब अवधूत बोले कि इस तुम्हारे सिद्धान्त में आत्मा अज्ञात जड़ हुआ तब कपिल

जी बोले कि आत्मा में ज्ञान और अज्ञान नहीं है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि फिर क्या है तब कपिलजी बोले कि वही मैं हूं तब अवधूत बोले कि त्रिपुटीरूप क्यों होते हो केवल तुम्हीं हो तब कपिलमुनि बोले कि अखंड कहने में खंडको सापेक्ष होती है परंतु खंड और अखंड एकता और अनेकता मत कहो क्योंकि वाणी का विषय नहीं है तब अवधूत बोले कि कहना सुनना तेरेही विषे है तब कपिलमुनि बोले कि मुझमें नहीं है कहना धर्म वाक्इन्द्रियका है औरमैं इन्द्रिय नहीं हूं मैं इन्द्रियों के संगसे रहित हूं तब कहने और सुनने से क्या मिलता है तब अवधूत बोले कि यह सब शरीर के धर्म हैं जब यह सब धर्म शरीरके हैं तो मुर्दा क्यों नहीं बोलता अगर कहो कि मुझसे सब सिद्ध होते हैं कहना और सुनना मैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कि वेद में लिखा है कि आत्मा में कहने और सुनने का स्पर्श नहीं है क्योंकि वाक् और श्रवणइन्द्रिय आत्मा में नहीं है क्योंकि आत्मा शुद्ध है तब अवधूत बोले कि वेद में लिखा है और मैं कहता और सुनताहूं और सर्व कर्म भी करता हूं और मुझ में क्रियाकी कुछभी गन्ध नहींहै पूर्णऔर असंग औरनिष्क्रिय अचल होने से भगवान् गीता में कहते हैं कि मैं वेद होकर कहता और श्रवण होकर सुनता हूं इससे हे कपिल मुने! कहना और सुनना मुझी में है तब कपिलमुनि बोले कि त्रिपुटी सिद्ध करतेहो कहना, सुनना, चित्त मेरे में तीनों नहीं हैं क्योंकि मैं अद्वितीय हूं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि इस तेरे को संत ज्ञानी नहीं मानते हैं तब कपिलजी बोले कि संत ज्ञानी कैसे मानें वे तो आत्म नेष्टी हैं उनको अंगीकार करने से क्या प्रयोजन है कहिये कि अंगीकार क्यों नहीं करते तब अवधूत ने उत्तर दिया कि हे कपिलजी ! अब वेद और शास्त्र का कथन सुनिये वेदका सिद्धान्तहै कि न मैं हूं न तुमहो भेदसे रहित सर्व नहींहूं यह सम्पूर्ण वेदों की आज्ञाहै कि आत्मा में

एक और दो और तीन और वर्णाश्रम व लोक परलोक व जीव और ईश्वर व जगत् का संबंध कुछ भी नहीं है जैसे सुवर्ण में भूषण का व रस्सीमें सर्पका संबंध नहीं है केवल अज्ञानसे इन का संबंध भासित होताहै और जब वास्तवमें निश्चय हुआ तब भय व भ्रान्ति दोनों नाश होजाती हैं और एक अद्वितीय आपी आप निश्चित होजाताहै एक, दो और तीनका कहने· वाला आपीहै इसलिये कि आपी आप है तब कपिलमुनि बोले कि मैं व्यर्थ वाक्यको नहीं मानता जहां एक कहना असंभव है वहां इतनाकहना कैसे उचित समझाजाताहै कि आपका यह कथन व्यर्थ है तब अवधूत बोले कि हे मेरेरूप! यदि तुम्हीं तो कहने और सुननेवाले भी तुम्हीं हो जहां अहंकार है वहां अद्वितीय कहना नहीं बनता और यदि स्वरूपही है तब अद्वितीय में क· हना सुनना नहीं बनता तब कपिलमुनि बोले कि एक अहंकार और दूसरा निरहंकार इन दोनों में तुम कौन हो तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मैं आत्मा हूं और यह सब उसी आत्मा से उत्पन्न हुयेहैं और मैं अहंकार व निरहंकार इनदोनों से परे हूं क्योंकि मुझमें द्वैतकी गंध भी नहीं है तब कपिलमुनि बोले कि सन्त कहने से बंधनमें नहीं आते इसलिये कि स्वतंत्र हैं हेअव· धूत! तुम शरीर हो कि आत्मा दोनों में कौनहो तब अवधूत ने उत्तर दिया कि दोनों से अलग केवल मैंही हूं अज्ञानी कहताहै कि शरीर और आत्माहै नहीं तो यही शरीर आत्मरूपहै इस· लिये कि आत्मा पूर्णहै उसमें विषमता नहीं और जिसको शरीर और आत्मा दोनों भासतेहैं वह अज्ञानी है तब कपिलमुनि बोले कि तुम मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार इनचारों में से कौन हो तब अवधूत ने कहा कि ये चारों मुझीसे प्रकाशित हैं इन में से कोई भी मुझसे भिन्न नहीं मैंही इनका अधिष्ठान हूं तब कपिलजी बोले कि चित्त का अहंकार क्या वस्तु है तब अवधूत बोले कि ये सभीसे सिद्ध होतेहैं नहीं तो कुछ भी नहीं है उस

से सर्व मैंही हूं अब कहिये तुम कौन हो तब कपिलमुनि बोले कि मैं क्या कहूं सर्वत्र तुम्हीं तो हो तब अवधूतने उत्तर दिया कि मैं नहीं हूं इसलिये कि अध्यस्तहैं तब मैत्रेयजी बोले कि हे पराशरजी! अब आप सत्य कहिये कि आप मेरे गुरुहैं अथवा नहीं तब पराशरजी बोले कि मैं गुरु शिष्य कुछभी नहीं केवल मैं ही हूं तब मैत्रेयजीबोले कि आप अपना नाम तो बतलाइये कि पराशर क्यों कहतेहैं तब पराशरजी बोले कि मैंही मैं नाम रक्खा है तब मैत्रेयजी बोले कि नाम शरीर से संबंध रखताहै या आत्मा से संबंधित है तब पराशरजी बोले कि जिस वस्तुको हमने उत्पन्न किया उसका रूप क्या रक्खाजाय फिर अवधूत बोले कि कहिये आप कौनहैं तब कपिलमुनि बोले कि कहूं सर्वत्र तुम्हीं हो तब अवधूत बोले कि जहां मैं और तू नहीं है वह कौनहै तब कपिलमुनि बोले कि वह मैं हूं तब अवधूतने उत्तर दिया कि मेरा कथन उसको अच्छा लगताहै कि जो सिद्धान्ती है तब कपिल मुनि बोले कि तुम कौन हो तब अवधूतने उत्तर दिया कि यदि तुम्हीं हो तो किससे पूछते हो और यदि पूछते हो तो अज्ञानी हो तब कपिलमुनिबोले कि मुझमें बुद्धि नहीं है तुम्हीं से प्रकाशित हूं कहना और मौन होनाये दोनों मुझीसेहैं इतना सुनकर उस समय सब अपने २ रूपमें ऐसे लीनहुये कि सबको अपना २ स्वरूप दर्शित होनेलगा उसीसमय लोमशऋषि भी कि जिन्हों ने असंख्य ब्रह्मा और विष्णु देखेहैं परन्तु योगी थे शरीर उनके न था और शरीर दिखलाई भी पड़ताथा

कहो कि कौन हो तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मैं वही हूं जो तुम हो अब कहिये आप कौनहैं तब लोमशऋषि बोले कि मैं दीप हूं और दीपसेही हुआहूं और दीपसे कुछ भिन्न नहीं है तब अवधूत बोले कि तुझमें मुझमें अन्त की समाई नहीं है तब लोमशऋषि बोलेकि मेरे अहङ्कारसे है मुझको बन्धन नहीं है तब अवधूत बोले कि एक अद्वितीय आत्माहै तब सब मौन होकर अपने स्वरूप में लीन हुये और इसीतरह बहुत समय व्यतीत हुआ हे मैत्रेयजी ! मौन इसवास्ते धारण कीगई थी कि सब परमानन्द को प्राप्त हुये थे फिर आपस में कहने लगे कि हम आत्माहैं तब अवधूत ने उत्तरदिया कि सब नहीं है केवल एक मैंही अद्वितीय हूं तब कपिलमुनि बोले कि यदि तुम एक हो तो हम सर्वभी हैं, संसारका लक्षण इसीसे सिद्ध होताहै क्योंकि जब एक कहाजाताहै तब सर्वभी कहने में आते हैं और यदि एक न कहाजाय तो सर्वभी नहींहै तब अवधूत बोला कि मुझमें एक और अनेक कुछभी नहीं है केवल मैंही हूं तब कपिलमुनि बोले कि तुम कौन पदहो एक वा दो अथवा तीन, यह क्यों कहते हो कि एक दो नहीं है केवल मैंही हूं तब अवधूतबोले कि मुझ में सर्वपद हैं इसीसमयान्तर में सात्त्विकद्वीप से सप्तऋषिभी आपहुंचे कि जिनका आना केवल समागम के निमित्त था क्योंकि आत्मसुख केवल सत्सङ्ग से प्राप्त होता है तब सप्तऋषि बोले कि जो है सो भजन विष्णुका है इससे भक्ति उत्तम है जो मुक्ति की चाहना रक्खे वह भगवान् की भक्ति करे जोकि सर्वत्र व्याप्तहैं तब अवधूत बोले कि श्रीभगवान् की भक्ति से मेरी भक्ति अधिक उत्तम है जो कोई मेरे सन्मुख होताहै वह मेरा रूप होताहै और जो कोई भगवान्की भक्ति करता है वह अपने अहङ्कारकी मलिनतासे स्वच्छ नहीं होता इसलिये कि वह अपनेको दास मानताहै इससे अपने स्वरूप से आपही आप अप्राप्त है और मेरा भक्त निश्चय करके मेरा रूप है तब सप्त-

ऋषि बोले कि यह शरीर तेरा नाशवान्है तू विष्णु से समता कैसे करता है तब अवधूत बोले कि यदि मेरा शरीर नाशवान् है तो विष्णुका शरीरही कब स्थित रह सक्ता है तब रोमशऋषि से पूछो कि उन्हों ने कितने विष्णु देखे हैं इससे जो शरीर पर दृष्टि करै तो किसी का शरीर स्थित नहीं रहसक्ता इसी से मेरी भक्ति उत्तम है इसलिये कि मैं शिवरूप पूर्ण हूं तब सप्तऋषि बोले कि जबतक वैराग्य न होय तबतक ज्ञानकी प्राप्ति कठिनहै तब अवधूत बोले अपने को न जानकर केवल एक विष्णुही को जानना इसी को वैराग्य कहते हैं तब सप्तऋषि बोले कि हमभी नहीं हैं श्रीविष्णुही हैं परन्तु वैराग्यकौन करे तब अवधूत बोले कि जब तक मैं कहा जाता है तब तक सर्व वस्तु युक्त हैं और जब मैं न रहा तब केवल भगवान्ही है तब सप्तऋषि बोले कि हम नहीं हैं कहिये कि हम कौन हैं तब अवधूत बोले कि विचारदृष्टि से देखो कि जब सर्वत्र विष्णु है तो तुमभी विष्णुहो तब सप्तऋषि बोले कि श्रीविष्णु ईश्वर हैं तो हमभी ईश्वर हैं तब अवधूत बोले कि जब तुम्हीं हो तब ईश्वर कहां है तब सप्तऋषि बोले कि एक शरीर है एक आत्मा है यही आत्मा ईश्वर है तब अवधूत बोला कि ईश्वरका रूप वेद खोलकर कहता है परन्तु आत्माका रूप किसी ने नहीं कहा तुम आत्मा को देखकर ईश्वर कहते हो अथवा बिना देखे नाम रखतेहो तब सप्तऋषिबोले कि बुद्धि के विचार से कहाजाता है कि आत्मा ईश्वर सर्वशक्ति है तब अवधूत बोले कि बुद्धि का क्या रूप है तब सप्तऋषि बोले कि बुद्धि के रूप नहीं है केवल कथनमात्र है और यही निश्चयरूप है तब अवधूत बोले कि निश्चय आपसे आप होता है अथवा आत्मासे यदि आत्मसत्ताकर युक्त बुद्धि से होता है ताते बुद्धि जड़ है जब कोई वस्तु तत्त्वसे कुछ नहीं है तब उस वस्तु का विचार किस प्रकार होसक्ता है अब कहिये कि तुम कौन हो ईश्वर हो अथवा और कुछहो.जब बुद्धिही न रही तब ईश्वर कहां रहा

तब सप्तऋषि बोले कि हम सर्व ब्रह्म हैं और ब्रह्मविज्ञानसे कहा जाता है तब अवधूत बोले कि भ्रम दूर करके कहिये कि हमब्रह्म हैं सन्तों के सत्संग का यही फल है तब राजा बोले कि जबमैंही मैं हूं तो व्यर्थ विवाद क्यों करूं तब मुकुंदजी बोले कि हे मेरे रूप! तुम ऐसा मतकहो सर्वस्थान में सर्व मैं हूं कहो कि सर्व मैं ही हूं तब अवधूत बोले कि हे मुकुंदजी! जो मैंही हूं तो मैं कौन हूं तब राजा ने उत्तर दिया कि तुम्हारा रूप यह है कि मैं हूं वह सुख नाक इन्द्रियसे परे है क्योंकि जबतक बुद्धि किसी वस्तुमें भेद न करे तबतक क्या कहे इससे कहिये बुद्धि नहीं रही उस समय चौदह सहस्र सिद्ध आ पहुंचे और आकर बोले कि सिद्ध सर्व स्थानों में पूर्ण हैं तब अवधूत बोले कि हे सिद्धो! सर्व कहां है मैंही हूं तब सिद्ध बोले कि अवधूत नहीं है मैंही हूँ तब अवधूत बोले कि हँसते जाव तब सिद्ध बोले कि हँसना और रोना हममें नहीं है तब अवधूत बोले कि यदि किसी वस्तु को आपसे भिन्न जानते हो तुम सिद्ध नहीं हो वृथा यहां आये हो कहो कि हँसना और रोना हममें है तब सिद्ध बोले कि हे अवधूत! तुम हँसो इसलिये कि हम नहीं हैं तब अवधूत बोले कि न तुम हम हँसतेहैं हंसते हँसते सहस्रवर्ष व्यतीत हुये तब कहा कि रोवो तब सिद्ध बोले कि मूर्खों की नाईं मत हँसो तब अवधूत बोले कि अवधूतों का ज्ञान यही है अब कहिये कि आपका क्या ज्ञानहै तब सिद्ध बोले कि हमारे ज्ञान विषे वाक्की प्राप्ति नहीं है तब अवधूत बोले कि यह अच्छी बात कही इतने में कुमारनामी सिद्ध बोला कि जब मैं योग करताहूं मुझे स्वरूप प्रत्यक्ष दिखाई पड़ताहै और वह ऐसा स्वरूप है कि कथन से बाहर है तब अवधूत बोले कि वाक् विना योग किसने कहा, वहां ध्वनि होतीहै, कोई कहता है कि ज्योतिहै, एक चतुर्भुज का ध्यान करताहै, एक शून्य नाम बतलाता है उस से सब कहने में आतेहैं; योग कहनाही उचितहै परन्तु तुम अभी बालकहो सत्संग

करो जिससे निर्मल हो जावो तब कुमार बोला कि यदि मैं चाहूं तो योगशक्ति के बलसे इस शरीर को त्याग करके दूसरे शरीर में प्रवेश करजाऊं, ज्ञान से प्राप्त होताहै ज्ञान तो केवल कथन-मात्रहै तब अवधूत बोले कि हे मूर्ख ! विद्वानों के सम्मुख ऐसा कहते तुझे लाज नहीं आती ज्ञान ऐसाहै कि इस शरीरकोभी त्याग कर सर्वस्थानोंमें पूर्ण होताहै तब कुमार बोला कि योग शक्ति के बलसे जो चाहूं तो आकाशको चलाजाऊं तब अवधूतने उत्तर दिया कि आकाश में तब जाव जब वह तुम से भिन्न होवे तब कुमार ने उत्तर दिया कि इतने श्वास जो आते जाते हैं उनसे कुछ सुख नहीं पाते परन्तु योगी एक एक श्वास पर अमृत पीते हैं और "सोहमस्मि" जप करतेहैं और उसी में सुखपाते हैं तब अवधूतने कहा कि उस ज्ञानी को बड़ी लज्जा की बातहै जो प्राण और श्वास से अपना सुख चाहे जिस प्राण से योगी सुख विषे प्राप्त होतेहैं ज्ञानी उसको जड़ जानकर अपने स्वरूप से सुख रखतेहैं अपने स्वरूपसे अप्राप्त होना और प्राणसे सुख की आशा चाहना ज्ञान से रहित होताहै और ज्ञानादि पांचों तत्त्व मिथ्या हैं तब एक प्राण किस गिनतीमें है, योगमार्ग चींटियों का और ज्ञानमार्ग विहंग का है यह सुनकर उनमें से ब्रह्मसिद्ध बोला कि हे अवधूत ! योगको दूर करने के लिये कौन समर्थ है योग तो स्वयंसिद्ध है जो कि सबसे मिलाहै ज्ञान योगही को कहते हैं इससे सब योगही है सम्पूर्ण सनकादिक व ब्रह्मादिक जो अपने स्वरूप में लीन होते हैं योगसेही होते हैं यह सुनकर अवधूत मौन होगये तब राजाने उत्तर दिया कि हे ब्रह्मसिद्ध ! यह आपका कथन मिथ्या है योगको ज्ञानसे क्या संबंध है ज्ञान वह है कि जिसमें संयोग वियोग का होना कदापि नहीं है तब ब्रह्मसिद्ध बोले कि हे राजन् ! तुमको स्वरूपकी प्राप्ति नहीं है तब राजा बोला कि मैं योग करताहूं यदि योग स्वयंसिद्ध है तो उसकारूप वर्णन कीजिये तब ब्रह्मसिद्ध बोले कि प्रथम तुम आत्मा का रूप

कहो कि वह कैसा है यदि आत्माकारूप कुछ नहीं है तो योगको क्या पूछते हो जो कि एक अवस्था है और जिसमें द्वैत नहीं है इससे योग स्वयंप्रकाशरूप है तब राजा ने उत्तरदिया कि कोई शास्त्र नहीं कहता कि योग स्वयंसिद्ध है तब सिद्धों ने कहा कि योग स्वप्रकाशरूप और स्वयंसिद्ध है और योगही से स्वरूपकी प्राप्ति होतीहै योग शुद्धस्वरूपहै तब कपिलमुनि बोले कि यदि योग से स्वरूपकी प्राप्ति होतीहै तो योग न हुआ यदि स्वरूपहै तब योग से क्या प्रयोजन तब कुमार बोला कि हे कपिलजी! योगही से सब योग होता है तब कपिलमुनि बोले कि योगका कर्त्ता कौन है तब कुमार बोले कि योग का कर्त्ता योगही है यह सुनकर कपिलमुनि मौनहोगये तब मुकुंदजी बोले कि आत्मा की प्राप्ति के अनेक मार्ग हैं किसी को ज्ञानसे और किसी को अहंकार के परित्याग से और किसीको कर्मके त्यागने से और किसी को भक्ति वैराग्य और योग करने से प्राप्त होता है उसकी प्राप्ति के यही सब साधनहैं हम योग नहीं करते ज्ञान साधन करते हैं तब कुमार हँसकर बोले कि ज्ञान क्या वस्तुहै कहना अथवा निश्चय करना तब मुकुंदजी बोले ज्ञान निश्चयकरनेको कहतेहैं तब कुमार बोला कि निश्चय योगहै इसलिये कि निश्चय तब होता है कि जब श्रोता स्वरूप होताहै यह भी योगहै इससे योग स्वयंप्रकाश रूपहै यह सुनकर मुकुंद मौन होगये और लोमशऋषि बोले कि हे सिद्धो! योग मुझसे होताहै जिस समय मैं इच्छा करताहूं उसी समय योग होता है परंतु योग और वियोग मुझमें दोनो में से कुछ नहीं है तब कुमार बोले कि योग से सब अंग शरीर के दिखलाई देते हैं परन्तु स्वरूपसे अप्राप्त होता है तब कुमार बोला कि जहां योग है वहां रूप नहीं है इससे योग अरूप और स्वप्रकाशरूप है तब लोमशऋषि मौन होगये तब सप्तर्षियों ने उत्तर दिया कि पूर्णयोग जानना श्रीविष्णुका है जब श्रीविष्णुको जाना तब मुक्त हुआ तब कुमार बोला कि तुम भक्तिकी पालना

करतेहो परंतु भक्त वह है जो स्वामी के साथ प्रेम करे और प्रेम करै तवहीं योगहुआ यह सुनकर सप्तर्षि मौन होगये तब राजा बोला कि त्वंपदके अहंकार तक योगहै ततूपद में योग नहीं है ईश्वर स्वयंप्रकाशरूप है तत्पद योग काहे को करै तब कुमार बोला कि ईश्वर का धर्म क्या है तब राजा ने उत्तर दिया कि ईश्वर का धर्म यह है कि सब मुझसे उत्पन्न हुये और मैंही हूं इन सबकी पालना करताहूं और अंतमें यह सब मुझी में लीन होजायँगे तब कुमार बोला कि तब योग सिद्ध हुआ इसलिये कि कहते हो मुझसे हुआहै और होता है तब राजा बोला कि असिपद अर्थात् लक्ष्य में योग कहां है तब कुमार बोला कि जो कोई ब्रह्माहमस्मि कहताहै जबतक ब्रह्म में लय न होजाय क्या सुखहै यह सुनकर राजा मौन होगया और सर्व अपने में देखने लगे तब अवधूत बोले कि यदि ब्रह्मही है तब सिवाय उसके क्या है जिसमें मिलै यह कहकर कुमार मौन होगया तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तुमको लाज नहीं आती कि सन्तोंकी सभा में बोलतेहो अब यदि और कुछ संशय हो तो वह भी कहिये तब कुमार बोले कि हे अवधूत! मैं तुमसे क्या कहूं तुमतो मेराही रूपहो इसलिये जो कुछ तुम कहते हो वह मेराही कथन है तब अवधूत बोले कि तुम और दोनों वरन केवल मैंही हूं तब कुमार मौनहुये और सिद्धोंने उत्तरदिया कि ऐसा न कहो तब अवधूत बोले कि मुझमें कहना और मौन होना दोनों नहीं हैं और जितना कहनाहै सब मुझी में है तब सिद्धोंने कहा कि तुम कौनहो तब अवधूत बोले कि मैं वह हूं जो तूहै तब सिद्धोंने उत्तर दिया कि हम इतनी शक्ति रखतेहैं कि सम्पूर्ण ब्रह्मांडमें पूर्णहैं तब अवधूतने कहा कि मुझमें पूर्ण और अपूर्ण दोनों नहीं हैं तब सिद्ध मौन होगये सिद्धोंकी यह दशा देखकर अवधूत बोले कि मौन न होवो यह सब तुम्हारीही लीलाहै तब कपिलमुनि बोले कि मुझमें बोलना और मौन होना दोनों नहीं हैं तब अवधूत बोले कि

तुम्हारे विषेत्रिपुटी सिद्ध हुई और ब्रह्म विषे एक भी कहना नहीं बनता तब कपिलमुनि मौन होगये और अवधूत बोले कि परमार्थ तत्वका स्वरूपहूं और यह सब सुख ज्ञान से प्राप्त होता है तब-लोमश ऋषि बोले कि तुमको ज्ञानसे सुख है और हम को अपने आनन्द से आनन्द और अपने प्रकाश से प्रकाश है तब अवधूत बोला कि मैं ज्ञान और प्रकाश से रहित हूं औरमैं ही हूं तब राजा बोला कि तुमको ऐसा कहने में लाज नहीं आती तब अवधूत बोले कि जब द्वैत नहीं है तो लाज किससे करूं तब राजा बोला कि तुम्हारा स्वरूप क्याहै तब अवधूत बोले कि रूप और अरूप मुझमें दो मेंसे कुछ भी नहीं है इस से यही कहो सर्व अवधूत है तब सबने कहा कि एक अवधूत है इस वचन से एक सिद्ध हुआ तब मैत्रेयजी बोले कि हेभगवन्, पराशरजी! उनसंतों की सभामें कोई और भी था या नहीं तब पराशरजी बोले कि यदि तुम को एक के कहने से निश्चय नहीं हुआ तब अनेक के कहने से क्या प्रयोजन है इतना उपदेश मेरा व्यर्थ हुआ परन्तु तुमको ज्ञान प्राप्त न हुआ तब मैत्रेयजी बोले कि मुझको निश्चय नहीं है मेरा स्वरूप सिद्ध करके कहिये कि मैं कैसे निश्चय करूं तब पराशरजी बोले कि भय न करो यदि तुम्हीं हो तब निश्चय भी तुम्हारा रूप है तब मैत्रेयजी बोले कि मैं निश्चय किस तरह करूं मुझ में गुरू शिष्य और रूप अरूप कुछ भी नहीं है तब पराशरजी बोले कि तुम यही निश्चय करो कि मैं अरूपहूं तब मैत्रेयजी बोले कि यह बुद्धिका विकार है अब वह कहिये कि जिसमें विकार न हो तब पराशरजी बोले कि यही कहो कि मैं हूं तब मैत्रेयजी बोले कि यदि मैंही हूं तो कहने से क्या लाभ है और यदि न कहो तो क्या हानि होगी तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! जब तुमने अपनेको ब्रह्मजाना तबही परम सुख प्राप्त होगा यही निश्चय करो कि रूप और अरूप मुझ में कुछ भी नहीं है तब मैत्रेयजी बोले

कि अब मैं क्या करूं तब पराशरजी बोले कि अपने से अतिरिक्त मतदेखो तब मैत्रेयजी बोले कि इससे क्या सिद्ध होगा तब पराशरजी बोले कि तुम निगुरों की नाईं वार्तालाप न करो तब मैत्रेयजी बोले कि गुरु और शिष्य मेरी दृष्टि में नहीं है केवल मैंहीहूं तब पराशरजी बोले कि यदि शरीर तुम्हारा नाश को भी प्राप्त होजावे परन्तु इस निश्चय का परित्याग कदापि न करना तब मैत्रेयजी बोले कि जब मैंही हूं तब दूसरा कौन है जो मुझको दुःख देवे तब पराशरजी बोले कि धन्य है तुमको तुम यही निश्चय करो क्यों कि इसका सुख वाणी से परे है तब मैत्रेयजी बोले कि वह शिष्य नहीं है कि जो गुरुके उपदेश से अपने शरीर का अभिमान न त्यागे शिष्य वही है जो कि गुरुके उपदेश से द्वैत को मलिनता त्याग करे और जो उपदेश गुरुके मुख से श्रवण करै उसको अमृत की नाईं पान करे तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी! यही कहिये कि सर्वरूप मेरा है तब मैत्रेयजी बोले कि यदि मैंही हूं तब मुझमें यह वाक्य योग्य नहीं तब पराशरजी बोले कि ऐसा मतकहो जिस वस्तु से तुमको यह सुख प्राप्त हुआ है उसको न त्यागो तब मैत्रेयजी बोले त्याग तवकरूं जब मुझ से कुछ भिन्न होवे अब मसनून कहिये कि उस सभा में इतने संत इकट्ठे थे उन्होंने क्या कहा तब पराशरजी बोले कि उनके वाक्य सुनने से तुम को क्या लाभ है कि अपने को न जानना कि मैं कौन हूं तब मैत्रेयजी बोले तुम्हारे इस प्रकार कहने से बड़ा आश्चर्य होता है यदि मुझसे भिन्न कोई होते तो जानूं और जब मैंही हूं और कोई द्वितीय नहीं तब मैं क्या जानूं तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेय! भय न करो यदि आप और द्वितीय तुम से नहीं है परन्तु तुम से प्रकाशमान है तब अनहद सुनों तब मैत्रेयजी बोले कि मुझमें कहना और सुनना नहीं है परन्तु आप कहिये मैं सुनता हूं तब पराशरजी बोले कि ऐसा मत कहो वरन कहो कि मैंही

विषेहै तब सिद्धों ने कहा कि यह सम्पूर्ण जो कुछ कहने और सुनने में जाताहै योग्य है तब कपिल जी बोले कि योग और भोग दोनों मुझमें नहीं हैं तब सिद्धों ने कहा कि ज्ञान भी नहीं है ज्ञान को उत्तम और योगको निकृष्ट मानना इसीको अज्ञान कहते हैं तब लोमशऋषि बोले कि अबतक कपिल का अज्ञान निवृत्त नहीं हुआ क्यों कि वह कहता है कि ज्ञानको भला जानना अज्ञान है तब कपिलजी बोले कि मुझमें तो ग्रहण और त्याग दोनों नहीं हैं तब दोनों मौन होगये तब राजा बोला कि यदि कोई स्वरूप के प्राप्ति की इच्छा करे तो किस प्रकार प्राप्त होता है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि नित्य को अनित्य से विचार करके भिन्न करे तब राजा बोला कि नित्य और अनित्य किसको कहते हैं तब अवधूत ने कहा कि नित्य आत्मा है और अनित्यशरीराभिमान है अज्ञानी शरीर के अभिमान में फँसे रहते हैं और ज्ञानी आत्मानन्द में मग्न हैं और मुझमें इन दोनों में से एक भी नहीं है तब राजा बोला कि तू कौन है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि अब तक तुम मुझे नहीं जानते तब राजा बोला कि जानना मुझमें अज्ञान है इसलिये कि बुद्धि नहीं है आदि विचार के बुद्धिनाश होती है इसलिये जहां बुद्धि नहीं है वही मेरा स्वरूप है हे अवधूत! कहो तुम्हारे विषे क्या है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि मुझ में एक और अनेक नहीं है तब राजा बोला कि जिसमें एक और अनेक और तुम नहीं हो वह रूप मेरा है इससे क्या कहूं हे अवधूत! जो सब पदों का त्याग करता है उस पद को अवशंख कहते हैं अब कहिये अवशंख पदका किस प्रकार त्याग होवे तब अवधूत बोले कि हे राजन! विचार करो कि अवशंख कहांहै तब राजा बोला कि जिसमें दोनों नहीं सो अवशंख है तब अवधूत बोले कि अवशंख पद मुझमें नहीं है तब राजा बोले कि वह क्या वस्तु है कि जिससे दोनों सिद्ध होते हैं तब अवधूत ने उत्तर दिया कि वह मैं हूं तब राजा

बोला कि तुम्हीं अवशंख हो तब कपिल मुनि बोले कि यही अहंकार है और अहंकार का अन्तनाश है तब राजा बोला कि हे अंधे! तुझको अबतक बुद्धि नहीं है अहंकार का नाश अवशंखसे होता है तब कपिल मुनि बोले कि जो कुछ कहने में आता है वही अवशंख है तब राजाने पूछा कि मौन क्या वस्तु है तब कपिलमुनि बोले कि आनंद निरंजन का है उसमें अवशंख कहां है तब राजाने उत्तर दिया कि हे कपिल मुनि! तुमने माता को कैसे उपदेश किया है, जानाजाता है कि तुम्हारी बुद्धि अज्ञात है इसी कारण से तुमने उपदेश नहीं किया, अवशंख पद उसको कहते हैं कि जिसमें बोलना और मौन होना दोनों में से कुछभी न होवे तब कपिलमुनि मौनहोगये कुछ उत्तर न देसके उससमय लोमशऋषिआकर बोले कि अवशंख आसिपद अध्यस्त है तब राजाने उत्तर दिया कि आसिपद अवशंख से है क्योंकि जो असिपद कहता है वही अवशंख है तब कपिलमुनि बोले कि अवशंखका क्या अर्थ है तब राजा ने उत्तर दिया कि अवशंख उसे कहते हैं कि जिससे सम्पूर्ण पद प्रकट होवें और वह स्वयंसिद्ध एकरस रहे तब कपिलमुनि बोले कि मैं सर्वपदों से अतीत हूं इससे मुझमें अवशंख नहीं रहा तब राजा ने उत्तर दिया कि जो सर्वपदों से अतीव है वही अवशंख है तब अवधूत बोले कि जहां मैं हूं वहां अवशंख नहीं है तब राजा बोला कि इसीसे तुमको अवशंख कहते हैं तब अवधूत मौन होगये और लोमशऋषि बोले कि जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति और तुरीया अवशंख है मैं तुरीया से अतीतहूं मुझमें अवशंख कहां है तब राजा बोला कि अवशंख उसीको कहते हैं कि जिसके उपरान्त और कोई पद न होवे इस लिये जो तुरीया से अतीत है वही अवशंख है तब सप्तर्षि बोले कि जिसमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश नहीं हैं वह अवशंख कहां है तब राजाने उत्तर दिया कि उसीको अवशंख कहते हैं तब सप्तर्षि बोले कि भक्ति में अवशंख कहां है तब राजा बोला कि विना

अवशंख के भाक्ति कहां है तब सिद्धोंने पूछा कि अवशंख काहे से होता है तब राजाने उत्तर दिया कि यदि अवशंख न हो तो कौन करे तब सिद्धों ने कहा कि जब योग उठा तब अवशंख कहां रहा तब राजा बोला कि योग का उठना अवशंख की प्राप्ति से है इसी समयान्तर में मीमांसा भी आकर प्राप्त हुये और बोले कि जहां कर्म है वहां अवशंख कहां है तब राजा बोला कि कर्म ही से अवशंख होता है तब मीमांसा मौन होगये और वैशेषिक आकर उपस्थित हुये व बोले कि अवशंख काल से हुआ है तब राजा बोले कि अवशंख काल से भी कुछ बड़ा है तब वैशेषिक बोले कि काल है तब राजा बोला कि काल अवशंखहुआ भय न करो और निश्चय करो कि काल अवशंख है तब वैशेषिक मौन होगया कि न्यायने आकर उत्तर दिया कि क्रियायें सब कर्त्ताके आधीन हैं कर्म में अवशंख कहां से आया तब राजा बोला कि कर्त्ताका अर्थ कहिये तब न्याय बोला कि जो सर्व कर्म करता है उसको कर्त्ता कहते हैं तब राजा बोला कि तो अवतो अवशंख सिद्ध हुआ क्योंकि अवशंख ही से सब वस्तु होती हैं तब न्याय बोला कि तुमने व्यर्थ वचन कहा तुमको दंड देना उचित है तब राजा बोला कि अवशंख के विना कौन दंड देसक्ता है अवशंख स्वयंप्रकाशित होकर और सब के ऊपर अपना प्रकाश करताहै तब न्यायने उत्तर दिया कि तुम ईश्वर हो इस अवशंख को उठाओ तब राजा बोला कि यद्यपि ईश्वर है तो किससे उठे तब न्याय बोला कि जबतक अवशंख का त्याग नहीं होता तब तक सुख स्वरूप की प्राप्ति अति कठिन है तब राजा बोला कि जब मैंही मैंहूं तब सुख से क्या प्रयोजन है तब न्याय बोला कि अवशंख से परेहो तब राजा बोला कि जो अवशंखसे परे है वही अवशंख है तब न्याय मौन होगया तब पातंजलि आकर प्राप्त हुये फिर बोले कि हे राजन्! तुम कौन हो तब राजा बोला कि मैं अवशंख हूं तबतक याज्ञवल्क्यजी भी आपहुंचे और बोले कि

पिंड अर्थात् शरीर में अवशंख कहां है तब राजा बोला कि जो वाह्य इन्द्रियों के द्वारा लीला देखताहै और भीतर की इन्द्रियों से युक्त होकर सोहंसोहं की ध्वनि का शब्द करता है वह अवशंख है तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि तुम ने योग नहीं किया तुम को सुख किसप्रकार से प्राप्तहोवे तब राजा बोला कि योग मुझ से होताहै तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि जबतक सर्व अंगों को न देखे सुख कदापि नहीं मिलता तब राजा बोला कि जो देखता है सुखपाता है वही अवशंख है यदि शरीर इस मार्ग में मिथ्या है तब उसके अंगों के देखने से क्या लाभ है पांचोंतत्त्व हमारे मत में मिथ्या हैं तब उसकेदेह इन्द्रियों से क्या लाभ होगा योगशक्ति से दशवें द्वारपर पहुँचता है परन्तु जो वस्तु मूलसे निर्बल है उसकी शाखा कहां तक बली होगी जबतक शरीरको अपने से भिन्न न जाने कदापि सुखकी प्राप्ति नहीं होती तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि जो कोई ईश्वरके दर्शन करना चाहे तो योग करे तब राजा बोला कि यदि मैं हूं तब योग से क्या प्रयोजन है तब याज्ञवल्क्यजी बोले कि जब तुम्हीं हो तो ज्ञान क्यों करते हो तब राजा बोला कि ज्ञान स्वयंप्रकाश रूप है अर्थात् अपने प्रकाशसेप्रकाशितहै औरयोगमें किञ्चित् भोजन किञ्चित् वार्ता किञ्चित् चलना किञ्चित् निद्रा यह साधन चाहिये इससे जिस वस्तु के आदि में दुःख होवे उसके अन्त में क्या सुख होगा और ज्ञानमें भोजन व निद्रा, वार्ता व चलना ये सब आपसे आप हैं और जिस योगीमें ज्ञान और योग दोनों नहीं हैं वही अवशंख है तब याज्ञवल्क्य मौनहोगये तब सांख्य बोले कि जबतक नित्यानित्य का विचार न करे तबतक आत्म सुख कभी प्राप्त न होगा तब राजा बोला कि जिसमें नित्यानित्य की प्राप्ति है उसी को अवशंख कहते हैं यह सुनकर सांख्य मौन होगये तब व्यासजी आकर बोले कि जब मैं ही हूं तब नित्यानित्य से क्या प्रयोजन है भसंख्य व अवशंख कहां है क्योंकि मेरे विना यह नहीं है तब

राजा बोला कि जहां व्यास और राजा नहीं है वहां मैं हूं और मैं उसी को नमस्कारकरता हूं तब व्यासजी बोले कि जहां राजा और अवशंख नहीं है वहीं मैं हूं तब राजा बोला कि इस से जिसमें तीनों स्थित हैं वही अवशंख है तब व्यास जी बोले कि जो वस्तु नाशहुई वही अवशंख है इस से मुझ में अवशंख नहीं है तब राजा बोला कि इसीसे तुम अवशंख हुये तब व्यास जी मौनहोगये और सम्पूर्णसन्त आश्चर्यित हुये और सबने यह जाना कि व्यास ऐसे ज्ञानीसे भी अवशंख न उठसका तब अवधूत बोले कि जो वस्तु कहने में आती है उसी को अवशंख कहते हैं और जहां बुद्धि नहीं है वह रूप मेरा है तब राजा बोला कि वही अवशंख है तब अवधूत मौन होगये और पराशरजी बोले कि मैत्रेयजी मैं भी वहां गया और देखा कि सर्वरूप मेराही है क्यों सन्त लोग अपना पराया यह द्वैत नहीं रखते तब मैंने कहा कि हे राजन्! जो तू कहता है वह सत्य है परन्तु जिससे यह अवशंख स्थित हुआ है उसे देख तब राजा बोला कि उसीको अवशंख कहते हैं हे मैत्रेयजी! मैं क्या कहूं वह अपने स्वरूप में स्थित रहता था इसीसे किसी की शक्ति न थी कि उसको उठासके तब राजा बोला कि हे सन्तो! सब शास्त्रों में अवशंखको श्रेष्ठ माना है तब अवधूत बोले कि यदि शास्त्र स्वयं सिद्ध होवे तो अवशंख वहां स्थित होगा परन्तु मुझ में कुछ नहीं है मैं अवशंखको कहां रक्खूं इस वचनको सुनकर राजा मौनहोगया और हे मैत्रेयजी! थोड़ेही काल में राजा सत्संग करके अपने स्वरूप में लीन होगया और मैंने तुमको अनेक प्रकार के उपदेश किये परन्तु मुझ में कुछ भी प्रवेश न किया हे प्यारे! इस समयको दुर्लभ जानो और अपने तत्त्वको सोचो कि तुम्हारा मूल क्या है कि जिसके बिना सब तुच्छ है॥ इति॥

राजा निदाघ का इतिहास प्रारम्भ॥

निदाघ नाम एक राजाथा उसने किसी समय में ऋषभ देव के आश्रम में आकर प्रश्न किया कि हे भगवन्! मुझको इस संसार समुद्र से पार कीजिये तब ऋषभ जी बोले कि हे राजन्! मेरी दृष्टि में संसार रूपी समुद्रमें जल नहीं है जो नौका बनाकर तुमको पार उतार दूं तब पराशर जी बोले कि हे मैत्रेयजी! जिसतरह हमने इतने समय तक तुमको उपदेश किया उसीप्रकार ऋषभदेवजी भी अपने शिष्य राजा निदाघ को दशसहस्र वर्ष तक उपदेश करते रहे परन्तु उसको कुछ भी ज्ञान न हुआ कि मुझमें बुद्धिहै परन्तु वास्तव में नहीं है जबतक विचार न करे कि मैं क्या करूं, जैसा वशिष्ठजीने रामचन्द्रजी को उपदेश किया है कि जिस किसी का शरीर कीचड़ में फंसजावे तो हाथों के सहारे से निकल सक्ता है परन्तु जिसका चित्त इच्छा में फँसा हो वह किस तरह निकले इससे उचित है कि अपना विचार आपही करे, फिर कुछ दिन के पीछे निदाघ ने पूछा कि हे गुरो! मैंने स्वप्न में देखा है कि मेरा शरीर नाश होगया और यम किंकर मुझको धर्म्मराज के पास लेगया तब धर्म्मराज ने मुझ से पूछा कि तुम शुभ और अशुभ कर्म अपना वर्णन करो और यह भी बतलाओ कि तुम कौन हो तब निदाघ ने उत्तर दिया कि मैं अपने को नहीं जानता हूं तब धर्मराज बोले कि जब तुम अपने कोही नहीं जानते हो तो तुमको दण्ड देना उचित है लेकिन आपका उपदेश मेरे हृदय में था इससे उस समय मेरे मुख से यह निकला कि मैं चैतन्य हूं शरीर नहीं हूं तब धर्मराज मौन होगये जब मैंने स्वप्न से आंख खोलकर देखा तो मुझको धर्मराज और यम किंकर कोई भी दिखाई न पड़े केवल वही संकल्प जो कि स्वप्न में देखा था बाक़ी रहगया तब ऋषभदेव जी बोले कि हे राजन्! ऐसाही है जैसा कि यह सं-

कल्प तुमको स्वप्नावस्था में दिखाई पड़ा और जब निद्रा छूटी तब भ्रमजाना तैसेही जब अज्ञान की निद्रा से जागेगा तब जानेगा कि यह जाग्रत् अवस्था जो नामरूप करके निश्चय होरहा है केवल भ्रम है मैं नहीं हूं तब निदाघ ने उत्तर दिया कि हे ऋषभदेवजी ! योगियों का मत लाये हो जैसे योगी लोग नींदसे जागते रहते हैं तब ऋषभ देवजी बोले कि वड़ा आश्चर्य तुम्हारी वुद्धि पर है कि मैं कुछ कहता हूं और तुम कुछ समझते हो हे मूर्ख ! योगपद अभिमान मात्र है मैंने तो यह कहा कि तुम अज्ञान द्वैत की निद्रा से जागो यह नहीं कहा कि रात्रि भर जागरण करो वड़े आश्चर्य की वात है कि वेदशास्त्र ने जो कहा है उसको सांसारिक लोग और प्रकार से समझते हैं इससे अहङ्कार से किसप्रकार छूटैं हे राजन्! तुम ज्ञानआत्मा का खांड़ा निश्चय हाथ में लेकर अहं मम का वन्धन अपने गले से जीवका वन्धन काटो जो कि जिससे काल से निर्भय होजाव नहीं तो धोखा दुःख होगा और आत्म वोध का द्वारा तब प्राप्त होगा जब वैराग्य की कुञ्जी हाथ में आवेगी तब राजा ने पूछा कि वैराग्य क्या चीज़ है जब कि आत्मा से अतिरिक्त कुछ नहीं है और न भिन्न होगा हे गुरो ! जो पुरुष ज्ञानरूपी नेत्र खोले रहते हैं उनकी पहिचान किसप्रकार से है तब ऋषभदेव जी बोले कि जबतक तुम्हारी मनरूपी चक्षु न खुलेगी इन आँखों से कदापि दिखाई न देगा जिसपुरुष का देहाभिमान दूर हुआ और नाम रूप का भी त्याग हुआ है उसको घर और वन एक समान है यदि प्रारब्ध से रेशम की शय्या प्राप्त होवे तो कुछ आनन्द नहीं है न कांटोंपर सोने से कुछ क्लेशही होताहै इसलिये वे पुरुष अपने से भिन्न नहीं देखते हैं और जबतक शरीराभिमान है कदापि सुखकी प्राप्ति न होगी तब निदाघ ने उत्तर दिया कि अहङ्कार का त्याग यही होगा कि मैं अतीत हूं तब ऋषभदेवजी बोले कि अतीत होने से अहङ्कार का नाश नहीं होता इसे स्थूल

कहतेहैं प्रयोजन तो सूक्ष्म के त्यागने से है इसलिये आवागमन का कारण सूक्ष्म अहङ्कारही है इससे सूक्ष्म का त्याग करो तव राजा बोला कि मैं नहीं जानता कि स्थूल और सूक्ष्म क्या वस्तु है दया करके मुझको इसका भेद समझाइये तब ऋषभदेवजी बोले कि गृहस्थाश्रम को त्याग करके फिर अतीत होना यही स्थूलका त्यागहै परन्तु अतीत होने पर भीइस बात की चिन्ता करता है कि अब मैं क्या करूं और कहां जाऊं और किसका स्मरणकरूं और जब क्षुधा लगेगी तब किससे मांगूंगा हे निदाघ! स्थूल का त्याग तो बहुत सुगम है परन्तु सूक्ष्म का त्यागना अति दुष्कर है इसी सूक्ष्म के त्यागने के लिये कितनेही जप करते और कितनेही गुफा में बैठतेहैं और कितने ही योगाभ्यास करते हैं परन्तु उसके नाशके यत्न की प्राप्ति नहीं होती इसलिये कि उसके त्यागका मार्ग नहीं जानते जिससमय गुरुके निकट जाकर इस त्याग का प्रश्न किया उस समय गुरुने उपदेश दिया कि तीर्थयात्राकरो कि जिस से इस अहंकार का नाशहोजावै पर हे राजन्! जो पुरुष तीर्थयात्रा को जाता है वह सांसारिक बुद्धिके ग्रहण करने से जाताहै परन्तु उस तीर्थयात्रा में तत्त्व नहीं है विचार से कुटुम्बादि को याद करके भ्रष्ट होजाता है और चंचलता भी आजाती है और उसके मनमें अहंकार की वृद्धिहोती है कि मेरे समान कोई नहीं है इसहेतु कि मैंने तीर्थयात्रा बहुत किया है तब सूक्ष्म की वृद्धिहोती है और स्थूल में बन्ध होकर विवेक बुद्धिक्षीण होजाती है तब मनमें यह भासित होताहै कि यदि मैं कहूं तो अमुक मनुष्य मरजाय और अमुकजी उठे हे राजन्! जिस पुरुष ने इसभ्रमको अपने मनमें स्थित किया वह स्वरूप के ज्ञानसे अप्राप्त रहकर आवागमन के क्लेशको प्राप्तहोताहै हे शिष्य! गोविंद जी का भजन दो प्रकार का है एकसकाम कि मैं भजन करताहूं इस का फल यह विचारता है कि मैं जीवनावस्था में सांसारिक प-

जी मौनहोगये और शोचने लगे कि मनका स्वरूप किसप्रकार है उसी समय अष्टावक्रजी आकर प्राप्तहुये और बोले कि सर्व ब्रह्माण्ड में एक आत्माही व्याप्त है और जब सब जगह एक आत्माही पूरितहै तब मन किस स्थान में टिकसक्ता और वह अपना क्या वश दिखलासक्ता है हे निदाघ! यदि ब्रह्म अद्वितीय है तो उसकी प्राप्ति किसप्रकार से होसक्ती है तब निदाघ मौन होगया फिर ऋषभदेवजी बोले कि हे अष्टावक्र! तुम कौनहो तब अष्टावक्र ने उत्तर दिया कि मैं पूर्णब्रह्महूं तब ऋषभदेवजी बोले कि ब्रह्म एक है अथवा अनेक तब अष्टावक्रजी बोले कि यह कथन तुम्हारा हँसने योग्य है जब केवल ब्रह्मही है तब अनेक किसप्रकार होसक्ता है अब तुम भी कहो कि मैं पूर्णब्रह्महूं तब ऋषभदेवजी बोले कि हे अष्टावक्रजी! जबतक पांचों तत्त्वको अपने वश में न करे तबतक सुखस्वरूपको कदापि नहीं पासक्ता तब अष्टावक्रजी बोले कि ब्रह्मपूर्णको कहते हैं कि उसके विना और कुछ नहो फिर चार और पांच यह कहना व्यर्थहै तब ऋषभ-देवजी बोले कि जब एक वही है तब पांचो तत्त्वका वश करना भी उसीसेहै हे अष्टावक्रजी! अब कहिये कि आप कौनहैं तब अष्टा-वक्र ने उत्तर दिया कि मेरा स्वरूप जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीनों अवस्थाओंसे परे है अब आप अपना स्वरूप वर्णन कीजिये तब ऋषभदेवजी बोले कि मेरा स्वरूप तो तुरीयावस्था है तब अष्टा-वक्रजी बोले कि तुमने अपने को बड़ा जाना है, पूर्णब्रह्म वि तीन और चार कहां है तब ऋषभदेवजी बोले कि हे अष्टावक्र जी! विचार करके देखो कि सुषुप्ति के त्यागने के पीछे तुरीया जो ईश्वर का स्वरूप है उसमें प्राप्ति होती है परन्तु ब्रह्म तुरीया से भी अतीत है इससे चारोंस्थान क्या संख्यामात्र से परे है उसीसमय अनसूया के पुत्र दत्तात्रेय अवधूत भी आपहुँचे और बोले कि मुझको मेरी नमस्कार है मैं देश और काल से रहित हूं तब अष्टावक्रजी बोले कि यह बतलाइये कि देश और काल

किसमें है तब अवधूत अर्थात् दत्तात्रेयजी बोले कि द्वितीय देश और काल से मुझको क्या सम्बन्ध है तब अष्टावक्रजी ने उत्तर दिया कि तुम अद्वितीय तब होसक्ते हो जब देश काल को अपने से अतिरिक्त न जाने तब अवधूत बोले कि तुम कौन हो तब अष्टावक्र ने उत्तर दिया कि मैं पूर्णब्रह्म हूं तब अवधूत ने कहा कि तब तो तुम अद्वितीय न हुये क्योंकि जब पूर्ण है तब अपूर्णभी है इससे तुम्हारा कथन हँसने योग्य है यदि स्वरूप को जाना है तब मौन हो तब अष्टावक्रजी बोले हे मेरे स्वरूप! यदि मैं मौन होजाऊं तब अहंकार है और वचन बोलूं तबभी अहंकारहै इस से इस विषय में क्या करना उचितहै कि जिससे निरहंकार हो जाऊं तब अष्टावक्रजी बोले कि ऋषभदेवजीसे पूछो कि जिन्हों ने अपने शिष्यको इतना भयभीत कियाहै कि वह स्वरूप को नहीं जानसक्ता तब ऋषभदेवजी से प्रार्थनापूर्वक पूछा कि हे ऋषभदेवजी! मैं तुम्हारा शिष्य होताहूं आप कृपापूर्वक मुझको उपदेश कीजिये तब ऋषभदेवजी बोले कि हे अवधूत! तुझमें यही अज्ञानहै कि तू अबतक गुरुकी इच्छा रखता है जब चौबीस गुरु से तुमको कुछ ज्ञान प्राप्त न हुआ तो एक मुझको गुरु करने से क्या लाभ होसक्ताहै तब अवधूत बोले कि गुरु कहां और शिष्य कौन है यह शरीर केवल जड़ है इससे इसको उपदेशकी कुछभी आवश्यकता नहीं है जब आत्मा पूर्ण है तब गुरु शिष्य कहां है यह संबंध केवल कथनमात्र है बड़े आश्चर्य की बात है कि अबभी गुरु शिष्यका भेद तुम्हारे हृदय से निवृत्त नहीं हुआ अर्थात् अबतक तुम्हारी अज्ञानता दूर न हुई यदि मुझसे कहिये तो मैं अवधूत आपही गुरु और आपही शिष्य हूं और कहो तो तुमको शिष्यके समेत भस्म करदूं तब ऋषभदेवजी बोले कि अब मुझको समझ पड़ता है कि जब सूक्ष्म अहंकार का नाश होगा तब आपसे आपही नाश होजावेगा परन्तु तो भी यह बतलाइये कि उसके नाश करनेका क्या यत्नहै तब अवधूतने उत्तरदिया कि

मैं वेद और शास्त्र नहीं पढ़ा हूं अवधूतों की तरह कहताहूं सूक्ष्म अहंकार का नाश तब होता है जब यह जाने कि सर्वशिव है और अन्तर व बाहिर सब स्थानों में उसीका प्रकाश है, सूक्ष्म और स्थूल कहां है जब पूर्ण जाना तब दोनों अहंकार भस्म होगये इससे अधिक यदि तुम जानतेहो तो वह कहो तब ऋषभदेवजी बोले कि जब सर्व शिवही है तो उसको कौन जान सक्ता है तब अवधूत बोले कि इससे अद्वितीय है कि अपनेको आप जानता है द्वैतभेदकी उसमें प्राप्ति नहीं है तब वसिष्ठजी आकर बोले कि कि यदि कोई चाहे कि संसार से मुक्त होवे तो योगकरे और योगके बिना मुक्तिका पाना अति कठिन है जिज्ञासुको उचित है कि पहिले आसन करके प्राणको शुद्धकरे तब अवधूत हँसे अवधूत का हंसना देखकर अष्टावक्रजी बोले कि सत्य कहिये योग कौन करे इसलिये कि जो सत्य और असत्य विषे योग्य नहीं होता योगका कर्त्ता कौन है तब वसिष्ठजी बोले कि मैं वृद्ध हूं और तुम बालकहो इससे मेरी तुम्हारी समता योग्य नहीं तुमने योग नहीं किया इससे तुम्हारा मन शुद्ध नहीं हुआ तब अष्टावक्रजी बोले कि मैं तो सदा योग में स्थित हूं फिर योग कौन करे बिछुड़े हुओं में मिलाप होताहै परन्तु जो आपस में मिले हुये हैं उनका मिलाप किस प्रकार से किया जावे अब यह बतलाइये कि आसन किस तरह से करूं और प्राणको किस प्रकार शुद्ध करूं तब वासिष्ठजी बोले कि बिना योग के योगको पहुंचना कठिन है तब अवधूत बोले कि मैं शिवहूं तुम कहते हो कि आसन करो और मैं कहता हूं कि शयन करो, तुम कहते हो कि प्राणायाम करो और मैं कहता हूं कि प्राणको सुगमता से बाहर निकालो, इससे हे वृद्ध ! स्थूलबुद्धि से रहित ऐसा योग करो कि जो भीतर और बाहर दोनों स्थानों में सर्वत्र वही होवे तुम्हारा योग खंडित है इस लिये कि तुम्हारा कथन है कि मनको बन्धवृत्ति से फेरकर वास्तव स्वरूप में लगाना चाहिये और योग मेरा

अखंड है कि भीतर और बाहर दोनों स्थानों में केवल शिवही है तब वसिष्ठ जी बोले कि जब तक अनहद का शब्द न सुने क्या लाभ है तब अवधूत बोले कि सुषुम्णा नाड़ी मध्य को कहतेहैं और विद्वान् पुरुष सुषुम्णा को सहज अवस्था कहते हैं हे वसिष्ठ जी! जिसको सहज अवस्था प्राप्त हुई उसके लिये सुषुम्णा क्या चीज़ है यदि कहिये कि लंबका अर्थात् जीभको बढ़ा कर योगी लोग अमृतपान करते हैं तो सुनो वह बूंद अमृत क्या है, जब कि योगी प्राणको अपान में करता है तब उसका शरीर भीतर व बाहर से अग्नि के समान होजाता है और यही उष्णता दशवें द्वार में जो रक्त, पीब व मज्जा से भरा हुआ है गर्मी पहुंचाती है तब मज्जा पिघल कर नीचे को आती है उसी को योगी अमृत का बूंद समझ कर पान करते हैं इससे वह अज्ञानी हैं कि जो ऐसे अथाह समुद्र को कि जिसमें भीतर और बाहर दोनों स्थानों में ब्रह्म पूर्ण है उसको त्याग करके एक बूंद लंबका पर निश्चय करे तब वसिष्ठजी बोले कि तूने संसार को भ्रष्ट किया तब अवधूत ने उत्तर दिया कि संसार क्योंकर भ्रष्ट न होवे, जो पुरुष स्वरूप को जाना और नाम रूपसे रहित हुआ वह निश्चय भ्रष्ट है योगी को चाहिये शयन को त्याग करके आसन लेवे और भजन करके सदा यही चिंतवन रक्खे कि प्राण किस मार्ग से आता जाता है परन्तु यह नहीं जानते कि साकार को निराकार में मेल करने को आत्मघात कहते हैं जिस समय पंचतत्त्व के शरीर को सर्प की केचुल के समान त्याग किया हो तो फिर जैसे सर्प को केचुल से कुछ प्रयोजन नहीं रहता उसी प्रकार उसको भी परित्याग करके उस त्यागे हुये शरीर का ग्रहण न करना चाहिये तब वसिष्ठ जी बोले कि चुप रहो तब अवधूत बोले कि मैं स्वयं प्रकाश हूं तब कपिल मुनि बोले कि जो पुरुष ईश्वर के विना और कुछ जानता है वह योग क्या करेगा तब अवधूत बोले कि मौन रहना अच्छा है

तब ऋषभदेवजी ने कहा कि मौन होना सूक्ष्म अहंकार है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि हे ऋषभदेव जी! मुझमें मौनता और वक्तृत्व दोनों में से कुछ भी नहीं है यदि मैंही हूं तब सूक्ष्म और स्थूल कहां है परन्तु मौन अति उत्तम है तब अष्टावक्रजी बोले कि मैं न मौन हूं न वक्ता मुझे जो कुछ दिखाई देता है वह सब मैंही हूं तब वासिष्ठजी ने उत्तर दिया कि रूपमें यही देखना योग्य है तब अष्टावक्रजी बोले कि जिसने देखा और जिसको देखा यह दोनों मेरे रूप हैं इससे द्वैत कहां है कि योग किया जाय तब अवधूत बोले कि अपना स्वरूप कहिये तब अष्टावक्र बोले कि मेरा रूप यही है कि नाम रूप मुझमें नहीं है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि तू मौन होजावे तब अष्टावक्र जी बोले कि मौन होने से क्या प्रयोजन है मैं किसी पद में बन्द नहीं हूं इसका उत्तर तुम्हीं दो तब अवधूत ने कहा कि पहिले तुम हमारे प्रश्न का उत्तर दो इसी वार्तालाप के होते हुये ही नारद मुनि आकर उपस्थित हुये और नारायणनारायण उच्चारण किया कि जिसको सुनकर सब लोग बोल उठे कि मौन हो तब नारदजी बोले कि सन्तलोग इस निमित्त एकत्रित होतेहैं कि परमार्थ का संवाद करें मौन होने से क्या प्रयोजन है तब अवधूत ने उत्तर दिया कि यदि नारायण ही है सब कहने से क्या सिद्ध है तब नारदजी बोले कि नारायण नाम कहने में परमार्थ है तब अवधूत बोले कि नारायण नारायण तुम कहो कि जो नारायण को भूले हुये हो मुझ में तो भूलना और ध्यान करना दो में से कुछ भी नहीं है तब नारदजी बोले कि मैं विष्णुधाम से तुम लोगों के सत्संग के लिये आया हूं और उस स्थान में भी यही वार्ता थी, अर्थात् विष्णुजी लक्ष्मी जी से कहते थे कि मैं संतों के सत्संग के लिये जाता हूं सो श्री विष्णु जी आते हैं तब अवधूत बोले कि मिथ्या न कहो तुम्हारे कथन में लोग हंसते हैं इस लिये कि विष्णु सर्वव्यापी हैं तब

उनमें आना जाना कैसे होसक्ता है मुझको विष्णु की इच्छा नहीं है क्योंकि वह सर्वत्र व्याप्त हैं यह वार्ता हो ही रही थी कि विष्णु जी भी आकर उपस्थित हुये और संतों के समागम को देखकर हंसे और बोले कि हे संतो ! तुम लोग निस्सन्देह जानो और मुखसे बोलो कि जो कुछ चराचर स्थावर जंगमादि देखने सुनने और कथन में आताहै वह सब विष्णुही है और हम लोग भी विष्णु हैं किसी बातकी चिन्ता न करो जिस पुरुषने मुझको इस प्रकार व्यापक जाना वह निस्संशय मेरा रूप है क्योंकि उसमें और मुझ में कुछ अन्तर बाक़ी नहीं रहा तब अव-धूत बोले कि हे नारद ! भगवान् का स्वयं वाक्य है कि सर्व विष्णु ही है और तुम आपको नारद कहते हो, तुमने अपने को अतिरिक्त जाना है आपही जानो कि यदि सर्व विष्णु ही है तब नारद कहां है इस बात चीत के होतेही समय जड़भरतजी भी कि जिनके शिरपर जटा और शरीर में भस्म विराजमान है और जिनके नेत्र अरुण सूर्य के समान प्रकाशितहैं आकर प्राप्त हुये और बोले कि श्रीविष्णु सर्व जड़भरतही है तब श्री विष्णु भगवान् बोले कि न जड़भरत न विष्णु मैंही हूं तब अवधूतने कहा कि हे श्रीविष्णु जी ! एक इतिहास में कहता हूं तुम उसको सुनो परन्तु मैं मौन के समान कहता हूं॥

योगीका इतिहास॥

एक समय में सुमेरु पर्वत पर गया और वहां एक कंदरा जो अस्सी योजन लम्बी थी उसमें पहुँचा तो क्या देखा कि एक योगी बैठा है मैंने उसको नमस्कार करके पूछा कि हे योगिन् ! तुम्हारा स्नान किस वस्तु से होता है तब योगी बोला कि मैं भस्म से स्नान करताहूं तब मैंने पूछा कि यहां भस्म किस वस्तु से बनाई है तब योगी ने उत्तर दिया कि मैंने अहंकारको जलाकर यह भस्म बनाई है जो कि शरीर पर मले हूं तब मैंने पूछा कि आसन किस विधि से करतेहो तब योगीने उत्तर दिया

कि मेरा आसन चर और अचर से है मैं जानता हूं कि ती
लोक मेराही रूप हैं जब इस प्रकार से उसयोगी की मैंने बा
सुनी और उसके रूपको देखा तो अत्यन्त आश्चर्य को प्र
हुआ और उस से पूछा कि प्राण और अपान को आप कि
प्रकार से एक करते हैं तब योगी ने उत्तर दिया कि मैं एक औ
दो नहीं हूं क्योंकि योगी और को भी एक ही जानता है त
मैंने पूछा कि इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा का साधन किस प्र
कार से करते हो तब योगी ने उत्तर दिया कि इड़ा पिंगला ईश्व
और सुषुम्णा ब्रह्म यह तीनों मुझी से प्रकाशित हैं तब मैं
पूछा कि ध्यान के विषे कुछ कहिये तब योगी बोला कि स
मैंही हूं तब मैंने पूछा कि सोहम् का अर्थ कहिये तब योग
बोला कि सोहम् ब्रह्मा से लेकर पिपीलिका पर्यन्त व्याप्तहै ज
श्वास भीतर जाती है शब्द सो और जो बाहर आती है व
शब्द हम् है तात्पर्य यह है कि अन्तर और बाहर मैंही सर्व
व्याप्तहूं तब मैंने पूछा कि नासाग्र क्या है तब योगी बोल
कि अहंकार शरीर से अलग होना इसी को नासाग्र कहते
तब मैंने पूछा त्रिकुटी क्या वस्तु है तब योगी ने उत्तर दिया कि
सत रज तम यही त्रिकुटी है फिर मैंने पूछा कि तुम्हारा शरीर
कितने दिन तक स्थिर रहेगा तब योगी ने कहा कि शरीर कहां
है जो पैरों से गिरै इस लिये कि मैं पांच तत्त्व से परे हूं तब अ
वधूत ने कहा कि हे श्रीविष्णुजी! फिर तीन परिक्रमा करके
उनका चरणप्रक्षालन किया और चरणोदक को पान करके
बोला कि तुम मेरे गुरुहो तब योगी बोला कि ऐसा शिष्य हो कि
गुरु शिष्य का भेद न रहे यह इतिहास मैंने अपने गुरु का कहा
फिर जड़भरत बोले कि इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है कि योगी
अपने स्वरूपको जाने क्योंकि उसकी कामना निवृत्त होगई है
परन्तु मैंने एक कर्म देही को अपना गुरु मानाहै॥

योगी का इतिहास समाप्त॥

कर्मकांडी का इतिहास प्रारंभ ॥

मैं एकसमय द्रोणाचल पर्वतपर गया और वहां एक कन्दरा जो बावन योजन लम्बी और इतनी ही गहिरी थी उसमें पहुंचा और उसमें एक कर्म देही को बैठे देखा उसके निकट जाकर ज्योंही इरादा किया कि योगी मेरी इच्छा को समझकर यका-एक बोल उठा कि मैं विना भोजन योग में स्थितहूं तू मेरेपास त आ तब मैंने पूछा कि हे मेरे रूप ! तुम्हारा स्नान क्या है व योगी ने उत्तर दिया मेरा स्नान अहं और मम से है तब मैंने पूछा कि चौका किस वस्तु से लगातेहो तब योगी बोला के चारो अन्तःकरणको चौका कियाहै फिर मैंने पूछा कि चूल्हा तुम्हारा क्याहै तब योगी बोला कि एक जड़भरत दूसरा कार्त्तिकेय यही दोनों हमारे चूल्हे के ढेले हैं तब मैंने उनसे पूछा कि खि-चड़ी तुम्हारी क्या है तब योगी बोला कि ज्ञान और विज्ञानकी फिर मैंने कहा कि तुम्हारा भोजन क्या है तब योगी ने उत्तर दिया कि विज्ञानको खाताहूं तब मैंने पूछा कि लकड़ी तुम्हारी क्या है तब उसने उत्तर दिया कि मैंने कामना को लकड़ी ब-नाया है यदि तुम भी हमारे समान हो तो मेरे निकट आवो और भोजनकरो तब मैंने उस से पूछा कि जब तुम्हारे आगे भोजन आता है तब प्रथम श्रीभगवान् का भोजन लगाते हो तब योगी ने कहा कि अहंकार का भोग श्रीभगवान् को लगाता हूं और स्वरूपको प्राप्तहूं इस से उत्तम भोग श्री विष्णुजी के लिये नहीं है तब मैंने उनसे पूछा कि तुम्हारा रूप क्या है तब योगी ने उत्तर दिया कि यह संसार जो नाम रूप करके दिखाई देता है यही मेरा रूप है तब मैंने कहा कि तुम मेरे गुरुहो तब योगी बोला कि मैं तुम से परे हूं अर्थात् कारण हूं मुझ में गुरु शिष्य नहीं है मैंने गुरु शिष्यको नाश कियाहै और योगमार्ग में आयाहूं तुम मुझको फिर इस उपाधि में न फँसावो फिर योगी बोला कि तुम कौन हो तब मैंने कहा कि जड़भरतहूं तब योगी

बोला कि यदि तुम्हारा नाम जड़भरत है तो मेरे पास न आना क्योंकि तेरे पास आने से मेरा चौका अपवित्र हो जायेगा क्योंकि जड़ मृतक को कहते हैं और तुम मृतकरूपी नाम अपने साथ रखते हो तुम जबतक इस नाम का त्याग न करोगे तबतक मुझ को कदापि नहीं पहुंचसक्के तब मैं बड़े आश्चर्यको प्राप्त हु और पूछा कि तुम्हारा क्या नाम है तब योगी ने कहा मुझ नामरूप कुछ भी नहीं है हे श्री विष्णु जी! यह एक हमारा था यह वार्ता होही रही थी कि वामदेवभी आपहुंचा और बो कि एक अद्वितीय नारायण का नाम है दूसरा कोई नहीं जि पुरुष ने नारायण से अतिरिक्त निश्चय किया उसका त्याग यो है तब अवधूत बोला कि हे वामदेव! श्री विष्णु जी का रू क्या है जो एक से नाम रूप होता है तब वामदेव जी बोले यही श्री नारायण का रूप है तब अवधूत बोले कि मुझको ए और अनेक की इच्छा नहीं है मैं क्या करूं तब कपिल मु बोले कि हे कपिल! यदि सर्व रूप तुम्हारा है तब एक औ अनेक भी तुम्हीं हो यह वार्ता होही रही थी कि दुर्वासा ऋषि भ जो अहंकार की अग्नि से जल रहे थे आकर पहुंच गये औ बड़े अहंकार से बोले कि सब लोग गोविन्द का भजन करो क्य कि गोविन्द के भजन बिन मुक्ति अति दुस्तर है तब राजा जनक ने आकर उत्तर दिया कि हे दुर्वासा जी! गोविन्द जी का भजन कैसा है कि जिससे निर्मल हो जाऊं तब दुर्वासा जी बोले कि श्री विष्णु श्री विष्णु कहना यही भजन गोविन्द जी का है तब राजा जनक बोले कि द्वैत लेकर वचन न बोलो इस लिये कि जिस स्थान में एक की समाई नहीं है वहां द्वैत किस तरह ग सक्ता है तब दुर्वासा ऋषि बोले कि मैं सबको भस्म करता हूं क्या तुम लोग मुझे नहीं जानते कि मैं रुद्र हूं तब अवधूत बोले कि रुद्र क्रिया को कहते हैं इससे क्रिया करो तब दुर्वासा ऋषि बोले कि हे अवधूत! तूने संसार को भ्रष्ट कर दिया मैं परि

तुझी को भस्म करता हूं तब अवधूत बोले कि यदि मृत्यु का आदि है तब मृत्यु के होने से क्या भय है यदि कहो कि गोविन्द के भजन से ऋद्धि सिद्धि प्राप्त होती है तो हमने इसको स्वप्नवत् जानकर तीनों लोक को ऐसा भस्म किया है कि फिर कभी जन्म न पावेगी अर्थात् इसकी उत्पत्तिही न होगी तब दुर्वासा जी बोले कि न वह योगी था न कार्तिक कि जिसको तुमने अपना गुरु किया है जिस पुरुष ने तुम्हारी आज्ञानुसार वार्ता की वह तुम्हारे अनुकूल हुआ मैं उसको नहीं मानता तुम सब मेरे शिष्य होवो नहीं तो मैं तुम सबको भस्म करता हूं तब श्री विष्णु जी बोले कि सब क्यों भस्म करते हो यह अपराध इस अवधूत का है इसीको भस्म करो तब दुर्वासा बोले कि हे विष्णु जी! यदि यह सब आपके अनुकूल नहीं है तो तुम यहां किस लिये आये हो तुम्हारे यहां उपस्थित होने से निश्चित होता है कि प्रथम इस विषय में तुम्हारी ही इच्छा है इससे मैं सब से पहिले तुम्हीं को भस्म करता हूं हे मूर्खो! कर्म करो भ्रष्ट न हो तब अवधूत बोला कि हे दुर्वासा! मैंने कर्म को भस्म करदिया अब किस तरह करूं तब दुर्वासा बोले कि जब कर्म भस्म हो गया तो तुम कैसे बचे तब अवधूत बोले कि कर्म मुझसे प्रकट हुआ है फिर मुझी में लय होगा मैं एक रस हूं तब दुर्वासा बोले कि तुम अत्रि के पुत्र हो इससे जो मैं कहूं सो करो तब अवधूत बोले कि अत्रि को हमने भस्म किया है अब तुमको भी भस्म करते हैं तब दुर्वासा बोले कि मैं जबतक सब को भस्म न करलूंगा यहां से नहीं जाऊंगा तब अवधूत बोले कि हे दुर्वासा! तुम एक रोम भी भस्म नहीं करसक्के जो पुरुष तुमसे भय माने तुम उसको भस्म करो मैं तुम से कुछ भी नहीं डरता तब दुर्वासा बोले कि तुम हमारे भाई हो मैं जड़ भरत को कहता हूं कि जब जड़को नाश कर दिया तो फिर उस जड़को अपने साथ क्यों रखता है मैं उस समयको नहीं जानता हूं जब सभा में आया था क्योंकि तुम्हारी

भी चाल भ्रष्ट है इसी समय मीमांसा भी आकर प्राप्त हुये और बोले कि विना कर्म के प्रयोजन सिद्ध नहीं होसक्ता तब दुर्वासा जी बोले कि हे मीमांसा! कौन कर्म है तब मीमांसा बोले कि सर्व कर्म है तब अवधूत मौन होगये फिर कपिल जी बोले कि जब नित्य को अनित्य से भिन्न जाना तब शुद्धकर्म तुमसे कैसे सिद्ध होसक्ता है तब मीमांसाने उत्तर दिया कि भिन्न जानना नित्य को अनित्य से कर्म होता है इससे सर्व कर्म ही है यदि तुम जानते हो कि हम कर्म से मुक्त हैं सो कदापि निश्चय नहीं करसके इससे कर्म करो कि जिससे तुम स्वरूप को प्राप्त होवो तब कपिल जी बोले कि कर्म अज्ञान विषै है जब ज्ञान प्राप्त हुआ तो कर्म से क्या प्रयोजन रहा उसको कौन करे तब मीमांसाबोलेकि हे कपिलजी! ज्ञान की प्राप्ति कर्म का नामहै जैसे वृक्ष और वीजमें कुछभी भेद नहीं है वीज से वृक्ष और वृक्षसे वीज होताहै इसीतरह कर्म से सुख प्राप्त होता है और कर्म के सुख से ब्रह्म लोक मिलता है तब कपिल जी बोले कि जिसको ब्रह्मलोक मिलने की इच्छा न हो वह कर्म क्योंकर मैं बुद्धिहीन हूं मुझको कर्मसे कुछ भी प्रयोजन नहीं तब मीमांसा बोले कि तुम्हारा कथन सत्य है परन्तु जबतक योग न करे स्वरूपको कैसे प्राप्तहोगा योग भी कर्म है तब कपिलजी मौन होगये और निदाघ बोला कि कर्म शरीर से होता है अशरीर में कर्म कहांहै तब मीमांसा बोले कि विना शरीर कौनकहे इससे शरीर कर्महै यदि कोई विना शरीर के कर्म करे तो कदापि नहीं होसक्ता तब निदाघ बोला कि जिस पुरुष का शरीर से कुछ प्रयोजन नहीं है उसके कर्म से क्या प्रयोजन है तब मीमांसा बोले कि कर्म से कहते हो कि शरीर हो तब निदाघ बोला कि जिस पुरुष को लोक और परलोक दोनों की आश नहीं है उसको कर्म से क्या संबंध है तबमीमांसा बोले कि नरक और स्वर्ग में कर्म ही प्रधान है यह सुनकर निदाघ मौन होगया तब दुर्वासाजीबोले कि हे संतो! कर्मकरो विन कर्म

के सुखकी प्राप्ति कठिन है जैसे कोई पुरुष कहे कि अमुक फल मेरे मुखमें पड़जावे तो विना कर्म के कैसे प्राप्त होवे ऋषभ देव जी बोले कि कर्म स्वप्रकाश है अथवा पर प्रकाश तव मीमांसा बोले कि स्वप्रकाश है क्योंकि पुरुष जो कर्म करता है वही होता है और जो कामना करता है उसको प्राप्त होती और यदि निष्काम काम करताहै तो स्वरूप की प्राप्ति होतीहै तब ऋषभ देवजी बोले कि यदि इच्छा नाश भई तब कर्म से क्या प्रयोजन तव मीमांसा बोले कि इच्छा शुद्ध कर्म विषे लीन हुई इससे वह भी कर्म है जो मनुष्य कर्म से विना कुछ जानता है वह चांडाल है तव ऋषभ देव जी बोले कि चांडाल क्या आत्मा से भिन्न है चांडाल भी आत्मा रूपही है यदि कर्मों केत्यागसे चांडालहोताहै तो भी चांडाल हों इस लिये कि चांडाल कथन मात्र है वह अक्रेय हुआ तव मीमांसा बोले कि कर्म से विना अक्रेय कैसे होता है तव अवधूत बोले कि हे जड़भरत! इस प्रश्नका उत्तर कहिये तब जड़ भरत जी बोले कि त्वंपद विषे कर्म है तत्पद में कर्म कहां है और असिपद अतीत है क्योंकि तत्पद उत्पत्ति, पालन और संहार में प्रवर्त नहीं है और असिपद अक्रेयरूपहै फिर उसमें कर्म कहां है तव मीमांसा बोले कि पद कर्मसे तत्पद को प्राप्त होता है और तत्पद व असिपद कहने में आता है फिर विना कर्म के असिपद कहां है क्योंकि त्वंपद और तत्पद स्थूल कर्म हैं और असिपद सूक्ष्म कर्म है तव निदाघ बोले कि यदि पूर्ण है तव कर्म से क्या प्रयोजन है तव मीमांसा बोले कि यदि पूर्ण है तव कर्म उससे कैसे भिन्नहै अव हे अवधूत! यह वतलाइये कि कर्म सत्य है अथवा असत्य तव अवधूत बोले कि कर्म सत्य है तव मीमांसा बोले कि तुम महात्मा होकर यह कहते हो कि अवधूत ने सम्पूर्ण संसार को भस्म किया है मैंने तो भ्रष्ट नहीं किया किन्तु इन संतों ने भ्रष्ट किया है तव अवधूत बोले कि इन लोगों ने भिन्न जाना है तव मीमांसा बोले कि विना कर्म

समत्वा को प्राप्त होना अति कठिन है तब पराशर जी बोले कि हे मैत्रेय जी ! मीमांसा का अभिप्राय यह है कि सबलोग कर्म की पालनाकरें क्योंकिस्थूल अहंकार कर्म के आधीनहै जो सूक्ष्म अहंकार से अतीत है वह भी कर्म है इसलिये कि वह कहता है कि मैं कर्म से छूटा यह मिथ्या है तब मैत्रेयजी बोले कि हे भगवन्, हे गुरो ! अक्रेय किसी प्रकार न हुआ इसलिये कि यदि सर्व पद विषे कर्म की पालना करे तो आपी आप धर्मभ्रष्ट होता है आत्मचारी क्या करे क्योंकि परमहंस भी इसके आधीन हुये हैं हे गुरो ! कर्मको उठाइये मैं डरताहूं इसलिये कि योगाभ्यासी अल्पबुद्धि हैं इससे किसप्रकार से करें तब पराशरजी बोले कि हे मैत्रेयजी ! तुमको निश्चय नहीं है कि इतनी वार्ता इसीलिये होती है यदि वाक्यमात्रसे फिरे तो क्या लाभ चाहिये यदि शरीर नाशहोजाय तो भी निश्चय से न फिरे यदि फिरे तो निश्चय नहीं है दम्भहै इसविषयमें एकइतिहास तुमको सुनाता हूं श्रवण करो ॥

राजा भरत के पुत्र का इतिहास प्रारम्भ ॥

कर्मभूमि भरतखण्ड में एक भरत नामी राजा था कि जिसकी स्त्री गर्भवती थी जब दश मास व्यतीत हुये तब उस के पुत्र उत्पन्न होने की आशा हुई परन्तु पुत्र माता के उदर से बाहर नहीं आता था और कष्ट अर्थात् पीड़ा बड़ी थी तब रानी पुत्रसे बोली कि पुत्र सत्य कहो कि तुम अपने बाप के वीर्यसे हो या नहीं तब पुत्र बोला कि हे माता ! जो माता की रज और पिताके वीर्य से उत्पन्न होता है उसका नाम शरीर है इससे जड़ है पत्थर, ढेलाके समान है और मैं चैतन्य हूं मैं आदि मध्य और अन्त में भी एक समान पूर्ण हूं इससे पिताके वीर्यसे किस तरह होसकाहूं तब माता बोली कि मुझसे तो कोई पाप कर्म नहीं हुआ फिर पिताके वीर्य से अपना होना क्यों नहीं मानते हो

तब पुत्र ने उत्तर दिया कि मैं किसी तरह बाप से उत्पन्न नहीं हूं इसलिये कि यह शरीर काष्ठकी पुतली की नाईं है और मेरानाम रूपसे रहित है इससे जो नाम रूप न रखता हो उसको पिता के वीर्य से किस प्रकार कहो कि यह अमुकके वीर्य से उत्पन्नहुआ है और तुम्हारी दृष्टि स्थूल शरीर पर है तो इसको स्वप्न और मृगतृष्णा की भांति निश्चय करो तब माता बोली कि यदि पिताके वीर्यको नहीं मानते हो तो शास्त्र भ्रष्ट करेगा तब पुत्र बोला कि तुम सत्य कहतीहो परन्तु जो कोई नाम रूप से रहित है वह आपही शास्त्रभ्रष्ट है और जो अपने को शरीर मानता है शास्त्र उसको दण्ड देवेगा और जो अशरीर है वह देखने में नहीं आता शास्त्र उसका क्या करेगा तब माता बोली कि हे पुत्र! तुम कौनहो ऋषिहो अथवा देवता या पिशाचहो तबपुत्र ने उत्तर दिया कि इनमें से तुमने जिसका नाम नहीं लिया मैं वह हूं परन्तु प्रकाशक इन सबका जो तुमने गिनाये हैं मैं ही हूं तब माता बोली कि हे पुत्र! यदि तुम ईश्वरहो तो तुमको मेरे उदरमें आनेका क्या काम था तब पुत्र बोला कि हे माता! तुम विचार रूपी नेत्रों से अन्धी हो तुमसे क्या कहूं तुम आपही विचार करो कि आदिसे मैं तुममें न था जो अब आयाहूं मैं व्यापक हूं देव गोविन्द उत्पत्ति व नाश से रहितहूं और सर्व कर्मों से अतीतहूं इस से मेरी नमस्कार मुझी को है क्योंकि मैं पूर्ण ब्रह्म हूं तब माता बोली कि बिना योग के मन शुद्ध नहीं होता इस से पहिले योग करो कि जिससे मन शुद्ध होवे तब पुत्र बोला कि मैं अद्वितीय पदोंका साक्षी हूं और सर्वदा सम रूपहूं इसी संशय ने तुमको पीड़ित किया है कि अपना स्वरूप जानने के लिये योग व समाधि कहती हो जो अद्वैत अखण्ड न होवे वह बंधन में है यदि कहो कि सत् चित् आनन्द अक्षय विषे कुछ करना तो तुच्छ और मिथ्या है मेरा रूप शुद्ध स्वयंप्रकाशवान् है मुझको योग से क्या प्रयोजन है और योग, मेल होना किसी वस्तु के

साथ को कहते हैं जब मुझ में कोई दूसरा नहीं है आपही आप हूं तब मेल क्या वस्तु है और किसके साथ करूं तब माता बोली कि बिना कर्म के सुख नहीं मिलता तब पुत्र बोला कि जिस वस्तु का आदि दुःख है उसमें क्या सुख होगा और मेरा रूप वह है कि जिसमें सुख और दुःख दो में से एक भी नहीं है तब माता मौन होगई और पुत्र बोला कि मौन न होओ जो कुछ तुम को समझ में आवे वह कहो और सुनो जो तुम पूछती हो कि कौन हो सो सुनो—मैं अद्वितीय हूं यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड मुझी से प्रकाशित है परन्तु मैं सर्वदा इससे अतीत हूं तब माता बोली कि तेरे समान कोई माताके उदर में कभी नहीं बोला बाहर निकल तब पुत्र बोला कि मुझमें भीतर बाहर नहीं है तब माताने कहा कि संतों के दर्शन से कल्याण होता है तब पुत्रने उत्तर दिया कि सन्तको इन नेत्रों से कैसे देखसके यही उपदेश और सिखापन अमृत के तुल्य हैं और दर्शन उनका है हे माता! बिना सत्य विचार और ज्ञानके जो कोई चाहता है कि कल्याण प्राप्त होवे सबको व्यर्थ जानकर भ्रम व अभिमान मनसे बाहर करो और अन्तर्यामी को देखो तब माता बोली कि अब आत्मतत्त्व कहो कि जिससे मैं कृतार्थ होऊं तब पुत्र बोला कि आत्मतत्त्व मैं तब कहूंगा कि जब तू मलिनता चतुराई से किनारे होकर जो कुछ सुने उसको सत्य जाने तब माता बोली कि जो वस्तु असत्य है उसको सत्य कैसे जाने तब पुत्रने उत्तर दिया कि तुमको आत्मतत्त्व किस तरह से प्राप्त होवे कि जो अबतक सत्य और असत्य को शोचती हो तब माताने कहा कि अब मैं सब से न्यारी हुई जो कुछ तुम कहो वही करूंगी तब पुत्रबोला कि जो तुमको ज्ञान की इच्छा है तो श्रवण करो तब माता बोली कि ऐसा उपदेश करो कि जिससे शरीर को नाशवान् जानकर तत्त्वको प्राप्त होऊं तब पुत्रबोला कि यद्यपि ऐसा कभी नहीं हुआ है कि जबतक अहंकार का त्याग न करे और स्वरूप को

प्राप्त होवै परन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि ऐसा निश्चय करो कि श्री गोविन्दही है और यदि गोविंद ही है तब शरीर उनसे कब अतिरिक्त होसक्ता है इससे लय करने के लिये कोई वस्तु न रही आपी रहा हे माता! छहोशास्त्र स्वरूप की प्राप्ति की प्रक्रिया भिन्न भिन्न कहते हैं परन्तु सब सिद्धान्त यही है कि श्रीगोविन्द ही है तब माता बोली किहे पुत्र! तेरे संगसे मुझको यह प्राप्त हुआ कि न मैं न पुत्र केवल गोविन्द हीहै उसी समय पुत्र प्रातःकाल के उदय हुये सूर्य के समान प्रकाशित माता के उदर से उत्पन्न हुआ पुत्र का जन्म सुनकर राजा अति आनन्द को प्राप्त हुआ फिर पुत्र ने पृथ्वी में गिरतेही माता से पूछा कि हे रानी! मैं तुम्हारी व्यवस्था जानने के लिये आया हूं कहो क्या प्राप्त है और तुमने क्या उत्पन्न किया है तब रानी बोली कि न पुत्र न मैं केवल श्रीगोविन्द ही है तब राजा बोला कि हे रानी! यह महात्माओं का ज्ञान तुमको किस तरह प्राप्त हुआ तब रानी बोली कि यही उपाय है कि मैं नहीं हूं केवल गोविन्द ही है और यदि केवल गोविन्द ही है तब तू गोविन्द मैं गोविन्द दोनों गोविन्द ही हैं और क्या उपाय बतलाऊं यदि और कुछ पूछना हो तो पुत्र से पूछलो फिर राजा ने पुत्र से पूछा कि तुम कौन हो तब पुत्रने उत्तर दिया कि मैं नहीं हूं क्या कहूं और यदि मैंही हूं तो किससे कहूं तब राजा भरत बोला कि हे पुत्र! तुम धन्य हो कि तुम्हारे सत्संग से हम और रानी दोनों स्वरूप विषे प्राप्त हुये तब पुत्र बोला कि हे पिता! तुम प्रथम स्वरूप से कब भिन्न थे जो मेरे उपदेश से उसको प्राप्त हुये अब तुम आत्मा विषे लीन होजाव तब राजा जड़भरत बोले जब तक तृष्णा जो पिशाच की नाईं मन को पकड़े है नाश न हो तबतक आत्मसुख कैसे प्राप्त होगा तब पुत्र बोला कि तृष्णा का रूप कहिये तब राजा बोला जो मनमें अनेक प्रकार की कामना उठती है उसी को तृष्णा कहते हैं यह न होवे तब पुत्र

बोला कि देखो इच्छा का होना किसके अधिकार में है जब उस इच्छा करनेवाले को जानोगे तब कामना के नाश का विचार तुम्हारे चित्त से स्वतः नाशको प्राप्त होजावेगा तब राजा जड़भरत बोले कि जिससे इच्छा होती है उसको विष्णु कहते हैं तब पुत्र बोला कि तुम्हारा वचन हँसने योग्य है यदि इच्छा विष्णु ही से है तब तुमको डर किस बात का है कि उस के नाश करनेकी इच्छा करते हो तब राजा जड़भरत बोला कि अब मैं इच्छाको नाश करने से भी रहित हुआ परन्तु अतीत होकर राज्यको त्याग करूं तब पुत्र बोला कि यदि आप वनमें गये और राज्य करने की इच्छा मनसे दूर न हुई तो वनमें जाने से क्या लाभ है हे राजन्! राज्य करो और भगवान् के विना किञ्चित् पदार्थ को कुछ न समझो न देखो यही ज्ञान है तब राजा बोला कि मैं चाहता हूं कि सन्तों का सत्संग करूं और परमार्थ को प्राप्त होऊं तब पुत्र बोला कि ऋषभदेव के आश्रममें ब्रह्मसूत्र होता है उस स्थान पर सब सन्त इकट्ठे होते और हुये हैं यह कैसा ब्रह्मयज्ञहै कि जिस में आहुति और अग्नि एक ब्रह्मही है चलो उस स्थानपर चलें और उनसंतों और उस यज्ञके दर्शन करें इस तरह पुत्रकी वार्ता सुनकर राजा रानी और पुत्र समेत ऋषभदेवजी के आश्रमको चले और वहां पहुँचकर क्या देखा कि मीमांसा हँस हँस कर कहता था कि सम्पूर्ण कर्मही है और अवधूत के सिवाय सब लोग उसके कथन की पालना करते थे तब पुत्रने पितासे कहा कि अब आप सन्तों की सभा देखिये तब मीमांसा पुत्रसे बोला कि तुम कर्म रूपहो तब पुत्रने उसको उत्तर दिया कि कर्म किससे उत्पन्न होकर किसमें लय होता है तब मीमांसा बोला कि कर्म किसी से उत्पन्न नहीं होता वह स्वयंप्रकाशरूप और व्यापक रूप है तब पुत्रने हँसकर कहा कि ऐसा उपद्रव क्यों करते हो कर्म स्वप्रकाश पूर्ण है अथवा खाली तब मीमांसा बोला कि पूर्ण है

तब पुत्रने फिर पूछा कि पूर्ण में कौन वस्तु नहीं है जब क्रिया नहीं है तब कर्म कहां है क्योंकि यदि पूर्ण है तब उसको कौन करे इस उत्तर को सुनकर मीमांसा मौन होगये और सम्पूर्ण सन्तलोग बोल उठे कि हम ब्रह्म हैं यह दशा देखकर राजा भरत अपने पुत्रसे बोला कि तू सबसे परेहै तब पुत्रने उत्तरदिया ऐसी बुद्धिको अग्नि में जला दीजिये क्योंकि न्यूनाधिक्य अर्थात् कमी और ज़ियादती सब मेराही रूप हैमैं किसी से न्यून और अधिक नहीं हूं तब राजा जनक बोले कि हे पुत्र! मैं तुमको पूर्ण-ब्रह्म देखता हूं तब पुत्रने उत्तर दिया कि यही अज्ञानहै कि अब तक पूर्णब्रह्म देखतेहो यदि पूर्ण है तब उसका द्रष्टा कौन होवे फिर अवधूत से बोले कि तुम्हारा नाम अवधूत किस प्रकार से हुआ तब अवधूत बोले कि तुम्हारा क्या नाम है तब पुत्रने उत्तर दिया कि मेरा नाम स्वदेवदत्त है तब अवधूत ने पूछा कितुमको स्वदेवदत्त क्यों कहते हैं तब पुत्रने उत्तर दिया कि जिस तरह तुमको देवदत्त कहते हैं उसी तरह मुझको भी स्वदेवदत्त कहते हैं तब अवधूत बोले कि अब आप अपना रूप बतलाइये तब पुत्रने उत्तर दिया कि क्या तुमने अभीतक नहीं देखा जो अब पूछते हो. मेरा रूप वह है कि जिसमें नाम रूप कुछभी नहींहै तब अवधूत ने पूछा कि अब मुझे यह बतलाइये कि यह सर्वरूप तुमसे है अथवा तुमसे भिन्न है तब पुत्रने उत्तर दिया कि इस समय मेरे वाक् नहीं है जो कहूं और बिना वाक् के कहनानहीं बनता तब अवधूत ने कहा कि फिर मौनहोजाव तब पुत्रने उत्तर दिया कि तुम अबतक अवधूत नहीं हुये विचार करके देखो कि जो इतनी वार्ता मैंने की है वह वाक् सेकीहै और वाक् की सामर्थ्य है कि वार्ता करसके तब अवधूत हँसकर बोले कि जिसने अपना रूप जाना उसने अपना सुख नहीं कहा क्योंकि वह कथन में नहीं आता तब पुत्र बोला कि मेरे कथन को सुनिये सुख मेरा यह है कि जिसमें सुख और दुःख दोनों नहीं हैं फिर सुख क्या

वस्तु है तब अवधूत बोले कि और कुछ कहिये तब पुत्र बोला कि तुम श्रवण से रहित हो और मैं वाक्य को त्यागता हूं और बिना वाक्य के कथन करता हूं तुम बिना कानके सुनो कि अवधूत नहीं है मैंही हूं यही निर्वाण है तब अवधूत बोले कियदि सर्व तूही है तब तुम्हारा स्थान कहां है तब पुत्र बोला कि वेद में लिखा है कि जाग्रत् अवस्था में नेत्र में, स्वप्नावस्था में कंठ में और सुषुप्ति अवस्था में हृदय में और तुरीया में मस्तक में परंतु मेरे हृदयमें नहीं आता क्योंकि जब अखंड ब्रह्मांड विषे आत्मा पूर्ण है तबकिसस्थान में कहना चाहिये यदि एकस्थान में कहा जाय तब [illegible] इच्छाओं ने क्या अपराध किया है, आत्मा सर्व विषे पूर्ण है य[illegible] है और स्वय करो आदि वही है तब पूर्ण किस विषे होवे इस[illegible] अर्थ है कि [illegible]को न देखआपी आप है और पूछता है कि तुम क[illegible] कहता है [illegible] सन्तों का मैं पापी हूं, नरकगामी हूं परन्तु क्या करूं जो कामनाों के वशहूं यदि कोई कहे कि नित्य अनित्य दोनों ब्रह्म हैं तो लड़ने को तय्यार होता हैइससे कामना का त्यागकरो तब अवधूत ने कहा कि मुझ में कहांहै जो कहता है कि मैं नरकगामी हूं तो समता विषे देख कियदि सर्व विष्णु भगवान्ही है तब कहो क्या नरक नहीं तो स्वर्ग तो सब को प्रिय है परन्तु वह लोग धन्य हैं जो नरक में भी मग्न रहते हैं तब पुत्र बोला कि यदि हठ नहीं है तब युद्ध क्यों करतेहो तब अवधूत ने उत्तर दिया कि युद्ध क्यों न करें जानता हूं कि आदि से पूर्ण हूं फिर पूर्ण कहनेसे क्या प्रयोजन है तब पुत्रने उत्तरदिया कि यदि पूर्ण दृष्टि है तब ब्रह्म क्यों नहीं कहते तब अवधूत बोले कि यदि ब्रह्मको नहीं जानते कि ब्रह्म आपही है और स्वयंप्रकाशवान् है वह कहनेसे नहीं होता तब पुत्रबोला कि यदि स्वयंप्रकाशवान् है तो पापी किसलिये कहता है तब अवधूत बोले कि पूर्ण सबको अंगीकार है परंतु वह धन्य है जो अपनेको पापी मानते

हैं तब पुत्र बोला कि यदि कुछ उपाय स्वरूप जानने का कहा जाय तो उसको मानता नहीं है तब अवधूत बोले कि स्वयंसिद्धि में उपायकी समाई कहां है तब निदाघ बोला कि मैं सर्व विषे पूर्ण हूं और सर्व पदों का द्रष्टाभी मैंहीहूं मैं समता और विषमता नहीं रखता हे अवधूत! तुम मुझही से प्रकाशवान् हो तब अवधूत बोले कि तुम और मैं नहीं हूं मैंहीहूं तब राजा जनकने उत्तर दिया कि श्री नारायण अभेद है तब अवधूत बोले कि हम और तुम नहीं है केवल मैं ही हूं -तब जनक ने उत्तर दिया कि श्री नारायण अभेद है तब अवधूत बोले कि हे मूर्ख! नारायण विषे भेद और अभेद दोनों नहीं हैं हे मैत्रेय! उस समय सम्पूर्ण सभा के लोग ऐसे मौन होगये कि पांचहजार वर्ष व्यतीत होगये परन्तु एक क्षणके समान भी न मालूम हुये और फिर प्रसन्न होकर बोले कि जो कोई वासना को त्याग न करे वह वासना के बीचमें बँधा रहता है तब पुत्र बोला कि यदि वासना का त्याग न करे तो क्या है और यदि त्याग करे तो क्या होताहै तब अवधूत ने उत्तर दिया कि जबतक वासना है तबतक जीव रूप है और जब वासना का त्याग होजाता है तब शिवरूप होजाता है इससे वासना के त्यागके विना सुख नहीं है इसवास्ते इस पिशाच रूपी वासना का त्याग करनाही उचित है तब पुत्र ने उत्तर दिया कि यदि वासना त्याग करूं तो क्या लाभ है और त्याग न करने से क्या हानि है तब जड़भरत बोले कि हे पुत्र! तुमको अवतक ज्ञान प्राप्त न हुआ कि वासना के त्यागे विना सुख स्वरूपकी प्राप्ति नहीं है तब पुत्र बोला कि सुखका स्वरूप किस तरह का है उसको कथन कीजिये तब जड़भरत बोले कि जो तुम कहतेहो कि सन्त लोग विना कर्म वचनकी पालना करते हैं यह मिथ्या है प्रथम मैंने शरीर रूपी संसार को ज्ञान अग्नि में जलाया तिसके पीछे संतों ने मेरा वाक्य लिया फिर पुत्रबोला कि सत्य कहिये कि कर्मों के करने से शुद्ध हूंगा और न करनेसे

अशुद्ध रहूंगा तब जड़भरत बोले कि जबतक वासना का त्याग नहीं होता तबतक मनरूपी दर्पण स्वच्छ नहीं होता तब पुत्र बोला कि जिसके मन न हो वह क्या करे तब जड़भरत बोले कि जो तुमने जाना कि हमारे विषे परनहीं है इसीको त्याग करो तब पुत्र बोला कि इसके जानने से क्या लाभ और न जाननेसे क्या हानि है तब जड़भरत बोले कि अज्ञान अंधेरी रात्रिके समान है और ज्ञान सूर्यके समान प्रकाशवान् है इससे इतनाही भेद है तब पुत्र बोला कि मेरा रूप दोनों से परे है और दोनों मेराही रूप भी हैं तब राजा जड़भरत बोले कि हे पुत्र! संतों को इतना दुःख न दो यदि तुमने कुछ जाना है तो तुमको सुख है कहने से क्या प्रयोजन है मौन धारण करो तब पुत्र बोला कि हे पिता! इस भेददृष्टि को कि यह मेरा पुत्र है और दूसरे सन्त हैं मध्य से उठाओ क्योंकि यही अज्ञान है मेरे विषे पिता अरु पुत्र दोनों नहीं हैं हे राजन्! कहने से क्यों रोकते हो यह पुत्र हमारा रूप है और जो कुछ कहना है आप से कहता है दूसरे से नहीं तब जड़भरत बोले कि हे पुत्र! तुम कहां से आये और कहां जावोगे तब पुत्र बोला कि मैं देश व काल से परे हूं इससे मेरा एक स्थान से आना और दूसरे स्थान में जाना नहीं है मैं विदेह अर्थात् विना शरीर स्थित हूं तब जड़भरत बोले कि तुम कौन हो तब पुत्र बोला कि तुम क्या जानो कि मैं कौन हूं किसकारण कि तुम्हारी दृष्टि नामरूप में स्थित है और तुमने जाना है कि मैं जड़भरत हूं इस आवरण अर्थात् परदा को दूर करके आत्मा और आप को देखो कि मैं कौन हूं तब जड़भरत बोले कि तुम ब्राह्मण हो क्योंकि जिसपुरुष में इसप्रकार का विचार होवै ब्राह्मण हो अथवा चांडाल मेरा गुरु है तब राजाभरत बोले कि हे पुत्र! जब सर्वव्यापी आप है तब संसार और सत्सङ्ग से क्या लाभ है तब पुत्र ने उत्तर दिया कि यह सब संसार रूपी रचना के हेत कहना और सुनना है इससे विशेष और क्या प्राप्त होगा

कि भ्रमको भ्रम जानगया नहीं तो ब्रह्म आकाशकी नाईं सर्वत्र पूर्ण है तव अवधूत बोले कि इन सबको तुम क्या देखतेहो तब पुत्र बोला कि मेरे नेत्र नहीं हैं मैं किस प्रकार औरकिससे देखूं यदि नेत्र कहूं तो तीन पद होते हैं एक द्दष्टा दूसरा दृश्य तीसरा दर्शन इससे मैं अद्वितीय हूं इससे मेरा देखना कहां रहा तब अवधूत मौन होकर कुछ न बोले इसी समयान्तरमें हंसपर चढ़े हुये श्रीब्रह्माजी आ पहुंचे ब्रह्माजीको आयाहुआ देख श्रीबिष्णु जी उनकी ओर देखकर हँसे और यह बोले कि हे ब्रह्माजी! देखो सभा तुमको जड़से उखारती अर्थात् कारणके सहित नाश करती है तव ब्रह्माजी बोले किमनुष्य शरीर धारण करने का यही फल था यह न्यून नहीं है तब श्री विष्णुजी बोले कि यह लोग प्रारब्ध कर्म के अभिमान से भ्रममें हैं और इनको अहंकार भी है तब ब्रह्माजी बोले कि यदि प्रारब्ध है तो उनका संकल्पहै और प्रारब्ध का नाश करते तो आप करते हैं हमने अपनी ओर से कुछ भी नहीं किया है परन्तु मेरी इच्छा यह है कि सर्व संसार को अपने को जाने तब श्री विष्णु भगवान् बोले कि हे ब्रह्मा! इस पुत्र के मस्तक में तुमने क्या लिखा है तब ब्रह्माजी बोले कि हे श्री विष्णुजी! इस पुत्र में नाम, रूप नहीं है इसके मस्तक में क्या लिखूं तब पुत्र उठकर औरसाष्टांग दंडवत् करके ब्रह्माजीसे बोला कि हे श्री ब्रह्माजी! संतलोग आश्चर्य को प्राप्त होंगे कि आत्मदर्शी को किसी की दंडवत् से क्या प्रयोजन है परन्तु मैंने तुम्हारे पंच महाभूत औरमन. बुद्धि, चित्त और अहंकारको दंडवत् किया है तब श्रीब्रह्माजी बोले कि एक बुद्धिको जो अपने पास में रक्खा है उसको भी दंडवत् से देदो तब पुत्र बोला कि मैंने बुद्धि से दंडवत् किया है यदि बुद्धि न होती तो किसतरह से दंडवत् करता तब श्रीब्रह्माजी बोले कि बुद्धि के विचार से सच्चिदानंद तुम आपही हो. पुत्र आत्मामें लीन होगया तब ब्रह्माके पुत्रमरीचिभी आकर प्राप्त हुये और अपने पिता ब्रह्मासे बोले कि हे

पिताजी! सत्य २ कहो कि आपको ब्रह्मा क्यों कहते हैं और आपके कौनसे अंग का नाम ब्रह्मा है तब ब्रह्माजी बोले कि ये सब अंग हमहीं से हैं परंतु मैं क्या कहूं कि हैं अथवा नहीं हैं तब मरीचिऋषि बोले कि अब मेरी इच्छा है कि मनको अपने वश में करूं इसलिये कि यह सन्ध्या करते समय भी अनेक स्थानों में मारा फिरता है इससे ऐसी युक्ति बतलाइये कि जिससे मन का नाश होजावे तब ब्रह्माजी बोले कि मैं तब कहूंगा कि जब यह बतलावे कि मैं कौनहूं कि जिसमें तू अपने मनको जाने और मनका नाश होवे, मनुष्य कहते हैं कि योगसे मन वश होता है परन्तु मिथ्या है जबतक कोई योगमें स्थित रहता है तभी तक मन स्थित रहताहै और जब योगसे उच्चाट हुआ तब यह मन फिर अनेक स्थानों में पहुंचता है यह केवल मनका कारण है तब मरीचि बोले कि मैं संकल्प विकल्प में फँसाहूं इससे अपनेको नहीं जानता हूं और संकल्प विकल्प मेरा वस्त्रहै जबतक इसका त्याग न होवे आत्मा का निश्चय किस तरह होसक्ता है यदि मैं अपने को जानता तो मनके नाशका उपाय न पूछता तब ब्रह्माजी बोले कि मैं तेरे रूपको तब कहूंगा जब तू कहेगा कि मुझमें नाम रूप कुछ भी नहीं है परन्तु बाहरसे मतकहो अंतःकरणसे कहो कि मैं शरीर नहीं हूं और जब अंतःकरणसे तुझको निश्चयहुआ तब वे परिश्रम तेरा स्वरूप तुझको प्रकट होगया इसलिये यह शरीर अभिमान आत्मा विषे आवरण अर्थात् परदा है और यह सर्व संसार जो देखता है यह सर्वनाम रूप विषे निश्चय किये हैं इस कारण से अपने स्वरूप को प्राप्त नहीं होते और यह जानते हैं कि यही अहंकार शरीर आत्मा का आवरणहै तब मरीचि बोले कि हे श्री ब्रह्माजी! यदि शरीर है तब आपहै और जब शरीरही नहीं है तब आप कहां हैं कि जो कहे आप हैं तब श्रीब्रह्माजी बोले कि जिस समय शरीर नाश होता है और

चलता फिरता तब मरीचि ध्यान में लीन हुये और योग शक्ति से भीतर बाहर के सब अंग देखने लगे कि सब जड़ हैं फिर ब्रह्मा जीसे बोले कि मैं शरीर नहीं हूं अब आप बतलाइये कि मैं कौनहूं तब ब्रह्माजी बोले कि चित्तको एकाग्र करके श्रवणकरो तो जो शरीर तुम्हाराहै प्रकटकरूं, जिस वस्तु से तुमने सब अंगोंको देखा और जड़जाना वही तुम्हारा रूप है तब मरीचि अपने स्वरूपको जानकर आत्मा में लीन हुये और ब्रह्माजीसे बोले कि आप के दुर्लभ सत्संग से मैंने स्वरूप को जाना तब श्री विष्णु भगवान् बोले कि हे श्री ब्रह्माजी! तुमने बहुत शीघ्र इस पुत्रको स्वरूप बिषे प्राप्त किया सन्तलोग ऐसा नहीं करते तब श्री ब्रह्माजी बोले कि संतों के अनेक मार्ग हैं जिस मार्ग से चाहें मुमुक्षु के प्रयोजन को सिद्ध कर देवें उससमय जय नाम राक्षस आ पहुँचा और बोला कि मैं सब को भक्षण करूं और मैं आपी आपहूं उसके इस वचन को सुनकर और रूप देखकर सब मौन होगये तब अवधूत बोला कि जब तक भक्षण नहीं किया क्याथा और यदि भक्षणकरोगे तब क्या होगा तब राक्षस बोला कि मैं नहीं जानता था कि कोई श्रोता मेरे वचन का है परन्तु देखा कि तू है तब राक्षस राजपुत्र के पास आकर यह बोला कि हे पुत्र! मैं तुझको भक्षण करता हूं तब पुत्र बोला कि तू किसको खाता है यह जो तू सब देखता है तुझी से है यदि तूने भक्षण किया तो अपने ही अंग भक्षण किये यदि कोई अपने को भक्षण करे तो कोई रोक नहीं सक्ता तब राक्षस बोला कि मैं यही भक्षण करता हूं कि तुझको और अपने को अर्थात् अहंत्वं को खाकर आपी आप हूं तब पुत्र बोला कि यदि तीनों को भक्षण करेगा तब त्रिपुटी सिद्ध होगी मैं अद्वितीय हूं तब राक्षस बोला कि हे पुत्र! तुम्हारा क्या नाम है मैं तुम्हारे नगर का हूं तब पुत्र बोला कि मेरा नाम स्वराट् है उसको कहना हूं स्वराट् उसे कहते हैं जो अपने प्रकाश से प्रकाशित होवे तब राक्षस बोला कि जिसवस्तु

होती तो स्थूल सूक्ष्म, कारण व संघातकी उत्पत्ति का क्या प्रयोजन है हे दयालु! दया करके ये सब मेरी संशय निवृत्त कीजिये तब वासकरण जी बोले कि हे शिष्य! तुम्हारे इस भ्रमकी निवृत्तिका कारण यह है कि तुम्हीं से सब प्रपंच जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति सिद्ध होती हैं और तुम्हारेही प्रकाश से प्रकाशित हैं व स्थूल सूक्ष्म कारण प्रपंच भी सब तुम्हीं से प्राप्तहैं तुम न कहीं से आयेहो न कहीं जाओगे आकाश की नाईं निष्क्रिय और व्यापक व पर्वत की नाईं अचल सदा स्थित हो उत्पत्ति और नाश शरीरकाहै और शरीर वासना से उत्पन्न होताहै और वासना स्वरूप के अज्ञान से द्वैत या ईश्वरको अपने से भिन्न निश्चय करने से होतीहै कि ईश्वर गुरुरूप होकर मेरी मुक्ति करेगा और अपने को दीन अल्पज्ञ और ईश्वर को सर्वज्ञ स्वतंत्र जानना केवल स्वरूप के अज्ञान सेहै नहीं तो वेद और शास्त्र ने श्री कृष्ण जी अर्जुन से गीता में प्रत्यक्ष प्रकट कियाहै कि सब पदार्थोंका प्रकाशक सूर्य की नाईं और नियन्ता स्वर्ण भूषणकी तरह मैंहीं हूं और मैंने भी वारम्वार तुम से यही कहाहै कि एकश्री कृष्णदेवही भीतर बाहर मध्यमें सब चराचर प्रपंच के पूर्ण है इस क्षणभङ्गी शरीर के साथ तदात्मता करके अर्थात् अपने को शरीर जानके और सजातीय व विजातीय स्वगत भेद से रहित सच्चिदानन्दस्वरूप अपनी आत्मा को भिन्न जानना केवल अज्ञान और मूर्खता है हे शिष्य! किसप्रकार किसी को छोटा बड़ा मूर्ख व पंडित निश्चय किया जावे, क्योंकि एक परमात्मा सर्व चराचर भूतों में जलतरंग की नाईं पूर्ण और व्यापक है इससे उचित है कि प्राणी मात्र में न्यूनाधिक्यता न देखे और जाने जैसे कि सर्वतरंग व बुद्बुदों में जल व्याप्त है इसीतरह परमात्मा भी सब में एकरस पूर्ण है यह जो प्राणियों में न्यूनाधिक्यता, उत्तमता अधमता रूपी गुण दिखाई पड़ता है यह सब कर्म का फल है हे शिष्य! यही वासना प्राणी को वारम्वार नरक और गर्भवास

और न मुझसे कोई मरेगा क्योंकि यह देह बुद्बुदेकी नाईं है जैसे नदीमें बुद्बुदा उठकर फिर नदी मेंही विलीयमान होजाता है तब कौन मरगया और किसने मारा इसलिये सब लोग कहते जाव कि आत्मा भी शरीर है॥

हरिः ॐ तत्सद्ब्रह्मणेनमः॥

ब्रह्मयज्ञ का इतिहाससमाप्त हुआ॥

श्रीगणेशाय नमः॥

हरिःॐ तत्सद्ब्रह्मणेनमः॥

राजा वासकरण और आत्मदर्शी का इतिहास॥

आत्मदर्शी वासकरण से बोले कि हे भगवन्! हे परमानन्द स्वरूप गुरो! मैं आपके उपदेशरूपी अमृत को पान करके सब देवताओं और ऋषीश्वरों व मुमुक्षुओं का व्यवहार और व्यवस्था जो कुछ जाननी योग्य थी जानली परन्तु एक संशय जो मन व बुद्धि से जानने से परेहै और सिवाय गुरु व आपकी दयाके उसका निवृत्त होना अति कठिन है, मैं सर्व कर्म लौकिक वैदिक और शरीर व सर्वलोकों को व जाग्रत्, स्वप्न सुषुप्ति समष्टि व्यष्टि व सर्व प्रपंचको मिथ्या संकल्प मात्र अधिष्ठान की सत्ता से अति रिक्त सत्ता रहित जानता हूं, परन्तु इनको भेद से मैं अभिज्ञान हूं इससे कृपापूर्वक इनका विवरण करके मुझको सविस्तर समझाइये कि जिससे मेरी संशय निवृत्त होवे १ मेरा स्वरूप क्या है २ मैं कहां से आया हूं ३ और किसलिये आया हूं ४ व शरीर त्यागने पर कहां जाऊंगा ५ कारण मेरा कौनहै ६ यदि मैं आत्मा हूं तो शरीरमें किसतरह आया ७ मेरी उत्पत्ति का हेतु और प्रयोजन क्याहै इसलिये कि विना प्रयोजन मूर्खोंकी भी प्रवृत्ति नहीं

होती तो स्थूल सूक्ष्म, कारण व संघातकी उत्पत्ति का क्या प्रयोजन है हे दयालु ! दया करके ये सब मेरी संशय निवृत्त कीजिये तब वासकरण जी बोले कि हे शिष्य ! तुम्हारे इस भ्रमकी निवृत्तिका कारण यह है कि तुम्हीं से सब प्रपंच जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति सिद्ध होती हैं और तुम्हारेही प्रकाश से प्रकाशित हैं व स्थूल सूक्ष्म कारण प्रपंच भी सब तुम्हीं से प्राप्तहैं तुम न कहीं से आयेहो न कहीं जावोगे आकाश की नाईं निष्क्रिय और व्यापक व पर्वत की नाईं अचल सदा स्थित हो उत्पत्ति और नाश शरीरका है और शरीर वासना से उत्पन्न होताहै और वासना स्वरूप के अज्ञान से द्वैत या ईश्वरको अपने से भिन्न निश्चयकरने से होतीहै कि ईश्वर गुरुरूप होकर मेरी मुक्ति करेगा और अपने को दीन अल्पज्ञ और ईश्वर को सर्वज्ञ स्वतंत्र जानना केवल स्वरूप के अज्ञान सेहै नहीं तो वेद और शास्त्र ने श्री कृष्ण जी अर्जुन से गीता में प्रत्यक्ष प्रकट कियाहै कि सब पदार्थोंका प्रकाशक सूर्य की नाईं और नियन्ता स्वर्ण भूषणकी तरह मैंहीं हूं और मैंने भी वारम्वार तुम से यही कहाहै कि एकश्री कृष्ण देवही भीतर वाहर मध्यमें सब चराचर प्रपंच के पूर्ण है इस क्षणभङ्गी शरीर के साथ तदात्मता करके अर्थात् अपने को शरीर जानके और सजातीय व बिजातीय स्वगत भेद से रहित सच्चिदानन्द स्वरूप अपनी आत्मा को भिन्न जानना केवल अज्ञान और मूर्खता है हे शिष्य ! किसप्रकार किसी को छोटा वड़ा मूर्ख व पंडित निश्चय किया जावे. क्योंकि एक परमात्मा सर्व चराचर भूतों में जलतरंग की नाईं पूर्ण और व्यापक है इससे उचित है कि प्राणी मात्र में न्यूनाधिक्यता न देखे और जाने जैसे कि सर्वतरंग व बुद्बुदों में जल व्याप्त है इसीतरह परमात्मा भी सब में एकरस पूर्ण है यह जो प्राणियों में न्यूनाधिक्यता, उत्तमता अधमता रूप गुण दिखाई पड़ता है यह सब कर्म का फल है हे शिष्य ! यही वासना प्राणी को वारम्वार नरक और गर्भवास

को प्राप्त करती है अर्थात् इसी से मोक्ष नहीं होता, मोक्ष तो इस प्राणी को बिना विद्वान् के सत्संग के कदापि नहीं होती परन्तु आत्मज्ञान केवल सत्संग से होताहै हे शिष्य ! सर्वनाम रूपात्मक जगत् सब अनित्य और मिथ्या जानो इस अनित्य नाशवान् के साथ प्रीतिकरनी या शरीर को अपना रूपजानना केवल अज्ञान और मूर्खता है तब आत्मदर्शी ने कहा कि हे भगवन् ! मुझको आपके उपदेश से निश्चय हुआ कि शब्दादि विषयों की वासना पानी के चित्र की तरह है और वासना व शब्दादि विषय शरीर के सहित पानी के चित्र की नाईं देखते ही देखते मिथ्या होजाते हैं और उत्पत्ति इन सूक्ष्म पंचभूतों की या कार्य इन पांचों का शरीरहै और चेष्टा इसकी पांचभूतों से सिद्ध होती है और स्थिति भी इन्हीं पांचभूतों की आत्मा में है अर्थात् आत्मामें अध्यस्थ है और प्रपंच सर्व ईश्वराधीन है व आत्मा पुण्य व पाप सर्व प्रपंच के संग व कर्मोंके बंधन व जन्म, मरण व बंधमोक्ष से रहित है अब मैं आपके सकाश से निश्चय करना चाहता हूं कि वह कौन वस्तुहै जो उत्पन्न होकर नाश होजाती और बन्ध होतीहै आपने पूर्व में कहाहै कि ये सर्व नाम भी नाशवान् हैं और परमेश्वर को हजारों नाम से स्मरण करते हैं तो क्या परमेश्वर भी उत्पन्न व नाश होताहै तब बालकरण बोला कि हे शिष्य ! यह प्रश्न तुम्हारा जो तुमने किया बहुत कठिन है इसका उत्तर और तात्पर्य यथावत् ज्ञानसे प्राप्त होताहै और जिसकी बुद्धि योग क्षेम के वशमें रहती है उसको श्रवण करने से आत्मज्ञान नहीं होता है और ज्ञान की प्राप्ति साधन सम्पन्नाधिकारी को श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरु के प्रकाश से होतीहै मुमुक्षु को चाहिये कि सदा विद्वानों और विरक्तों का सत्संग करे तब आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है हे शिष्य ! श्रवण करो कि ईश्वर को जो अनेक नाम से स्मरण

नाश से रहितहै और दिखलाई नहीं देता अर्थात् किसी इन्द्रिय का विषय नहीं है केवल अज्ञान और दीनतासे भासताहै परन्तु आपको यह जानना योग्य है कि यह काष्ठकी पुतली की नाईं जड़ शरीर किसकी सत्ता करके चैतन्यकी नाईं चेष्टा करता है और वाक् से आदि लेकर सर्व इन्द्रियां अपने २ व्यवहार को करतीं हैं और यह मनुष्य नाम जो प्रकट है सो क्या है नहीं तो सर्व अंग भिन्न भिन्न नामवाले हैं यह जो तुम्हारा आत्मदर्शी नाम है सो कहां है और किसका और क्याहै हे शिष्य! इन सर्व देह इन्द्रियों को जड़ व मिथ्या जानकर श्रवण करो कि यह आत्मा सुख से रहित है और जीना मरना उत्पत्ति आदि षड्भाव विकार शरीरके धर्म हैं जैसे पुराना वस्त्र उतारकर डाल देतेहैं और कुछ समय के पीछे किञ्चित् टुकड़ा उस वस्त्रका दिखाई पड़ता है और कहतेहैं कि यह उक्त वस्त्रका टुकड़ा है तैसे शरीर अवस्था करिके वा तप करके जब जीर्ण होजाताहै या प्रारब्ध भोग के अनन्तर इस शरीर को आत्मत्याग करके किंचित् काल अपने स्वरूप में प्राप्त होता है और शरीर को जलाते हैं पीछे उस शरीरके पुत्र कुटुंबादि धन व भूमि मन्दिर आदि जो रहताहै व पुण्य पाप कीर्त्ति अकीर्त्ति रहतीहै इस निमित्त से स्मृति उस शरीर की होती है जिस पुरुष की धर्म पूर्वक कीर्त्ति स्मरण होतीहै इसलोकमें उस पुरुषको सुख होताहै और जिस की अधर्म पूर्वक अकीर्त्ति स्मरण होतीहै उसको नरक होता है और बुद्धिमान पुरुष स्वर्ग नरक जन्म मृत्यु इसी मर्त्यलोक में जान लेतेहैं जैसे किंचित् गंगाजल मदिरा में डाल दे तो उस गंगाजल के साथ कोई धर्मात्मा पुरुष स्पर्श नहीं करताहै तैसे आपको अर्थात् आत्माको भी शरीर निश्चय करना यही मदिरा है जैसे गंगाजल के प्रवाहके मध्यमें डाली हुई मदिरा गंगाजल रूप होजाती है तैसे यह जीवात्मा महावाक्य से शोधन पूर्वक अपने को समष्टि. व्यष्टि. शरीर तीनों से कार्य, कारण व

तरना व वायु को मुष्टिका में निग्रह करना और सूर्य के प्रकाश को गजसे नापना असंभव है तैसेही आत्म ज्ञानकी प्राप्ति अत्यन्त कठिन है परन्तु पुरुषार्थ साध्य और सारहै हे शिष्य! जो पुरुष अपनी सम्पूर्ण अवस्था वेद शास्त्र के पढ़ने और पढ़ाने में व्यतीत करता है और अपने मनको वशनहीं करता उसकी व्यवस्था ऐसी है कि जैसेकोई पुरुष किसी मित्रकीप्राप्ति और प्रेम से बावलाहोता है और उस मित्रको किञ्चित् चित्तमें संकल्प मात्रभी मिलाप नहीं होता जैसे उस पुरुषका कष्ट व्यर्थ है तैसेही जानो और बुद्धिमान् को किञ्चित् कहना बहुत है इस शरीर से आदिलेकर सर्वद्वैत संकल्पमात्र मनोराज व स्वप्नवत् पदार्थ कीनाई जानकर सुखी होओइस लिये यह कारण कार्य और सर्व द्वैत तुम्हारीही कल्पी हुई है तब आत्मदर्शी बोला कि हे ब्रह्मवित्! अर्थात् ब्रह्म जानने वाले ब्रह्म स्वरूप गुरुआपकी कृपा से सर्व ज्ञान गुप्त व मुमुक्षु को जानना योग्यहै सो मैंनेजाना कि सब प्रपंच जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति मृग तृष्णा के जल की नाई मिथ्या है और बन्धन भ्रम मात्रहै और सुख व दुख कुछ दिनका पाहुनहै और यह शरीर नाशवान्है और कामना व वासना भी क्षण २ में अनित्यहैं परन्तु एक संशय मेरा और भी निवृत्त कीजिये, कि मैं कौनहूं और मेरी उत्पत्ति किसवस्तु से है इस जगत् में शरीर क्यों धारण किया है और कारण से मेरा क्या प्रयोजन है हे गुरो! कृपा करके इस संशयरूपी समुद्र से व द्वैतरूपी सागरसे उपदेशरूपी जहाज द्वारामुझको पारकीजिये कि जिससे इस द्वैतरूपी भ्रम से मोक्ष होऊं तब वासकरणजी बोले कि हे शिष्य! यह संपूर्ण जगत् जलके तरंग की नाई तुम्हींसे उत्पन्न हुआहै जिसको वेद शास्त्र सजातीय आदि भेद व नाम रूपसे रहित मन वाणी का विषय पूर्ण सर्वाधिष्ठान कहते हैं वह तुम्हीं हो और उत्पत्ति व नाश शरीर का धर्म है इसका तुमको स्पर्शभी नहीं है तुम सदा एक रसहो व सांसारिक सम्पूर्ण उपद्रवों से रहित हो तुम कुछभी शोच

न करो यह सम्पूर्ण अनन्त जगत् जलके तरङ्ग की नाईं तुम्हींमेंहै यह कभी प्रकट और कभी लय होजाताहै परन्तु जलकीनाईं सदा एकरस रहतेहो और क्रियामात्र से रहित व आवागमन से व-र्जित हो यह सम्पूर्ण जो कुछ दृश्यमान है शरीरहीसेहै जीवात्मा भी सबका तुम्हींहो तुमकर्म के करने व न करने से रहितहो और जो कुछ दृश्यहै सब तुम्हींसेहै इसालिये तुमको उचितहै कि सब जगत् को अपना रूप जानकर द्वैतको मनसे दूरकरके दृष्टि अ-द्वैतकी स्थिति निश्चल करके सुखी होवो, हे शिष्य! तुम सजा-तीय आदि भेदसे रहित अद्वितीयहो तुम से अतिरिक्त किञ्चित् वस्तु नहींहै तुम अपनेको अज्ञान से शरीर की सत्तामानकर बीच बन्धन दुःख व राग द्वेषादि के सर्व उपद्रवों में फँसेहो यदि आत्म-ज्ञानद्वारा अपने स्वरूपको निश्चय करोगे तब शरीरादि सर्वद्वैत को ससा (खरहा) के शृङ्ग की नाईं असत्य जानोगे इस जगत् के आदि मध्य व अन्त तुम्हींहो द्वैत भ्रममात्र है तुम बन्धमोक्ष से रहितहो जो कुछ शुभ अशुभ पाप तुमको भासताहै वह मन से त्यागकर सुखीहो और सम्पूर्ण भयसे रहितहो तुम सजातीय आदि भेदसे रहितहो अर्थात् स्वमहिम्नी स्थितहो मोक्षको क्या खोजतेहो तुम स्वयं मुक्त रूपहो हे शिष्य! तुम अपने को जानो कि तुम क्याहो शब्द को श्रवण सुनते रूपको नेत्र देखते निश्चय बुद्धि करतीहै सो तुम इनसे आदि लेकर यह सब नहीं हो क्योंकि यह दृश्यहैं और तुम द्रष्टाहो जिस प्रकार आपको जानाजाय जानो आत्मस्वरूप का जानना यथावत् निस्संशय है जैसे होवे तैसे यत्नकरना योग्यहै और आत्मज्ञान सन्तोंके स-त्सङ्ग से प्राप्त होताहै इससे तुमको उचितहै कि सन्तों के सत्सङ्ग से कदाचित् तृप्ति न करके उनके सत्सङ्ग से आत्मस्वरूप प्राप्त करो क्योंकि धर्मार्थ काम मोक्ष सन्तों के सत्सङ्गहीसे प्राप्त हो-तेहैं तुमको तीर्थाटन व उत्तम स्थान के सेवनसे कुछ प्रयोजन नहींहै क्योंकि उत्तमाधिकारी मुमुक्षुको आत्म विचार के सिवाय

द्वितीय कर्म प्रतिबन्धक है जैसे कन्या जबतक पति के सुखको नहीं जानतीहै तबतक गुड़ियां खेलतीहै और जब पतिके सुखको प्राप्त होतीहै तब पूर्वकी व्यवस्था को स्मरण करके हँसती है तैसे ही विद्वान् पूर्व की व्यवस्था को स्मरण करके पश्चात्ताप करते हैं पुरुष अध्यात्म विचारको उपेक्ष्य करिके और भेद बुद्धिको ग्रहण करिके प्रतिमादि का पूजन जो आसुरीसम्प्रदाय है इस अधिकारी शरीरको प्राप्तहोके इस आसुरीसम्प्रदाय में प्रवृत्तहै उसकी व्यवस्था ऐसी है जैसे कोई पुरुष गङ्गाजी के तटपर जाकर अमृत पुण्यमय गङ्गाजलकी उपेक्षाकरिके कूप और गढ़हेके जलकेपान व उसमें स्नान करनेकी इच्छा करताहै तैसेही हे शिष्य! जबतक अहंकारको न त्यागेगा तबतक मुक्ति के सुखको कदापि नहीं पासक्ता तब आत्मदर्शी शिष्य बोला कि हे भगवन्! इस सब संसारको मायामात्र इन्द्रजाल की नाईं जानकर अरु कामना शब्दादि विषयोंको सर्वानर्थका हेतु निश्चयकरके मनको इन सब से निग्रह करके मुक्ति केवल आत्मज्ञान से निश्चयकी कि आत्मज्ञान कि प्राप्तिके विना द्वैतभ्रम का नाश नहीं होताहै परंतु यह कहिये कि पुरुष आत्मज्ञान को कैसे प्राप्तहोवे और वह कौनसा धनहै या कौनतप है कि जिससे आत्मज्ञान प्राप्तहोवे मैंने सुनाहै कि यह सब जगत् एकक्षण में उत्पन्न होता और द्वितीय में नाश होताहै इसविषय में मुझको बड़ा आश्चर्यहै कि इतना बड़ा संसार एक क्षणमें उत्पन्न व एकक्षण में नाश किसतरह होताहै इस संशय के निवृत्त करने में ऐसा उपदेश कीजिये कि मैं इस संशय से रहित होके स्थित होजाऊं तब वासकरण गुरु हँसकर बोले कि हे शिष्य! यह देखो और जानो कि एकक्षण में आनन्द और द्वितीय क्षण में शोक अर्थात् दुःख होता है जैसे जबतक निद्रा है तबतक स्वप्न के पदार्थ सत्यकी नाईं प्रतीत होते हैं और जाग्रत् में असत्य की नाईं भासते हैं तैसेही जबतक अज्ञान है तबतक यह सर्वजगत् सत्यकी नाईं भासता

है और जब आत्मज्ञान होता है तब परमात्मा से अति-
रिक्त किञ्चिन्मात्र भी नहीं भासता तब आत्मदर्शी बोला
कि हे भगवन्! अब मुझको निश्चय हुआ कि मुमुक्षुका
प्रयोजन इन्द्रियोंके निग्रह करने व आत्मज्ञान व विद्वानों के
सत्संग से प्राप्त होताहै हे भगवन्! अब दयाकरके यह उपदेश
कीजिये कि जिससे मैं अपने स्वरूप को जानूं और यह भी
बतलाइये कि षट्शास्त्र में कौन शास्त्र उत्तम है और आत्मज्ञान
किस शास्त्रमें होताहै इसके पहिले आप कथन करचुके हैं कि आ-
त्मज्ञान वेदान्तशास्त्र में है और कल्याणकर्त्ता भी वेदान्त शास्त्र
ही है यह किसप्रकार निश्चयहोवे और ईश्वर सर्वजगत् को
और चार प्रकारके प्राणियोंको उत्पन्न और पालन करताहै और
कारणरूपहै अरु कारण कार्यका अभेद होताहै, यह प्राणी दीन
व दुःखी है यह कारणरूप कैसेहै तब वासकरण बोले कि हे शिष्य!
जबतक यह जीवात्मा अर्थात् मनुष्य अपने स्वरूप को नहीं
जानता तबतक दीन और दुःखी आदिक होताहै जब अपने स्व-
रूपको साक्षात् कार अपरोक्ष ज्ञानकरिके जानताहै तब वेपरवाह
ईश्वररूप आपही होता है जैसे लकड़ी अग्निमें प्राप्त होकर
अग्निरूप होजाती है व जैसे दीपक सूर्यके प्रकाशमें तिरस्कार
को प्राप्तहोता है और उसका प्रकाश सूर्यके प्रकाश से प्राप्तहोता
है इसीप्रकार आत्मज्ञान द्वारा द्वैतके अभाव होने से जीवात्मा
परमात्मासे अभेद होतेहैं हे शिष्य! यह अश्रद्धा मनुष्यको सर्व
अनर्थ में प्राप्तकर्त्ताहै और अश्रद्धा बाह्यबुद्धिसे होतीहै हे शिष्य!
यह बुद्धि त्रिगुणात्मक है जबतक राजसी, तामसी होतीहै तब
तक जगत् के पदार्थको सत्य और सुखदायक जानती और बंधन
में फंसतीहै और शब्दादि विषयोंपर प्रबल नहीं होती इससे
सुखी और शान्त नहीं होती व्याकुल रहती है और मुक्ति नहीं
पाती इसीसे द्वैतको स्थापित करके अपने स्वरूपसे भूलती है
तरंग और नदीकी नाईं ब्रह्म और जगत्को भिन्न जानती है जैसे

कोई पुरुष कंठगत भूषण को भूलकर अनेक जगहमें खोजताहै और नहीं पाता और अंधासमीप में स्थित छड़ीको नहीं देखता और दूसरे से छड़ी मांगताहै तैसेही यह पुरुष राजसी तामसी बुद्धिके वश अंधा होकर दूसरेके सकाशसे मुक्ति चाहता है जब यह पुरुष विद्वानोंके सत्संग से बुद्धिको राजसी तामसी मलसे शुद्ध और सात्त्विकी व शब्दादि विषयों की कामना व कायिक वाचिक और मानसिक कर्मोंकी उत्तम व निकृष्ट दृष्टिको त्याग करके आत्मज्ञानको प्राप्त होकर आत्माको सबके संगसे रहित और अद्वितीय तरंगों में जलकी नाईं व भूषणों में स्वर्णकी नाईं अद्वितीय पूर्णजानताहै हे शिष्य! तुम जाति, वर्ण व नाम, रूप व स्तुति, निन्दा के स्पर्श से रहित और स्वतंत्रहो और तुम आपही अपनी इच्छासे नानाप्रकार चतुर्विधि शरीरों में प्राप्त हुयेहो और इच्छा से अतिरिक्त किसी दूसरे ने तुमको अपने शरीर में प्राप्त नहीं कियाहै और जब तुमको निस्सन्देह ऐसा निश्चयप्राप्त हुआ कि सम्पूर्ण सृष्टि आत्मामें अध्यस्थ सुक्तिका के रजत और रज्जुके सर्पकी नाईं आत्मरूपही है सो आत्मा मैंहीहूं मुझसे भिन्न किञ्चिन्मात्र भी द्वैत नहीं है तब तुम सम्पूर्ण बन्धनों और शरीर की प्राप्ति से रहित होगे जैसे पक्षी फांसी में फँसा हुआ फन्दा को तोड़कर छूटजाता और सुखी होताहै तैसेही तुम कामनारूपी समुद्रसे पारहोकर और जन्म मरण और मृत्यु व रागादि सर्व अनर्थों से रहित होकर परमानन्द को प्राप्तहोगा इस विषय में श्री विष्णुजी ने जो राजा सतोव्रतको हुआ है वह श्रवण कीजिये॥

राजासतोव्रतका इतिहास प्रारम्भ॥

पूर्वकालमें एक सतोव्रत नामीराजा जिसने कि एक हजार अश्वमेधयज्ञ किये हुये था और नित्यप्राति दशलाख ब्राह्मणों को सोने के पात्रमें भोजन कराके वह पात्र भी उनको देदेता था और एक लाख गऊ दूधदेनेवाली सहित बछड़े के जिनकी

गर्दन में सोने की हमेल डालकर विधिपूर्वक नित्यप्रति ब्राह्मणों को दान में देताथा और यथायोग्य याचकों का भी सत्कार करता था और अनेकप्रकार के उत्तम २ मंदिर बनवा के ब्राह्मणों और याचकों व गरीबोंके रहनेके लिये दानमें देता था और मिथ्या वचन व गाली इत्यादि कभी अपने मुंह से स्वप्नमें भी न निकालता था और प्रजाको पुत्रके समान मानकर आप सदा श्रुति स्मृति कथा पुराणादि शुभकर्मोंमें प्रवृत्त रहता था हे शिष्य! इस इतिहासके सुनने से तुम स्वर्ग नरक, सुख दुःख व संसारके आवागमन से रहित हो जावोगे इससे तुम अपने बुद्धिरूपी श्रवण से ध्यान धरकर सुनो जब प्रथम पूर्वसमय में ब्रह्माजी ने अश्वमेधयज्ञ का आरंभ किया था उसमें महादेव आदि सम्पूर्ण देवता व ऋषीश्वर, देवर्षि, ब्रह्मर्षि,राजर्षि देवलोक व मर्त्यलोक वासी व सब राजालोग भी उपस्थित होकर यथायोग्य अपने २ कामों में लगेहुये थे और धर्मराज व इन्द्र वरुण कुबेर आहुति देतेथे व वसिष्ठ भृगु, नारद व सनकादिक महर्षिगण ब्रह्माजीके पुत्र वेद उच्चारण करतेथे यह ऐसा अद्भुतयज्ञ हुआ कि जिसके समान पूर्वकाल में कभी नहीं हुआ था और लोग उस यज्ञमें विद्यमान थे सब मुक्त होगये और राजा सतोव्रत मुक्तिरूप धर्मनेष्ठी और दानी जिसके सदृश कोई दूसरा राजा दानी नहीं हुआ था उसने उस यज्ञमें महादेव जी से यह प्रश्न किया कि हे सर्वेश्वर, हे अन्तर्यामी, हे महादेवजी! मेरे संकल्प विकल्पके निवृत्त करनेकी शक्ति आपके सिवाय और किसी में नहीं है इससे दयाकरके मेरी संदेह जनित संशयको निवृत्त कीजिये तब महादेव जी बोले कि अब तुम अपना संशय प्रकट करो तब राजा सतोव्रत बोले कि हे भगवन्! मेरी आयु चारपरन अर्थात् एक सौ बीस वर्ष की थी तब मेरे पिताका देहान्त हुआ और मैं राजसिंहासनपर बैठाथा और अब मेरी अवस्था बीस हजार वर्षकी है कि मैं राजकरता हूं और जो कुछ प्र-

क्रिया राजकरने की व राजधर्म कर्म वर्णाश्रमके वेदमें कहे हैं वे सब यथावत् करता हूं और दान व सम्पूर्ण उपासना भी वेदानुसार करता हूं परन्तु मेरा मन सांसारिक कामना व सब व्यवहारोंसे अबभी अलग नहीं होता न स्वतंत्र होकर निष्कामहोता है कि जिससे मुक्ति को प्राप्त होऊं और दूसरा संशय यह है कि मैं आपको नहीं जानता हूं कि मैं कौन हूं व कहां से आया हूं और मेरा कारण क्याहै और किसके अनुग्रहसे सम्पूर्ण इन्द्रियां व्यवहार करती हैं तब श्रीमहादेवजी राजाके इन प्रश्नोंको सुन कर ब्रह्मादि सम्पूर्ण देवता व ऋषियों की ओर देखने लगे तब ब्रह्मादि सब नीचेको शिरकरके ध्यान में स्थित होकर शोचने लगे और उत्तर देनेको समर्थ न हुये जब ब्रह्माजी ने देखा कि सब देवता और ऋषिलोग राजा के प्रश्नोंका उत्तर न देकर लज्जाको प्राप्त हुये तब हँसकर बोले कि हे राजन्! तुम धन्यहो और तुम्हारे प्रश्नका उत्तर आत्मज्ञान और निर्वचन है इससे कोई देवता व ऋषीश्वर नहीं जानते हैं मैंने इस आत्मज्ञानको चारोंवेदों से निकालकर वेदान्त शास्त्र में स्थापन किया है वह वेदान्तशास्त्र सब से छिपाकर वैकुण्ठ में विष्णु जीके पास रक्खा है और मुझे संसारमें आत्मज्ञान प्रकट करने के लिये विष्णुजी की आज्ञाभी नहीं है इसलिये कि यदि यह गुप्तज्ञान संसार में प्रवृत्त होजावेगा तो संसारका कारण व जगत्की उत्पत्ति व बन्ध व मोक्ष का भय व तप दानका राग द्वेष व स्वर्ग नरक की आशव जन्म मृत्युका अभाव होजावेगा और जब संसार की प्रवृत्तिही न होगी तब अन्त कैसे होगा, सम्पूर्ण कठिन कार्य श्री विष्णुभगवान् की कृपा से सुगम होजाते हैं वही नारायण आकर तुम्हारा कार्य सिद्ध करेंगे इसप्रकार वार्तालाप होही रहाथा कि उसी समयान्तर में विष्णु भगवान् भी उत्तम मणि जटित चन्द्रमा के सदृश प्रकाशमान श्रेष्ठ विमान में बैठे हुये ब्रह्माजीकी यज्ञमें आपहुंचे कि जिनको देखकर सबलोगों

हाथजोड़ कर स्तुति व नमस्कार और पूजन किया तब श्री विष्णुभगवान् अन्तर्यामी बोले कि हे महादेव, ब्रह्मा व सम्पूर्ण देवता व ऋषि लोग! मैं राजा सतोव्रतके प्रश्नोंका उत्तर कहताहूं उसको सब लोग श्रवण करो इसप्रकार विष्णुभगवान् सबको सचेतकर बोले कि हे राजन्! यह सब देवता ऋषि पृथ्वी, पर्वत, आकाश और मनुष्य व तिर्यग और यह सर्व दृश्य मिथ्या और असत्यहै प्रथम तुम इस अपने शरीरको जिसपर ममत्वका गर्व करतेहो देखो यहही असार और मिथ्याहै इसलिये कि शरीर के सम्पूर्ण अंगों के नाम अलग २ हैं फिर तुम कहां हो इसीप्रकार सम्पूर्ण संसार मिथ्याहै और यह जो प्रकाश्यहै सो आत्मा का प्रकाशहै वह आत्मा मैंहूं और पृथ्वी आकाश दिशा, सूर्य चन्द्रमा यज्ञ और होम व ब्रह्मा और महादेव व सर्वमैंही हूं और हाथी व पिपीलिकादि में मैंही हूं मैं अद्वितीय हूं और सब में समान भाव से स्थितहूं छोटाई व बड़ाई न्यूनाधिक्य जो देखता है यह शरीर का धर्महै अज्ञानी की दृष्टि में न्यूनाधिक्यहै यह सत्य नहींहै क्योंकि सर्व का अधिष्ठान आत्मामैंही हूं जोकि न्यूनाधिक्यादि सम्पूर्ण कर्म के फलों से रहितहूं और जब मैंही हूं और अपनी इच्छानुसार सबमें पूर्णहूं तब न्यूनाधिक्य किसप्रकार होसक्ताहै मुझको मृत्यु और सुख व दुःखादि शारीरिक धर्मोंका लेशभी नहीं है जब शरीर और सम्पूर्ण चराचर मेरीही सत्ता से चेष्टा करतेहैं तब कहिये कि जन्म मृत्यु किसकीहै या नहींहै हे राजन्! इनसब का प्रयोजन और सिद्धान्त मेरी प्राप्तिमें है और [illegible]व तप दान और देवतोंका पूजन करतेहैं परन्तु सबसे उत्तम यह [illegible]कि मेरे स्वरूप को सर्वाधिष्ठान यथावत् करें और यहही सत्यहै [illegible]र यह मनुष्य तप और कर्ममें अति कष्ट करिके अभिमानको [illegible]स होताहै अरु कामना उसकी तपके फलमें और तपकरने में [illegible]हि और मेरी मुक्ति की प्राप्ति से रहित होताहै और उसकर्म [illegible]पना फल उसी प्राणीको बारम्बार जन्म लेने व मृत्यु होने

और विषय भोग इस मृत्युलोकका प्राप्त होताहै और नानायोनि में प्राप्त होकर उसका फल भोगताहै जब सब कामनाओं को त्याग कर उत्तम अधम न्यूनाधिक्यकी दृष्टिको हटाकर तबसम्पूर्ण आत्मा साक्षात् करिके जन्म, मृत्युसे रहित होताहै और बन्धन यही इच्छा है हे राजन्! मैं तुमको थोड़ेही में मुख्य सिद्धान्त बतलाये देता हूं सुनो आत्मज्ञान छोटाई बड़ाई वर्णाश्रम और कोई कामना के त्यागने से प्राप्त होतीहै और आत्मज्ञान भी इसी परित्यागका नामहै इसके सिवाय और कोई साधन कल्याण दायक नहीं है आत्मज्ञानी अपनेको व सम्पूर्ण चराचर जंगमादि को एक ब्रह्मस्वरूपही जानता है क्योंकि ब्रह्मसजातीय, विजातीय सुख दुःखादि भेदों से रहित होकर पूर्णहै आत्माके विना दूसरा भूत, भविष्यत, और वर्तमानमें कोई नहीं है यदि सर्व आत्मा व सर्वाधिष्ठान हमीं हों तब इस मुमुक्षु अर्थात् तुमको क्या योग्य है कि जो अपने को जीव और बन्धन जाने जो कु देखे आपको देखे व जो कुछ जाने आपको जाने और अपने अतिरिक्त सबको त्यागकर सजातीय आदि भेदसे रहित मुझको अर्थात् विष्णुको अपना आपकरिके जाने और दृढ़निश्चय क और विश्वास करिके जाने कि मेरा कारण कोई नहीं है औ मैं उत्पत्तिसे रहित हूं और मुझको यही इच्छा नानाप्रकार शरीरोंमें प्राप्त करती है यदि इच्छा न होवे तो मैं जन्म मृत्यु रहितहूं इस निश्चयको दृढ़करके यदि संसार में रहे तो सांसारिक धर्म बंधमोक्षादि सबसे रहित होकर अपनेको असंग जा जैसे कमल जलमें रहता है परन्तु जल उसको स्पर्श नहीं क सक्ता तैसेही ज्ञानीको संसारी धर्म स्पर्श नहीं करते यदि मैं स चराचर स्थावर जंगमादिके प्रत्येक अंग रोम २ में व्याप्त होक पूर्णब्रह्महूं और मुझसे अतिरिक्त कोई पदार्थ नहीं है इसलिये ये सब मुझीमें अध्यस्थहैं इससे उचितहै कि मुमुक्षु आपको मे से अभेद निश्चय करके वर्ण और आश्रम ज्ञानी और अज्ञानी

इस अभिमान से रहित होवे और यह निश्चय करे कि द्वितीय कोई नहीं है जो मेरी मुक्ति करे जो कुछहै अद्वितीय आत्माही है यदि कोई पुरुष आत्मा से अतिरिक्त मुक्त करनेवाला अथवा स्वर्ग नरक को प्राप्त करनेवाला मानता है तो यह केवल उसका भ्रम मिथ्या है जैसे संसार में किसी पुरुष को दुःख आकर प्राप्त होता है तब माता पिता गुरू या और संपूर्ण समीपी स्थित होते हैं परन्तु उस पुरुष का दुःख निवृत्त करने के लिये कोई भी समर्थ नहीं होते विचार करके देखो कि जब गुरूआदि से दुःख निवृत्त न हुआ तब उसके कर्म उपदेश से मोक्ष और कल्याण कैसे होगा और जो पुरुष मेरानाम अर्थात् विष्णुका दिन रात जपता है और सुखी नहीं होता है उसका कारण यह है कि वह पुरुष मुझको भिन्न और अपनेको भिन्न जानकर दीनता और बिनती बहुत करताहै यह फल अज्ञान काहै और जिसको ज्ञान होताहै वह अपने से अतिरिक्त मुझे व संपूर्ण संसार को कदापि नहीं जानता है इसलिये कि सर्व्व आत्माही है वही ज्ञानी मेरी आत्माहै और सम्पूर्ण सृष्टि मुझीसे सिद्ध होती है अर्थात् मुझी से उत्पन्न होकर मेरे में ही स्थितहै जल तरंग की नाईं किंचित् वस्तु भी मुझसे और मैं किसी से भिन्न नहीं हूं हे राजन्! जिसके आत्मज्ञान रूपी नेत्र नहीं हैं वह अज्ञानी अंधाहै यदि कोई सुवर्णको पीतलकहे तो वह सुवर्ण पीतल कदापि नहीं होसक्ता सुवर्ण का सुवर्ण ही बनारहता है इसीप्रकार अज्ञानी मुझको भिन्न जानताहै जैसे मृग अपनी नाभिमें स्थित कस्तूरीको न जानकर सम्पूर्ण वनमें खोजता हुआ व्याकुल होताहै और उसे नहीं पाता तैसेही यह मनुष्य अपने आत्मस्वरूपके अज्ञान से मुक्ति और से खोजता फिरताहै परन्तु उसको प्राप्त नहीं होती यह नहीं जानता कि मैं नित्य मुक्त आत्मस्वरूप हूं और यह सब मेराही प्रकाश है और न्यूनाधिक्य मुझमें नहीं है और मैं अपनी इच्छासेही बंधनमें फंसाहूं और यह कामना तीनों लोक

के राज्यको भी पाकर तृप्त नहीं होती है और द्वितीय कौन है जो मेरी स्तुति करे तब विष्णुजी फिर बोले कि हे राजन्! जब तक यह मनुष्य तृष्णा और वासना व शरीरके भोगों व पदार्थों के रसमें फंसा है तबतक मोक्षका सुख कदापि न देखेगा और यह भी निश्चयकरो कि मैं बूंद चैतन्य अनन्त समुद्र की अंशा· कृत रूप जगत् का बीजहूं सर्व मेरे ही सकाशसे तृप्त हुआ है मेरा कार्य है आत्मा से अतिरिक्त किंचित् नहीं है कि सब वस्तु· ओंकी इच्छा करताहूं और यह जीव आपही आत्मस्वरूप के अज्ञान से वर्णाश्रम के बंधन में फँसा आपको जानता है और कहता है कि मैं ब्राह्मणादि हूं यह कर्म मुझको करना उचित नहीं तो पतित होऊंगा और नहीं जानता कि मैं वर्णा· श्रम और इनके धर्मों के स्पर्श से रहित हूं कैसा आत्मा है नित्य मुक्त स्वरूप है जैसे कोई एक बूंद नदी से जुदा करके नदीको भिन्न और बूंद को भिन्नरूप जानता है अरु वास्तव में वह बूंद नदी स्वरूपही है इसलिये कि जब उसको नदी में डालें तो नदी रूपही होजाता है तैसेही यह सर्व संसार मेराही रूप है यदि जो मुझसे अर्थात् ईश्वरसे भिन्न अभिमान करता है तब शब्दादि विषयों की कामना में फँसकर अपने वास्तव स्वरूप अर्थात् मुझ विष्णुको भूलके औरों से कामना मांगताहै और यदि जानताहै कि आत्मा ईश्वर मेंहीहूं और सबको अविद्या से कल्पित किया है तब जैसे बूंद अपने वास्तव स्वरूपको जो जल है जानकर बूंद और नदीके अभिमानको त्यागता है तैसेही यहभी अपने वास्तव स्वरूप को जो मैं हूं साक्षात् करके मुक्त होताहै और शुभाशुभ कर्मोंके बंधनसे रहित होकर मुझको और अपनेको अभेद निश्चय करता है और यदि पुरुष अपनेको जीव निश्चय करके और शुभाशुभ कर्म में आपको कर्त्ता मानिके सब कर्म ईश्वर के अर्पण करिके जो दुःख सुख आदि प्राप्तहोते हैं उसको ईश्वर के आधीन मानता है यह शुभाशुभ कर्म में

किया इसका फल मुझको प्राप्त हुआ ऐसा नहीं मानता सो भी परम्परा मेरे द्वारे मुक्तिको प्राप्तहोताहै इसलिये कि कर्तृत्व अभिमान से रहित और निष्काम होकर सर्व वासना से रहित होता है और तुमको भी उचित है कि सर्वकालमें सर्व शुभाशुभ व्यवहारों को ईश्वर को अर्पण करके अपने को सर्व के स्पर्श से रहित आकाशकी नाईं असंग निश्चय करके दिनरात तप, दान, होम और यज्ञकरके उसका फल ईश्वर जो मैं हूं मुझको अर्पण करो और तुमने जिस अहंकार से अपने को मुझसे भिन्न समझ रक्खाहै उसका परित्यागकरो सिद्धान्त चारवेद प्रत्यक्ष कहते हैं कि जीव सर्वका आत्माहै और वह आत्मा नित्य मुक्तरूप होकर सम्पूर्ण कर्म के बंधनों से मुक्त है इस तरह जानकर द्वैत निश्चय को त्याग सर्व चराचर को सजाति आदि भेद से रहित आत्मस्वरूप जानकर सबको अपने में अध्यस्थकर अपने को सबमें अधिष्ठानरूप निश्चयकरके मुझको और अपने को अभेद एक निश्चयकर इस निश्चय के विना कदापि मुक्ति नहीं होसक्ती परंतु ऐसा कदापि न करो कि कभी त्रैलोक्यनाथ और कभी भिक्षुक दरिद्री अपने को समझो या कभी निष्क्रिय आत्मस्वरूप और कभी कर्ता व भोक्ता आत्मा को निश्चयकरो जैसे कोई पुरुष दो नावपर सवार होकर नदीसे पार जाना चाहे तो पार न होकर वह बीचही में डूबजाताहै इसीतरह दो निश्चय वाला पुरुष भी संसाररूपी समुद्र में डूबता है अर्थात् बारंबार जन्म और मृत्युको प्राप्तहोना है इतना सुनकर राजा सतोव्रत ने पूछा कि हे महाराज! पहिले तो आपने उपदेश कियाथा कि सर्व अद्वितीय आत्मा है और अब नावका दृष्टान्त देतेहो यदि सर्व आत्माही है तब दुःख व सुख नरक व स्वर्ग जन्म और मृत्यु किसके निमित्त स्थापित करतेहो तब श्रीविष्णुभगवान् बोले कि हे राजन्! यह आत्मा है यदि कामनाके बीच अर्थात् कामनारूपी कूप में पड़ता है तब भेद दृष्टिको संपादन करके अ-

पने को ईश्वर से भिन्न जानता है इसीप्रकार से अनेक भ्रम अपने हृदय में स्थापित करता है और इन्हीं संकल्प विकल्पों से अनेक प्रकारके गर्भवासादिदुःखों को प्राप्तहोता है और जैसी इच्छा करता है वैसेही शरीरों में प्राप्तहोता है आत्मा आवागमन से रहित है अर्थात् न कहीं से आया है न कहीं को जाताहै वह सदा एकरस स्थित रहकर सर्वभय से रहित व शान्तरूप है इस मनुष्य अर्थात् आत्मा को सम्पूर्ण दुःख व अनर्थ अपने स्वरूप अर्थात् आत्माके न जानने से होते हैं सो अपनाको न जानना ऐसा है जैसे सोनार सोनेके अनेक भूषण बनाकर उनके नाम भिन्न २ रखकर असली सोनेको भूलजाता है हे राजन् जैसे ऊंखमें मिश्री दूधमें घी, काष्ठमें अग्नि और पत्थर में लोहा मिलाहुआ है वह यत्नकरने से प्राप्तहोता है इसीप्रकार सम्पूर्ण चराचर में भीतर व बाहर मैं आत्मस्वरूप व्याप्तहूं वह पुरुष जो अपने को संसार से और मुझको अपने से भिन्नजानता है मूर्ख है और भिन्नअहंकार करना व शरीरके साथ अध्यस्थकरके अपने को शरीरमात्र जानना केवल भ्रमहै इसलिये कि शरीर सर्वसंसार के सहित मिथ्या और नाशवान् है अर्थात् स्वप्न और मृगतृष्णा के जलकी नाईं है जैसे स्वप्नमें अनेकप्रकार के दुःख सुखादि देखता है और जब जागता है तो उस सुख दुःखादि की किञ्चित् गंध भी नहीं दिखाई पड़ती ऐसेही यह संसार स्वप्न से अधिक नहीं है क्योंकि यह क्षणभंगुर है अर्थात् एकमें उत्पन्नहोता है और एकही क्षणमें विलीयमान होजाता है बुद्धिमान् अपनी सत्ताको जो भिन्नआत्मा से कल्पी है सर्वसंसार के सहित असत् मृगतृष्णा के जल व आकाश की नीलिमा व गंधर्वनगर की नाईं निश्चय करके वास्तव स्वरूप जो आत्मा अधिष्ठान है उस को निश्चय सत्जाने कि जो कुछ है सर्व आत्माही है हे राजन् अब और भी उपदेश मेरेसकाश से श्रवण करो जो संसार अधिष्ठान और आत्माका कारण है और सर्व आत्मा के प्रकाश

प्रकाशितहैं सोजानो यदि यह सर्वआत्माही हुआ तब भिन्न और अभिन्न जानना कौनबुद्धिमत्ता और दुर्बुद्धि है हे राजन्! तुम आत्मस्वरूपहो तुम्हारा कदाचित् किसीकाल में भी नाश अर्थात् मृत्यु नहीं है तुम एक रसहो कदाचित् किञ्चित् भी तुममें द्वैत नहीं है और जो यह संसार मनुष्य और तिर्यक् अर्थात् अंडज, पिंडज, जरायुज स्वेदज व देवतादि सम्पूर्णहैं तुम्हीं हो और तुम नामरूप से रहितहो और मन बुद्धि आदिका अविषयहै यह तीनों लोक तुम्हीं से उत्पन्न हुये हैं और तुम सत् असत् बुद्धिका गोचर भी नहीं हो यदि तुमने सत् असत् अर्थात् कार्य व कारण सबको अपने में स्थापित किया तब द्वैत का अभाव हुआ तुमसे अतिरिक्त किंचित् वस्तु भी भिन्न नहीं है तुम निश्चय विचार करके विचार दृष्टिसे देखो कि मैं अर्थात् विष्णुदेव सब देवतों के सहित और आकाश, पृथ्वी और दशो दिशा तुम्हीं से उत्पन्न हुई हैं अर्थात् तुम्हीं से कल्पित कीगई हैं यदि तुम्हारी आत्मा मैं हूं और मेरी आत्मा तुमहो और मुझमें व तुम में कुछ भेद नहीं है तब किंचित् भी तुमसे भिन्न नहीं है यदि अपने को सबमें अभेद और सर्व के संगसे रहित जानोगे तब संसार रूपी बंधन से मोक्षहो जावोगे और सुख दुःखादि की प्राप्ति से रहित परमानन्दरूप हो जावोगे इसलिये कि आत्मा शरीर और रूपसे रहित है और सम्पूर्ण शरीर व रूप आत्माही के हैं और आत्मा कहने सुनने और संकल्प व निश्चय में नहीं आता और सबमें व्याप्त है हे राजन्! जो कोई सत् असत् और बंध व मोक्षकी इच्छा हृदय से निवृत्त करता है वह आपी आप होता है और सर्व सांसारिक कार्यों से रहित होता है जैसे माया व नट अनेकरूप और लीला दिखलाते हैं और देखनेवाला उन्हें उससे भिन्न मानता है तैसेही वह पुरुष अपने को द्रष्टा साक्षी जानता है और कर्मोंके करने व न करने व पुण्य और पाप व सुख दुःखके स्पर्श से रहित होता है व जैसे सूर्य सबको प्रकाशित करता है परंतु किसी के पुण्य व पाप से स्पर्श

नहीं करता और जब वह पुरुष अपनी उत्पत्ति व नाश और कर्म को मिथ्या जानकर सबका द्रष्टा अपने को मानता है तब शुभाशुभ कर्मों का फल जो हर्ष शोकादि शरीर की प्राप्ति से होताहै उसको नहीं पाता है अर्थात् ज्ञानी संपूर्ण शारीरिक धर्मों से रहित होजाता है हे राजन्! यदि तुमको मुक्त और मुझको अर्थात् ब्रह्मको प्राप्त होने की इच्छा है तो तुम्हें योग्य है कि अपने शरीर को संसार के सहित नाशवान् जानकर मुझको जो सर्व स्थानों में व सब शरीरों में पूर्ण हूं नाशरहित जानकर अपने शरीर में राग और सर्व शरीर से अधिक न करके जैसे आपको सुखहोवै वैसेही दूसरे को भी करो जैसे आपको दुःख होवै तैसे और को न करो और संपूर्ण संसार को व संसारी को अपने प्रकाश से प्रकाशित अर्थात् सुवर्ण भूषणकी नाईं सबका प्रकाशक मैंही हूं ऐसा निश्चय करके छोटे बड़े का भेद हृदय के बीच से उठादो यह छोटा बड़ा जानना केवल अज्ञान से है जैसे तरंग और बुद्बुदे व बूंद समुद्रके केवल जलही हैं तैसेही चराचर जीव केवल ईश्वर कीही एक आत्मा है और यह जो तुम्हारे हृदय में द्वैत निश्चय स्थित है कि अमुक मेरी मुक्ति का दाता है इस भ्रमको हृदयसे दूर करके अपने को जलकी नाईं सबमें संपूर्णजानो इसलिये कि यह कामनाही कर्म के बंधनमें डालती है और यह कामना केवल ज्ञानसे निवृत्त होती है कोई इस कामना से भिन्न नहीं है कि जो इसका बंधन मुक्त करसके यह मनुष्य जो मुझको अपने से और अपने को मुझसे भिन्न जानता है इसी कामनाकी अनुग्रह है इसी से बंधन होता है यदि यह मनुष्य कामना से रहितहोकर इस शुभाशुभ संसार को जो शरीर का धर्म और कर्मों का फल है इसको अपना से भिन्न जानकर केवल अपने को आत्मरूप जानता है वह बंध मुक्त और सुख दुःखादि व हर्ष शोक से मोक्ष होताहै हे राजन्! इस संपूर्ण उपदेश का यह सिद्धान्त इसको श्रवण करो कि यह पुरुष सर्व पुरुषार्थ, तप, दान और होम यज्ञ

और त्याग इसलिये करता है कि मुझको प्राप्तहोकर मुक्त होवे उसको सुनो कि जब यह अहंकार करता और हृदय में जानता है कि यह कर्म मैंने किया और और कर्मों के करनेकी अपने हृदय में कामना रखता है उसको मेरी प्राप्ति जो मुक्ति है किस-प्रकार प्राप्त होसक्ती है क्योंकि मेरा मुक्तरूप बिना ज्ञान के प्राप्त नहीं होता है इससे उचित है कि सर्व स्थावर जंगम चराचरादि पिपीलिका से लेकर ब्रह्मापर्यंत भीतर बाहर मध्य व्यापक पूर्ण आत्मा को जानकर किसी स्थान और शरीर में न्यूनाधिक्य अपने हृदय में न करे न जाने और सबको आत्मरूप निश्चय करे और शरीर मेरा अर्थात् विष्णु का और सर्व सांसारिक जीवों का आत्मा ही से उत्पन्न हुआ है अर्थात् आत्माही में अध्यस्थ है वह आत्मा मैंहीहूं आत्माको अपने से अतिरिक्त जानना हृदयसे दूर करके व निष्काम होकर सब शुभाशुभ कर्मों को मिथ्या जाने और मुक्तिकी इच्छा भी बंधन है क्योंकि जो मन मुक्ति की इच्छा करता है वह किसी कालमें भोगों की भी इच्छा करेगा जैसे जो संस्कार जाग्रत्अवस्था में मनमें स्थित होता है वही संस्कार स्वप्नमें भी प्रकट होते हैं इसलिये तुमको योग्य है कि अपने को शरीर व इच्छा से रहित साक्षात् करके इच्छा बंध व मुक्ति की न करो इसलिये कि तुम आत्म मुक्तरूप हो आत्मज्ञानको क्या खोजतेहो तुमसे सामर्थ्यवान् और शक्तिमान् कोई नहीं है कि तुम्हारी मुक्ति करेगा तुम आपही मुक्तरूप हो और तुम मुझसे मैं तुमसे भिन्न नहीं हूं तुम निरसंशय विचार करके देखो कि एक अद्वितीय ब्रह्ममें हूं अर्थात् एक सर्व विष्णुही है हे राजन्! तुमको योग्यहै कि द्वैतचिन्ता को हृदय से दूरकरो और किसीपदार्थ की इच्छा न करो यही निश्चय मुक्त है और यदि संकल्पकरतेहो कि कोई द्वितीय हमारी मुक्ति करेगा इतनाही बंधनहै और तुम तीनोंलोकों के ईश्वर और सर्व के प्रकाशकहो और आपही आत्मस्वरूप होकर मुक्त और कल्याण की आशा

और से करतेहो यह मूर्खता है तुम से अतिरिक्त द्वितीय वन्ध्या के पुत्रकी नाईं कहां है जो तुम्हारी मुक्ति करसके हे राजन्! तुम को योग्य है कि मनको द्वैतरूपी भ्रम से निवृत्त करके अपने स्वरूप को साक्षात् करो जब द्वैत भ्रम तुम्हारे मन से निवृत्त होजायगा तब तुम स्वयंआत्मरूपहीहो हे राजन्! निश्चयकरो और निस्संशय जानो कि मैं आत्मस्वरूप हूं और यह सब मेराही प्रकाश है विष्णु भगवान् इस प्रकार राजासतोव्रतको उपदेश करके और ब्रह्माजी की यज्ञको ग्रहण करके अन्तर्द्धान हुये और ब्रह्माजी का यज्ञसम्पूर्ण हुआ और राजासतोव्रतभी अपने स्वस्वरूप को प्राप्तहुये तब वासकर्ण जी बोले कि हे पुत्र! यदि तुम को मुक्तहोने की इच्छा है तो तुमको उचित है कि जो श्रद्धा और पुरुषार्थ विष्णुजी के उपदेश में जो राजा सतोव्रत को हुआ है उसमें करके अपनेको और सबको एक अद्वितीय आत्मा जानो अर्थात् साक्षात् करो कि मुक्ति केवल कर्म की गंध से रहित होकर आत्मज्ञानसे होती है तब आत्मदर्शी इस प्रकार राजा सतोव्रत और विष्णुभगवान् के संवादको श्रवणकरके और निस्संशय होकर बन्ध व मुक्तके भयसे रहित हुआ॥ हरिः ॐ तत्सत्॥

इति श्री पराशर संहितायां इतिहास वासकर्ण आत्मदर्शी का सम्पूर्णम्॥

भाद्रपद शुक्लपक्षेतु तृतीयायां भौमवासरे विलेखि पुस्तकंरम्यं प्रयागदत्तेनधीमता—संवत् १९३७ विक्रमी

॥ शुभम्॥

वृहन्नारदीयपुराण भाषा ॥

जिसमें

श्रीनारदजी अरु सनत्कुमारसंवादद्वाराश्रद्धाभक्तिनिरूपण, भगवद्भक्तिमाहात्म्यवर्णन, उत्तमतीर्थोंकानिरूपण, सगर वंशीसौदासकीकथा, श्रीगंगाजीकीउत्पत्ति, राजाबलि कावृत्तांत, दानविधिकानिरूपण, व्रतोंकानिरूपण, श्राद्धविधान, तिथिनिर्णय, प्रायश्चित्तविधान, यममार्गकानिरूपण, संसारकेदुःखोंकाकथन, मोक्षोपायकथन, वेदमाली अरु तिनकेपुत्र यज्ञमाली व सुमालीकीकथा, विष्णुजीके पादोदककामाहात्म्य, उत्तङ्कमुनिकृतविष्णुस्तुति, राजायज्ञध्वजकीकथा, मन्वंतरोंकावर्णन, हरिपूजाकाफल, युगोंके धर्मोंकावर्णन अरुपुराणश्रवणकाफलइत्यादिक कथा वर्णित हैं ॥

जिसको

भार्गववंशावतंस श्रीमुंशीनवलकिशोरजीकी आज्ञानुसार शुक्लदेवीसहायशर्मानारनवलीयनेसम्पूर्णविद्वज्जनों के मनोरंजनार्थ रचनाकिया

पहलीबार

लखनऊ

मुंशीनवलकिशोर के छापेखाने में छपो

[illegible] सन् १८८० ई०

बृहन्नारदीयपुराण की

भूमिका ॥

धन्य २ है तिन परम पुरुष पुरुषोत्तम परमात्मा विष्णु जी को, जिनके श्वासरूपवेदको जिन्हींके नाभिकमल से उत्पन्नभये ब्रह्माजीने धारणकिया फिर फिर कालान्तर में श्रीकृष्णावतार भये कृष्ण द्वैपायन व्यास जी ने तिसके ऋक्, यजु, साम, अथर्व, ये चार भाग किये अरु तिन वेदों के अनुसार अठारह पुराण, तथा उपपुराण बनाये तथापि अब के सामान्य जन संस्कृत पठन की हीनता से तिन्हें न समझ के पछताते रहे । वही दया श्रीविष्णु जी से उत्पन्नहोकर श्रीनवलकिशोरजीके हृदय में बढ़ी, जो इस समय पुराणों को सरलदेशीयभाषान्तर में करवारहे हैं । यद्यपि पहले हमारे महाराजा जनों ने ये पुराण, लिखवा कर स्वीय २ आधीन रक्खे थे पर तथापि दुर्लभता अरु क्लिष्टता के कारणसे ये पुराण लुप्त होनेलगे थे यथा यही (बृहन्नारदीयपुराण) पण्डित (राजाराम) शास्त्रीजीसे लिया सो सम्वत् १५१३ का लिखाहै तिसे और भी पुस्तकान्तर से मिलाय ठीककरके यह तय्यार कियागयाहै, यह छोटासा अत्युत्तम प्रामाण्य पुराण है जहां तहां बहुतसे ग्रन्थों मे, तथा निर्णय आदिकों में इसके प्रमाण दियेहैं, अरु धर्म वर्णनविषे इसने क्रमअच्छा कहाहै जैसे देवालय बनाने में नींवखुदाने का फलकहा तिस्से अधिक मिट्टीसे बनाने अरु तिस्से अधिक ईंटोंसे चिनाने का तिससेभी अधिक पत्थरों की चिनाई का अरु तिनसे अधिक धातुलगा कर तथा मणिजड़ाकर बनानेका फलहै यह विष्णुके १३ अध्याय तथा, १०४

ज्ञाता विष्णुजीने भृगुजी को जलधार रोकते जानकर तिस कलशके छिद्रमें पैना कुशपत्र चलादिया तिससे वे काने होगये क्योंकि वहपत्र विष्णुजीने मंत्रित किया महास्त्र होगया था, अरु ध्वजारोपण धर्म्म वर्णन में जैसे (कौकिलिनी) निज ओढ़ने के वस्त्रकोही डण्डे में बान्धकर मद्योन्मतहुई फिराती भई तिसी से ध्वजाके फल को पाकर विष्णुभुवन को पधरी ये कथा १८ अध्यायके ७७ श्लोकार्थ से १०६ तक कही गई है ऐसी २ विशेष रोचक कथा सुगम प्रकार से इसमें कही गई हैं, अरु अब पूर्वोक्त स्वाधीन रखने से दुर्लभता दोष भी न रहैगा क्योंकि श्रीनवलकिशोर जी तो एक से अनेक सहस्र पुस्तकें छपवा २ कर निरादर न होनेके कारण कुछेक मोल्य मिषसे तिन करके समस्त लोकों का उपकार कररहे हैं इसी से ये पुराण एका एकी नष्ट भी न होंगे अरु इनके प्रवर्त्तक यशः शरीरी मुंशीजी भी इस संसारमें अजर अमरही रहैंगे इसी विषय में एक दोहा है ॥

दो० प्राणसमान पुराण में प्रेम्यो जिन मन मोर ॥
सोजगमें युगयुगजिवो यशतन नवलकिशोर १

यद्यपि सामान्य शरीर सौ वर्षमेंही नष्ट होजाता है पर यशरूप शरीर का कभी भी नाश नहींहोता इसलिये (यशतन) ऐसा विशेषण दियागया अलमति विस्तरतः शमस्तु तमामलम् ॥

(आपका शुभचिन्तक) शुक्लोपनामक
पण्डितदेवीसहाय शर्म
नागनवलीय ।

बृहन्नारदीयपुराणभाषाका सूचीपत्र ॥

इति



अथ बृहन्नारदीयपुराण भाषा ॥

तत्रतावद् व्याख्यातुमंगलाचरणेप्रथमं श्रीगणाधिपतेः
स्तुतिः साच आसावरी रागेण गीयते यथा

मम देहि गणेश्वर ज्ञानम् । विध
मुझको देवो गणेशजी ज्ञान बुद्धि से
ध्यायेहं तव ध्यानम् । अहोमम दे० ॥
चिन्तवन करता मैं आपका ध्यान । हो मुझको दे० ॥

ध्रुपदम् ॥

देहि गणेश्वर से विज्ञानं । सदसद
दे वो गणेशजी मुझको विशेषज्ञ विज्ञान । जो सत् असत्
भावविभानं ॥ लयादरण विक्षेप वि
भावका विशेष भानवान् जो निद्रा चित्तढकना विक्षिप्त इनसे
अर्थात् जिस ज्ञानसे मैं अच्छे
बुरे पनकोजानोपिर कैसा ज्ञान
रहितं । सद्विज्ञान वितानं ॥ मम दे० १ ॥
सर्वथा वर्जित । श्रेष्ठ विज्ञान है वितान जिसमें । मुझको दे० १ ॥
गण नायक मुद मंगल दायक । सदि
हे गणों के नायक स्वामिन् हे मोद मंगल देनेवाले । सम्यक्
ना से सन्मानं ॥ येन भवच्चरणा
करो मेरा सन्मान । जिस सन्मान से आपके चरण

कमलातिः स्या हर्तयत पन्थानं ॥ मम दे० २ ॥

कमलोंमे प्रीति होवे वर्तावो तिस पथ प्रति । मुझको दे० २ ॥

श्रीसंपृक्चरणा सरोज रजोऽजं । पायय मेऽ

है श्री वाले निज चरण सरोज रज से जन्य । पियावो मुझको

मृतपानं ॥ यत्पूतेन पवित्र अहं स्यां

अमृत का पान । जिस पवित्र पानसे पवित्र मैं होओं

गच्छेयं स्वर्यानं ॥ ममदेहि गणेश्वर० ३ ॥

अस जाओं स्वर्ग यान मुझको देवो गणेशजी ३ ॥

अर्थात् जिस्से मैं विमानमें

बैठ स्वर्ग को पधारों ।

स्तोत्र मिदं शुक्लेन सुरचितं । सत्स

स्तोत्र ये शुक्ल कारके रचागया । श्रेष्ठ सं

म्पत्ति निधानम ॥ नानान न्द करं

पत्तियों का निधान । । नानाआनन्द कारक

भय हारं । भावित भूतल भानं । म० ४ ॥

भय हारक । भावना किया भूमितलमें भान । मु० ४ ॥

जिस्का अर्थात् जिनकी सरस महिमा जानी गई

शिवस्तुतिः पूर्वोक्तेनैव रागेण

शिवजी की स्तुति पूर्व कहेहो आसावरी रागने । जैसे ।

अहो जय शंकर शिव जय कारिन ।

हो जै हे शंकर हे शिव हे जय कारिन ।

जय जय हेमाद्रि विहारिन । अहोज

जै जै हेमा चल विहारी हो जै

य शं० ॥ ध्रु पदम ॥ शांतामित पदमास

शं० । हे शांत अमित पद्म आस

न पद्मित सस्मित सुमन सुचारिन

न से पद्मित कमल आसन बैठे आत्ममयी

हाये फलों मे श्रेष्टपारी अर्थात शोभित

वामांगे सुविराजित भ्राजित शक्तचु
वामे अंग सुन्दर विराजी कांति वाली शक्ति
सया सहचारिन्न। अहो जय शं० १॥
उमा करके सहित विचरने वाले। हो जी शं० १॥
पंचानन चा नन प्रिय दर्शन। कानन
हे पंचमुख अरु मुखों से प्यारे दर्शन वाले। बन के
कुसुम प्रकारिन्न॥ शिव शम्भो शशि
फूलों के प्रकार वाले। हे शिवजी शंभुजी शशि
शेखर शंकर तोमर शूल सुधारिन्न ज० २॥
शेखर हे शंकर जी हे तोमर त्रिशूल धारिन्। जै० २॥
शुद्ध श्वेत सुन्दर त्रिपुरन्दर। मन्दर कं
हे शुद्ध धवल सुन्दर त्रिपुरासुरको विदारने वाले। मंदराचलको कं
दर सारिन्न॥ पारावार गधार सुधारिन्न।
दरोंमें विचरने वाले। समुद्र गामिनी गंगा को धारण करने वाले।
बहुल भुजंगम हारिन्न। ज०। ३॥
बहुत से सर्पों के हारों वाले। जै०। ३॥
देवी सुकुल मुकुल चरणाब्जं। ध्या
देवीसहाय कुलीन आपके प्रेम कुदाल वाले चरण कमलको। ध्या
यतितं भय हारिन्न नाम मुहुस्ते गाय
ता है सत हे भय हारी जी आपका नाम वेर २ गान करके
तिरायति मुदित मनास्त्यु दारिन्न। ज०॥४॥
करता है श्रेष्ठ देवरवे: स्तुति मोदमन भया वे उदारता वाले। जै ४॥
प्राता तीर रागेरा गीयते
प्रभात समय के राग से गाई जाती है
प्रातर्हृदि चिंतयामि श्रीदिनेश देवं।
प्रात हृदय में चिन्तन करता हूं मैं दिनेश देवजीको।

प्रा० । ध्रु पद्म । प्रातर्हृदि चिंतयामि
प्रभा० । टेर । प्रभात हृदै में चिन्तता हूं
मनसा सततं स्मरामि ॥ नामते ऽनुसंद
मनसे निरंतर तिनका स्मरण करताहूं ॥ नाम आपकालेता
धामि । भक्त्या ह्यनु सेवन । प्रातर्हृ० ॥ १ ॥
हूं । भक्ति करके सेवा पूर्वक । प्रभात हृ० । १ ।
उदित मुदित वन्द्य वदन । बुद्धि विनय स
उदय भये हर्षित वंदनीय वदन वाले । बुद्धि नम्रता के प्रे
स्सदन अखिल दितिज हत कदन प्रा
ष्ठ स्थान संपूर्ण दैत्यों का किया नाश जिन्होंने प्र
तरुदित सवं । प्रात० ॥ २ ॥ जय जय दि
भात उदय होतेहो । प्रभात० ॥ २ ॥ जै जै हे दि
नकर दिनेश । नारायण नर नरेश ॥
न कारी जो दिनके ईश हे नारायण हे जलदाता नरोंके ईश ।
ध्याये त्वाहं परेश दानव परिदेवं । प्रा० ॥ ३ ॥
ध्याताहौं आपको मैं हे परमेश हे दानोंको दुखदायीजो । प्र० ॥ ३ ॥
ईश्वरी सहाय सूनु रुक्म गंगा सहायस्तद
शुक्लजी ईश्वरीसहायके पुत्र श्रेष्ठ गंगासहाय तिनका
नुज देवी सहाय अस्तौषी देवं । प्रा० ॥ ४ ॥
छोटाभाई देवीसहाय स्तुतिकर्ताभया देवदिनेशजीको । प्रा० । ४ ।

पुराण कर्तु मंगलाचरणम्

—※—

हम श्रीकृष्ण महाराजको बंदना करते हैं जो कृष्णजी वृन्दावन में विराजमान लक्ष्मी के आनन्द स्थान। बासनरूप,सांद्र,करुणायुक्त अर्थात दयावाले,अरु परम आनंददाता,प्रभु। १। अरु जिन कृष्णजी के अंश कला रूप लोकपाल,संसार के साधक अर्थात जगत की रक्षा करते हैं। ऐसे तिन आदि देव,चैतन्यरूप,निर्मल,उत्कृष्ट शक्ति वाले श्रीकृष्णजीको भजते हैं। २ । श्री सूत जी बोले कि शौनक आदि जोब्रह्मबादी महात्मा ऋषियें। सो मोक्ष चाहते (नैमिष) महावन में तप करते थे। ३। जो ऋषिजन जितेन्द्रिय,जित भोजन अर्थात इंद्रियों को वश करते अरु अमित भोजन कन्दमूलफलादि भक्षण करते थे ऐसे वे सत्यवादी संत मुनिजन। जो परम भक्ति से आदि गुरु विष्णु जी का यजन पूजन कररहे। ४। फिर जो हिंसा ईर्षा रहित,सब धर्म जानते,लोकोंके अनुग्रह में परायण। अरु ममता,अहंकार,इनसे रहितपरमेश्वर में प्रीति युक्त मन जिनका । ५। अरु जो प्राप्त मनोरथ,निष्पाप,शमदमादि गुण सहित। कृष्ण मृगचर्म ओढे,जटाधारी,ब्रह्मचारी। ६। अरु परमेश्वर का नाम उचार रहे,जगत के जीतने वश करने को सब समान बल वाले। धर्म शास्त्रार्थ तत्त्व जानने वाले ऐसे २ वे तिस नैमिषारण्य में। ७। कोई तो यज्ञों से यज्ञपपति विष्णु जीका यजन कर रहे अरु कोई ज्ञानी जन,ज्ञानात्मक तिनका,मनसे पूजन कर रहे अरु कोई परम भक्ति से देव जी को पूज रहे। ८। तो एक दिन तिन महात्माओं ने उत्तम निज समाज किया अर्थात सब इकट्ठे होके बैठे

जो धर्म अर्थ काम मोक्ष इनके उपायको जानना चाहने
९ । जो कि वे छब्बीस सहस्र ऊर्द्धरेता मुनि जन । अ
तिनके शिष्य,प्रशिष्यों की तौ संख्या नहीं होती १०
भावित है आत्मा जिन करके अर्थात ब्रह्मज्ञानी। लोक
केअनुग्रह कारी,त्यागास्नेह जिन्होंने,महातेजस्वी,ऐसे
वे मुनि जन मिले अर्थात एकत्र होके ये विचारते भये
११ । १२ । कि भूमि तलसें पुण्यक्षेत्र अरु पवित्र तीर्थ
कौन २ हैं। कैसे दुःखित चित्त वाले जनोंकी मुक्तिहोवे
१३ । सो कि मनुष्यों की भगवान् में निश्चल भक्ति
कैसे होवे। अरुतीन विधके अर्थात नित्य,नैमित्त,काम्य
कर्म,के फलकी सिद्धि कैसे हो । १४ । ऐसे अपने को
पूछने के लिये तयार भये तिन्हैं देखके शौनकजी। वि-
नय से नम्र भये अंजलि बांधे ये कहते भये । १५ । शौ-
नकजी बोले। कि पवित्र सिद्ध आश्रम में उत्तम पुराण
वक्ता सूतजी हैं । जो नाना प्रकार के यज्ञोंसे विश्वरूप
नारायण जी को पूजरहे। १६ । सो वे सव जानतेहैं क्यों
कि वे व्यासजीके शिष्य हैं। पुराण संहिता कहनेवाले
शांत,मुनि,रोमहर्षणजी। १७। सो युग२ में भगवान धर्मों
को न्यून भये देखके अवतार होने की इच्छा करते।
वेद व्यास स्वरूप करके वेदके विभाग करते हैं।१८।
हे द्विजौ वेद व्यास मुनि साक्षात नारायण हैं। ये हम
सव शास्त्रों में सुनते हैं अरु सूतजी व्यास जीके शिष्य
हैं १९ सो कि तिन महात्मा वेद व्यासजी ने सूतजी को
शिक्षा दई है । सो वे सूतजीही पुराणों को जानते हैं तिन
से परे और कोई पुराण वक्ता नहीं है २० जो सूत जी

सर्वज्ञ,बुद्धिमान,शांत,मोक्ष धर्म जानने वाले,अरु कर्म
भक्ति मार्ग ज्ञाता २१ हे मुनि जनों वेद,शास्त्र,पुराण,
इनके सार रूप तत्त्व को जगत के हितके हेतु पुराणोंमें
मुनि सूतजी ने कहा है २२ इस्से वे ज्ञान सागर सूतजी
सब तत्त्व अर्थ जानते हैं। इसलियेउन्हीं सेही कथा प्रश्न
करें ऐसे शौनकजी ने मुनियों से कहा २३ फिर तो वे
सारे मुनिजन,वाक्यवेत्ताओं में श्रेष्ठ अर्थात उत्तम बक्ता
शौनकजी का आलिंगन कर अर्थात हाथ पसार २ इन
से मिलकर,स्तुति करते अच्छा २ कहते भये २४ अरु
अति नम्र भये वे मुनिजन,पवित्र सिद्धाश्रम बन को गये
जो मृगों के झुंडोंसे युक्त मुनि जनोंसे सब ओर शोभित
२५ अरु जो सुन्दर वृक्ष,बेल,फल,फूलों से सजा। निर्मल
जल वाले सरोवर जहां भरे,अरु अतिथि,अरु तिनका
सत्कार,इस धर्म से व्याप्त २६ ऐसे आश्रममें सदा जी-
तने वाले,अनंतदेव,नारायण जी को। अग्निष्टोम यज्ञ
से प्रसन्न करते (रोमहर्षण,सूतजी) को मुनि जन देखते
भये २७ तो तिन सूतजी करके यथा योग्य पूजे ये वि-
ख्यात तेजस्वी सारे। तिनके यज्ञ स्नान को देखते भये
यज्ञशाला में बैठे २८ फिर यज्ञ स्नान किये सुखसे वि-
राजे उत्तम पौराणिक मुनि सूतजीसे ये प्रश्न करते भये
२९ मुनिजन बोले। हे सुन्दर व्रतवाले सूतजी,हम अतिथि
आये हैं अरु तुम अतिथि सत्कार कर्ता हो। सो ज्ञानके
दान रूप उपचार से हमारी यथा विधि से पूजा करो
अर्थात हमें सुन्दर २ कथाश्रवण करावो ३० जैसे दे-
वता,चंद्रकी कला रूप अमृत को पीकर अजर अमर

हैं तैसेही हे मुनिजी हम ब्राह्मण,तुम्हारे मुख से भरे ज्ञानरूप अमृत को पीकर सुखी होवेंगे ३१ जिससे ये सब संसार उत्पन्न भया,जिसके आश्रय, यन्मय अर्थात् जिससे ये बना है,अरु हे प्रिय सूतजी जिस ईश्वर नें ये ठहरा अरु जिसी में लीन होगा ३२ ऐसे वे ईश्वर रूप दिखाउ जी,किस विधिसे प्रसन्न हों अरु कैसे मनुष्य तिनकी पूजा करते हैं । अरु कैसे वर्णों का आश्रम वर्म, अरु अतिथि का पूजन कैसे हो ३३ अरु मोक्षका उपाय रूप कर्म कैसे सफल हो । भक्ति से मनुष्यों का क्या २ फल मिलताहैं अरु वो भक्ति कैसीहै ३४ हे मुनि श्रेष्ठ सूतजी ये सब वृत्तांत निश्शेष करके संशय रहित कहिये । आपके अमृत वचन से किसको प्रसन्नता नहीं होती अर्थात् आप कथा प्रसंग वर्णन कीजिये ३५ श्रीसूतजी बोले । हे ऋषियो जो आपका वांछित है सोही कहते हैं तुम सारे सुनो । जो कि महात्मा (श्रीनारदजी) ने सनत्कुमारजी के अर्थ गान करके सुनाया ३६ ऐसा जो वेदों के अर्थ से संयुक्त (वृहन्नारदीय पुराण है) अरु जो सब पापहारी, दुष्टग्रह हटाने वाला ३७ खोटे सपने हटाने वाला,भुक्ति मुक्ति फल देनेवाला,धन्य अरु जो नारायण कथा युक्त,सब कल्याण सिद्धि दाता ३८ अरु धर्म अर्थ काम मोक्ष इनका सार,महाफलवाला,अपूर्व पुण्य फल देनेवाला,ऐसा जो पुराण तिसे तुम सावधान भये सुनों ३९ कोई महा पापी या सब पापों से युक्त हो । पर इस ऋषि प्रोक्त दिव्य पुराण का श्रवण करके शुद्ध होजाता है ४० जिनके एक अध्यायके

पठन से,वाजपेय यज्ञका फलमिलता है । अरु हे द्विजो, दो अध्यायों के पाठ से अग्निष्टोम का फल ४१ अरु जो ज्येष्ठ मास पौर्णिमा को,मूल नक्षत्रमें सावधान भया मनुष्य अरु यमुनाजी में नहाकर, तथा मथुराजी में उपवास करके ४२ अरु विधि करके विष्णुजी को पूज जो फल पावे सोई इस पुराण के श्रवण से फल मिलता है ४३ तिसी पुराण को हम तुमसे सम्यक् प्रकार कहते हैं सोही कहते भये सुझसे सुनिये सो कि जो दश सहस्र जन्मो के संचित पापों करके युक्त,करोड़ कुलों सहित पापी भी,ब्रह्मस्थान को प्राप्त होकर तहांहीं सब पापोंसे छूट जाताहै ४४ फिर जो पुराण सुनाने वाली वस्तुओं में अत्यंत सुनाने योग्य । अरु पवित्रोंमेभी अत्यंतपवित्र कुस्वप्न नाशक,पवित्र,ऐसा पुराण प्रयत्न करके श्रवण करना चाहिये ४५ अरु जो मनुष्य श्रद्धा सहित,इसका श्लोक वा आधा श्लोक । पढ़कर शीघ्र करोड़ों पातकों से छूटता है ४६ ये गुह्यसे भी अत्यंत गुह्य पुराण अवश्य वक्तव्य है । सो इसे विष्णु मन्दिर में वा पवित्र क्षेत्र में तथा समाज में वंचवाते ४७ अरु इस पुराणका ब्राह्मणों से द्वेष करने वालों को अरु पाखण्ड आचारियों को। अरु चार्वाक शास्त्र वाले अर्थात् । जैनिमत वालों को हे द्विज श्रेष्ठो,श्रवण न करावे ४८ किंतु जिन्होंने काम आदि दोष त्यागे, विष्णु भक्ति में मन लगाया हो। अरु गुरु भक्ति करते, ऐसों को ये मोक्ष का साधन रूप पुराण कहना ४९ सर्व देव रूप विष्णुजी। जो स्मरण करते जनोंकी पीड़ा का नाश करने वाले । अरु भक्त वत्सल

देव विष्णुजी भक्तिसेही प्रसन्न होतेहैं अरु और प्रकार अर्थात् द्रव्यादिक से प्रसन्न नहीं होतेहैं ५० विनाजाने से भी जिनका नामलिये वा स्मरण किये । पापोंसे छूटा जन, श्रेष्ठ पद को प्राप्त होताहै ५१ संसार रूप घोर बन के बनाग्नि, विष्णुजी ही हैं । जो स्मरण कर्तों के सब पापों को शीघ्र नष्ट करते हैं ५२ तिन्हीं को प्राप्त करने वाला ये पवित्र उत्तम सुनाने योग्य, पुराण है जो पढ़ने से तथा सुननेसे सब पाप नष्टकरता है ५३ जिस जनकी भक्ति, युक्त बुद्धि, इसके श्रवणमें है हे द्विजो । वोही ज्ञात कृत्य अरु सर्व शास्त्रार्थ वेत्ताहै ५४ जो इकट्ठा किया तप पुण्य, है तिसका यही फल है । जो इसके श्रवण में इतर कहीं भी बुद्धि आसक्त न होवे ५५ जो जगत के हितू सज्जनहैं वे श्रेष्ठ कथा सुनतेहैं । अरु खोटे पापात्मा निद्रा, कलहमें परायण होते हैं ५६ जो जन पुराणों में अर्थ विवाद अर्थात् पुराण मिथ्या, ऐसा कहतेहैं । तिन के इकट्ठे किये पुण्य व्यर्थ अर्थात् क्षीण होजातेहैं ५७ समस्त कर्मों के मुख्य कारण पुराणों में अर्थ वाद को कहता जन, नरक भोगताहै ५८ जितने ब्रह्माजी जड़ चेतन जगत्, रचते हैं तितने अर्थात् प्रलयतक वो पापी नरकों में पड़ा रहताहै ५९ आश्चर्य्यहै कि चार२ अक्षर पुण्य अरु पाप के कारणहैं । मनुष्योंके उच्चारण में सो कि हे मुनीश्वरो, नारायण अरु अर्थवाद, ६० हे द्विजो जो सब धर्म वक्ता पुराणों में, अर्थवाद कहते अर्थात् मिथ्या दोष लगाते हैं वे नरक भोगी हैं । हे द्विजो जो वे परिश्रम से पुण्य किया चाहै । तो भक्तिमें पुराणों का श्रवण

करै ६१ जिस जनके पूर्व संचित पाप, नष्टहोवें तिसीकी बुद्धि, पुराणों के श्रवण में अचल लगतीहै ६२ अरु जो पापीहैं सो पुराणों के होते भी । तिनका अनादरकर कर और कथाओं में आसक्त मति होतेहैं ६३ सत्संग अरु देव पूजन अरु परोपदेश में जो जन परायणहैं वो बिष्णु जीके परम पदको प्राप्तहोता सो कि देहके अंत अर्थात मृत्यु होनेपर भगवान् के समान कांतिमान् होता है ६४ तिस्से हे द्विजेश्वरो इस वृहन्नारदीय नाम उत्तम पुराणका श्रवण करो । जिसके सुनतेही जन्म, वृद्ध पन आदिका नाशहो, अरु जन भगवान् में निर्दोष हो अर्थात निष्पाप भया मनुष्य मोक्ष को प्राप्त होवे सो सुनो ६५ अरु जो विष्णुजी पुराण पुरुष वरयोग्य, अरु निज विख्याति करके जिन्होंने सब लोक भाषित कर रक्खे चाहे अर्थ के दाता, आदिदेवरूपसे विष्णुजीका स्मरणकरके मनुष्य परम पदको प्राप्तहोवे सो ६६ अरु जो विष्णुजी, ब्रह्मा, विष्णु, शिवजो इन तीन प्रकार के शरीर धारकर । संसार को रचते पालते संहारते हैं । तिन आदि देव, परम परमेश्वर विष्णुजी को चित्तमें ध्याकर जन मुक्ति पाताहै ६७ जो विष्णुजी नाम, जाति, आदि विकार रहित अरु पर, परों से परम, वेदांत जाननीय, निजकांति करके प्रकाशमान् होसे सब देव पुराणोंसे स्तुति किये जाते हैं ६८ तिस्से मुक्तिके लिये तिन विष्णुजी को ध्याते जनोंके उपासना योग्य, ये भगवानका परम रहस्य पुरुषार्थ का हेतु, इस का स्मरण करते ही जन परमेश्वर विष्णुजी के निकट प्राप्त होताहै ६९ हे पण्डित जनों, ये पुराण, गुह्य गुह्य

श्रमतिमा मनुष्यकोहीसुनाना। जो मुमुक्षु,यति,रागरहित, बुद्धिमान् होवे७० अरु पवित्रदेशमें कहना,सभामें वा देवा लय में पुराय क्षेत्र अरु पवित्र तीर्थ पै अरु हेद्विजो संध्य समय । उच्छिष्ट देशमें कहने वाले सभासहित, प्रल पर्यंत घोर नरकमें पड़तेहैं ७१ जो हठीला मूर्ख, भक्ति रहित होवे चित्त श्रवण करै तो वोभी महा घोर नरक पड़ताहै ७२ जो पापी मनुष्य कथाके मध्य में और क्या कहै अर्थात् बात करै ।तौ वोभी महा घोरनरकमें पड़त है ७३ तिस्से श्रोता अरु वक्ता, दोनों सावधान चित्त होवें। जिसका चित्त इसमें लगै सो कुछ भी और न जाने अर्थात् तिसी में ध्यान धर सुनै ७४ तिस्से एकाग्र चित्त होके भगवत् कथामृत पीवै । भ्रांत चित्त वालेको सवाद का भेद कैसे जानपड़े ७५ जो सदा भ्रमित चित्त है तिनको लोक में क्यासुख मिलता है। तिस्से एक मन होकर हरि कथा सुनै ७६ भ्रांत चित्त जनों को इच्छा-नुरूप सुख हे श्रेष्ठ द्विजो होता नहीं जान पड़ता फिर योग की सिद्धि अर्थात् किये का फल कैसे होवे ७७ तिससे इस दुःख के कारण काम का परित्याग क-रके । सावधान होकर, भगवत् का ।चिंतन करै ७८ जिस किसी प्रकार स्मरण कियेभी अविनाशी विष्णु जी । महा पापी जनपर भी प्रसन्न होते हैं इसमें संशय नहीं ७९ जिस जनकी अविनाशी देवनारायणजी में परम भक्ति है। जिसकी भगवान् में परमभक्तिहै तिसी का जन्म सफल है। अरु मोक्षभी तिसके हाथही में है ८० हे द्विजो धर्म,अर्थ ,काम, मोक्ष येचार पदार्थ हैं

सोही हरिभक्तोंको प्राप्तहोतेहैं इसमेंसंशयनहींहै ८१ ॥

इतिश्री बृहन्नारदीय पुराणभाषा पण्डितदेवीसहाय नारनौल निवासीकृत कथाप्रसंग वर्णनन्नाम प्रथमोध्यायः१ ॥

दूसरा अध्याय ॥

श्रीनारदजी अरु सनत्कुमार जी के संबाद होनेका वर्णन ॥

शौनक आदि मुनिजनोंने पूछा कि हे सूतजी देवर्षि नारदमुनि जी ने सनत्कुमारजी से, कैसे संपूर्ण धर्म कहे अरु वे दोनों कैसे कहांमिले १ सो कि वे किसक्षेत्रविषे मिले हे दयाके सागर सूतजी,नारद जीने जो कहा सोही हमें कहिये २ श्रीसूतजी बोले कि सनकादिक महात्मा ब्रह्माजी के पुत्र। जो ममतारहित अहंकार वर्जित, अरु सारेजितेन्द्रिय ३ तिनकेनाम कहतेहैं कि [सनक] [सनंदन] [सनत्कुमार] ये समर्थ सनातनहैं ४ जो विष्णु भक्त,महात्मा,ब्रह्मध्यान में परायण। अरु सहस्र सूर्योंके समान कांतिमान। सत्यसंध अरु मुमुक्षु ५ सो एकदिन वे महा तेजस्वी सनक आदिक,ब्रह्माजी के पुत्र। ब्रह्माजी की सभाको देखनेके लिये सुमेरु शिखरपर जातेभये ६ तहां महापवित्र गंगाजी,विष्णु पादजन्य को देखके न्हानेको तयार भये ७ इतनेहीमें हेविप्रो, देवर्षि [नारदमुनिजी] हरे नारायण इत्यादि भगवन्नाम उच्चारते आये ८ सोकि हे नारायण,अच्युत अनंत,हे वासुदेव,जनार्दन। हेयज्ञों के ईश,यज्ञ पुरुष हे कृष्ण विष्णु जी,आपको अर्थ नमस्कारहो ९ हे कमल नयन,कमला पतिजी। हे गंगाजी के जनक,केशवजी,हेक्षीरोदशायी, देवेशजी,हे दामोदर

जी आपकोनम० १० हे श्रीकृष्ण विष्णो,नृसिंह,मुरारि जी,हेप्रद्युम्न,संकर्षण,वासुदे .जी।हेअज,अनिरुद्ध,वामन, विष्णु रूपजी आपसब भयसे हमारीरक्षाकरो ११ ऐसे२ विष्णु जी के नाम उच्चारते अरु सब को घुवाते। अरु लोकोंकीपवित्र करनेवाली श्रीगंगाजीकीस्तुतिकरते१२ तौतिन्हेंआतेदेखतेहीउठकरसनकादिमुनिजन,यथायोग्य नारदजी की पूजा करते भये तौ तिन्होंनेभी तिन मुनीश्वरों को बंदनाकरी १३ फिर क्रिया कर्म जिन्होंने ऐसेनित्य कर्म से निवृत्त भये मुनिजनों के गंगाजीके तीर ये सुख से विराजमान भये। नारद जीने भगवान्‌की स्तुति करी १४ फिर तहां सभाके मध्य विराजमान, नारायणमें परायण ऐसे नारदजी को सनत्कुमार जी ये कहतेभये १५ किहे मानदाता नारदजी आप सर्वज्ञहैं क्योंकि आपसे अधिक कोई और भक्तिमें परायण नहीं है १६ जिनसे ये जड़ चेतन सब संसार भया। अरु जिन्हींसे गंगाजी उत्पन्नभई ऐसे भगवान्‌को हम कैसेजानें १७ अरु हेमुनिजी हमारा त्रिविध कर्म कैसे फल होवे जैसे मनुष्यों को ज्ञान होवे अरु तपस्या का लक्षण १८ अरु जैसे अतिथिका पूजन करना जिससे विष्णुजी प्रसन्नहोतेहैं। ऐसे गोप्य हरि-भक्तिकारी विषयों को जो आपका मुझपै अनुग्रहहै तो यथावत मुझसे कहिये १९ श्रीनारद जी बोले परमेश्वर देवजी को प्रणाम है, जो विष्णु जी परसे भी अत्यंत पर छोटेबड़े अर्थात सर्वत्र निवासकारी, फिरजोसगुण अरुगुण रहित,अरु ज्ञान अज्ञान स्वरूप, धर्म अधर्म स्वरूप,विद्या अविद्यास्वरूप, ऐसे रूपवाले विष्णुजी को नमस्कार

होवे २०।२१ माया रहित अरु मायावान्, योगरूपी । योगेश्वर, योग अरु योग गम्य ऐसे विष्णुजीको नमस्कार है २२ अरु जो ज्ञान स्वरूप, ज्ञान गम्य अरु सर्वज्ञान के मुख्य कारण ज्ञान के ईश्वर अरु दिव्य ऐसे विष्णुजी को नमस्कार है २३ अरु ध्यान रूप ध्यान गम्य, अरु ध्यान करने वालोंके पाप हारी । ध्यानके ईश्वर सुबुद्धि ऐसे शुद्ध आत्मा विष्णुजी को नमस्कार है २४ सूर्य्य चन्द्रमा अग्नि ब्रह्माजी, अरु देव सिद्ध यक्ष असुर नाग ये सब जिन विष्णुजी शक्ति के कार्य अर्थात् जिनकी मायासे रचित हैं ऐसे तिन अजन्मा, पुराण पुरुष, कार्यरूप अरु कार्यकेईश अर्थात् सबकेकारण विष्णुजीको नमस्कार है २५ जो पुण्य शील विष्णुजीके नामोच्चारण में परायणहैं वे यमराज को स्वप्नमें भी नहीं देखते । अरुज्ञान के विन तिन विष्णुजीको ब्रह्मादिक भी नहीं जानसक्ते तिन स्तुति योग्य ईश्वर विष्णुजीको मैं निरन्तर प्रणाम करताहूं २६ जो ब्रह्मा रूपहो जगत रचनेवाले, अरुवेही हरि रूपहुये जगतपालना करनेवाले, अरुजो कल्पके अंत अर्थात् प्रलय समय, शिवरूप होकर, संसारको संहारते हैं तिन विष्णु जी को भजता हूं २७ अरु जिनके नामोच्चारणसे गजेंद्र,ग्रहकीभारी बन्धसे छूटाफिर वोही विष्णु जी के परम पदको प्राप्तहुवा ऐसे तिनको मैं सदाभजता हूं २८ अरु जो विष्णुजी शिवभक्तोंको तो शिवस्वरूप अरु हरि भक्तोंको विष्णु स्वरूप प्राप्त होतेहैं ऐसे तिन परमात्माका निरन्तर स्मरण करतेहैं २९ जिन्होंने प्रहलाद की रक्षा करी कि दैत्य हिरण्य कश्यपु का शिलमे भी

कठोर हृदय विदार तिसैमारा ऐसे [नृसिंहजी] को नमस्कारकरतेहैं ३० जो राजा बलिसेदोपैगभूमि पाकर, दोनों पैरोंसे समस्त त्रिभुवन को उलंघतेभये ऐसे तिन[वामन] जीको नमस्कार ३१ [जिन्होंनेकार्त्तवीर्य]के अपराधसे अर्थात् कामधेनु लेनेको इनके पिता [जमदग्निजी]को मारे इससे,इकइसबेर गिनकर जिन्होंने क्षत्रिय कुलनष्ट किया ऐसे तिन जमदग्निजी के पुत्र [परशुरामजी] को नमस्कार ३२ जो चार प्रकार अर्थात् राम, लक्ष्मण भरत, शत्रुघ्नये चार मूर्त्तिधार अवतार होकर वानरों की सेनाबनाय,सेनासहित रावणकोहततेभयेऐसेतिन [राम चन्द्रजीको] नमस्कार करते हैं ३३ जो दो मूर्त्तिधार अवतार होकर भूमिभार उतार, अर्थात्[श्रीकृष्णबलदेव जी] होकर सुदर्शन, चक्र तथा हलसे सब भूमिभार उतार निजकुलको भी संहार के जो निजधाम को पधारे ऐसे तिन दोनों को नमस्कार ३४ अरु जो भूमि आदि समस्त लोकोंको संहारके अपने को नियेत्र रूप अपनेहीमें देख रहे अर्थात् आपही आपरहे, जो निर्मल शुद्ध ऐसे तिन बौद्ध रूप परमात्मा को बार २ नमस्कार है ३५ अरु जो युगोंके अंत में शूद्र पापियोंको पैनी तरवारकी धार से संहार कर, फिर सतयुग की आदिमें पूर्ववत् यथोक्त धर्म स्थापन करते हैं ऐसेतिन [कल्किरूप] विष्णु जीको नमस्कार करते हैं ३६ ऐसे २ महात्मा विष्णु जी के अनेक रूप हैं जिनके नाम, करोड़ बर्षतक गिनने में नहीं आवें ३७ हे मुनीश्वरो जिनकी महिमा के पार को मनु, भी समर्थ नहींहैं तोमैं तुच्छ बुद्धि तिनको का

भजसकूं ३८ जिनका नाम सुनतेही महापापी जनभी पवित्र कर्त्ता पनको प्राप्त होते अर्थात वे पापीही सब को पवित्र करने लगते हैं ऐसे तिन भगवान्‌की मैं तुच्छ बुद्धि, कैसेस्तुति कर सकूं ३९ अजामिल, जिनके नामको नवमा अर्थात निज पुत्रको बुलाने के मिससे भी कहके परमपदको प्राप्त भया मैं तुच्छ बुद्धि तिनकीक्या स्तुति करसकूं ४० जिस किसीप्रकार भी जिनका नाम कहे या सुने तो पापीभीपवित्र होजातेहैं शुद्धभयेमोक्षको प्राप्त होतेहैं४१अरु निष्पाप योगीजन, जिनभगवान को अपने को आत्माको लगाके अर्थात मनको परमेश्वर में दृढ़ ठैराकर ज्ञानरूप देखते तिन विष्णु जीकी मैं शरणा प्राप्तहूं ४२ जिन परिपूर्ण विष्णु जीको सांख्यमतवाले सर्वत्र देखते हैं। ऐसे तिन आदिदेव अजर ज्ञानरूप विष्णु जीको प्रणाम करता हूं ४३ अरु अल्पज्ञजन जिन भगवान को पाषाण काष्ठ आदि मूर्तियों में जानते। अरु ज्ञानीजन जिन्हें सर्वत्र व्यापक जानतेहैं ऐसे तिन पुरुषोत्तम विष्णु जीकीवंदनाकरूंहूं४४ अरुजिनमहात्मा विष्णु जीके कार्यरूप तप इनकोकोई नहीं जानता। ऐसे जो ज्ञानरूप, अव्यय तिन अजर अमर ईश विष्णु जीको भजताहूं४५ जो सर्वतत्त्व प्रधान,शांतस्वरूप, सबके द्रष्टा, ईश्वर विष्णु जीहैं। जो सहस्र शिरवाले देवजो तिनपरम पुरुष नारायणजीको मैं ध्याता हूं ४६ जो विष्णु जी इस इस जड़चेतन जीव समूह सहित संसार में दशाङ्गुल मूर्ति से व्याप्त होकर विराजमान भये तिन अमर ईश विष्णु जीको मैं भजताहूं ४७ फिर जो विष्णु जी जगाके

भी अत्यन्त अणु अर्थात् सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्महैं । अरु जो गुह्यसेभी अत्यंत गुह्य ऐसेदेव विष्णु जीको बारम्बार प्रणाम करताहूं ४८जोध्याये,पूजे,स्मरणकिये वास्तुति प्रणाम किये । निज स्थान देतेहैं तिनपुरुषोत्तम विष्णु जीको वंदना करते हैं४६श्रीसूतजीबोले हेशौनक आदि मुनियो, अंजलि बांधे रोको आनंद आंशुनेत्र में जिन्होंने ऐसे पण्डित वे सनकादिक,परमईश विष्णु जीकी ऐसे स्तुति करते,नारद मुनिजीको ऐसे कहते भये५० किजो इस नारदजीके स्तोत्र को प्रातःकाल पढ़ै,सो सबपापों से छूटकर,विष्णु जीके लोकमें पूजितहोगा५१ ऐसे वे मुनि जन,नारदजीको वर देकरहरिनाम उच्चारते फिर नारदजी की स्तुति करते पूछते भये कि और भी कहिये ५२

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणपण्डितदेवीसहायशुक्लभाषाकृतनारदजीः सनकादिकोंका सम्वादकथाप्रसंग वर्णनन्नामद्वितीयोऽध्यायः॥

तीसरा अध्याय ॥

नारदजी करके श्रीविष्णुजीकी प्रशंसा करना ॥

श्रीनारदजी बोले हे सनकादिको,वे नारायण, अविनाशी, अनंत विष्णु जी सर्वव्यापकहैं तिन्हीं से ये चर अचर सब संसार व्याप्तहै१ सोही स्वयंप्रकाश,जगन्मय विष्णु जी,आदि सृष्टि अर्थात् प्रथम रचना में । गुणभेद के आश्रय होके तीन मूर्ति, धारण करते भये २ सोही परमात्मा देवजीने रचनाके लिये दहिने अंगसे तो ब्रह्मा जी उत्पन्न किये । अरु बीचके अंगसे महेश्वरजीको,जो जगत् के संहारक रुद्रजी ३ अरु इसजगत्को पालनाके

लिये बामे अंगसे विष्णु जी उत्पन्न किये प्रथम सर्ग में महाविष्णु जी ऐसेतीनमूर्ति धारण करतेभये ४ तिनआदि देवजोको कोई अजर अरु रुद्र कहते हैं। कोई विष्णु अरु कोई ब्रह्मा ५ सो तिन विष्णु जीकी महाशक्ति,जगतकी मुख्य कारणहै। सोही वो भाव अभाव अरुरूप अरूप,तथा विद्या अविद्याभी कहातीहै ६ जब ये संसार महाविष्णुजीसे भिन्नरचाजाताहै। तभी अविद्यारूप भेद भया सोहीभेद दुःखका कारणहै७ जबज्ञान जाननाअरु ज्ञेय जिसेजाने ये ऐसी उपाधिनष्ट होती है। सोकि जब सर्वत्र एक भावनाहो सोही विद्याकहातीहै ८ ऐसे महाविष्णुजीकी मायाभेद बुद्धिसे संसार देनेवाली है। जो अभेद बुद्धिसे जानीजावे तो वोही संसारसे निवृत्त करती अर्थात मोक्षदेतीहै ९ ये सब चर अरु अचर जगत् विष्णुजीकी शक्तिसे उत्पन्नहै। तिससे जो जड़चेतन वस्तुमात्र है सो तिस शक्ति से तथा विष्णुजीसे भिन्न नहींहै १० उपाधिसे जैसे आकाश, भिन्नपनेसे प्रतीत होता अर्थात घटाकाश, मठाकाश,ऐसे भिन्न२ जानपड़ता है वस्तुसे तो एकहीहै तैसेही अविद्यारूप उपाधि से जगत भी भिन्न दीखता है वस्तुसे वोभी विष्णुमयही है ११ अरु जैसे विष्णु जी जगत व्यापक हैं तैसेही तिनकी शक्ति भी है। हेमुनि सनत्कुमार जैसे अंगारे में दाहशक्ति रहती है१२ तिसी शक्ति को कोई उमा,अरु कोई लक्ष्मी कोई सरस्वती कहते हैं। अरुकईक गिरिजा, अम्बिका १३दुर्गा,भद्रकाली,चण्डी, माहेश्वरी,कौमारी, वैष्णवी वाराही,ऐंद्री १४ ब्राह्मी, विद्या, माया,अरु परम प्रकृति

ऐसे २ अनेक प्रकार जाम तिस शक्ति के महर्षि लो कहते हैं। सोईये महाविष्णु जी की शक्ति, जगत् के कारण अर्थात् रचने पालने संहार करनेवाली है १५ प्रकृति, पुरुष अरु काल ऐसे तीन प्रकार से स्थित परमात्मा विष्णु जी रचना पालना संहारना, इनके कारण हैं १६ जिन ब्रह्मस्वरूप धारी परमात्मासे ये सब संसार भय है। तिससे वे अत्यंत परदेव विष्णु जी नित्य कहे जाते हैं १७ जो परम पुरुष देवजी, लोकोंकी रक्षा करतेहैं। तिनसे पर जो है सो अविनाशी परमपदहै १८ जो नाश रहित, निर्गुण, शुद्ध, परिपूर्ण, नित्य हैं। जो रुद्र नामी परम काल, जो योगी जनोंसे ध्याने योग्य, परसे पर १९ परमात्मा अरु परमानंद, सर्व उपाधि रहित। केवल, जो ज्ञान हीसे जाने जावें अर्थात् ज्ञानगम्य, अरु सच्चिदानंद स्वरूप २० फिर जो परम शुद्ध भी अहंकार करके संयुक्त हुवा देहवान्, मूढजनों से कहाजाता है अरु आपभी देहाभिमान से अज्ञान हो रहा है अरु वो अज्ञानही भेद दाता अर्थात् भेदबुद्धि कर्ता है २१ अरु जो परब्रह्म है सो तो निर्मल, तेजस्वी, मन वाणी का अगोचर अर्थात् जो कहने समझने में न आवे ऐसाहै २२ फिर सोही परम, शुद्ध, देवजी, सत्त्वगुण आदि भेदसे। तीन मूर्तिअर्थात् ब्रह्मा विष्णु महेश, होके रचना पालना संहार, इनके कारण हैं २३ जिनके सहस्र अंश कला रूप, ब्रह्मादि देवता उत्पन्न भये। तिन विष्णुजी से है ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमार, ये विश्व व्यापक नारद है २४ सोकि जो जगत के कर्ता ब्रह्माजी हैं सो तिनकी नाभिसे उत्पन्न भये। उस

से वे बिष्णुजीही परमात्मा रूपहैं हे मुनि सनत्कुमार तिनसे पर और कोई नहीं है ये निस्संदेह जानना २५ फिर जो अंतर्यामी,जगत के साक्षी,सर्वस्वरूप,निरंजनहैं। सो वेही परमात्मा भिन्न अभिन्न स्वरूप करके स्थित हो रहे हैं २६ जिनकी जगत कर्ता,महामाया वती शक्ति, सोही शक्ति,संसार की आदि कारण,होनेसे"प्रकृति,,वि द्वानों से कही जाती है २७ प्रथम सर्ग में महाविष्णुजी जब लोकों को रचनेके लिये तय्यार भये । तब वेही प्रकृति,पुरुष,काल,ऐसे तीन प्रकार से होगये २८ तिनको भावित नाम प्राप्तहै आत्मा ज्ञान जिनको ऐसे अर्थात ज्ञानीजन,परब्रह्म जानते हैं। सो शुद्ध, परमधाम,विष्णु जीका जो श्रेष्ठपद तिसे प्राप्त होतेहैं २९ परब्रह्म,नाम जिस निर्गुण वस्तुसे,प्रचारसे कहा जाता है,सो वे विष्णु जी ज्ञानज्ञेय अर्थात ज्ञानसे ही जाने जातेहैं ३० ये परमात्मा,शुद्ध,अक्षर,अनंत,कालारूपी,महेश्वर जी हैं। ये ही मायासे गुणरूपी,गुणोंके आश्रय,लोकोंके प्रथम कर्त्ता प्रभु हैं ३१ ऐसे ये चैतन्य गुणवाले,पुरुष विष्णुजी जब प्रकृतिनिजमायासे चलायमान भये। तो तिनसे महत्तत्त्व उत्पन्न भया,फिर तिससे,,अहंकार,,हुवा ३२ फिर अहंकार से 'सूक्ष्मतन्मात्रा, अरुइंद्रियभये। फिर तन्मात्राओं से जगत करने के लिये पंचमहाभूत भये ३३ सो आकाश,पवन,अग्नि,जल,भूमि,ये उत्पन्न भये । सो ये यथा क्रमसे अर्थात आकाशसे वायु,वायुसे अग्नि,अग्नि से जल,जलसे भूमि,इस क्रमसे भयेहैं प्रथम आकाशही से गिनती है ३४ फिर तो ब्रह्माजी ने वृक्षादिक रचे।

तो वो रचना तमोमयी भई क्योंकि विन विचारे सहज ही रची गयी थी। तिसे प्रजा कर्ता न देखके फिर ३५ तिर्यक् योनि पशु पक्षी मृग आदिकों को रचे। फिर तिनको भी न करते जानके,देव सृष्टि रची ३६ तिससे फिर ब्रह्माजी ने मनुष्य सृष्टि रची। फिर तो मनसेही अन्न आदिक,सृष्टि कारक,पुत्र उत्पन्न किये ३७ फिर तिन से विस्तार किया तिसीसे ये देव असुर मनुष्य मयजगत,व्याप्त होरहा है ३८ अरुभूः,भुवः,स्वः,महः,जनः,तपः, सत्यं,ये सात लोकऊपर के रच ३९ अरु अतल,वितल, सुतल,तलातल,महातल,रसातल,पाताल ये ७लोक नीचे रचे ४० अरु इन सब लोकों में पृथक् २ लोकनाथ रचे अरु सात कुलाचल,अरु नदियें रचीं ४१ अरु तिन २ लोक वालों के तैसे२ ही व्यापार बनाये। सो इस भूमि तलके मध्यमें सुमेरु पर्वत सो सब देवोंका आश्रयहै ४२ अरु भूमि के अंत में लोकालोक पर्वत है तिसके मध्य सात समुद्र हैं। अरु तहां सातही द्वीप अरु तिनमें सातही कुल पर्वत हैं ४३ अरु बहुतसी तिनमें नदियें अरु तहां मनुष्य देवता सरीखे हैं। सो वे द्वीप,जंबू,प्लक्ष,शाल्मल, कुश,क्रौंच,शाक,पुष्कर,ये सातों देवभूमि,कहाते हैं ये सातों द्वीप सात समुद्रों से घिरे भये हैं ४४ सो लवण, इक्षु,सुरा,घृत,दही,दूध,जल,इनसे भरेहैं। अरु ये द्वीप अरु समुद्र,आपस में एक से एक २। ४५ लोकालोक पर्वत तक दूने २ विस्तार वालेहैं अर्थात इनमें एकसे एकदूने विस्तार वाला समझना हेमुनि सनत्कुमार जी ४६ हे ब्रजनंदन क्षारसमुद्रका तो उत्तर अरु हिमालयका दक्षिण

अर्थात् इन दोनोंका मध्यभाग जो है सो भारतवर्ष जानना ये सब कर्म फल दाता है ४७ इसी में शुभकर्म करते हैं अरु इस भोग भूमिमें शीघ्र फल मिलता है ४८ भारत भूमिमें किया शुभ अवश्य भोगनाहीं पड़ता है सब प्राणियों को ४९ अब भी देवता भारतभूमि में जन्म लेने की इच्छा करते हैं । कि कब हम भारत भूमि में जन्म ले सुकर्म करके परमपद पावेंगे ५० दान वा अनेकयज्ञों से तथा तपोंसे समुद्रशायी विष्णु जी को पूज कर तिस धामको कब पधारेंगे जिसे ज्ञानीजन देखते हैं ५१ अरु भक्ति से वा कर्म से अथवा ज्ञान से नित्य आनंद ईश विष्णु जी को हम कब प्राप्त होंगे ५२ हे द्विज जो भारत भूमिमें जन्म लेके नारायण की पूजामें परायण होवे। तो तिसके सदृश और कोई नहीं है जैसे सूर्य जी का तेज अगम्य है ५३ जो हरिनामोच्चारण करने वाला वा भगवद्भक्तों का प्रिय या महत्पुरुषों का सेवक जोहै सो उत्तम जन हम करके वंदना करने योग्यहै अर्थात् ऐसे सुजनको हम भी वंदना करते हैं ५४ अरु जो गुरु भक्त शिवजी का ध्यान करनेवाला अरु निज आश्रम धर्म में परायण। निंदा रहित अरु सदा शांत ऐसा श्रेष्ठजन हमसे बंदनीय है ५५ जो ब्राह्मणों का हितकारी, अरु सब कर्मों में श्रद्धा युक्त । अरु नित्यही वेद पाठ कर्त्ता सो सुजन हम से बन्दनीयहै ५६ जो देवोंके ईश विष्णु जी में अभेद देखनेवाला तथा शिवजी में समान बुद्धि, ऐसा उत्तम ब्राह्मण नित्य हम ५७ जो गऊओंमें दयावान, ब्रह्मचारी, पराई निन्दासे रहित परस्त्रियोंसे संग

रहित ऐसा श्रेष्ठ जन हमसे वन्दनीय है ५८ जो चोरी आदि दोषोंसेरहित क्रिये का जानने वाला सत्यवादी पवित्र पराये उपकार में परायण, ऐसाश्रेष्ठ, ५६ जो वा टिका बावली, तड़ाग इनका बनानेवाला ऐसाभारत भूमि में जन्मा जन, हमसे वंदनीय है ६० अरु जोनिज मा वापों की नित्य, टहल करताहै। अरु गंगा शिवजीके समान तिन को जानता सो सुजन हमसे वंदनीय है ६१ जिसकी बुद्धि, वेदोंके अर्थअरु पुराणोंकेश्रवणमेंहै। अरु सत्संग में भी जो परायण ऐसा सुजन हमसे वंदनीयहै ६२ ऐसे२ इन उत्तम धर्मोंको जो श्रद्धा सहित भारत भूमि में करताहै सो उत्तम मनुष्य हमसे वंदनीय है हे सनत्कुमार मुनिजी ६३ इनमेंसे किसी धर्मको भी जो करके अपने को जो नति गावे सोही मूढ़ कुकर्मी है तिससे परे और बेबुद्धि कौनहै ६४ जो भारतभूमि में जन्मपायके सत्कर्म नहीं करता सो अमृत कलश छोड़के विष पात्रकोढूंढ़ता है ६५ जो नर वेदोक्त धर्मोंसे अपना निस्तार न करे। सोही पापियों में महा पापी, आत्मघाती जानना ६६ जो नर इस कर्म भूमि को पाके सत्कर्म नहीं करता सो सर्वथादोषीहै तिससे परे और वे बुद्धिकौनहै ६७जोसुकर्म फल दाता भारत वर्ष में स्थित होके कुकर्म करताहै। वो कामधेनु को तजके आकका दूधपीना चाहताहै ६८ हे सनत्कुमार ऐसे इस भारत भूमि भागको, ब्रह्मादि देवता भी प्रशंसा करते हैं। जो निज कर्म भोगके क्षयमे इनमें अर्थात फिर यहां जन्म लेके सुकर्म करना चाहतेहैं ६९ तिससे हे महाभाग ये भारत भूमिभाग, अत्यंत पवित्र अरु

सब कर्म फलदाता, जानना जो देवतोंको भी कठिनाई से प्राप्त हो ७० जो इस भूमि भारतमें सत्कर्म करने को सावधानहै। सो मनुष्य रूपसे ढका हरिहीहै इसमें संशय नहीं ७१ जो परलोकफलकी इच्छा करता सो सावधान भया सत्कर्म करै अरु फिर विष्णु जीमें समर्पण करदे तौ तिनका अक्षय फल मिलै ७२ जो इसमें जन्मा जन सुकर्म से समय बितावे। तौ तिसके समान तीनलोक में कोई नहीं है ७३ जो वैरागी हो तो कर्म करै पर फलकी किंचित भी इच्छा न करे। अरु निज कृत कर्म को मुझपै विष्णु जी प्रसन्न होवैं, ऐसे कह हरि में समर्पण करदे ७४ ब्रह्मभुवन पर्यंत सब लोक पुनर्जन्म देने वाले हैं। तहां जो इच्छा रहित निष्कामीहै सो परम धामको पधारताहै जहां से फिरजन्मलेना होवै ७५ इससे परमेश्वरको प्रसन्नता के लिये प्रति दिन वेदोक्त कर्म करै। आश्रम क्रमसे अर्थात् प्रथम ब्रह्मचर्य फिर गार्हस्थ्य फिर वानप्रस्थ पश्चात् संन्यास ऐसे निष्काम भया कर्मकरे तो परम पद पाता है ७६। सकाम वा निष्काम हो पर निज आश्रम धर्म में स्थित भया यथा विधिसे कर्मकरे। क्योंकि निजआश्रम धर्मके विनतोजन,पण्डितों करके पतित, कहाजाता है ७७ श्रेष्ठ आचरण से पराचण ब्राह्मण, ब्रह्म तेजसे प्रतिदिन मवर्द्धमान होताहै। तिस पे विष्णु जी प्रसन्न होते अरु यहां वहां दोनों लोकों में पुण्य भागी होताहै ७८ जो धर्म है सो विष्णु पर अर्थात् भगवत संबंधीही है तप है सो विष्णु संबंधी है ज्ञान है सो विष्णु पर तिन विष्णु जी से भिन्न और कुछ नहींहै ७९

ये सब चर अचर संसार विष्णु मयही है। ब्रह्मांतत्व पर्यंत तिन से परे और कुछ नहीं है ८० जिनसे परे और कुछ नहीं है, अरु जिनसे परे न कुछ छोटा अरु न जिनसे और कुछ भारी है। तिन विष्णु जीसे ये त्रिविध संसार व्याप्त होरहा, तिन ईश विष्णु जीको सुख चाहने वाला सदैव प्रणाम करतारहै तिससे पुण्य मोक्ष पाताहै ८१ ॥

इतिश्री बृहन्नारदीय पुराण भाषा पंडितदेवीसहायकृतनारद जीकरकेविष्णुजीकीप्रशंसाकथन नाम तृतीयोऽध्यायः ॥

चौथा अध्याय ॥

श्रद्धा भक्तिआदि सद्धर्म का निरूपण ॥

श्री नारदजी बोले हे सनत्कुमार सारधर्म जो श्रद्धा से होंतो वांछित फलदेतेहैं। श्रद्धासे सबबनताहै अरु श्रद्धा से ही हरि प्रसन्न होतेहैं १ अरु भक्तों को भक्ति करनी चाहिये। भक्तिसे कर्म करने। हे सनत्कुमार श्रद्धा करके हीन कर्म सिद्ध नहीं होते हैं २ जैसे आलोक सबप्राणि यों की चेष्टा का कारण है अर्थात् दिखाई पड़नेमें ही सब लोग काम कर सक्तेहैं। तैसेही भक्ति सब सिद्धियों को कारण है ३ जैसे सब लोकों का जल जीवन है तैसे ही सब सिद्धियोंकी कारण भक्तिहै ४ जैसे पृथिवीके आश्रित होके सब प्राणी सुखसे रहते हैं तैसेही भक्ति के आश्रित होनेसे सर्व कार्यसिद्ध होतेहैं ५ श्रद्धावाला धर्म भागी होता है श्रद्धावान् को अर्थ प्राप्तहो श्रद्धा वाले की इच्छा पूर्णहो अरु श्रद्धावानको मोक्षको प्राप्तहोता है ६

न तो बहुदान से अरु न तपों से न बहुत दक्षिणा वाले यज्ञोंसे। भक्तिहो न भये भगवान् प्रसन्न होते हैं अर्थात् ये भक्ति युक्तहों ७ भक्तिसे रहित होके दई सुमेरु समान सहस्त्रों भी सुवर्ण कोटियें अर्थ नाश के लिये अर्थात् निष्फल होती हैं ८ भक्तिरहित जो तप किया गया सो केवल शरीर सुखाना है। अरु अभक्तिसे हवनकिया सो भस्म में होमे सिरखा है ९ श्रद्धासे जो थोड़ासा भी कर्म किया जावे तो वो पुरुष को महा भारी निरन्तर प्रीति दाता होताहै १० सहस्र अश्वमेध वा वेदोक्त किया कर्म ये सब निष्फल हैं जो भक्ति रहित किये गये होंतो ११ विष्णु जीकी परम भक्ति अवश्य कामधेनु के समानहै। तिसके होते भी अज्ञानी जन संसार रूप विष को पीते हैं ये बड़ा आश्चर्य है १२ हे ब्रह्मपुत्र इस प्रकार संसार में तोभगवद्भक्तोंका संग अरु विष्णुजो में भक्तिहोनी १३ ईर्ष्या युक्त मनवालों का जो भक्ति दानादि कर्म सो हे ब्रह्मन् निष्फल है अरु विष्णु जी तिससे अत्यंत दूररहते हैं १४ जो पराये कल्याण से दुखी अरु दंभ आचरण करनेवालेहैं। अरुजोमिथ्या अर्थात् लोकलाजकोकर्मभी करते हैं तिनसे विष्णु जी अत्यन्त दूरहैं १५ अरु जो कोइ धर्मपूछते अरु मिथ्याही धर्म सुनाते। धर्म भक्तिमें जिन का मन नहीं तिन को विष्णु जी अत्यन्त दूरहैं १६ धर्म वेदसे प्रवृत्त भया अरु वेद साक्षात् परम पुरुषहै तिस में जिनकी श्रद्धा नहीं तिनते हरि अति दूरहैं १७ जिसके दिन धर्म बिन बीते जाते हैं वो लुहार को धोंकनी के समान सांस लेता भी मराही है १८ धर्म अर्थ काम मोक्ष

ये सनातन चार पुरुषार्थ हैं सो श्रद्धावालों को ही सिद्ध होते हैं हेमलकुश और प्रकारसे नहीं १९ जो निज आश्रम धर्मसहित हरिभक्ति में परायण हैं वो विष्णुजी के भुवन को पधारता जिसे ज्ञानी प्राप्त होते हैं २० हे सनत्कुमार जो वेद कथित निज आश्रम धर्म करता अरु जो विष्णु जीके ध्यानमें परायण है सो परमपदको प्राप्त होता है २१ धर्म आचार से उत्पन्न होता अरु धर्म के प्रभु विष्णु जीहैं इससे निज आश्रम आचरण भक्तिसेही भगवान् प्रसन्न होते हैं २२ जो निज आश्रम धर्मसे भ्रष्ट अर्थात् स्वधर्म का आचरण नहीं करता चाहे वो अंगों सहित वेद जानताहो पर वो पतित जानना क्योंकि वो कर्मों से बाहर किया अर्थात् कर्म शून्य है २३ चाहे हरि भक्ति में परायण वा हरिध्यान में परायण हो जो निज आचार से भ्रष्ट है सो पतित कहाता है २४ हे द्विजोत्तम वेद वा हरिभक्ति तथा शिवजी में भक्ति अरु जो अनेक यज्ञहैं वे भी आचार से भ्रष्ट जनको पवित्र नहीं कर सक्ते २५ आचार से स्वर्ग प्राप्त होता अरु आचारही से सुख मिलताहै अरु आचारसे ही मोक्ष मिले इससे आचार से क्या नहीं सिद्ध होताहै २६ हे येष्ठ सनत्कुमार सब आचारों को अरु योगों को अरु हरिसेवा की आदि कारण भक्तिही कहाती है २७ वांछित अर्थ फल के दाता विष्णुजी भक्तिही से प्रसन्न होते हैं तिससे भक्तिही सब लोकोंकी माता है २८ जैसे सब बालक माताके आश्रय भये सुखसे रहतेहैं । तैसेही सब भक्ति के आश्रय होकर सुखी रहतेहैं २९ निज आश्रम आचार युक्तके हरिभक्ति

जब होवे। तो तिसके समान त्रिभुवनमें कोई नहीं है ३०
भक्ति से कर्म सिद्ध होते अरु कर्म से विष्णु जी प्रसन्न
होते हैं तिनके प्रसन्न भयें ज्ञान होवै अरु ज्ञान से मोक्ष
प्राप्त होवै ३१ अरु भक्ति तो विष्णु जी के भक्तों के
सत्संग से होती है अरु सज्जनोंके संग पूर्वजन्म के श्रेष्ठ
कर्मों से प्राप्त होता है ३२ भगवद्भक्ति में मन जिनका
ऐसे मनुष्य दुर्लभ हैं। तिनका सत्संग जिस जनको होवे
तिसको अत्यंत सुख प्राप्त होता है ३३ सनत्कुमार जी
ने पूछा कि हे मुनिजी भगवद्भक्त कैसे होते अरु क्या कर्म
करते हैं। अरु तिनको किस लोक की प्राप्ति होती है सो
सब वृत्तांत हमसे कहिये ३४ तुम महेश्वर विष्णु जी के
भक्त हो सो तुमही सब कहने सक्ते हो तुमसे अधिक
वक्ता और कोई नहीं है ३५ श्री नारदजी बोले हे ब्रह्म
पुत्रो तुम बुद्धिमान मार्कंडेय जी का शुभ वृत्तांत सुनो
जो योग निद्रा से जगे जगत के नाथ विष्णु जीने हमसे
कहाहै ३६ जो ये देव जी स्वयंप्रकाश सनातन विष्णु जी
हैं। जो जगन्मय जगत के कर्ता अरु शिव ब्रह्मा स्वरूप
वाले ३७ सो प्रलय समय में रुद्ररूप करके ब्रह्मांड को
संहारते हैं। फिर जलमय जगत भये अर्थात् सर्वत्र जल
फैलें वे विष्णु जी वड़के पत्रपर शयन करतेहैं ३८ सोकि
जब जलमय जगत भया अरु चर अचर संसार नष्टभया।
आप भगवानही शेष रहे सो वट पत्र पर शयन करते हैं
३९ जो असंख्य ब्रह्मांडों से सने रोमों वाले। अरु पैर
के अंगूठे से गंगाजी वह रही जिनके से ४० जो देव जी
सूक्ष्म से भी अति सूक्ष्म अरु ब्रह्मांड भर को ग्रसने वाले

ऐसे सब शक्ति सहित विष्णु जी वटपत्र पै शयन करते भये ५१ तिस समय महाभाग नारायण भक्तिमें परायण मुनि [मृकण्डु] जीतहां स्थित हुये सब विष्णु जी की लीला देखते भये ५२ शौनकादिकोंने पूछा हे नारदजी तिस समय जब सब चर अचर संसार नष्ट भया तब सर्व संहारी हरिने मार्कंडेय जीहीको कैसे बचाये । इसमें ह मको महा आश्चर्यहोरहाहै । क्योंकिविष्णु जीकी कीर्तिरूप अमृत वल्लीके पानमें किसको आश्चर्यहोताहै५३ श्रीनारदजी बोले हे ब्रह्मपुत्रो पहिले अनन्य विष्णुभक्त मुनि श्रेष्ठ मार्कंडेयजी के पिता मृकंडुजीभयेजो सत्यनि यमवाले बड़भागी ५४ तिन्होंने शालीक्षेत्र [शालिग्राम]में महातप किया । सोकि दशसहस्रयुग पर्यंत भगवन्नामो-च्चारण करते भये५५जो आहार रहित क्षमा सहित सत्य संध जित इंद्रिय अरु जो अपने समान सब प्राणियोंको देखते५६विषय इच्छा रहित अरु सबके हितमें परायण शांतभये ऐसे मुनिजी महातप करनेलगे ५७ तो तिनके तपसे शंकित भये ब्रह्मादिक अरु इन्द्रादि देवता परम ईश आदिपुरुष नारायणजी पै शरण जातभये ५८ सो कि वे देवता क्षीरसमुद्र के उत्तर तीरपर जाकर देवदेव ज गत के गुरु कमल नाभि विष्णुजीकी स्तुति करतेभये ५९ देवताबोले हे नारायण अविनाशी अनंतजी हे शरण आये के पालक मृकंडुजीके तपसे शंकित शरण आये हमको अभय दानदेओ ६० हे देव इन्द्रिदेवजी आपकी जयहो हे शंख गदाधारीजी आ० ज० हे लोक स्वरू प आ० ज० हे ब्रह्मांड के कारण आ० ज० ६१

देवों केदेवईश जी आ० न० हे लोकों के पवित्रकर्त्ता आ० न० हे लोकों के नाथ आपको नमस्कार है लोक के साक्षि आ० नम० है ५२ ध्यान गम्य आ० नम० ध्यानके हेतु आ० नम० ध्यान स्वरूप आ० नम० ध्यान के साक्षि आ० नम० ५३ केशिअसुर के हंता आ० नम० मधुहंता आ० नम० भूमि आदिस्वरूप आ० नम० चैतन्यरूप आ० नम० ५४ ज्येष्ठ अरु मुख्य आ० नम० निर्गुण गुणात्मा आ० नम। अरूप सरूप आ० नम० अरु बहु रूपधारी आ० नम० ५५ ब्रह्मण्यदेव आ० न० गऊ ब्राह्मणों के हित आ० न० जगत् के हित श्रीकृष्ण आप० न० हे गोविंद आ० न० २। ५६ हिरण्यगर्भआप० नम० ब्रह्मा विष्णु शिवरूप आ० नम० सूर्य आदि स्वरूप आ० न० हव्य कव्य भो जो। अर्थात् देव पितृ स्वरूप आपको नम० ५७ नित्यपूर्ण आ० न०। सदा तदैकरूप आपको नम०। अरु स्मर्ण कर्तेही पीड़ा नाशक आपको बारम्बार नमस्कारहै ५८ कमला केपति विष्णु जी देवताओं की ऐसी स्तुति सुनकर। शंख चक्र गदा पद्मधरे तिनके प्रत्यक्ष भये ५९ जो खिले कमल दलके जैसे नेत्रोंवाले अरु करोड़सूर्य समान कांतिमान्। अरु सब अलंकार पहिरे श्रीवत्स से जिनका अंकितहृदा ६० पीतांबर धारी सौम्य सुवर्णका जनेऊ पहिरे कोमल तरुणार विन्दोंवाले अरु मुनिजन जिनकी स्तुति करते ६१ ऐसे तिनदेवदेव विष्णुजीको देखके मुनिलोगोंने प्र॰णाम करी तो मेघके समान गंभीर शब्द से डरे तिन देवतोंको दयासागर विष्णुजी भाव बताये व-

वन कहते भये ६२ श्रीभगवान्वोले कि मैं मृकंडुजीके तपसेभयेतुम्हारेमानसी दुःखको जानताहूं परवोकिसीको बाधानहींकरतेक्योंकिमृकंडुजी सज्जनहैं६३ सज्जनचाहे सम्पत्तोंसेरहित वारहितहो पर वेप्रणपीजन औरकिसी को कभी स्वप्नमें भी बाधानहीं करते ६४ये अज्ञानी जन सदा विषयरूप शत्रुओंसे बाधित होताभी । अपनीरक्षा न करता अरु सूढ़मति भया औरों से वैर करता है ६५ जो ये नर आपही त्रिविध तापसे पीड़ित होरहा फिर और कोक्यापीड़ाकर सकेगा ६६ हे श्रेष्ठो जोमन वचन कर्म से और को बाधा करता वो इन्द्रिय रूप शत्रुओं से हारा अपनी भी बाधा को पाता है ६७ जो लोभी मन वाले अरु थोड़े धनसे युक्त भीहैं पर तिनको भयअवश्य है तिनको माया ने मोह रक्खे हैं ६८ जो शंका सहित सो सदा दुःखी अरु निःशंकहै सो सदा सुखीहै । निःशंक है सो सब प्राणियों के हितमें परायण दमन शीलरहता है ६९ जो जन ईर्षा अहंकार रहित लोक हितकारी है तिस को श्रेष्ठजन निरअंश कहते हैं ७० सो हे मुनि जनो तुम जाओ तुम को मुनिसे बाधा नहीं है मैं तुम्हारी सदा रक्षा करताहूं इससे सुखसे आगमन करो ७१ नारद जी कहतेहैं कि असलीके पुष्पके जैसी कांति वाले अर्थात श्याम वर्ण विष्णु जी तिन देवोंको ऐसेवर दकर । तिन के देखते २ आगे से अंतर्धान होगये ७२ अब देवता प्रसन्न मन भये निज स्वर्गलोक में आये । फिर प्रसन्न भये भगवान मृकण्डु जी को भी आगे आये ७३ तो मृकंडु जीने इनको जान समाधि करके । रूप रहित परब्रह्म

स्वप्रकाश निरंजन देखे ७४ जो श्यामवर्ण पीतांबर धारी अच्युत दिव्य शस्त्रधर ऐसे तिन्हें देख मृकंडुजी विस्मित भये ७५ फिर आंख खोल के देखा तो अगाड़ी विष्णुजी हैं जो प्रसन्न मुख शांत सब के पालक ईश्वर ७६ ऐसे तिन्हें देख इन मुनिजी के रोम खड़े भये अरु आनंद आंशु नेत्रों में भरे ऐसे ये मुनिजी आनंद के आंशुओं से तिनके चरणों को भिगोते ७७ अंजलि बांध शिर नवाके स्तुति करते भये मृकण्डुजी बोले ७८ परमेश्वर परमस्वरूप आपके अर्थ नमस्कार है जो आप परसे पर अरु परम से परम अर्थात् उत्कृष्ट शक्ति वाले हो अरु नहीं पार पाया जावे आपका परम आत्मा कर्ता आप अरु परों से पर अपार आपके अर्थ नमस्कार है ७९ जो आप नाम जाति आदिक भेद रहित अरु शब्द आदि दोषसे भिन्न मूर्ति अर्थात् जो शब्द से संपूर्ण न कहने में आवें ऐसे बहुरूप अरु निरंजन तिन परम स्तुति योग्य विष्णुजी को नमस्कार करता हूं ८० जो वेदांतवेद्य पुराण पुरुष अरु जो हिरण्यगर्भ आदि नाम प्रसिद्ध जगन्मय जिनकी उपमा किसी से न दई जावे जो भक्तों के हितकारी ऐसे सब के ईश्वर स्तुति योग्य ईशजी को भजता हूं ८१ जिन परम पवित्र विष्णु जी को केवल ध्याननिष्ठ दूर दोष जिनके अर्थात् निष्पाप अरु इच्छा रहित ऐसे संसार के संहार कारि विहारी जी को नमस्कार करता हूं ८२ जो विष्णुजी स्मरण करते जनों की पीड़ा हटाने वाले अरु शरण आये पै दयालु सेवनीय जगत के धाम परम ईश करुणा कर ऐसे तिन को मैं ध्याता हूं ८३ हे अनंत विष्णु जी आपके अर्थ न-

नमस्कार है जो आप सहस्रों अवतार धारण करने वाले अरु सहस्रों पैर नेत्र शिर हृदा बाहु वाले अरु सहस्रनाम जिनके हैं सो पुराण पुरुष अरु जो सहस्रकरोड़ युग धारण करनेवाले तिनको नमस्कार करताहूं ८४ ऐसे तिन महात्मा मृकंडु जी की स्तुति सुनके शंख चक्र गदा पद्मधारी विष्णुजी परमहर्षको प्राप्त भये ८५ फिर तो तिन मुनि जी को चारोंभुजों से आलिंगनकर परम प्रीतिसे वरसंयुत ऐसे कहते भये विष्णुजी बोले ८६ कि हे मुनिजी हम तुम्हारे तपसे अरु इसस्तोत्रसे प्रसन्न भयेहैं सो हे सुनियम वाले मृकंडु तुम्हारे मनसे चाहे वर को मांगो ८७ मृकंडुजी बोले हे देवों के देव जगत के नाथ मैं कृतार्थ भया इसमें संशय नहीं है ८८ जो कि आपका दर्शन भया जो अपवित्र अर्थात पापियों के अत्यंत पूर्व अर्थात भारी पुण्य वालों को होताहै अरु जिन आपको ब्रह्मादिक नहीं देख सक्ते अरु स्तुति जिन्हें करि न सके ८९ तिन परब्रह्मरूप विष्णु जी को मैंने देखे तो इससे श्रेष्ठ और क्या है आप के दर्शन से परे और कोई श्रेष्ठ वस्तु नहीं है ९० अरु जिन्हें श्रेष्ठ भक्त अरु समदर्शी ज्ञानी जन नहीं देखसक्ते तिन परब्रह्म आपको मैंने देखे इससे परे और क्या कहूं ९१ सज्जन जिन्हें न देख सकें अरु योगीजन भी नहीं देखें तिन परमधाम विष्णुजी को मैं देखता इससे परे और क्या श्रेष्ठ है ९२ धर्मात्मा अरु दीक्षा भये अर्थात जिन्होंने विधि से गुरूपदेश लियाहै भी जिन्हें न देखसक्ते ऐसे आदि अंत रहित विष्णु जी को मैं देखता इससे परे और क्या श्रेष्ठ है ९३ अरु

जिन्हें राग अहंकार रहित ज्ञानी जन नहीं देख सके ऐसे श्रेष्ठ रूप परम वस्तु विष्णुजी को मैं देखता इस से परे और क्या श्रेष्ठहै ९४ जो पराये उपकारमें परायण अरु निठुराई रहित ऐसे २ महात्मा भी जिन्हें न देख सकें तिन परमधाम विष्णुजी को मैं देखता इससे परे और क्या अधिक है ९५ हे जगत के गुरु जनार्दन जी मैं इसीसे कृतार्थभयाहूं जो कि आपकादर्शनभया साधु जनों को आपका दर्शन होना अत्यन्त कठिन है पर मुझ पर ये अनुग्रह है ९६ जिनके नाम का स्मरण करतेही महापापी भी परमपद को प्राप्त होते हैं तो हे भगवन् जिन्होंने दर्शन किया उनका तो क्या कहना ९७ श्री भगवान् बोले हे ब्रह्मन् सत्य कहा मैं तुम्हारी सद्बुद्धि से प्रसन्न भया हूं अरु मेरा दर्शन निष्फल कभी भी नहीं होता ९८ अरु विष्णुजी भक्त कुटुंबी हैं ऐसेही पण्डित जन सदा कहते हैं तिसी वाक्यको मैं पालता हूं सज्जन मिथ्या कभी नहीं कहते ९९ तिससे हे द्विजेन्द्र सुनो हम तुम्हारे पुत्र होवेंगे जो संपूर्ण गुणों सहित चिरंजीवि स्वरूपवान् १०० अरु जिस कुलमें हमारा जन्म होता वो कुल मोक्ष पाता है हे मुनि श्रेष्ठ हमारे प्रसन्न भये क्या असाध्य है सो कहो १ जो हमारी भक्ति में परायण अरु हमारा पूजन करनेवाला अरु हमारी ही कथा सु-

प्रणाम करता ऐसा भक्त सब कुलको मोक्ष करता है ३ तिससे हे द्विजेंद्र तुम्हारे इसस्तोत्र तथा तपसे हम प्रसन्न हैं सो हम पुत्र भावसे तुम्हारा ऋण हटावेंगे अर्थात इस भक्ति के बदले तुमको पुत्रहोकर सब सुखदेवेंगे ४ । ५ ऐसेकह तिन मृकंडुजी के शिरपर हाथधरकर विष्णुजी तिनके सब अंगोंका स्पर्शकरके तहांहीं अंतर्द्धानभये ६ अरु परमप्रसन्न मृकंडुजी अपनेको पवित्र मानतेभयेभगवान्को नमस्कार करके फिर निजआश्रमपै आये ७ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितदेवीसहायकृत मृकंडुउपाख्यान वर्णनंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥

पांचवां अध्याय ॥

भगवद्भक्ति माहात्म्य वर्णन किया गया है ॥

श्री सूतजी बोले वरपाये अरु सदा विष्णुजीकी सेवा में परायण मुनि मृकंडुजी [मार्कंडेय] नाम पुत्रको प्राप्त भये जो पुत्र भगवान् के समान १ सो बड़भागी मार्कंडेय जी जो दयावाले भक्तवत्सल आत्मज्ञानी सत्यसंध सूर्य समान कांतिमान २ वशवान शांतमन ज्ञानवान सब अर्थ तत्त्वज्ञाता ऐसे मुनि जो भगवत प्रीति कारक परम तप करने लगे ३ तब तो बुद्धिमान मार्कंडेयजीसे आराधन किये विष्णुजी तिनको पुराण संहिता बनाने के लिये वरदान देते भये ४ तिससे मार्कण्डेय मुनिजी नारायण कहाये जो चिरंजीवी अरु देवों के देव विष्णु जी के महा भक्त भये ५ सो जगतके जन्तमय भये विष्णु जीने तिन्हें निज प्रभाव दिखाने को संहारनहींकिये ६

ऐसे मृकंडु जी के पुत्र बुद्धिमान् मार्कण्डेय जी जो सब
भक्तिसहित तिसमहाजल में पत्तेकी नाईं स्थित रहे ७
जब तक विष्णु जी शयन करते रहे तिसी समय के
प्रमाण को हम कहते हैं सो हे द्विज सनकादिको श्र-
वण करो ८ सो कि पंद्रह निमेष अर्थात् नेत्र मीचने
समय से एक काष्ठा होती है अरु तीस काष्ठाओं की
एक कला होती है ९ तीस कलाओं का एक क्षण ऐसे२
छै क्षणों की एक घड़ी दोघड़ी का एक मुहूर्त्त तीस मुहूर्त्त
का एक दिन १० तीस दिनका एकमास सो दोपक्ष स-
हित होताहै अरु दो मास का एक ऋतुहोताहै तीनऋतु-
ओं का एक अयन कहा ११ दो अयनों का एक वर्ष
सोही देवतों का अहोरात्र होताहै सो कि उत्तरायण तो
देवतोंका दिन अरु दक्षिणायन रात्रिहै १२ अरु मनुष्यों
के एक मास करके पितरों का एक दिन रात होताहै सो
भी कृष्णपक्ष दिन अरु शुक्लपक्ष रात्रि तिससे सूर्य चंद्रमा
के योग अर्थात् अमावस के दिन पितरों को उत्तम अन्न
देना १३ बारह हजार दिव्य वर्षोंका एक दैवयुग होताहै
अरु दोसहस्र दैवयुगों का ब्राह्मयकल्प होता है १४ अरु
इकहत्तर दिव्य युगों करके एक मन्वंतर होताहै अरु चौ
दह मन्वंतरों करके ब्रह्मा जी का दिन होता है १५ अरु
जितना ब्रह्मा जी का दिन है तितनीही तिनकी रात्रि
होतीहै हे विप्रो तिस समय त्रिभुवन नष्ट होता है १६
अरु मनुष्यों के प्रमाण से जोहोवे सो सुनो सहस्र चौयुगी
अर्थात् सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग इतने समयमें ब्रह्मा
जीका दिन होताहै १७ तैसेही मास वर्ष ये भी जानने ।

ऐसे दो परार्द्ध वर्ष समय की ब्रह्माजी की अवस्था होती है १८ सो विष्णुजीका दिन जानना अरु तितनीहीरात्रि जाननी इससें अनगिनत वर्षहोगये । इतने समय तक मार्कंडेयजी जीर्णपत्तेकी नाईं तहाँ स्थितरहे १९ तिस महाजलमें विष्णुजी की शक्तियोंसे समृद्ध । परमेश्वरको ध्याते विष्णुजी के निकट स्थितरहे २० फिररात्रि बीते दिन भये योग निद्रासे छूटे विष्णुजीने । ब्रह्मारूप करके चर अचर संसाररचा २१ तबतो मार्कंडेयजी जल हटे अरुरचे संसारको देखके परम विस्मयको प्राप्त विष्णुजीके चरणार विंदोंसें वंदना करतेभये २२ सो वे मार्कंडेयजी हाथ जोड़ शिरनायके अभीष्ट वचनोंसे सच्चिदानंद विष्णुजीकी स्तुतिकरते भये २३ मार्कंडेयजी बोले मैंदेव विष्णुजीको प्रणाम करताहूं जो विष्णु जी सहस्र शिरवाले देवोंकेईश आरोग्यरूप । आधार रहित ऐसे वासुदेवजी को मैं प्रणाम करताहूं २४ अरु जो सब लोकोंके आश्रय अरु आदिअंत रहित प्रभु अरु सबप्रमाणोंसेअभेदनीय अर्थात् जो प्रमाण करने में न आवें ऐसे जनार्दनजी को प्रणामकरताहूं २५ जो अप्रमेय अजरनित्यसच्चिदानंदविग्रह । अरु अतर्क्यनिर्देशरहित अर्थात् जो बतानेमें नहींआवें ऐसेजनार्दनजीको प्रणाम करताहूं २६ जोअविनाशी परमनित्य विश्वके अक्षअर्थात्जगदाश्रयअरुसंसारजनकअरुअद्वैततत्त्व प्रमाणगोचररूप ऐसे जनार्दनजीको प्रणामकरताहूं २७ अरुजोपुराणपुरुषसिद्ध अरु सर्वज्ञानोंके मुख्यकारण । अरुपरमअत्यंतपर रूप वाले ऐसे जो हैं तिन जनार्दनजीको प्रणामकरताहूं २८

जोपरम प्रकाशक परमधाम अरु जो परम पवित्र स्थान अरु सबके परम सुखस्वरूप ऐसे जनार्दन जी को प्रणाम करताहूं २९ जो सगुण निर्गुण अरु शांत माया रहित अरु मायावान्स्वरूपरहितअरु बहुरूपी ऐसे जनार्दनजीको प्रणामकरताहूं ३० जो सच्चिदानंद चिन्मात्र परोंमें परम पद अरु जो पूर्वसनातनश्रेष्ठ ऐसे जनार्दनजीको प्रणाम करताहूं ३१ जोविष्णुजीइससंसारकोरचतेपालते संहारते हैं तिनआदिदेव ईश्वरजनार्दनजीको प्रणामकरताहूं ३२ हेपरमईशपरमानंद हेशरणागतपरदयालु हे करुणानि-धान विष्णुजी मेरी रक्षाकरो हेमायासे परे आपकेअर्थ नमस्कारहै ३३ नारदजी कहते हैं कि द्विज श्रेष्ठ तिन मार्कंडेयजीके ऐसेस्तुतिकरते विष्णुजी जगत्केगुरुशंख चक्र गदा पद्मधारी मुरारि जी परमप्रीति से बोले ३४ कि हे द्विज श्रेष्ठ मार्कण्डेयजी जो लोकोंको पवित्र कर ने वाले भगवद्भक्त हैं तिनपर मैंप्रसन्न भया सदा तिनकी रक्षा करताहूं इसमें संशय नहीं ३५ हमहीं रूप छिपाये भगवद्भक्त रूप करके सदा लोकोंकी रक्षा करते हैं ३६ मार्कण्डेयजी बोले कि भगवद्भक्त कैसे होते अरु वे किस कर्मसे जानेजाते हैं ये मैं सुना चाहता हूं क्योंकि मुझको बड़ा आश्चर्य है ३७ श्रीभगवान् बोले हे मुनि श्रेष्ठ भग-वद्भक्तों के लक्षण सुनो तिनका प्रभाव तो करोड़ वर्षों में भी न कहा जावे ३८ जो सब प्राणियों के हितू ईर्षा अहंकार रहित शांत वशी इच्छा रहित ऐसे जो जन हैं सो भगवद्भक्तों में उत्तम जानने ३९ अरु जो मन वचन कर्म करके परको पीड़ा नहीं देते अरु जो प्रीति रहित

ऐसे जन भगवद्भक्त हैं ४० अरु जिनकी बुद्धि श्रेष्ठ कथा सुनने में है अरु बांचनेवालेमें जिनकी भक्ति वे भगवद्भक्त हैं ४१ जो जन मा बापोंकी गंगा शिवजी मानके उत्तम टहल करें वे भगवद्भक्त हैं ४२ अरु जो देवपूजा में रत अरु तिसके साधक हैं अरु जो हरिपूजा को देखके हर्षते वे भगवद्भक्त हैं ४३ जो वर्णाश्रमी अरु यतियों की सेवा में परायण हैं अरु पराई निंदा से रहित सो वे भगवद्भक्त जानने ४४ जोजन सबको प्रियवचनबोलते अरु जोगुण को ग्रहणकरते वे भगवद्भक्तहैं ४५ जो उत्तमजनअपनेस- मान सबप्राणियोंको देखते अरु मित्र शत्रुओं में समान ऐसे भगवद्भक्त हैं ४६ जो जन धर्मशास्त्र के वक्ता अरु धर्मशास्त्रकेवचनमें परायणहैं अरु जो सज्जनों की सेवा करते वे भगवद्भक्त हैं ४७ जोपुराणों को व्याख्या करते अरुजो पुराण सुनते हैं अरु जो पुराण वक्ताके भक्तहैं वे भगवद्भक्त हैं ४८ जो जन गऊ ब्राह्मणों की निरंतर सेवा करते हैं अरु जो तीर्थयात्रा में परायण हैं वे भगवद्भक्तहैं ४९ जो जन औरों की वृद्धि देखके प्रसन्न होते अरु जो हरिनाम जपने में परायण हैं वे भगवद्भक्तहैं ५० आराम रोपने में रत अर्थात वृक्ष लगाते अरु तड़ाग बनवाते हैं अरु जो सरोवर कुआ बनवाते वे भगवद्भक्त हैं ५१ जो सरोवर अरु देव मंदिर बनवाते हैं अरु जो गायत्री जपते वे भगवद्भक्त हैं ५२ जो विष्णुजी के नाम सुनकर अति हर्षभये प्रसन्नहोते अरुरोमजिनके खड़ेहोते वे भगवद्भक्त हैं५३ जो जन तुलसीजी के वनको देखके नमस्कारकरते अरु तुलसीजीकी माला गलेमेंडालें वे भगवद्भक्तहैं ५४

जो तुलसीजी की सुगंधसे संतुष्टरहते अरु जो तिसके मूलकी रज को मस्तक पर चढ़ाते वे भगवद्भक्त हैं ५५ अरु जो निज २ आश्रम धर्ममें परायण अरु अतिथियों का सत्कार करते हैं अरु जो वेदार्थ के वक्ता वे भगवद्भक्त हैं ५६ अरु जो शिवजी के प्यारे अरु शिव जी में आसक्त चित्त हैं अरु त्रिपुंड्र धारण करते वे भगवद्भक्त हैं ५७ अरु जो महात्मा शंभु जी का नामोच्चारण करते अरु रुद्राक्ष धारण किये वे भगवद्भक्त हैं ५८ जो बहु दक्षिणावाले यज्ञोंसे शिवजीको पूजते अथवा परमभक्ति से विष्णुजी की पूजा करते हैं वेभगवद्भक्त हैं ५९ अरु जो शिवजीमें अरु परमेश्वर में विष्णुजी में परमात्मा में समान वृत्तिसे वर्तते अर्थात् इन में भेदभाव नहीं मानते वे भगवद्भक्त हैं ६० अरु जो शिवजीको पूजते अरु तिन का पंचाक्षर जप करते हैं अरु जो शिवजी के ध्यान में परायण वे भगवद्भक्तहैं ६१ जो जन निज जानेभये शास्त्र औरोंको बताते ऐसे सर्वज्ञ गुणसे प्रकाशमान हैं वे भगवद्भक्त हैं ६२ अरु जो जलदान देते अरु सदा अन्न देते हैं अरु जो एकादशी व्रत करते वे भगवद्भक्त हैं ६३ जो गोदान अरु कन्यादान करते अरु जोहमारे अर्थ कर्म करते वे भगवद्भक्त हैं ६४ जो हमारे भक्त हम में मन लगाये अरु हमारेभक्तों से प्रसन्न रहते हैं अरु हमारे नाम स्मरणमें आसक्तहैं वे भगवद्भक्त हैं ६५ हे सनत्कुमार बहुत कहनेसे क्याहै हम संक्षेपसे ये कहतेहैं कि जहां श्रेष्ठ गुण विद्यमान हैं जिनके वे भगवद्भक्तहैं ६६ हे मार्कंडेय ये थोड़ेही भगवद्भक्त यहां कहेहैं अरु सारे तो हम से

करोड़ वर्षोंमें भी नहीं कहेजावें ६७ इससे हे द्विजोत्तम तुमभी सदा सुशील अरु सब प्राणियों के आश्रय मित्र दमनयुक्त होओ ६८ क्योंकि प्रलय तक फिरपहिले कैजैसे धर्मों का आचरण करो सो हमारी मूर्त्तिके ध्यानमें रत भये परमशांतिको प्राप्तहोओ ६९। ७० श्रीनारदजी कहते हैं कि ऐसे करुणानिधान विष्णुजी मृकंडुमुनि जी के पुत्र निजभक्त मार्कंडेयजीको ऐसे वर देकर तहांहीं अंतर्द्धान भये ७१ अरु ये बड़भागी मार्कंडेय जी सदा हरि भक्तमें रतभये अनेक धर्म आचरण करतेरहे सोकि बहुत से यत्न किये ७२ अरु शालिग्राम महाक्षेत्र पे परमतप किया तिन्हींके ध्यानसे आयु बिताके परममोक्षको प्राप्त भये ७३ तिससे जो जन सब प्राणियोंका हितकारी अरु हरिभक्त है सो जो २ वो मनसे चाहे सो२ही सब निस्सं-देहही पावै ७४ हेसनत्कुमार ऐसे जोतुमने जो भगवद्भक्ति का माहात्म्य पूछा सो सब हमने तुमको श्रवण कराया अब और क्या सुना चाहते हो सो कहो हम कहेंगे ७५

इतिश्री बृहन्नारदीयपुराण भाषा पण्डितदेवीसहायकृत भगवद्भक्तिमाहात्म्य वर्णनन्नाम पंचमोऽध्यायः ॥

छठवां अध्याय ॥

उत्तम तीर्थ वर्णन है ॥

श्रीसूतजी कथा प्रसंग वर्णन करतेहैं कि भगवद्भक्ति माहात्म्य को सुनते प्रसन्न भये मुनि सनत्कुमारजी मुनि श्रेष्ठ नारदजीसे पूछतेभये १ सनत्कुमार जी बोले हे देव कथयितव्यं जो क्षेत्रोंमें उत्तम क्षेत्र अरु तीर्थोंमें उत्तमतीर्थहै

सो आप परमदया करके सत्यकहिये २ नारदजी बोले
हे ब्रह्मन् जो परमगुह्य अरु सबसंपत्तिदाता शुभ है अरु
दुःखनाशक पवित्र अरु सब पापहारीहै ३ अरु जो मुनि-
यों को नित्य सुनना सुनाना दुष्टग्रहों को हटाता अरु
सब रोग मिटाता आयुर्बल बढ़ाता उत्तम है ४ ऐसा जो
क्षेत्रोंमें उत्तम क्षेत्र तीर्थोंमें अति उत्तम गंगा यमुना का
योग अर्थात् प्रयागराजहै ऐसे महर्षिजन कहतेहैं ५ तिस
श्वेत कृष्ण गंगा यमुनाजी के जलको ब्रह्मादिक सब दे
वता अरु मोक्ष चाहते मुनिजन सनु सेवतेहैं ६ सो पवित्र
नदी गंगाजी तो श्रीविष्णुजी के पादपद्मसे उत्पन्न भई
हैं अरु हे ब्रह्मन् यमुना सूर्यजीसे भई इससे तिनका योग
उत्तमजानना ७ गंगाजी स्मरण करतों को पीड़ा हटाने
वाली अरु सब नदियोंमें श्रेष्ठ हैं जो सब पापक्षय क-
रती अरु सब उपद्रव मिटातीहैं ८ इस से समुद्र तक इस
भूमि तलमें जितने क्षेत्रहैं तिन सबोंमें [प्रयागक्षेत्र] उत्तम
जानना ९ जहां ब्रह्माजीने यज्ञकरके विष्णुजीको पूजे
अरु और भी मुनिजनोंने बहुतसे यज्ञ कियेहैं १० जो सर्व
तीर्थों के जितने अभिषेचन अर्थात् छींटा देने से पवित्र
करनेवाले जलहैं वे गंगाजीके जलबिंदुकी भी सोलह-
वीं कलाको नहीं पहुंचसके हैं ११ जो दश सहस्र योजन
दूरसे भी गंगा गंगा ऐसे कहै वो सब पापोंसे छूटता
है फिर गंगाजी के निकटही हो तो क्या कहना
है १२ जो गंगाजी विष्णुपदी विश्वेश्वरजी के समीप
गामिनी अर्थात् काशीतल वाहिनी है सोही गंगा श्री
हरिजनों करके सेवनीय है १३ जहां की रेणुका को

उत्तम मनुष्य निज२ मस्तकपै लगाते अरु तहांहीं वि-
श्वेश्वर जीके शिरपर गंगाजल चढाते वे धन्य हैं १४ जिन
गंगाजीका स्नान मलिनमन वालों को दुर्लभ अरु विष्णु
जीके निकट निवासपन अर्थात् वैकुंठलोक का दाता है
इससे परे और क्या कहा जावे १५ जहां न्हाये पापीभी
सब पापोंसे छूटे श्रेष्ठ विमानमें विराजमान भये परम-
पदको प्राप्त होते हैं १६ जहां न्हाये महात्मा मातापिता
के सात २ कुलोंका उद्धार करके अर्थात् दोनों ओर की
सात२पीढियों सहित स्वर्गवास करतेहैं १७जो सदागंगा
जीका स्मरण करता सोसब तीर्थों में न्हाया अरु सब प-
वित्र तीर्थोंमें तिसनेनिवास कियाइसमेंसंशयनहींहै १८
जिन गंगाजी में न्हाये जनको देखके पापीभी स्वर्ग भो-
गते अरु जिसके जलके अंगके स्पर्शही सेजन देवतों में
उत्तमहोवे१९जिनकीरेणुकाको मस्तकमेंलगाके जटाजूट
धारीहोअर्थात्तिसपरचमरढुले अरु जोदेहमें रेणुकालगावे
तो कैलासवास पावे २० जिनकी मृत्तिका मस्तकलगा
ये जनके दर्शनसे भी पापीजन विष्णु जीके परमपदको
महात्मा जनहुये प्राप्तहोतेहैं २१ तुलसीके मूलतले की
अरु विष्णुभक्तके पैरके तलेकी । अरु गंगाजीकी मृत्ति
का भगवत्तुल्यता देती अर्थात् कैवल्य मोक्ष देतीहै २२
गंगाजी अरु तुलसीजी अरु भगवानमें अचलभक्ति ये
अवश्य दुर्लभहैं । अरु तैसेही धर्मवक्ता में अचल भक्ति
अति उत्तमहै २३ श्रेष्ठ धर्मवक्ता के चरणकी रज तैसे
हीगंगाजी की रेणुका तैसे तुलसीजी की मृत्तिका अरु
तैसेही इनकी भक्ति ये विष्णु जी के पदको पहुंचाती

हैं २४ मैंकब गंगाजी पै जाऊंगा अरु कबतिनके दर्शन करोंगा जो ऐसी चिंता रखता सो विष्णु पदको प्राप्त होताहै २५ हे ब्रह्मन् गंगाजीकी महिमा विष्णुजीकर के करोड़वर्षों में भी नहीं कहनेमें आवै और अधिककहनेसे क्याहै २६ देखो आश्चर्यहै कि ये महाश्रेष्ठजनों को भी मोहित करतीहै। जोकि वे गंगाजीके नामकेहोतेभी नरकमें जातेहैं२७ संसाररूप फांशेका काटनेवाला ये[गंगा] नामहै। अरु तैसेही तुलसीजीकी भक्तितथापुराणवक्तामें भक्ति येहैं २८ जोजन एकबेरभी [गंगागंगा] ऐसे कहताहै सो सबपापोंसे छूटा विष्णुलोक को पहुंचताहै २९ जो [गंगाजी जाताहूं] ऐसे कहता तीनयोजनअर्थात बारहकोश तकजावे। सो सबपापोंसे छूटा सबलोकों का स्वामी होताहै ३० ऐसी ये पवित्र रमणीयगंगाजी चैत्रआदि महीनोंमें स्नानकरनेसे सबसंसार को पवित्र करतीहैं ३१ हे सनत्कुमार गोदावरी भीमरथी कृष्णा रेवा सरस्वती तुंगभद्रा अरु कावेरी कालिंदी अरु बहुदा ३२ बेत्रवती अरु ताम्रपर्णी शतलज हेद्विजोत्तम सनकादिको इत्यादिक नदियों में गंगाजी बिराजमान हैं ३३ हे द्विजो जो२शास्त्रमें पवित्र तिथियें कहीं तिनमें तहां२ स्नान करनेसे वोगंगाजल सर्वत्रस्थितभा सबसंसारको पवित्रकरता है३४ जैसे मंत्रोंमें सर्वत्रनादशब्दमुख्य है अरु जैसे व्यापक आत्मा सर्वत्रहै। अरु जैसे विद्या श्रेष्ठहै तैसे गंगाजी अति श्रेष्ठहैं३५ जैसे चारवर्णोंमें ब्राह्मण श्रेष्ठहैं अरुतारोंमें चंद्रमाउत्तमहै। अरुजैसे समुद्रोंमें क्षीरसागर पवित्रहै तैसे गंगाजी श्रेष्ठहैं ३६ शांत

के समान कोई बंधु नहीं अरु सत्यसे परे कोई तप नहीं। मोक्षसे परे लाभ नहीं अरु गंगाजीके समान और नदी नहीं है ३७ गंगाजीका श्रेष्ठनाम पापरूप बनका अग्नि है अरु गंगाजीही संसाररूप रोगहरने वाली हैं तिससे गंगाजीही प्रयत्नसे सेवनीय हैं ३८ हे सनत्कुमार जैसे विष्णुजी सर्वत्र व्याप्तहोरहेहैं तैसेही येसब पापनाशिनी गंगाजी व्यापकहैं ३९ इससे जगतकी माता गंगाजी स्नानपान आदिसे जगत्को पवित्र कररहीं सो कैसे नहीं सेवनीयहैं अर्थात् गंगासेवन सदाही कर्त्तव्यहै ४० सब तीर्थोंमें उत्तमतीर्थ क्षेत्रोंमें उत्तमक्षेत्र काशीजी विख्यातहै जो सबदेवोंसे सदासेवित ४१ तबभी जहांगंगा यमुनाजीका संयोगभया हो अर्थात् प्रयागजी अति उत्तमहै जिसके दर्शनहीसे नर परमगति पातेहैं ४२ अरु मकरके सूर्यमें जलसाक्षसे गंगाजी रहतीहैं। जोजनोंको स्नानपानआदिसे पवित्र करती स्वर्गको लेजातीहैं ४३ जोसंसारके हितकारी शंकरजीहैं वेभीनित्य लिंगरूपभये गंगाजीको भजतेहैं वेसीतिस गंगाजीकी महिमा कैसे कहीजावे ४४ अरुवेलिंग रूपधारी शिवजी विष्णुरूप अरुविष्णुजी शिवरूपहैं इनमें कुछभी भेदनहीं है जो भेद मानता सोपाप भोगताहै ४५ जो आदि अंतरहित हरिहर देवजी हैं सो एकही हैं जो अज्ञान समुद्र में डूबे पापीजन हैं वे इनमें परस्पर भेदमानते हैं ४६ जो जगतकेईश अरुकारणोंके कारण विष्णुजीहैं वेही रुद्र रूपधारी होकर इस त्रिभुवन को संहारतेहैं अरुवही पहिले ब्रह्मारूपसे रचते अरु विष्णुरूपसेपालतेहैं ४७।४८ जोजनहरिशंकरजीमें

अरु ब्रह्माजी में भेद मानै तो प्रलय पर्यंत नरकभोग-ताहै जोब्रह्मा विष्णुमहेश इनको एकरूप देखता। सो परम आनंदको प्राप्तहोताहै सब शास्त्रोंका यही निश्चयहै ४९ । ५० जो विष्णुजी अनादि सर्वज्ञाता जगत्की उत्पत्ति करनेवाले हैं सो तहां नित्यही शिवलिंग रूपहो कर विराजमानहैं ५१ काशीजीमें जोविधुकेश्वरजी का लिंगहै सो ज्योतिर्लिंग है तिसका दर्शन करकेजन उत्तमगतिपाता है ५२ मूर्तियें शिलमृत्तिका अष्टधातु पाषाणसे बनाई अरु लिखितये मूर्तियें उत्तमहैं जोइनसे शिवजीवा विष्णुजीकी मूर्तिबनेतोतिनमेंविष्णुजी निरंतररहतेहैं५३ जहां तुलसीजी कावन अरुकमलोंका वन है अरु जहांपुराणोंका पठनहै तहाँनित्यविष्णुजीविराजमानहैं ५४ हे द्विजश्रेष्ठ जो अपने वा पराये अर्थभक्ति से नित्यपुराण बांचताहै वो विष्णुरूप है इसमें संशय नहीं ५५ पुराण संहिता का वक्ता हरिही कहाता है। अरु जो तिसकी सेवाकरतेहैं तिनको दिन२ गंगास्नान काफल मिलताहै ५६ पुराण श्रवणमें जोभक्ति सोगंगा स्नानके समानहै। अरु तिसके वाचकमें जो भक्ति सो प्रयागजीके समानहै ५७ जो पुराण धर्मसुनाकर जनों का उद्धारकरता सो संसार समुद्रसे तिरानेवाला हरिरूप होहै इसमें संशयनहीं ५८ गंगाजीके समान तीर्थ नहीं माताके समान गुरुनहीं अर्थात् माताही परमज्ञान देती है अरु विष्णुजीसे परदेवता नहीं ५९ गायत्री अरुगंगा जोये दोनों सबपाप हरनेवालीहैं इनकी भक्तिसे जोरहित है सोपतित जानना हेद्विजो ६० गायत्री वेदोंकीमाता

औ लोककी मातागंगाजीहैं। येदोनोंसबपापोंकोनाशक-
रनेवालीहैं ६१ श्ररुजिसपैगायत्रीप्रसन्नहोतीतिसपैगंगाजी
प्रसन्नहैं। येदोनों विष्णुशक्तिसहित सबकाम अर्थसिद्ध
देनेवाली हैं ६२ ऐसीये धर्म अर्थकाम मोक्ष इनकेफल
रूपभई दोनों सबलोकके अनुग्रहके अर्थ वर्तमान हैं ६३
गायत्री अरुगंगाजी मनुष्योंको अत्यंतही दुर्लभहैं। तैसे
हीतुलसीकी भक्तिअरुसत्त्व गुणवाली विष्णुभक्तिहै ६४
येगंगाजी महापापोंकी नष्टकरने वालीहैं । जोदेखीपा-
नकरी वैकुंठलोक पहुंचाने वालीहैं ६५ जिनमेंस्नानकिये
जनविष्णुजीकेउत्तमपदकोपहुंचतेहैं।जोस्नानपानकरोयेंह
मोक्षदेतीहैं ६६ हेसनत्कुमार नारायण जोजगत्केरचनेवाले
सनातन वासुदेवजीहैं अरु परम वांछित देनेवाली गंगा
जीहैं ६७ जो आचमन मात्रभी गंगाजल भक्तिमें पीवै।
सो सबपापोंसे छूटा परमपद पाताहै ६८ जिसगंगाजल
को बूंदहीके सेवनसे [सगरवंशका] अर्थात [सौदास]
सो राक्षसपने को छोड़करपरमपदको प्राप्तभया ६९ ॥

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितदेवीसहायकृततीर्थकथा
वर्णनन्नामषष्टोऽध्यायः॥

सातवांअध्याय ॥

सगरवंशी सौदासका वर्णन ॥

शौनकआदि मुनिजनोंने पूछा कि हेसतजी कौनस
गरकेवंश में राक्षसभावसे छूटा। अरु सगरकौन राजाथा
अरु कहां जन्माथा १ अरु तिसीके कुलमें जन्माभगीरथ
गंगाजी को लाया सोसब वृत्तांतहमसे यथावत कहने

योग्यहो २ श्रीसूतजी बोले हे ऋषियो जो नारदजीने स-
नत्कुमारजी से सम्यक्प्रकार वर्णनकिया सोही तुमसारे
श्रीगंगाजीके माहात्म्यको श्रवणकरो तुमसारे बड़भागी
धन्यहो इसमें संशयनहीं क्योंकि जोगंगाजीके प्रभावको
सुननेकेलिये तयारभयेहो ३ जिन गंगाजीका माहात्म्य
पुन्यात्माओंको भी दुर्लभहै ऐसे ब्रह्मबादी मुनिजन क-
हतेहैं ४ सोहेमुनिजनों तुमउत्तम सगरवंशके राजाओंदा-
सका चरित्रसुनो जिसने गंगाजीके छंटे से विष्णुपदपा-
या ५ श्रीनारदजी बोले हे सनत्कुमार सूर्यवंश में राजा
[वृक] कापुत्र [बाहु] इसनामसे प्रसिद्धभया जोधर्मेपरा-
यरा [बाहु] धर्मसे सारी पृथ्वी को भोगताथा ६ जिसने
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अरु और २ भी प्राणी निज
निज आ जीविका से पालित किये ७ ऐसे तिस बाहु-
राजानेसातोंद्वीपोंमें सत्तर अश्वमेध किये अरुसब ब्राह्म-
णों को गऊ सुवर्ण अन्नदान दे दे के प्रसन्न किये ८
अरु नीति शास्त्रमें जिसने बहुत रमण किया अरु जिसने
चोरोंकोपकड़ा अरु नहींहे दूसरेकाछत्र जैसे इसदलभास
के राजाभये इस बाहुने अपने को कृतार्थ माना ९ जिस
के राज्यविषे निज २ धामोंमें जन सुन्दर २ चन्दन लगाते
थे अरु आभूषण पहर २ सुखी होते थे १० बाद बिन
हल खेंचे पृथ्वी फल फूल सहित होतीथी अरु हे मुनि
जनों इन्द्र समय २ पै वर्षा करता था ११ ऐसे धर्म से र-
क्षा करी तिसकी प्रजा अधर्मने कभी सब न लगातीथी
जो राजा सब शास्त्रार्थ तत्त्वका ज्ञाता सकल शुभ लक्षण
वान् १२ ऐसे इस गुणी राजाने नौसहस्र वर्ष राज्यकिया

किया एक समय तिस राजा को सब संपत्ति नष्ट करने
वाला ईर्षा सहित लोभका कारण महा भारी अहंकार
भया १३ कि मैं सबका राजा बली शिक्षादेनेवालाहूं मैंने
बहुत यज्ञ किये मेरे परै और कौन पूजनीय है १४ मैं
बुद्धिमान् शोभावालाहूं मैंनेसब शत्रुजीतेहैं अरु मैंही सब
द्वीपों का रक्षक शिक्षक हूं १५ मैं वेदवेदांग तत्त्व ज्ञानी
अरु नीति शास्त्रार्थ में कुशलहूं अरु न जीता जाऊं नमेरा
ऐश्वर्य खंडित है मुझसे परै और कौन अधिक है १६
ऐसे तिस बाहु राजा को मोह जनित अहंकार भया जो
सबसंपत्ति नष्टकरनेवाला १७ जहां अहंकारहै तहांकाम
क्रोधादिक भी अवश्य हैं जिनके होनेसे जन सर्वथा नष्ट
होजाता है १८ यौवन धन संपत्ति प्रभुता अविवेक पन
इनमें से एक२ भी नाशके लियेहैं अरु जहां ये चारों इ-
कठेहों तहां काक्या कहना अर्थात तहां तो सर्वथा नाश
होताही है १९ सोही तिस राजाके लोक विरोध करने
वाली भारी ईर्षा भई जो निजदेहको भी नष्ट करनेवाली
पापरूप अरु सब संपत्ति हटाने वाली २० जो विवेक
हीन पुरुषके संपत्ति होवे है उत्तम जनो वो संपत्ति अत्यंत
चंचल जाननी मानो शरद ऋतुकी नदी अर्थात जैसे श-
रदी की नदी चढके शीघ्र उतर जातीहै तैसीही वो जा-
ननी २१ ईर्षा युक्त मनवाले के जो संपत्तिहोवे तो तिसे
फूसकी आग जाननी जो भी वायुके संयोगसहित अर्थात
जो शीघ्रहीहो मिटनेवाली है २२ ईर्षा युक्त चित्त अरु
पाखंड आचारवालों को अरु खोटे वचन कहने वालों
को यहां अरु वहां कहीं भी सुख नहींहै २३ ईर्षायुक्त

चित्त अरु सदा निठुर बचन कहनेवालों के प्यारे अरु पुत्र तथा बंधुभी शत्रु होजातेहैं २४ जो जन पराई श्रीको देखके ईर्षा करै सो निज संपत्ति काटने को कुल्हाड़ा है इसमें संशय नहीं २५ जो जन निज ऐश्वर्य नष्ट करनेके लिये प्रयत्नकियाचाहैतोसबकीसंपदादेखकेसदा अहंकारकरै अर्थात् तिससेशीघ्रतिसकी भी संपदानष्ट होजाती है जोजन मित्रसंतान घरक्षेत्र धनधान्ययश इनकीहानिचाहै तो हे द्विजो वो निरंतर ईर्षाकरै २६ जिसपै विष्णुजी प्रसन्नहैं तिसका सौभाग्य बढ़ताहै अरु जिससे येविष्णुजीविमुखहैं तिसका सौभाग्य घटताहै २७ तभीतक पुत्र पौत्र अरु धन धान्यघर आदि समृद्धहैं जबतक हे द्विजो विष्णुजी कृपादृष्टि रक्खें २८ अरु हे द्विजेन्द्रो मूर्ख अंध बधिरजड़ अविवेकी येभीश्लाघायोग्य होजातेहैं जबविष्णुजी निजसुदृष्टिसे देखतेहैं २९ जिसका सौभाग्यघटनेलगता तिसके ईर्षादिक उत्पन्नहो अरु विशेष करके प्राणियोंसे द्वेषहोताहै ३० जो मूढ़जन जिस किसी से भी द्वेषकरै तो तिसके सबसुकर्मनष्ट होतेहैं ३१ जिसके मनमें ईर्षारहती तिससे विष्णुजी विमुखहैं । अरु तिसके सबसुकर्म अवश्य नष्टहोतेहैं ३२ अहंकार विवेकको नष्टकरता अरु अविवेकभयाजीवननष्टकरताहै फिरआपत्तियेंभी अहंकारसेही होतीहैं तिससेजन अहंकार कोसर्वथात्यागै ३३ जिसके अहंकार होता तिसकानाश भी अत्यंत शीघ्र होता है अरु हे द्विजो ईर्षादिक सब अहंकारहीके पीछे रहतेहैं ३४ ऐसेईर्षा युक्तचित्तवाले तिस राजा सुबाहुका शत्रुओंकेसाथ महीनोंतक महाघोर युद्ध

भया ३५ फिरवो सुबाहु हैहय अरुतालजंघ आदिशत्रुओं सेहारा फिरतो वोराज्यसे भ्रष्टभया शीघ्रहीघोर वनमेंगया ३६ अरु तिसीके मंत्रियोंने तिसकी रानीको गर्भ थाँ भनेकोलिये महाघोर विषदिया जिससे इसके गर्भ पातन होजावे वंशाअंकुर बनारहै येविचारके कुछस्तंभक नथा देदिया ३७ ऐसी तिस गर्भवती रानीसहित दुखीराजा सुबाहु वनसे वन२मेंभटकता [ओर्व] मुनिजी के आश्रम पै पहुंचा ३८ जो राजा तृषा दाह से तपा पैदल अत्यंत दुखित निज कर्मके फल को भोगता बिचरा ३९ जो आप क्षुधासे क्षीण अरु तैसीही रानी सहित सुबाहु एकभारी सरोवर देखके संतोषको प्राप्त भया ४० तब तिस ईर्षा युक्त चित्तवाले तिसके पाप पनको देखके सबपक्षी सरोवर में जाय लीनभये अरु बोले कि महाकष्ट है जो यहां ये पापी चला आया अब जलमें घुसचलो ४१ ४२ जिस ईर्षा युत मनवालेको देखके पक्षी भी पुकार उठे फिर धिक्कारयुक्त जगतसे विद्वेष करानेवाली ईर्षा को कैसे कोई करै ४३ फिर सुबाहु जलमें बड़ के बहुतसा जल बेर २ पीकर वृक्षतले बैठ रानी सहित तिसनेहार उतारी ४४ अरु उत्तर राज्यमें जन जो इसीसे रक्षा किये थे वे सब इसे धिक्कारते भये ४५ हेद्विजो कोई भी गुणी जन हो तिसकी सब श्लाघाकरते अरु गुण हीन चाहे सब संपतवाला भीहो पर तिसकी सबजन निंदाहीकरतेहैं ४६ ओ हो। अकीर्ति के समान लोकमें मनुष्यों का मरणा दूसरा नहींहै अरु कीर्ति के समान कोई त्रिभुवन में माता नहींहै ४७ जबकि बाहु वनमें गया तभी तिसके राज्य

के जन परम प्रसन्न भये जैसे निज भानुको सर्वें सुखहो ४८ ऐसे निर्वित भया बाहु सरा जैसा वनमें रहा है सुभजनों ये अपयश संसार में किसे नहीं जीते मारदेताहै ४९ अपकीर्तिके समान मरण नहींहै अरु क्रोधके समान शत्रु नहीं निंदा समान पापनहीं अरु मोह समान कोई बंधन नहींहै ५० लोक निंदाके समान अपकीर्ति नहीं कामदेव समान अग्नि नहीं है स्नेह के समान कोई फांसा नहीं संगके समान कोई विष नहींहै ५१ ऐसेही बाहु बहुत सा विलाप करके दुःखित भया मनको व्याधि से जीर्ण अंगोंवाला वृद्धभया ५२ बहुत सा समयबीते और्व जीके आश्रम के समीपही मरगया फिर तिसकी रानी गर्भवती जो निर्जन वनमें दुःखी थी ५३ सो बहुत काल अनेक प्रकार विलाप करके साथ जलनेको मन करती भई ५४ सोही वो ईंधन लाय चिता बनाकर पति को तिसपै विराजमानकर आप बैठनेलगी ५५ इतनेमें वुद्धिमान कांतिनिधान मुनि [और्व] जीने परमसमाधिसे इस वृत्तांतको जाना ५६ हे मुनीश्वरो महात्मा भूतभविष्य वर्तमानको तुर्त विचारलेतेहैं वे निन्दारहित तिसको ज्ञान दृष्टिसे देखलेते हैं ५७ सोही वे तप तेजवाले कांतिमान् ऐसे पवित्र मुनि और्वजी जहां बाहुकी रानी बैठीथी तहां आये ५८ अरु तिसे चितापर चढ़नेको तयार देखके और्व जी धर्मवचन तिसे सुनाने लगे ५९ और्वजी बोले हे राजप्यारी तू मतिशोचकर क्योंकि तेरे उदरमें चक्रवर्ती राजा शत्रुओंका हननेवालाहै ६० बालसंतानवाली अरु गर्भवती अरु रजोदर्शन जिनको न हुआहो अरु हेपुत्रि रजस्व

ला इतनी स्त्रियें चितापर न चढ़ें अर्थात् सती नहोवें ६१ ब्रह्महत्यादिक पापों का तो मुनिजनों ने प्रायश्चित्त भी कहा अरु हठका निन्दकका गर्भपाती का प्रायश्चित्त नहींहै ६२ अरु नास्तिक कृतघ्नी अधर्मीका अरु विश्वास घातीका प्रायश्चित्त नहींहै ६३ तिससे हे सुन्दरि इस महापापको तू करनेयोग्य नहींहै जो ये दुःख भयाहै सो सब शांतिहोगा ६४ ऐसे तिन मुनिजी से समझाई गई वो पतिव्रता तिनका कहामान तिनके चरण पकड़ कर विलाप करनेलगी ६५ और्वजी ने फिर तिसे समझाई कि हे राजपुत्रि तू मत रोवे तू महाशोभा पावेगी ६६ हे महामतिवाली आंशु न छोड़ क्योंकि ये प्रेतको जलाता है तिससे तू शोकको त्यागके समयउचित इसकी क्रिया कर ६७ पंडितमें वा मूर्खमें दरिद्रीमें वा लक्ष्मीवालेमें खोटे में वा श्रेष्ठमें सर्वत्र मरण समानही है ६८ नगरमें वनमें समुद्रमें वा पर्वतमें जहांजहां जोजो प्राणीने कर्मकिया सोसो अवश्यही भोगना पड़ैगा ६९ जैसे विन विचारे दुःख मनुष्योंपर आपड़ते तैसेही सुखभी जानो दैव यहां मुख्यहै अर्थात् दैवको सब सामर्थ्यहै ७० जोजो पूर्व जन्मका किया कर्महै सोसोही यहां भोगा जाताहै यहां दैवही कारणहै ऐसे मनुष्य कुछनहीं करसक्ता ७१ गर्भमेंवा बालपनेमें यौवनमें वा बुढ़ापेमें हे कमल नयनवालीप्राणियोंको मृत्युके वश अवश्य होनाहै ७२ अरु कर्मवश भये इन प्राणियों को विष्णु जीही हनतेहैं ये प्राणीतो निमित्त मात्रहैं अज्ञानी इसमें विवाद करतेहैं कि फलाने ने फलानेको मारा ७३ तिससे इसमहा दुःखको त्यागके

तू सुखीहोउ अरु स्थिरचित्तभई एकांत में पतिका क्रिया कर्मकर ७४ ये शरीर अनेक रोग दुःखों से भराहै इससे सुखका भ्रलकाही है अरु बस्तुसे महा क्लेशरूप कर्म फाँसेसे बँधाहै ७५ महा बुद्धिमान् मुनिजीने ऐसे समझा कर तिससे क्रिया कर्म करवाया फिर तिसने शोकत्याग के मुनिजीको बंदनाकरी अरुबोली ७६ महात्मा मनुष्य पराये अर्थ फलकोचाहते तथासिद्धकरते इसमें क्या आश्चर्यहैक्योंकिवृक्षअपनेखानेकेलियेनहींफलतेहैं ७७ जो कोई पराये दुःखकोदेखके तिसको श्रेष्ठ बचनोंसेसमझावे सो विष्णु भक्त परम सात्वकीय जानना जोपराये हित में परायणहै ७८ जोपराये दुःखसे दुःखी अरुपराये हर्ष से सुखीहै सोही जगत्का स्वामी विष्णु रूपहै ७९ सज्जनोंके बनाये शास्त्र आपसे किसीकेदुःख दूरकरनेको नहीं किंतु जब संतजिन्हें सुनावें तभी दुख नाश होताहै ८० जहाँसंतजन बर्तमानहैं तहाँ दुःखनहींहोता क्योंकि जहाँ सूर्यभी विद्यमानहैं तहाँअंधेरा कैसेहोवे ८१ ऐसे कहती वो निज पतिका क्रिया कर्म मुनिजीसे कहेशास्त्र सारीतिकरतीभई ८२ अरुतिसीसमय मुनिजीके राजा की ओर देखतेहीवोसुबाहु राजाअनेक बिमानबैठे स्वर्गवासी जनोंसहितवैकुंठलोककोगया ८३ हे द्विजोकोईमहापापी औरसबपापोंसे युक्तहो जिनसे सज्जनोंनेदेखा वोपरम पदकोप्राप्त होताहीहै ८४ अरु वहपतिव्रतामुनिजीसेसमझाईदुःखत्यागकरतिनऔर्वजीकेआश्रममेंरहनेलगी ८५॥

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणेभाषापण्डितदेवीसहायकृत बाहुविपत्ति वर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ७ ॥

आठवां अध्याय ॥

राजा सौदासका वर्णन ।

श्रीसूतजी बोले हे द्विजो फिर तिसने समयपर इन्द्रके समान बलवाला पुत्रजना हे विप्रो जोसब भूमिमंडलका स्वामीगरनास विषसहित जन्माइससे [सगर]नाम वाला १ हे ऋषियो लोकमें सज्जनोंका संग क्या वियको न निवारे अरु क्यानहीं करसके अर्थात सबकुछ करसक्ता है २ जो ज्ञानेसे बेज्ञानेसे पाप किया गया सोसबमहात्माओं की सेवा करनेसे नष्ट होजाताहै ३ इस भूमितलमें मूर्खभी सत्संगसे पुण्यवान् ज्ञानी कहाताहै जैसे केवल कलाओं वालाभी चंद्रमा शिवजी करके स्वीकार किया गया अर्थात मस्तकपर चढ़ाया गया ४ सत्संगतिजनों को सदा सब संपत्ति देतीहै हे द्विजो संतजन यहां वहां सर्वत्र पूजेजातेहैं ५ हे मुनिजनो संतजनों के गुण वर्णन करनेको पृथ्वीपर कौन समर्थहै जो कि गर्भमें सात महीनेसे विषथा सो सब नष्टभया ६ तबतो मुनि और्वजी ने तिस सगरविष सहित पुत्रको देखकर इसका जातकर्म संस्कारक्रिया अरु [सगर] ऐसा नाम रक्खा ७ फिर तिस सगर बालकको मधु दुग्धआदिसे मुनिजीने पाला फिर तप प्रभाववाले मुनिजनोंके साथ तेजनिधान मुनिजी ने सगरके चूडाकर्म अर्थात क्षौर कराना इत्यादि संस्कार किये फिर तिसे सबवेत्ता और्वजीने राजोंके योग्य अस्त्र विद्या सिखाई ८ । ९ फिरतो कुछ बड़े भये समर्थ सगर को देखकर और्वजी ने तिसे सबशास्त्र पढ़ाये १० हेद्विजो

जो महापातकोंसे वा सब पापोंसे संयुक्तहोवे पर संतजनों
करके देखा वह परमपदको पहुंचताहो है ११ सो तिस
का शरीर वा तिसकी भस्म अथवा तिसके ठैरनेकी भूमि
को भी जो पुरायात्मा जन देखेंतो वह परमपद पाता है
१२ फिरतो वह मुनिजी करके सम्यक् शिक्षादिया सगर
बलवान धर्मवान् कियेको जाननेवाला पवित्रभया १३
सोही आपभी तिन मुनिजीके लिये समिध कुशा फल
फूल यथायोग्य लातारहा १४ फिर कभी कि वह सुरों
आश्चर्यनिधान निज माता को प्रणाम करके यह कहता
भया १५ हेमातः मेरा पिता कहांगया अब कहां है अरु
तिसका नाम क्याहै सो सब वृत्तांतत मुझ से यथावत्
कहने योग्यहै १६ जो लोकमें पितासेहीनहैं वे जीवते भी
मरेके समानहैं अरु जिसका पिता दरिद्री भीहै पर वह
धनदाता कुवेरजीके समान धनी कहाताहै १७ जिसके
माता पिता नहींहों तिसको कुछभी सुख नहीं होता जैसे
अधर्मी सूर्ख यहां वहां असमर्थ अर्थात् दुःखपाता है १८
जो अविवेकी अज्ञानयुत जन मा बापोंसे हीनहै तिसका
वेपुत्र वालेके समान वृथा जन्महै अथवा महरासे दवे भये
के समानहै १९ जैसे चंद्रमा करके हीन रात्रि अरु क-
मल हीन सरोवरहो अरु जैसे पतिहीन नारी होवे तैसा
ही पितारहित जनहै२० जैसे विष्णु भक्तिरहित धर्म म-
नुष्योंको किया भी निष्फल होजाताहै तैसेही बिलवापों
वालों का जीवना वृथाहै २१ जैसे विन पढनेवाला ब्रा-
ह्मण अरु अभ्यागत शून्य जैसे गृहस्थीहै अरु दानसे शून्य
जैसे द्रव्य तैसाही बिन बापवाले का जीवन जानना २२

जैसे सत्यसे हीन वचन अरु सज्जनों करके हीन जैसे सभा अरु जैसे दयासे रहित तप तैसेही बाप रहित का जीवन है २३ जैसे गुणहीन नारी अरु जलहीन जैसे नदीहो अरु जैसे दुःख देनेवाली अर्थात् निष्फल विद्या तैसेही पिता से हीन जनहै २४ जैसे जगत् में माता २ कहके याचना करता अर्थात् भीख मांगता जन अत्यन्त तुच्छ कहाता तिससे दशसहस्र गुना तुच्छ पितासे हीनजन जानना इस में संदेह नहीं है २५ सूतजी बोले हेद्विजो ऐसे वचननिज पुत्र से कहे सुनके रानी ऊंचा श्वास भरके दुःखितभई अरु पहिले से जो २ जैसा २ वृत्तांत बीताया सो २ सब तैसा २ ही तिसे कह सुनाती भई २६ तिसे सुनतेही सगरने क्रोध किया सो लाल २ नेत्रकिये [मैं तिन शत्रु ओंको मारोंगो] ऐसी प्रतिज्ञा करता भया २७ फिर अग्नि निजमाता अरु तिन मुनिजी की प्रदक्षिणा करा प्रणाम करता भया फिर तिन मुनिजीनेहीं परमआदर से तिसेभेजा २८ फिर सत्यवान् पवित्र सगर और्वजी के आश्रमसे बाहरआया अरुशीघ्रही निजकुलकेगुरुवशि- ष्ठजीके आश्रमपे पहुंचा २९ अरु तहांजाय तिनमुनि जी को प्रणाम करके ज्ञान दृष्टिसे जानतेभी तिनको सब वृत्तांत सुनाताभया ३० फिरतो मुनिजीने तिसको [ऐंद्र अस्त्र] अरु वरुण [अस्त्र] अरु [अग्नि अस्त्र] दिया अरु तिनही मुनि वशिष्ठजी करके आशीर्वादसे भेजागया सगर खड्गवज्र के समान धनुषको खैंचकर निज गुरुजी को प्रणाम करके तहांसेचला ३१ फिरतो अकेलेही निज धनुष से तिस सगर ने पुत्र पौत्र सहित निज शत्रुओं

कोस्वर्गवासी किये अर्थात् सार मारकरवैकुंठ पठाये ३२ तबतो तिसके धनुष बाणकी आगसे जलेबेमानु कितने ही नष्टभये अरुकई डरकर भगगये ३३ कई बालखुले जिनके ऐसे रूप छिपायें बंबईपररहे अर्थात् बिलमें घुस रहतेभये अरुकईबनमें तृणखातेरहे अरुकई नंगेभयेजल में घुसगये ३४ ऐसेही डरेभगे कईराजा गुरुवशिष्ठ जी की शरणगये निजप्राण बचाने के लालची ३५ फिर जीता भया राजा बाहुका पुत्र सगर निज गुरुके निकट गये शत्रुओं को निजदूतों से वृत्तांत जनावता भया अरु आपभी गुरु वशिष्ठजी के निकट आता भया ३६ मुनि वशिष्ठजी बाहुके पुत्र तिस सगर को आया सुनके तिसको शिष्य करनेके लिये अरु शरण आये जनों की रक्षा करनेके लिये विचार करतेभये ३७ फिर सगर तहां फारसवाले मुंडे यवन लंबेबालों वाले अरु बहुतसे दाढ़ी वाले जनोंको देखके तपनिधान निज गुरु वशिष्ठ जी से हँसता भया ये कहताभया ३८ सगर बोला कि हे गुरु जी २ तुम इन खोटेजनोंकी क्यों वृथा रक्षाकरते हो मैं इनको सर्वथा मारोंगा ये मेराराज्य खाने को तय्यार हैं ३९ जो लुटेरे शत्रुओंको देखकर भी धर्मका त्याग करै अर्थात् वीरता नहीं धारे तो वोही सबके नाशका कारण है इसमें संशय नहींहै ४० सततरे दुर्जन प्रथम सब ज-गतकोही बाधा करतेहैं अरु वेही जब बल हीन होते हैं तब भलेमानुष होजातेहैं ४१ मैंने बड़ा पापकर्म किया ऐसी २ हापराता वे जबतक दूसरा प्रबलहै तबतक किये जातेहैं ४२ शत्रुओंके बालपन में वेश्याओं को मित्रता

में क्योंकि खलेपनमें यश चाहनेवाला जन कभी भी वि-
श्वास नहींकरे ४३ जिन दांतोंको दिखाते खोटेजन पहिले
खिल खिला कर हँसते हैं फिर तिन सामर्थ्य समय भये
तिन्हीं दांतोंको प्रार्थनासे दिखातेहैं ४४ जिस निंदनीय
जीभसे पहिले खोटे२ वचन बोलते थे फिर वेही खोटे
जन तिसी जिह्वासे अत्यंत करुणा युक्त वचन कहते हैं
४५ हेगुरुजी जो यश चाहनेवाला सर्वशास्त्र ज्ञाता है सो
खोटेजनोंके साधुपन दासपनमें कभीभी विश्वास नहींकरे
४६ हे गुरुजी तुम प्रणाम करतेभीखोटेजनपर कृपामतकरो
क्योंकि कूरमें अवलम्बकर क्रूरता प्रकाशभीकि-
याहै ४७ प्रणाम करतेभी दुर्जनपर दयाकरनेवाले निरपर
धराजा ठगीपर जोजन विश्वास करैसो ठगाहीहै इसमें
संशय नहीं ४८ इससे इनवाजलपकारी कवेरके जैसेकर्म
करनेवाले शत्रुओंकी रक्षा मतकरो क्योंकि मैं आपके
प्रसादसे इनको हतकर इसभूमि को भोगोंगा ४९ वसि
ष्ठजी ऐसा तिसका वचन सुन मन में प्रसन्न भये कोमल
हाथोंसे उसके शरीरका स्पर्श करते थे कहने लगे५०
वसिष्ठजी बोले हे बड़भागी अच्छा २ येसत्य प्रयोजन है
इसमें संशय नहींपर तब भी मेरावचन सुनकै परमानुपमा
व ५१ तेराप्रतिज्ञासे विरोधी अर्थात् उनको रक्षा करने
वाले मैंने इनको दिखायेहैं हनकर मरे भयों को मारने से
तुम्हारी कौनसी कीर्त्ति बढ़ेगी ५२ हे पृथ्वीपते सब
प्राणी कर्म फांसिमें बंधेभयेहैं मैंने उन पापोंसे मरे भयों
को कैसे मारोगे ५३ हम येदेहतो पापोंसे उत्पन्न भया
पहिलेही कमकर्म ... जानो इन आत्मा पुरुष ...

से नाशमान नहींहोताहै येसब शास्त्रोंकानिश्चयहै ५४ ये प्राणी निज निज कर्म फल भोगनेके निमित्त मात्र हैं अरु कर्म दैवमूलहै अर्थात् दैववश हैं अरुदैवके येजगत् आधीनहै५५ तिससे दैवही साधुओंकारक्षक अरुदुष्टोंका शिक्षकहै फिरपराधीन भये प्राणी क्यासिद्ध करेंगे सो कहु५६ येशरीरपापोंसे उत्पन्नभया अरु पापोंहीसें बंधता है ऐसेपाप मूल इस शरीरको जानकर कैसे हतनेको तयारहो ५७ सुक्ष्मी आत्मा देहसें स्थित भया [देही] अर्थात् देहवाला कहाताहैतिससे हेराजन् येदेहही पाप मूलहै इसदेह होसे पाप पुराय होतेहैं इससे ५८ हेराजन इसपाप मूलशरीरके हतनेसे तुम्हारी कौन कीर्त्ति बढैगी ऐसा समझकर इनको मतमारो ५९ सूतजी बोले कि सगर वशिष्ठजीका ऐसावचन सुनके शांतकोपभया अरु मुनिजी निजहाथ से सगरका स्पर्श करते हर्षित भये ६० फिरतोअथर्वणावेदनिधान वशिष्ठजी तिससगर राजाकाश्रेष्ठ शनियम वाले मुनिजनों केसाथ अभिषेककरतेभये अर्थात् सगरको राज्यासन पर बैठाया ६१ फिर तिसकी दोरानीआईं [केशिनी] अरु [सुमती] येजोविदर्भ देशके राजा [कश्यप की पुत्रीथी ६२ अरु तपोनिधान मुनि और्वजी तिस सगरको राज्यासनपै बैठा सुनके वन से आय राजा सगरको आशीशदे निज आश्रमको गये ६३ कभी कि सगरकी दोनों रानियों से प्रार्थना किये और्वमुनि जीने संतानके लिये तिनको वरदिया भृगुजी वोलंबको जानतेथे ६४ दोकि तिनसे प्रार्थना किये और्व जी परम प्रसन्नताविसे विचारकर सुकेशिनी सुमती रानीको

हर्षावित्ते ये बोले ६५ कि एकतो वंशबधाने वालापुत्रमा गो अरु दूसरी साठ सहस्र पुत्रमांगो येदोनों वरहैं इसमेंजौ न सा जिसको अच्छालगै सो मांगले ६६ तौ केशिनीने तो एक वंशकारी पुत्रमाँगा वो चतुरथी अरु दूसरी मूर्ख थीतिसने साठसहस्र पुत्रमांगे ६७ तौकेशिनी केतो एक [असमंजस] नामपुत्र भया अरु सुमतीके साठ सहस्र पुत्रभये ६८ अरु असमंजस तो वालपने सेही अनुचित कर्म करनेलगा जो उन्मत्त भया अरु कुबुद्धिमान ६९ तबतो सुबाहुके पुत्र सगरने इसकेचरित्रको देखातो बाल पन कर्ममाना कि ये अभी बालकहै ७० हे ऋषियोबड़े कष्टकी बातहै जो लोकमें खोटे जनोंका संपर्क होताहै क्यों लुहार अग्निको लोहके संयोगसेही पीटता है अ- र्थात जबलोह अग्निरूप लालहोता है तभी लुहार चोट लगाताहै केवल अग्निको नहीं पीटता ७१ फिर अस- मंजस के [अंशुमान]नामपुत्र भया जो सत्यज्ञाता गुण वान धर्मात्मा अरुपितामह सगरके हितमें परायण७२ अरु वेसगरके सारे पुत्रखोटे लोकोंके उपद्रवकरनेवाले भयेसोवेअनुष्ठानकरने वालोंकेकर्मोंमेंविघ्नडालनेलगे७३ जो ब्राह्मणों ने विधिसे अग्निमें चरु होमातिसे आपसब देवतोंको नसमझके भक्षण करते भये ७४ अरु तिन्होंने रंभादिक अप्सराओं को चुटटा पकड़ वल सेती स्वर्ग से लायके तिनका मान खंडनकिया अर्थात विनसे भोग किया ७५ अरु वे कल्प वृक्षके फूलोंको लालाकरतिन सेनिजनिज शरीरको सजाते मद्यपानमेंपरायणभये७६ अरु वे साधुजनोंके सबधर्म नष्टकरते विचरतेभये अरु वे

अतिपापीबलवालेनिजपिता सगरसे भीलड्नेलगे७७ऐसे कुकर्मको देखके इंद्र आदि देवता इनके नाशके लिये परम चिंतासे विचार करतेभये७९ फिरवेपातालमें रहने वाले विष्णुजीके समान कपिलदेव जीके पास रूपछि-पाये अर्थात् सूक्ष्म रूपहोकर गये ८० अरु परम आनंद शरीरीनिर्मल ब्रह्मका चिंतन करतेहैं ऐसे तिनको देवता भूमिमें दंडवत्प्रणाम करके स्तुति करते भये ८१ देवता बोले हे तपस्वीजी आपको नमस्कार है अरु त्यागा स्नेह जिन्हों ने ऐसे वैराग्य चित्त आपको नम० अरु नररूप धारी मुरारी आप को नम० ८२ परमेश्वर के भक्त अरु लोकके अनुग्रहकार आपको नम० हे संसार रूप वनके अग्निरूप हे ज्ञान सम्पन्न आपको नम० ८३ महान् अरु निवृत्त काम आपको नम० अरु सबके ईश्वर क-पिलदेवजी आपको बारंबार नमस्कारहै ८४ हे कपिल जीसगरके पुत्रोंसे दुःखीभये शरणआये हमारी आपरक्षा करो ऐसे तिनसे स्तुति किये सर्व शास्त्र कुशल कपिल मुनिजी यथा विधिसे पूजाकिये तिन देवतों को हर्षित करते ये कहतेभये कपिल मुनि जी बोले ८५। ८६। कि जिनकी आयु संपत्ति यश बल नाशहोने लगते हैं तो वे जनही पहिलेलोकको बाधा करतेहैं हे देवो इसमें आ-श्चर्य नहीं ८७ हे देवोजो विन अपराध वाले जनों को बाधा करनेको तयार भया तिसेइस लोकमें पाप भोगने वाला समझो ८८ जोमन वचन कर्म से औरों को बाधा करता तिसेदैव दहनकरताहै इससे कुविचार नकरना ८९ जो आयु तेज संतान इनका नाशचाहैसो सब जनों

को बाधा करै ऐसे संतजन कहते हैं ९० ऐसे इनसगर के पुत्रोंका थोड़े दिनों सेंहीं नाशहोगा तिससे हे देवो तुम दुःखको त्यागके स्वर्गसेंजाओ ९१ महात्मा कपिलजीके ऐसे कहतेही वे देवता तिने प्रणाम करके चलेगये ९२ अरु उधर राजा सगरनें वशिष्ठआदि महर्षियों सहित उत्तम अश्वमेध यज्ञका आरंभ किया ९३ तौतिसयज्ञ के अश्वको चुराकर इंद्रने पातालमें रक्खा जहां कपिलमुनि जी विराजमान थे ९४ तबतो सगरके पुत्रसुत चारों इंद्र करके हरेअश्वको नजानकरके आश्चर्यमानते भूमिऊपर के सातों लोकोंमें भ्रमते भये ९५ तहां अश्व न देखातो पातालमें जानेकोतय्यारभये तौ वेसारे भूमि तलको एक एक योजन लेलेकर खोदनेलगे ९६ अरु वह खोदी भई मिट्टीको समुद्रके तीरपै लेजालेजा डेरेसे भये जोकि एकएक योजनके खोदनेसे निकलतीथी ९७ फिर तिस खुदावके मार्गसे सगर के पुत्र पाताल में गये तहां तहां अश्वको ढूंढते २ रसातललोकमें पहुंचे ९८ तो तहांकोटि सूर्यसमान कांतिमान ध्यानमें लगे महात्मा कपिलजी को अरु तिनके निकटही अश्वको देखा १०० तबतो प्रसन्नभये पापी अविवेकी वेसारे सगरके पुत्रजाकर तिन मुनिजीको बांधनेंके लिये तय्यारभये १ जोकि [मारो २ बांधो २] ऐसे पुकारते अरु [गौघ्नही इसे पकड़ो] ऐसे वेआपसमें कहा करतेभये २ देखो अश्वको हर के साधुके समान बैठाहै चोर तौर पाखंडतो रचाना करतेहैं ३ जोपराये द्रव्य अरु जीवनकी चिंताकरते अर्थात पराये को लूटने मारने के ध्यानमें मग्न भये रहतेहैं ४

ऐसे पुकारते वे मुनिकपिलजीको हँसतेभये जो कपिल जी सब इंद्रियों को नियमसें रखके अपने को लगाकर परमात्माका ध्यान करतेहे अरु बैठेहुयेहैं ऐसे ५ तबतोमुनिजी ने तिनके कर्मकोजाना। अरुनिकट जिनका मरना ऐसे नष्ट बुद्धि वे तिन मुनिजीको पैरोंसे ताड़ने लगे अरु का- ड्योंने हाथ पकड़े ६ तो मुनिजीकी समाधि हटी अरु हँसते भये वे देखपड़े। तो विस्मित भये मुनिजी लोकके उपद्रव करते तिनसे गंभीरवचन से येबोले ७ जो ऐश्वर्यके मदसे मत्त अरु भूखे तथा कामासक्त हैं अरुजो अहंकार से हते भयेहैं तिनको विवेक नहीं होताहै ८ निधिके आधारसेही जहां द्रव्य रक्खारहता था तहां की भूमि जलतीसी अर्थात अत्यंत प्रकाशमान रहती है। तिसतैसे द्रव्य को भोग के मनुष्य प्रचण्ड होंये आश्चर्य नहीं ९ श्रेष्ठजनोंको दुर्जनबाधाकरते येकुछ आश्चर्यनहीं क्योंकि ऊंचे२ वृक्षोंको नदीवेगतटसे उखाड़डालतेहैं १० जहां लक्ष्मी यौवन अरु बलपना ये रहतेहैं।तहांजयसाचंचलपन अरु मूढ़पन होताहीहै ११ सुवर्णादी महिमा को कौन जान सके जिसके नामही धत्तूराके(कनक) विषहोरहा अर्थात कनक ये नाम सुवर्ण अरु धतूरेकाहै इससे लक्ष्मी नाश करतीहै १२ जो बलवाले के पास लक्ष्मी हो तो वो लोकोंका नाशही करै। जैसे अग्निका मित्र पवन अरु सर्पका प्यारा दूध अर्थात अग्नि को पवन सर्पको दूध मिलनेसे वे प्रबल होजातेहैं १३ जोही धन रूपमदसे अंधा सम तो देखता भी नहीं पापमार्ग है जो वो कुछ हित विचारै तो सबकुछी हुआ १४ [illegible] कोपभये

कपिलजीने निजनेत्र अग्निछोड़ा । तौ तिसने सहसगरके पुत्रोंको क्षणभरमें भस्मकिये १५ जिस नेत्रजन्य अग्निको देखकर पाताल लोकमें रहनेवाले सर्वातिसे अकालप्रलय मानकर शोकयुक्तभये पुकारनेलगे १६ तिनकी नेत्राग्नि से तपेभये सर्प अरुराक्षस सारे समुद्रमें धसगये सज्जनोंका कोप किसीसे सहानहींजाता १७ उधर तिस सगरकेयज्ञ में जाय नारदजीने यथावत लवनीता वृत्तांत सुनाया कि तिन सबों की भस्म भई १८ ये सुनके सर्ववेत्ता सगरजी हर्षितहोकरबोले कि वे दुष्ट दैवसेही शिक्षादियेगये १९ मा बाप वा भाई बेटा जो कोई अधर्म्म करै । वोही शत्रु कहाताहै २० जोकोई अधर्मसेंपरायणा अरु सब लोगों से विरोध करताहै । तिसे अत्यन्त शत्रु जानना शास्त्रों का यही निश्चयहै २१ हेद्विजो सगरने पुत्रनाश सुनके कुछ भी शोक न किया । क्योंकि खोटोंका मरना सज्जनों के उत्साहका करने वालाहै २२ फिर राजा सगरने यज्ञोंमें तिन पुत्रवालोंका अधिकार नहीं इस कारणसे असमंजस के पुत्र निजपौत्र [अंशुमान]को पुत्रके समान रक्खा २३ जो सुबुद्धि श्रेष्ठबोलनेवालों में चतुर थे तिस अंशुमानको सारवेत्ता सगरजीनेअश्वलानेकेकाममेंयुक्तकिया २४ तो फिर वो अंशुमान तिन छिद्रों की राहसे पाताल में जाय तिसने तिन कपिलमुनिजी को पूजके नमस्कार करी २५ सोंकि अंजलिबन्ध बांधके नम्रभया पासबैठा अरु नर्वस्वार्थसे पूजादिकर तिनमुनिजीको देखनेलगा २६ अंशुनाशवाला कि महात्मा जोआपसे दुःशीलता अर्थात खोटापन कियागया तिसे आप क्षमाकरो क्योंकि

साधुजनपराये उपदेशसे पराययरा अरु क्षमाप्रधान होतेहैं साधु खोटे अरु अच्छे इनदोनोंपर दयाकरतेहैं। चंद्रमानि जचांदनीको चांडालकेघरसेंक्यानहींफैलाताहै २७। २८ सज्जन दुःखित भये भी सबको हितकारीही होतेहैं जैसे देवतोंकरके अमृत जिसका पीयागया ऐसा चंद्रमा आप क्षीणहोता भी तिनको प्रसन्नकरताहै २९ अरु जैसे चंदन तोड़ा काटा भी निज सुगंध से प्रसन्नही करताहै। तैसेही सज्जन सबको सुखदेते हैं ३० मुनिजन शांतिसे तपसे आचारोंसे श्रेष्ठगुणोंको जानलेतेहैं हेमुनिजी आपलोकों कोशिक्षा देनेके लियेही हुयेहो ३१ हेब्रह्ममुनिजीहेब्रह्म मूर्ति आपको नमस्कारहै। अरु ब्रह्मण्यशील आपको नमस्कारहै अरु ब्रह्मचिंतन करनेसेंपराययरा आपको नमस्कारहै३ २ऐसे तिसकरके स्तुतिकियेप्रसन्नभयेकपिल जी बोले कि हमप्रसन्नहैं तू वरमांगले ३३ ऐसे कहतेही अंशुमान् तिनको प्रणाम करके बोला कि हेब्रह्मन् हमारे पितरोंको ब्रह्म लोकमें पहुंचाओ ३४ तो प्रसन्नभये कपिलजीतिसे आदरसे बोले कि तुम्हारापौत्र भगीरथ गंगा जी लाकर तिनकी मोक्षकरेगा इसमें संशयनहीं ३५ सो तुम्हारे पौत्रसे लाईगई गंगाजी। इनके पापनष्ट करके इन्हें वैकुंठ में लेजावेंगी३६ अरु हे अंशुमन् इस अश्वको तू ग्रहणकर यज्ञमेंलेजा। अरु तूवर्नते पराक्रमार हुतो तेरा परमकल्याण होगा ३७ ऐसे कहागया अंशुमान् शीघ्र तिनको प्रणामकर घोड़ा लेके सगरजीके पास आया अरु सबवृत्तांत सुनाया३८फिर तिसअंशुमानके[दिलीप] ऐसे विख्यात श्रेष्ठ पुत्रभया। अरु दिलीप के [भगीरथ]

भया जो गंगाजीको लाया ३९ फिर भगीरथ के कुल में [सुदास] महाबली राजा भया तिसका पुत्र सबलोकों में विख्यात [मित्रसह] नामसे भया ४० वो सुदासका पुत्र मित्रसह वशिष्ठजीके शापसे राक्षसपनेको प्राप्तभया फिर गंगाजीके अभिषेक से तिसने मोक्षपाई ४१ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषासौदासोपाख्यान वर्णनन्नामअष्टमोऽध्यायः ॥

नवांऽध्याय ॥

राजा सौदासका राक्षसहोना अरु महापाप करना ॥

शौनकआदिकऋषियोंने पूछा हेऋषिश्रेष्ठ सूतजी राजा सौदासको वशिष्ठजीने क्यों शापदिया अरु फिर वोगंगा जलकेबिंदुसे कैसे मोक्षकियागया १ हेसूतजी ये सब वि स्तारसेकहिये। जोगंगाजीमनुष्यों करतेहुयेलोकोंकेपापनष्ट करतीहैं २ श्रीसूतजीबोले हे ऋषियो सबधर्मजाननेवाला अरुपरमधर्मात्मा पवित्र राजासौदासने इस भूमिको वर्णन भोगी ३ जैसे सगरने अपने पुत्रों सहित इस भूमिको पाली थी तैसेही तिस सौदासने भी विधिसे तिसको रक्षाकरी ४ सो पुत्रपौत्र सहित अरु सब ऐश्वर्ययुक्त सौदासने इसभूमि को तीसहजारवर्ष भोगी ५ वो धर्मात्मा राजा सौदास एक दिन शिकार खेलने को वनमें गया अरु पर्वतों बनोंको देखता अरु अच्छे ७ मंत्री साथ लिये है तब राजा वनमें विचरता मृगोंको मारता अत्यन्त थकिकरअत्यंत प्यासाभया नर्मदाके तीरपै आया ८ तहां पै सौगंध निर्मलजल आचमनकर अरु मंत्रियों सहित भोजनकरिके तहांही रात्रि बिताता

भया ८ फिर सवेरे उठ नित्यकर्म करके । मंत्रियों सहित
मृगोंको ढूंढनेकेलिये वनमें विचरा ९ फिर वो अकेलाही
राजा वनसे और२ वनमें विचरता कानतक बाण खेंचके
एक हाथी मृगके पीछे२ चला १० फिर इसकी सेना
दूररहगई अरु ये वेगसे रोहु अरु मृगके पिछाड़ी चला फिर
इसने दो बघेरे गुफामें बैठे रतिकरते देखे ११ तौ येराजा
रोहुके मार्गको तजके बघेरोंके निकट पहुंचा अरु बाण
से एकको मारगिराया १२ तो गिरताभया वो व्याघ्र तीस
योजन फैला जो प्रलय समयके मेघके जैसा शब्दकरता
भयंकरदेहराक्षस १३ तिसकोपड़ादेखके दूसराव्याघ्ररूप
राक्षस [मैंबदलालेऊंगा] ऐसे कहकर अंतर्द्धानभया १४
फिरभयसे उद्विग्नमनभये राजाकी सेनानेभी आयदेखा ।
तो तिसने सब मंत्रियोंसे कहा १५ फिर राजा सबसेना
सहित निजपुरीमें आकर । मनमें शंकितभया इसपृथ्वी
को पालतारहा १६ फिर बहुत कालबीते वशिष्ठ आदि
मुनियों सहित राजा सौदासने । अश्वमेधयज्ञका आरंभ
किया १७ तहां ब्रह्मादि देवताओं को यथाविधि हव्य
से तृप्तकरके यज्ञसमाप्त करके वशिष्ठजी स्नानकर
नेगये १८ इतनेमें वोहीराक्षस जिसे इस राजा ने बाधित
कियाथा अर्थात् रतिके समय इसकी स्त्रीको मारीथी ।
सोही वो कोपभया बदला लेनेको आया १९ । २० अरु
[illegible] वशिष्ठजी न्हाने को गये तभी आप
वशिष्ठजी बनकर । राजासे आके ये बोला कि हे राजन्
मेरे भोजनकेलिये मांस तयाररखना मैंस्नान करकेआता
हूं २१ फिर आपही र[illegible]बने निसही राक्षसने मनुष्य

का सांसलाकर राजाको दिया राजानेतिसे लेकरसुवर्ण केपात्रमेंरक्खा अरुगुरुजीके आनेकीराह देखतारहा २२ इतनेमेंही वशिष्ठजी भी आये सौदासने वो मनुष्य मांस जो सुवर्णके पात्रमें धरा था सो तिन गुरुजीको आगे में दिया २३ वेतिसे देखके विचारने लगे कि ये क्याहै। फिर परमध्यानसे तिसे अभक्ष्य नरमांस पहिचान करि बोले २४ देखोइस राजाका खोटापन जो हमकोअभोज्य भोजन दियाहै। उसे आश्चर्य करके वशिष्ठ जी अति कोपभये २५ अरु बोले कि हे राजन् जोतैंने हमलिरखों को अभोज्यदिया। तिससे तेराभी भोजन यहीहोगा २६ ये नर मांसजो राक्षसोंका भोजन सोतैंने हमको दियाहै। इससे तूराक्षसहीहोजा अरुनरमांसका आहारकरेगा २७ वशिष्ठजीके ऐसे शापदेतेही अतिव्याकुलभया सौदास। कांपता इन्हें जनावता भया कि हे स्वामिन् आपहीने आज्ञादईथी २८ तिससे ऐसेकहे वशिष्ठजीनेफिर विचार किया सो कि ज्ञान दृष्टिसे इसराजाको तिसराक्षसकरके ठगादेखा २९ फिर तो राजाभी जललेकर वशिष्ठजीको शापने के लिये तयारभया। तो तिस शापदेते कोप भये राजाको तिसकी रानी ३० मदयंतीबोली हेस्वामिन्यथार्थ आपक्रोधको दूरकरिये। तुमकोभोग्य कर्मकाफल मिला है ३१ जो मूढ़मति जन गुरुजीको हुंकार करे तो निर्जनवनमें ब्रह्मराक्षस होवे ३२ अरु जो। जितइन्द्रिय तपोनिष्ठ गुरुजी को टहल करतेहैं वे ब्रह्मलोक को जाते हैं ये शास्त्रों में निश्चय है ३३ ऐसा कहतेही राजाने शापनदिया अरु रानीकी सराहनाकरी। अरु अपने मनमें विचार किया

कि इस जलको कहांछोडूं ३४ क्योंकि ये जल जिस पै पड़ैतिसहीको भस्मकरे। ऐसे मानकर वो जल निजपैरों परहीछोड़ा ३५ तिसजलका स्पर्शहोतेही इसकेपैर(कल्माष)चिन्हित अर्थात्कुरंग होगये। तभीसे येसौदासलोक में ३६ [कल्माषपाद] ऐसे विख्यातभया फिर निजरानीसे समझाया भयभीत भया गुरुजी के चरणों में गिरा ३७ फिर हाथ बांध के नम्रभया बोला किहे भगवन् जो मैंने अपराध कियातिसे आपक्षमाकीजिये ३८ फिरतो मुनि जीसामखींचके दुखीभये अरु अविवेकमें परायण अपने को विसराहने लगे ३९ किये अविवेकन विचारना येही परम आपत्तियों का मूलहै। जो विवेक रहित है सो जन जगतमें जीताभया भी मराहीहै इसमेंसंशय नहींहैगा ४० मैंने अज्ञान पनेसे राजाका ये महा अपराधकिया। मैंने विवेकसे हीन होके ये महापाप किया है ४१ विवेक रहित कोई भी होवे पर सुख नहीं पाता है। ऐसे कह फिर वशिष्ठजी राजासे बोले किये शापसदा नहीं किन्तु बारहवर्षहोगा फिर तू गंगा जलकीबूंदसे छिड़का राक्षस शरीरछोड़कर पूर्वरूपहो करके इस भूमिको भोगेगा ४२ ४३ अरु तिसी बूंदके छींटे से भये ज्ञान करके निष्पाप भया तू विष्णुजीकीसेवा में परायण होके परमशांतिको प्राप्तहोगा ४४ ऐसे कह अथर्वनि वान वशिष्ठजी निज आश्रमको पधारे। अरुराक्षस देहमेंस्थितदुःखी भया ४५ औ क्षुधातृषासे विशेष सताया नित्यही क्रोधमें परायण अंधेरी रात्रिके समान कांतिमान भयंकर वो निर्जन वन में भ्रमता भया ४६ तौ तहां बहुतसे मृग अरु मनुष्य सर्पों

को । पक्षी अरु वानरादिकों को भक्षण करताभया ४७ तो हे द्विजो तहांकी भूमि बहुतसे हाड़ोंसे अरु पीयादिक जिनका ऐसे शरीर अर्थात् पिंजरोंसे । अरु बालखोपड़ी इत्यादिकोंसे महाभयंकर होगई ४८ तौभी वो ब्राह्मण भूमिको तीन ऋतु अर्थात् छैमहीनेमें वो सौदास राक्षस अति दूषित करके फिर और वनमें गया ४९ तो तहां भी ये मनुष्य मांस भक्षी राक्षस ऐसेही कुकर्मकरताभया । फिर वो मुनि सिद्धों से सेवित नर्मदाके तीरपै गया ५० तहां तिस भयंकरने एकब्राह्मणको निज स्त्रीसे संगकरते देखा । तो क्षुधारूप अग्निसे जलताभया वो तिस मुनिपै झपटा ५१ अरुवेगसे तिसे पकड़ा जैसेवघेरा मृगकेबच्चे को पकड़े । तब तो तिसकी स्त्री निज पतिको राक्षस ने पकड़ा देखके ५२ शिरपर हाथधरकर भयभीतभई तिस राक्षस से ये कहने लगी । ब्राह्मणीबोली कि हे क्षत्रिय बंधु ५३ मुझ भयभीतभईकी रक्षाकर सोकि मेरे पतिके प्राणदानसे तू मेरामनोरथ पूराकर ५४ तेरा पूर्वनाम तो मित्रसहहै अरु तू सूर्यवंशमें उत्पन्नहै । कुछ जाति राक्षस नहींहै इससे मुझ अनाथ बाला की इसवनमें रक्षा कौन करै ५५ जो स्त्री निज भर्त्तासे रहितहै वोजीवतीभी मरी हीहै । अरु मैं तो बाल विधवा होजाऊंगी इसमें सं-देह ५६ नमैं मा बापोंको जानती न किसी भाईबंधुको स्त्रीकातो पतिही परमबंधुहै अरु वोही परमजीवनहै ५७ अरु तूतो राजा सब स्त्रियोंके धर्मोंको अरु तिनके वर्ते-वोंको जानताहै अरु मेरे बालकभी संतानहै इससे नहीं तर तू मेरी रक्षाकर ५८ मैं इस निर्जन वनमें पति के

बिन कैसे जीओं । इससे तू मुझे निजपुत्री जानके पतिदान से मेरी रक्षाकर ५९ प्राणदानसे परे और दान न हुआ न होगा । इससे हे महामते तू मेरे प्राणपति को बचाव ६० ऐसे कहकरके सौदास राक्षसके पैरोंमें गिरी । अरु कही तू मेरी पतिके दानसे रक्षाकर मैंतेरी पुत्रीहूं इसमें संशय नहीं ६१ ऐसेतिससे प्रार्थनाकियाभी वोराक्षस ब्राह्मण को खाहीगया जैसेकाले मृगके बच्चे को बलवालाव्याघ्र खावे ६२ तब तो तिसकी पतिव्रता पत्नी बहुत प्रकार विलाप करके पहिले भी शापसेहत्त राक्षस भयेको आप भी शाप देती भई ६३ जो तैंने रक्षा करते मेरे पति को हठसे मारा । तिससे तू भी जब रतिकरेगा तो तभी तेरा नाश होजावेगा ६४ ऐसे शाप देके क्रोधभई ब्राह्मणी ने फिर एक और शापदिया कि तेरा राक्षस पन अचल अर्थात् बहुत काल रहैगा ६५ तब तो वोराक्षस भी तिस से दिये दो शाप सुनकर क्रोधसंयुक्त मुखसे अंगारे निकालता ऐसा बोला ६६ कि हे दुष्टे तैंने मुझको दो शाप क्यों दिये । एक अपराधतोएकही शापसे छुटाया गया ६७ हे दुष्टे जोतैंने मुझको अपराधसे अधिकअर्थात् दूसरा शाप दिया तोतूभी पुत्र सहित राक्षसी होजा ६८ ऐसे शापीगई वो ब्राह्मणी भी पुत्र सहित राक्षस पनको प्राप्तभई अरु भूखी मरती पुत्रसहित पुकार २ का रोने लगी ६९ तबतो वेराक्षस पिशाचिनीदोनों निर्जन बनमेंपुकारते नर्मदाके तीर वे राक्षसोंसे सेवित वड़केनिकट गये ७० तिसवृक्षमें कोईकअतिदुःखी लोकविरोधकारी ब्रह्म राक्षस रहताथा वो इनराक्षस पिशाची दोनों को देखके

यदि निरदाहा ये सब तुमसे कहो तुमको बड़ा आश्चर्य
होरहा है ८४ सोमदत्त द्विज बोला कि गुरु बहुतहैं केवल
हो आदरसे पूजने सराहने योग्यहैं हेमित्र जिनको मैं कह
ताहूं तू सब सावधान सुन ८५ जो वेदोंके पढ़नेवाले अरु
वेदों का अर्थ बतातेहैं अरु जो वेद शास्त्रोंके वक्ता अरु
धर्मशास्त्र बांचते हैं ८६ जो नीति शास्त्रका अरु मंत्रों
की व्याख्या करते हैं अरु जो वेद वाक्य अरु मंत्रों का
संदेह हरते ८७ अरु जो विद्या सुनावे अरु भयसे ब-
चावे अन्नदाता अरु जो जनेऊदाता करके शिष्यकिये
द्विजोंसे यथोक्त कर्म करावे ८८ अरु निज श्वशुर मामा
अरु तैसेही बड़ा भाई पिता जिसने गर्भाधान आदि
सब संस्कार किये ८९ हेराजन् ऐसे २ कई गुरुहैं मैंने थोड़े
सेही कहेहैं ये पूजन अरु वंदना करने योग्यहैं इसमें वि-
चार न करना ९० कल्लायप्रसाद बोला कि तुमने बहुत
गुरु कहे इनमें कौनसा अति श्रेष्ठहै या सब समानहीहैं
सो यथावत् कहो ९१ सोमदत्त बोला अच्छा २ हे

कहागया तिसेही मैं कहताहूं ९६ जो पुराण बांचता अरु धर्मशास्त्र वक्ता अति विद्वान् है जो संसार रूप फांसे से छुटाने वाले वचन कहता है ९७ अरु देवपूजा के योग्य कर्मोंको अरु देवपूजाके फलको अरु योगके उपाय को जो कहै सो परमगुरु माना गयाहै ९८ जो सब शास्त्रोंके साररूप पुराणोंका श्रवण कराता है तो वो परम गुरु है ये बुधिजन वचन कहतेहैं ९९ जो नर संसार सागरसे तिरा चाहे तो पुराणों का श्रवण करै तिस से तिरै शास्त्रों में यह निश्चयहै १०० द्विज श्रेष्ठ सब धर्मशास्त्र पुराण श्रवण कराते हैं तिससे बुद्धिमानों करके वे परम गुरु कहे गये १०१ अरु वेदव्यासजी धर्मात्मा जनोंने वेद शास्त्र का विस्तार किया अरुसब धर्मशास्त्रपुराण बनाये १०२ तर्क करना तो विवाद का कारणहै अरु नीतिहै सो यहां के फलको सिद्ध करती है हे महामते सौदास पुराण यहां अरु वहां सुखदायकहोतेहैं १०३ जोजन निरंतर भक्तियुक्त होकर पुराणोंका श्रवण करै तो तिसकी निर्मलबुद्धि होवे अरु धर्ममें मनलगे १०४ जो भक्ति सहित सदापुराण सुनताहै तो तिसको सब सुखदायक विष्णुभक्ति प्राप्त होवे १०५ पुराणोंके श्रवण से मनुष्योंकी बुद्धि धर्ममें लगतीहै अरु धर्मसे पाप नष्टहोते अरु निर्मल ज्ञान होताहै १०६ जो धर्मअर्थ काम मोक्ष इनका फल चाहते तो वे महात्मा भक्तिसे पुराणोंको सुनते हैं १०७ मैंने नर्मदाजीके तीरपर महात्मा शौनकजीसे ये सब धर्म सुनेहैं १०८ तिनहीं करके पुराणोंसे प्रेरणा किये मैंने तहां सब धर्म किये जो २ ति नोंने मुझसे कहेथे १०९ फिर हे राजा कभी कि मैं विश्वे अ

जीकी पूजा करता था आय बैठे भी गुरुजी को मैंने प्र-
णामनहींकिया११० फिरवे संततपस्वीगौतमजी ये [मेरे
कहे कर्मकर रहाहै] ऐसे समझकेहर्षकोप्राप्त भये१११
फिर तिन शिवजीने गुरु अपमान करने के पापसे मुझ
को राक्षस बना दिया जो जानता या न जानता गुरुजी
का अपमान करै तो तिसका कल्याण धन संतान ये
नष्टहोतेहैं११२जो नर आदरसहित गुरुओं की टहल क-
रताहै तिसको श्रेष्ठ संपत्ति होवे ऐसे विद्वान्कहतेहैं११३
हे मित्र मैं तिसी शापसे क्षुधा अग्निसे जलरहाहूं हेरा-
जन मैंकब मुक्ति पाओंगा ये नहीं जानता११४हेविजो
तिसब्रह्मराक्षसके ऐसे कहते २ धर्मशास्त्रका प्रसंग
होनेसे तिनका पाप नष्टभया११५ इतनेमें कोई धर्मात्मा
और ब्राह्मण आगया जो कलिंग देश में जन्मा (गर्ग)
इस नामसे प्रसिद्धथा११६ सो कांधे पर गंगा जल लिये
प्रभु विश्वेश्वर जीकी स्तुति करता अरु तिन्हींके नामों
को गाता हर्षित भया इनके पास आया११७तो ये रा-
क्षस पिशाचिनी तिस मुनिको आया देखके हमारा भो-
जन आया ऐसे कहके भुजा उठाकर तिसपैझपटे११८
पर तिसकरके कहे नामोंको सुनके वे दूरहीरहे वे राक्षस
तिस ब्राह्मणके पास न जासके११९तब वो राक्षस बोला
कि ओहो हे भले बड़ भागी महात्मा तुमको नमस्कार
है जोकि नामस्मरण के महात्मसे हम राक्षस दूरभये हैं
१२०हमने पहिले करोड़ों ब्राह्मण भक्षण कियेहैं परहे
विप्र नामोंका कथन तुम्हारी इस भयसे रक्षा करता है
१२१जिनका नाम मनरहीं राक्षसभी जाथके [illegible]

विष्णुजी की महिमाको कौन कहसके१२२हेमहाभा
तुम सदासारा आदि दोषोंसे रहित हो तो आप हमें गंगा
जलके अभिषेकसे पवित्र कीजिये१२३जो विष्णुजीकी
सेवामें तत्पर सदा अपने को तिरावै तो वोही सब सं
सारको तिरा सक्ताहै१२४इस असार संसार रोगके परम
औषध अर्थात् श्रेष्ठ औषधको छोड़कर पंडित जन किस
युक्ति किस प्रकारसेपावैं १२५ जैसे लोहकी नावसे ति
रता जन जलमें डूबताही है तैसेही अपुराय कारी जन प
राये को कैसे तिरावे१२६सहन्तों का चरित्र सब लोकों
का सुखकारीहै जैसे चंद्रमा सब प्राणियों को प्रसन्न क
रता है१२७हे द्विज श्रेष्ठो पृथ्वीमें जो २ उत्तम २ तीर्थ हैं
वे सारेभी गंगाजीके जलबिंदुके समान नहींहैं १२८तुल
सीदल से मिला अथवा सरसों भर गंगाजल इक्कीस कुलों
को पवित्र करताहै१२९हे महाभाग सब शास्त्रार्थ कुशल
ब्राह्मणा हम पापियोंको गंगा जलमे शीघ्र पवित्र करो
१३०हे ऋषियो वोब्राह्मण तिनराक्षसोंसे कहे गयेगंगा
जीके माहात्म्यको सुनकर अति विस्मित हुआ१३१कि
इन रोगोंकी भी जगत की माता गंगाजी में इतनी भक्ति
है तो प्रभाव जानने पुरायात्मा बड़ोंकी तो क्याकही भक्ति
हो १३२ तबतो तिस ब्राह्मणने मनमें ऐसे समझके कि
जो सबमें दया रखता सो उत्तम पदपाताहै ऐसे१३३तब
तो कृपायुक्त तिस ब्राह्मण ने तुलसी दल मिश्रित उत्तम
गंगाजल तिन राक्षसोंपर छिड़का१३४तिस सबोंके स
मान गंगाजलमें भी छिड़के वे राक्षस निष्पापको होके
देवशरीर धारणे१३५ [illegible]

सोमदत्त हे द्विजो करोड़ सूर्य समान कांतिमान्भये १३६ जो शंख चक्र गदा पद्मधारी विष्णुरूप भये तिसब्राह्मण की सम्यक् सराहना करते वैकुंठ लोकको सिधारे १३७ अरु वो कल्मायपाद निज पूर्व स्वरूप भया तो वो प्रसन्न भया भी भारी चिंता करतारहा तो तिस राजाके चिंता करते २ शुभ्ररूप सरस्वती अर्थात आकाश बाणी भई कि १३८ हेवड़भागी राजा दुःख न पाव तेरा भी राज्य भोगनेके पीछे परम कल्याणहोगा १३९ जो सत्कर्मों से पाप धोये भगवद्भक्तिमें परायण हैं वे विष्णु परंपद को प्राप्तहोतेहैं इसमें संदेह नहींहै १४० जो सब प्राणियोंमें दयायुक्त अरु वेदमार्गसे चलतेहैं अरु गुरुपूजामें परायण ऐसे जनपरमस्थान पातेहैं १४१ ऐसेभई बाणीको सुनके सौदासराजा मनमें प्रसन्न भया निज गुरुजीके बचनको याद करता भया १४२ अरु गंगाजीकी विष्णुजीको अरु तिसनामस्मरणकी [illegible] अत्यंतहर्षित भयाऽरुतिस ब्राह्मणको पाय निजपूर्वदृत्तांतसुनाया १४३ अरुफिर तिसे [illegible] करके [विष्णुजीके नामउच्चारता] शीघ्र काशीजीमें आया १४४ तो तहां छैमहीने गंगा सेवन अरु विश्वेश्वरजीके दर्शन करके फिर तहां से चल निजराज्य कोसंभाला १४५ तो वशिष्ठजीसे राज्याभिषेक पाय सुन्दर २ भोगोंको भोगकर सारी भूमि की रक्षा कर करता फिर शांतिको प्राप्तभया १४६ यों सूतजीबोले हे शौनकादिक द्विजो गंगाजीके उत्तम महिमाका वर्णन करो जो गंगाजीकी महिमा ब्रह्मा विष्णु शिवजी [illegible] भी नर नहीं कहनेमें आवे १४७ जिनका नामस्म-

रक्षा करनेसे करोड़ों महापापोंसे युक्त भी जन ब्रह्मलोक में चलाजावे जिसने (गंगा) ऐसे एकबेर भी भक्ति में जो कहा तो वो भी पापोंसे छुटा विष्णुभुवनको पधारता है १४८ जो जन इस अध्यायको भक्तिसे सुनते अरु पढ़ते हैं तो तिनको गंगाजीके स्नानका फल होताहै इस में संशय नहींहै १४९ ॥

इतिश्री बृहन्नारदीयपुराणभाषा पण्डितदेवीसहायकृत सौदास का उपाख्यान वर्णनन्नाम नवमोऽध्यायः ॥

दशवां अध्याय ॥

श्रीगंगाजीकी उत्पत्तिमें राजाबलिका वृत्तांत ॥

श्रीसूतजी बोले हे विप्राः ध्यानमें परायण सारे ऋषियों तुमने अच्छा पूछा यहही सनत्कुमारको नारदजी ने गाकर सुनाया है १ जो ये महापवित्र उपाख्यान कहने सुननेवालोंके सब पापनष्ट करनेवाला अरु मोक्षफल देनेवालाहै २ हे द्विजोइन्द्रआदि देवोंकेपिता (कश्यप) जीभये तिनके दो स्त्री थीं (दिति) अरु (अदिति) तिन दोनोंके पुत्र देवता अरु असुर आपस में जय चाहते ३ प्रह्लादके पुत्र (विरोचन) का बेटा (बलि) नाम राक्षसेंद्र इस भूमिको भोगताथा ४ सो विरोचन का पुत्र बलि भारी सेना सहित था सो इस पृथ्वीको जीतके स्वर्ग को जीतने चाहा ५ जिसके हाथी घोड़े अरु रथसहस्र करोड़ लक्षये अरु एक२ हाथीके साथ पांच २ सौ पैदल ऐसे तिसकी सेना की शोभा कहांतक कहीजावै ६ अरु (कुंभांड) अरु [कूपकर्ण] तिसके मंत्री थे अरु मय

पराक्रम इन करके पितासे समान ऐसा बलिका बड़ा
पुत्र [बाणासुर] भया ७ ऐसे बलसे सहित राजाबलिल-
हनेको चढ़ा जो ध्वजा छत्रोंसे आकाश समुद्रकी तरंगों
जिनताथा ८ ऐसा बलि वृत्रासुर के शत्रु-इन्द्रकीपुरी-अ-
मरावतीमें पहुंचकर दैत्यों सहित अति क्रोध करताभया
तबतो देवता भी युद्ध करनेको पुरसे बाहर आये ९ तबतो
देवता अरु राक्षसोंका घोरयुद्धहोनेलगा प्रलयके मेघके
जैसे बाजोंके शब्दवाला १० तबतो राक्षस देवतोंमें बाण
छोड़तेभये अरु देवता राक्षसोंपरबाणबर्षाकरनेलगे तिस
युद्धसें ११ अरुराक्षसोंकोमारो २ काटो २ फाड़ो २ अरुबांधो २
ऐसा हे द्विजो भारी शब्द हुआ १२ सोकिदेव नगारोंकी
गोंजोंसे अरु राक्षसों की दहाड़ोंसे। अरु रथोंके पहियों
के धरराटसे अरु धनुषों की टंकारोंसे १३ अरु घोड़ोंकी
हिनसनोंसेहाथियोंकी चिंहाड़ोंसे । अरुबाणोंके सरराट
से सब लोक शब्दमय भया अर्थात् गोंजनेलगा १४ देव
राक्षसोंसे छोड़े असंख्य बाणोंसे भये अग्नि को देख
के सारा संसार अकाल प्रलय मानताथा १५ वोराक्षसों
कीसेना जोफुरित छत्रोंवाली । ऐसी सजीमानों बिजली
तड़क जिस में घटघूंमट सहित ऐसी रात्रिही होवे १६
ऐसे तिस महाघोर संग्राम में राक्षसोंसे छोड़े बाणोंको ।
मेघके जैसे शब्दवाले इंद्रने निजशरोंसे काटगिराये १७
अरु कइयोंने हाथीसे हाथी अरु रथोंसे रथ भिड़ाडाले ।
काइयोंने घोड़ों से घोड़े भिड़ाये कई गदा अरु दण्डों से
लड़नेलगे १८ कई मुदगरोंसे ताड़ित भये रुधिरको को
वमतेगिरे । अरु कई गिरतेहीं मरे विमानों में बैठतेथे १९

अरु जोर राक्षस देवोंसे हतेजाते वे २ तभी देवरूप भ-
राक्षसोंसेही लड़ने लगजाते थे २० ऐसे देवतों से आ-
ताड़ितभये वे राक्षस सारेही देवोंपर निज २ शस्त्र प्रहा-
छोड़ने लगे २१ सो मुद्गर शक्तिये तलवार फरसा गु-
इनसे पोलेवालीलाठी कटारी भाले चक्कर इनसे २२ क-
सूधाऽस्त्रअंकुशोंसे अरु हलपटा इनसे बर्छी पाषाण तोप-
से अरु लोह लाठी घूंसों से २३ त्रिशूल कुल्हाड़े सांगों
से । लघुपत्थर दुधारे खाराड़े भारी शरों से लोहमुख
वाला अरु शलाकाओं से २४ अरु छोटा पटा तीखे बाण
गुलेल इतने शस्त्रों से वे देव अरु राक्षस आपस में एक
के एक मार २ कह २ कर प्रहार करते थे २५ एक
रथ घोड़े हाथी पैदल इनसे भयानक बड़ा अर्थात् उनका
आपस में घोरयुद्ध होनेलगा । तो देवतोंने भी राक्षसों प-
भारी २ अस्त्रशस्त्र छोड़े २६ सो वह सहस्र वर्षतक बड़ा
घोर युद्धभया । फिरतो राक्षस बलमेंही हा देवता स्वर्ग-
लोकको छोड़के भागगये २७ ऐसे राक्षसोंने जंकाभय
रूपछिपाये देवता आकार भूमि तलमें विचरते भये २८
अरु राजाबलिनारायण भक्तिसे परायणभया त्रैलोक्य
भोगनेलगा । जो बहुत लक्ष्मीवाला अरु अत्यन्त भाग्य-
वान् २९ फिरविष्णु भक्तिमें परायणभया यज्ञोंसे यजनकरने
लगा । अरु स्वर्गमें आपही इन्द्रपद विभाग तिलो प्रबल
को प्राप्तहुआ ३० अरु देवतोंका नाशके लिये भी यजन
यजनकरते थे तिनसबों में भी राक्षसका बड़ा अरु स्वर्ग
लगा ३१ तबतो देवोंकीमाता अदिति निजपुत्रोंको स्वर्ग
भ्रष्टभये देखके अत्यन्त दुःखित भई ३२ कि मैं वृथाही

पुत्रोंवाली कहातोहूं ऐसेकहहिमाचलपर्वतपैगई । तहांइ न्द्रकाऐश्वर्यअरुराक्षसोंकोहारथेचाहती ३३ विष्णुजीके ध्यानमें परायणा भई महाभारी तप करने लगी सो कुछ कालतक तो बैठी फिरखडीभई ३४ फिरएकपैरसेही खडी भई फिर अंगुष्ठमात्रहीसे खडीरही । अरु कुछ काल फ- लाहार किया । फिर सूखेपत्ते खाये ३५ फिर जल फिर पवनही आहार करनेलगी ऐसेक्रमसे अदिति । अरुनिज चित्तमें जो सच्चिदानंदका चितवन कररही ३६ ऐसेही तिसने सहस्र दिव्यवर्षोंतक महाकठिन तपकिया । फिर इस वृत्तांत को राक्षसों के पति बलिने सुना तो तिसके भेजे बलीराक्षस देवतारूप करके अदिति को समझाने आये अरु इसे प्रणामकरके ये कहते भये ३७ । ३८ हे मात ऐसे शरीर सुखानेवाले तपको क्यों करती हो । जो राक्षस । जानलेंगे तो फिर हमें महादुःख होवेगा ३९ सो इस शरीरशोषक दुखदाई तपको तज । क्योंकि काया सुखानेसे भये भी भलेकी पंडितजन सराहना नहीं क- रते हैं ४० जो शरीर साधने में परायण हैं वे बलसे शरीर की रक्षाकरतेहैं जो शरीरको नहींसमझते वेआत्मघाती कहाते हैं ४१ सो हेमात तूतप मतकरै हम पुत्रोंसे आज्ञा करदे । नहीं हम तुम्हें मातासेहीन हुवे जीतेही मरजायँ गे ४२ जिसके मातानहीं अरु घरमें प्यारी बोलनेवाली स्त्री नहीं तिसको वनमेंजाना योग्यहै क्योंकि तिसको घर वनके समानहीहै ४३ मनुष्य पशु सर्प ये सब जीव- मात्र। माताके विछुरने के समान कुछभी सुख नहींपाते ४४ कोई दरिद्री वा रोगीहो वा देशान्तर से आया

हो माताका दर्शन होतेही मनुष्य सुखी होजाता है ४५
अन्तमें वा जलमें वनादिकमें वा स्त्रीमें । तोकभी मनुष्य
कुमनसी होजावै अरु मातासेकभीवेमन नहीं होताहै ४६
जिसके माता नहीं अरुधर्मवाले पुत्रनहीं । अरु पतिव्रता
जिसकेस्त्रीनहो तिसजनको वनमेंचलेजाना उचितहै ४७
सूतजी कहतेहैं हेद्विजो तबतो वो अदिति तिनके वचनों
का निरादरकरके अर्थात् इनके ऐसे२भी कहे वचनोंको
न मानकर तिस अत्यंत दारुण तपकोही करतीरही ४८
इतने में शीघ्रही करुणायुत चित्त शंख चक्र गदा पद्म-
धारी विष्णु जी तिसके आगे प्रकट भये ४९ जो मंद मु-
सक्यान से उघड़े दांतोंकी कांति से दिशोंको प्रका-
शमान कररहे । ऐसे विष्णु जी पवित्र निजहाथसे कश्यप
प्रिया अदिती को छूते ये कहतेभये ५० विष्णु जी बोले
हे देवोंकीमात अदिति मैं तेरे तपसे आराधन किया प्र-
सन्नभयाहूं तूबहुत समयसे परिश्रम करके थकीहै अब
अवश्य तेराकार्य सिद्धहोगा इसमें संशयनहीं ५१ तेरे
मनसे है मोही वरमांग मैं देऊंगा हे बड़ भागिनी कुछ
चिन्तानकर अवश्यही तेरा कार्य सिद्धहोगा इसमें कुछ
संदेह नहींहै ५२ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापंडितदेवीसहायकृतदशमोऽध्यायः ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

वामनजी करके बलिको छलना ॥

सूतजी बोले तब तो विष्णु जी करके शर्म कहीगई
अ. दितिविष्णुजीको प्रणामकरतिनकोस्तुतिकरनेलगी ।

अदिति बोली । हेदेव देवोंके ईश आपको नमस्कार है । जोआप सर्वव्यापक जनार्दन अरुसत्व आदिगुणों के भेदसे लोकका व्यवहार कररहे ऐसे आप को नम० है२ अरु बहुरूप आपको नम० अरु रूपरहित महात्मा आपकोनम० । अरु सबके एकरूप अरु निर्गुण सगुण आपको नम० ३ लोकोंकेनाथ आपको नम० अरु परम ज्ञानरूप आप को नम० अरु श्रेष्ठभक्तों पर दयावाले शीलवान् मंगलरूप आपको नम० ४ जिनकी अवतार मूर्तियों की मुनि जन पूजा करते हैं तिन आदिदेवपरम पुरुष विष्णु जी को नम० है ५ अरु जिन्हें सिद्धि यें नहींजानती । अरु वेदभी जिनको नहीं कहसक्ते । तिन जगत के हेतु मायावान अरु माया रहित विष्णुजी को नम० करतीहूं ६ जिनका विचित्र दर्शन जो मायामात्र अर्थात् वस्तु से एकही विष्णु रूप कारण है । अरु जो जगतके कारण जगतरूप अरु सबोंसे वंदना किये ऐसे तिन विष्णु जीको नमस्कार करतीहूं ७ जिनके चरण कमलके केसरसेरंगे अर्थात नमस्कार करनेसे चिन्हित मस्तक जिनके ऐसे भक्त जिन्हें ध्याय सिद्धकोप्राप्तभये तिन परम माधव विष्णु जी को नमस्कार करतीहूं ८ जिन विष्णु जी की महिमा को वेदभी नहीं जानसक्ते-अरु भक्तो के जो अत्यन्तही निकट तिनभक्तों के संगी विष्णु जीको मैं नमस्कार करतीहूं९ जो देवजी त्याग संग जिन्हों ने अरु शांत ऐसे भक्तोंका आप करुणा समुद्र निस्संगभी संगकरते हो १० जो आप यज्ञोंके ईश्वर यज्ञ भोक्ता अरु यज्ञकर्मोंमें प्रतिष्ठित अरु यज्ञफलदातातथा

यज्ञकर्म बतानेवाले ऐसे विष्णु जीको न०क० ११ पापी भी [अनासिक्त] पुत्रभाव से जिनकानाम लेनेही शीघ्रही परलस्थानकोपहुंचाता ऐसेलोकोंके साक्षिरूप विष्णु जीको प्रणाम करतीहूं १२ विष्णु रूपतो महादेवजी अरुशिव रूप विष्णु जी हैं इसप्रकार लोकोंकेजो नयकर्ताअर्थात् हरिहर इन में अभेद बुद्धिदाता जोविष्णुजी हैं तिनको मैं नमस्कारकरती १३ जिनकी माया के फांसेसे बंधे ब्रह्मादिक देवता भी परभाव को नहीं जानते तिन सबके नायकविष्णुजीकोनम० १४ अरु जिनविष्णुजीकेमुखसे तो ब्राह्मण भया अरु भुजोंसे क्षत्रिय हुआ तैसेही जंघ नाम साथलोंसे वैश्यभया अरु पैरों से शूद्रभया १५ मनसे चंद्रमाभया अरु चक्षुसे सूर्यजीभये मुखसे अग्नि अरुइंद्र भया जिनकेप्राणसे पवनभया १६ अरुजोविष्णुजीऋग यजुः सामवेदरूपअरु सप्तस्वरोंमेंव्याप्तहैं ऐसेजोयज्ञरूप विष्णुजीतिनको बेर२नमस्कार करतीहूं १७ हेविष्णुजी आपहीइन्द्र अरु पवन सोम हो अरुतुमहीं शिव यमहो अरुतुम्हीं अग्नि वरुण हो अरु तुमहीनिऋति अरु सूर्य जीहो ऐसे आपको नम० १८ अरु आपही देवता चर अचर पिशाच अरु राक्षसों में व्याप्त होअरु पर्वत सिद्ध गंधर्व अरु नदी भूमि समुद्र हो१९ आपही लोकोंके ईश हो जिन आपसे परे और कुछ नहीं ऐसे आप परसे भी परहो। अरुये सब जिन आपहीका रूप ऐसे आप को नम० २० हे अनाथों के नाथ हे सर्वज्ञ हे प्राणियों के आदि आप राक्षसोंसे बाधाकिये मेरे पुत्रोंकी रक्षाकरो २१ स्तुतिवाले कि देवोंकी माता अदिति ऐसे स्तुति

करके अरु देवविष्णु जीको बेर२नमस्कार करके । अरु
हर्षके आंशुओंसे स्तनों को भिगोती अंजलि बांधके ये
कहती भई अदिति बोली २२ हे सबके आदि कारण
देवेश विष्णु जोजो आप मुझपै अनुग्रह किया चाहतेहो
तो मेरे पुत्र देवोंको अकंटक औदेओ२३आप अंतर्यामी
ज्ञानमय हो हेदेवजी आपका क्यानहीं जानाहै । आप
मुझको कैसे मोहित कररहे हो२४पर तब भी मेरे मनमें
है सो आपको कहतीहूं । हेदेवेशजी राक्षसों से पीड़ित
मेरे पुत्र दुखीहैं तिनको दितिके पुत्र राक्षस न मारसकें
२५ अरु तिनको भी न हत करके मेरे सुत देवताओंको
श्रीदेओ २६ ऐसे कहेदेवेशजी फिर प्रसन्नभये पतिव्रता
दितिका स्पर्शकरके हर्षसे ये कहतेभये २७विष्णुबोलेहे
देविमैं प्रसन्नभया तेरापुत्र होओंगा क्योंकि जोतूसौतके
भी पुत्रों में दयावाली भई इससे २८ अरु तेरेकिये इस
स्तोत्र को जो भूमिपर पढ़ेंगे तिनके धनपुत्र संपदा सदा
वर्त्तमानरहेंगी २९ जो अपने पुत्र दूसरे केसुतमें समान
मनसेदेखे अर्थात् दूसरे का भी नाश नहीं चाहे तिसको
पुत्रकाशोक कभी नहीं होवे ऐसे विष्णु जीने कहा ३०
तब तो अदिति बोली कि आदि पुरुष नारायण ऐसे
आपको मैं कैसे धारण करसकूं हेजगविनाशि विष्णु जी
आपके रोम२मेंहजार२ ब्रह्मांड हैं ३१ जिनके भावको
तब देवता अरुवेदभी नहींजानते हैप्रभोतिन ऐसे देवदेव
आपको मैं कैसे धारसकूं३२अरु जो आपही सूक्ष्मसेभी
अति सूक्ष्म अरुपरसे परसे अत्यंतपर प्रभु हो हे पुरुषोतम
ऐसे आपको मैं कैसे धारण करों ३३ सूतजी बोले कि

सूर्य चंद्रनेत्र वाले आपको नमस्कारहै२-५३ अरु यज्ञोंके फलदाता आपको नमस्कार है अरु यज्ञके अंगोंमें विराजित आपको नमस्कारहै२ सज्जनोंके वल्लभ आपकोनमस्कारहै २ कारणोंके कारण आपको नमस्कारहै २-५४ शब्द आदिरहित अर्थात्निर्गुणआपकोनमस्कारहै२ दिव्य सुखदाता आपको नमस्कारहै२ अरु भक्तोंके मनदाता अर्थात् भक्तों की इच्छावश आपको नमस्कार है २ पाप नाशक आपको नमस्कार है २-५५ मंदराचल धारी आपको नमस्कारहै २ यज्ञवराह अवतारधारी आपको नमस्कार है२नरसिंहरूपहिरण्यकशिपुकोविदारणाकर्त्ताआपकोनमस्कारहै२-५६ वामनरूपधारी जी आप को नमस्कारहै२ क्षत्रियकुल के अंतक अर्थात् परशुराम जी आपको नमस्कार है अरु रावण के मर्दक रामचन्द्रजी आपको नमस्कार है अरु नंदसुत-बलरामजी के अग्रजभाई अर्थात् श्रीकृष्णजी आपको नमस्कार है ५७ हे कमला के कांत आपको नमस्कार है सुखदाता आपकोनमस्कारहै अरु स्मरणकर्त्ताओं की पीड़ा के नाशक आपको बारंबार नमस्कार है ५८ जो इस वामनजीके स्तोत्रको तीनकाल में पढ़ै तौ तिसके धन आरोग्य संतान इनमें सदा उत्सव रहेगा ५९ ऐसे स्तुति किये वे देवेश लोकपावन वामन जी तिन प्रसन्नतासे कश्यपजीको दर्शनदेते ये कहते भये ६० श्रीवामनजी बोले हेपिता तुम्हारा कल्याण हो मैं देवतों की पीड़ाको हरोंगा अरु शीघ्रही तुम्हारा मनोर्थ करोंगा ६१ हेमातः मैं वोजनम तुम्हारा पुत्र होचुका हूं अदिति वोजनमें पुत्रतनभें रहूं अब वामन रूप होने वाले

जन्म अर्थात् छयावतारमें भी तुमको उत्तम सुख देओगा ६२ सूतजी कहते हैं हे शौनकादिको उधर राजा बलिने महाभारी यज्ञ का आरंभकिया जो राजा सब मुनि जन अरु निजगुरु शुक्रजी सहित ६३ तौतिस महायज्ञमें ब्रह्मवादी मुनिजनों करके हव्य लेने के लिये लक्ष्मी सहित विष्णुजी बुलाये गये ६४ तबतो ऐसा यज्ञ होतेभये वामनरूप महाविष्णुजी राजा बलिके यज्ञमें आतेभये ६५ जो निज सुभावानेसे लोक मोहित करते अरु भक्तवत्सल ऐसे वामन विष्णुजी प्रकटहो बलिके यज्ञमें हव्य भोगने को गये ६६ तबतो आतेभये इन वामनजी को देखतेहीं ज्ञानदृष्टि से वे मुनिजन तिन नारायणजी को पहिचान कर उठआये ६७ कोई अच्छा बुरा था पण्डित वा मूर्ख हो पर जो भक्तियुक्तहो तिसके पास सदा विष्णुजी रहते हैं ६८ इस वृत्तांतको समझकर दैत्य गुरु शुक्र जी बलि को एकांतमें लेजायके ये समझाने लगे ६९ भृगुजीबोले हे दैत्योंके पति बलिराजन तुम्हारी श्री हरानेको विष्णुजी वामन रूप करके कश्यपजी के पुत्रभये हैं ७० सोही वे तुम्हारे यज्ञमें आतेहैं सो तू तिन आये भक्तोंको कुछभी मतदेना ये मेरा परममतहै ७१ हे ज्ञानीराजन मुन अपनी बुद्धि सुखदेती है अरु शत्रुओं की दई बुद्धि विशेष सुख नाशकहै शत्रुकी बुद्धि नाश कराती अरु स्त्रीकी बुद्धि प्रलय करनेवाली है ७२ जो शत्रुओं का हितकारी है सो विशेषसे हता जब शत्रुओं का बहाग्रपन नष्ट होजायगा तब वे कथारत्नतो वो कहुं अर्थात् मेरे समझानेसे तू वामनजीको कुछ न देना ७३ तबतो बलि बोला हे भृगु जी

कर्मभागको छिपकर ये वचन मत आगे न कहिये क्योंकि जो चाण्डाल विष्णुकी याचना करैं तो इनसे धर्मकथा होवहै ७४ जिसका चित्त विष्णुजी की सेवा के कारणहीं पद आश्रित करते हैं जो साक्षात आपही भोजनकरें तो पुरुषसे अधिक श्रेष्ठ पुरुषदूसरा कौनहै ७५ हेगुरुजी जोकुछ दरिद्री भी विष्णुजीको देता है सोही तिसका परम दान अक्षय होताहै इसमें जो विष्णुजीको मैं कुछ देऊंगा तो ऐसा चिन्तही होता ७६ जो पुरुषोत्तमजी परम भक्ति से स्मरण किये भी जनका चित्त शुद्ध करते हैं अरु नित विधिसे पूजा किये तो परमगति देतेही हैं ७७ सबप्रकार दुष्टचित्त वालों करके भी स्मरण किये तिनके पाप हरते हैं जैसे बिन इच्छा भी छुआ अग्नि जलाताहीहै ७८ जि-सकी जिह्वाके अग्रभागविषे दोअक्षरहरिहैं सो जन संसार से रहितहो विष्णुलोकको जाता है ७९ जो राग आदि कों से रहित (गोविंद २) ऐसे कहताहै सो विष्णु भुवन को पावता जैसे दुग्धपान करतेहैं ८० अग्निमें वा ब्रा-ह्मणके मुखमें जो हव्य होमाजाता है विष्णु बुद्धिकरके सो तिससे विष्णुजी प्रसन्न होतेहैं ८१ मैं ने विष्णुजीकोही प्रसन्नताके कारण यत्न कराहै जो वे आपही विष्णुजी आतेहैं तो मैं कृतार्थहूं इसमें संशयनहीं ८२ राजाके ऐसे कहते २ वामनरूप धरे विष्णुजी सुन्दर [illegible] की कान्ति सहित यज्ञभूमिमें प्रवेश करतेभये ८३ [illegible] राजाबलि [illegible] पासही विष्णुजीको विधिसे अर्घ देके [illegible] ८४ [illegible]

यज्ञ सफलहै अरु मेरा जीवन सफल भया अरु मैं कृतार्थ भयाहूं ८५ मेरे श्रेष्ठअमृत की वर्षा आपके आने से भई जो अति दुर्लभ आप का आगमन सो भया यह महा उत्साह हुआ है अरु ये जितने मुनिजनहैं सो सब कृतार्थ हैं इसमें संशय नहीं जो जिन्होंने पहिले तप किया था सो सबका आज सफल भया तिससे मैंभी कृतार्थहूं २ इसमें संशय नहीं ८६।८७ तिससे आपको नमस्कारहै ३ अब आपकी आज्ञासे आपका काजकरूं मेरा यह मनहै ऐसे उत्साह सहित मुझको आज्ञा कीजिये ८८ ऐसे कहते २ हँसते भये वामनजी यह बोले कि मेरे तप करनेको तीन पैंड पृथ्वी देओ ८९ तो यह सुनतेही बलि बोला कि न तो आपने ग्राम मांगा न ग्रामनगर का बहुतसा धन मांगा यह तुमने क्या लिया ९० यह सुनकर कपट वेष धारी विष्णुजी बलिसे बोले जो शीघ्रही नष्ट ऐश्वर्य होने वाले राजाको वैराग्य उत्पन्न करते भये ९१ कि हे दैत्यराज सुनो हम परमगुह्य वृत्तांत कहतेहैं सो कि जो सब संग रहित हैं तिनको द्रव्य आदिकोंसे क्या सिद्धकरनाहै ९२ हमतो सब भूतोंके अंतर्यामी आत्मज्ञानीहैं तिससे हेदैत्य ये सब प्रपंच हमरूपहीहैं फिर और धनों से हमको क्या करनाहै ९३ जो रागद्वेष से रहित शांत अरु माया त्यागी हैं अरु जो नित्यही आनंदरूपहैं तिनको क्या असाध्य है सो कहु अर्थात वे ज्ञानी जन सबकुछ सिद्ध करसक्तेहैं ९४ जो सब आपने समान सबको देखरहे अरु शांत चित्त हैं ये सब वस्तुमात्र मुझसे न्यारा नहींहै तिससे कौन देता अरु क्या देताहै ९५ अरु ये पृथ्वी तो क्षत्रियोंके वशहै

ऐसा शास्त्रोंका निश्चय है तिसही शास्त्र आज्ञामें स्थित भये जन परम सुख पाते हैं ९६ हे राजन मुनियोंको भी राजा के अर्थ अग्रमांश देना कहा है अरु ये भूमिब्राह्मणोंको यथाशक्ति देनी कही है ९७ अरु इस भूमिदान के माहात्म्य को कहते भये हमसे सुनो हे दैत्यपति बलि राजन जिस महात्म्यको लोकमें और कोई भी कहनेको समर्थ नहींहै ९८ पर कुछेक कहतेहैं सोकि भूमिदान से परे दान नतो कोई हुआ न होगा भूमिके दानसे परममोक्ष प्राप्त होवे संशय नहींहै ९९ अग्नि रखनेवाले अरु वेदपाठीको थोड़ीभी भूमि देके जन विष्णु लोक को जाता है जहांसे फिर आगमन नहो १०० भूमि दाताही भूमि भोक्ता कहाता अर्थात भूमिदेता सोही भोगताहै अरुभूमि दाताही मोक्षभागी होताहै अरु भूमिदानही सर्व पापों का नाश करताहै १०१ जो महा पापों से युक्त वा सब पापोंसे युक्तहो पर दश हाथ भूमिदान करके सब पापों से छूटता है १०२ जो सत्पात्रमें भूमिदान करता सो सब दान फलको पाताहै भूमिदाताके समान दानी कोईलोक में और नहींहै १०३ हेराजन जो वृत्ति हीन ब्राह्मणको भूमिदान देवे तो तिसके पुण्यको हमभीवर्षसेभीनहीं कह सकें १०४ हे दैत्यराज देवपूजा में परायण अरु वृत्ति रहित ब्राह्मणको जो थोड़ीसी भी भूमि देवे तो वो जन विष्णुरूप जानना १०५ वृत्तिहीन कुटुंबी दरिद्री ब्राह्मण को थोड़ी भी भूमि देके जन विष्णुलोक पाता है १०६ जो ब्राह्मण देवपूजामें परायणहै तिसको (आढ़कि) भर भूमि अर्थात जिसमें सेरभर अन्न उत्पन्न हो इतनी भूमि

देवेतोतिसको तीनदिन गंगास्नान कियेका फलहो १०७
जो द्विज आजीविका रहितहै तिसको धौंनभर अन्नवाली
अर्थात् जिसमें बीससेर अन्न निपजै ऐसी भूमि देवै तो ति
सका फल सुनो १०८ जो नर गंगा तटपर सौ अश्वमेध कर
के फलपावे तिसी महाफलको इस पुण्यसे प्राप्तहोताहै
१०९ जो (दोखारी) अर्थात् सोलहमन अन्न निपजाने
वाली भूमि दरिद्री द्विजको जो जन देके फल पाताहै सो
हम कहतेहैं सो सुनिये ११० कि सहस्र तो अश्वमेध अरु
सौ वाजपेय यज्ञ गंगातीरपर करके जो फलमिलतातिसी
फलको जन इस पुण्य से पाता है १११ ये भूमिदान
महादान कहाहै जो सब पाप नाशक अरु मोक्षफलदाता
है ११२ हे दैत्यराज अबहम इसभूमिदान विषयमें एक
इतिहास कहतेहैं सो सुनो। जिसे श्रद्धायुक्त जन सुनकर
भूमिदानका फलपावे ११३ सो कि पहिले एकदरिद्रीवृ-
त्तिरहितबहुकन्यावाला(भद्रमतिनाम)ब्राह्मणभया ११४
जिसने सारशास्त्र पढे वेद पुराणधर्मशास्त्रइत्यादि ११५
अरु तिस द्विजको छै स्त्रियें भई सो युता, सिंधु, यशोवती
कामिनी, मानिनी, अरु शोभा ये ११६ इन छैस्त्रियोंमें तिस
विप्रसे हे दैत्यराज दोसौ चालीस पुत्रभये नित्यहीवे भूखे
रहते ११७ तबतो दरिद्री वोभद्रमतिनिज प्रिय पुत्रों को
भूखेमरतेदेख आपभीभूखामरताविलाप करताभया ११८
मेरा आश्रयरहित जन्मवृथाहै अरु धनरहित जन्म वृथाहै।
अरु धर्मरहित जन्मवृथा अरु अतिथि वर्जित जन्मवृथा
है ११९ आचार रहित जन्मवृथा अरु मान रहित जन्म
वृथाहै। चिंतामें लगा ऐसे मेराजन्म वृथा अरु सुखशून्य

मेराजन्म हुयाहै १२० बंधुरहित अरु विख्याति वर्जित मेराजन्महुयाहै । ऐसे बहु पत्नीवाले मेराऐश्वर्य रहितजन्म हुयाहै १२१ अहो गुणा अरु सौम्यता विद्या येधेष्टकुल में जन्म जलकोही शोभादेते । अरु जो दरिद्रसागर में डूबा है तिसको येकोई भी शोभा नहींदेतेहैं १२२ प्यारेपुत्रपौत्र बंधु अरु भाई । शिष्य अरु सब मनुष्यभी ऐश्वर्यरहित जन को सबत्यागदेतेहैं १२३ ब्राह्मणहो वाचांडालहो परजौन भाग्यसाथ होवै वोही पुजताहै । जो लोकमें दरिद्री जनहै सोतो लोक में मरेके समान निंदनीयहै १२४ जो संपत्ति सहितहै वो निष्ठुर वा अनिष्ठुरबोले । अरु गुणा से हीनभी शूरावार अरुमूर्खहो तब भीपंडितहीहै १२५ जोजनऐश्वर्य रूप गुणावाला है सो निर्दुःख वा निर्गुणा अरु धर्महीन भी हो पर पूजित होताहीहै १२६ हाय सब लोकरिक्ता दुःख अरु दूसरा आशारूप महाही दुःख है । जो जन आशा से बंधे हैं वे सदा २ दुःख भोगतेहैं १२७ जोजन आशा के दास हैं वे सब लोक के भी दास हैं । अरु जिनके आशा दासीहै तिनका लोकभी दासहीहै १२८ लोकमेंनानहोंवादों का परमधन कहाता है । अरु दरिद्रीके तिरस्कारूपधन को आशारूप तिसको वेधन नमस्कार देतीहै १२९ सबशास्त्र अर्थ जानताभी दरिद्री मूर्ख दिखता दीखताहै । दरिद्ररूप ग्राहके ग्रसेभये हमको छुटाने वाला कौनहै १३० हो ३ ये दरिद्रता महादुःखहै ३ अरु तिसभी से ज्यादा पुत्रोंका बहुत होना अतिहीं महादुःख है १३१ (सूतजीबोले) वो सब शास्त्र पारगामी मद्रसेन ऐसे विलाप करके तबके ओर मेनायें देनेवाले धर्म को विचारताभया १३२ जो सर्वदान

को सब दानों में उत्तम दान समझकर जो भूमिदान सब
धर्म प्राप्त करनेवाला अरु सबकाम फलदाता १३३ ऐसा
सब दानों से उत्तम भूमिदानही कहा है जिसे करके नर
जो२ चाहै सो२ ही पाताहै १३४ वो स्थिर बुद्धि भद्रमति
मनमें ऐसानिश्चयकरके निजस्त्रीपुत्रों सहित (कौशांबी)
नाम नगरीमें आताभया १३५ तहांजाकर तिसने (सुघोष)
नाम ब्राह्मण से हे राजन् पांचहाथ पृथ्वीमांगी १३६ तो
धर्मपरायण सुघोषने तिसे कुटुम्बी देखके इसको मनहीमें
पूजकरबोलाकि १३७ हेभद्रमति द्विजमैंकृतार्थभयाअरुमेरा
जन्म सफल अरु कुल श्रेष्ठ हुआ कि तुम मुझ पर अनुग्रह
करतेहो इसकारणसे १३८ ऐसेकहधर्मतत्पर सुघोष तिस
को पांचहाथ भूमि देताभया १३९ अरु मैं इस विष्णुजी
से पालित विष्णुजीको पृथ्वीदेताहूं । इस पृथिवीकेदान
से मुझपर विष्णुजी प्रसन्न होवें १४० हे राजन् इस मंत्रसे
सुघोषने तिसब्राह्मणको बुद्धि से पूजकर पांचहाथपृथ्वी
दई १४१ फिर बुद्धिमान भद्रमतिने तिसीमांगी भूमिको एक
कुटुम्बी वेदपाठी हरिभक्तकोदई १४२ अरुसुघोष भूमिके
दानसे करोड़ कुलसहित दश सहस्रवर्ष वैकुंठमें रहा कुटु-
म्बसहित १४३ फिरसौयुगतक ब्रह्मलोकमें रहकर फिरइन्द्र
पदवी पाकरके पांचकल्पतक सुरराज्य करतारहा १४४
फिर भूमि पर जन्मलेकर सब ऐश्वर्ययुक्त उत्तमजाति बहु-
भागीभया सबभोग भोगता भया १४५ हेराजनवोभद्रमति
जितेन्द्रियहीन ब्राह्मणोंकोभूमिदान करतारहा तो प्रसन्न
मनभये भगवान् तिसको भी उत्तम पददेके फिर तिसको
मोक्ष करते भये १४६ तिससे हे दैत्यराज तुमभीसर्व धर्म

में परायण भये मोक्ष के लिये हमको तीन पैड़ पृथ्वी देओ तहां बैठके हम तपस्या करेंगे १४७ तबतो प्रसन्नभया बलि वामनजीको भूमि देनेके लिये जलभरा कलश हाथ में लेताभया १४८ अरु शुक्रजीसूक्ष्मरूप करके तिस कलशके छिद्रमें आयफंसे तबतो सर्व व्यापक विष्णुजीजल की धार रोकते शुक्रजीको जानकेतिसछिद्रमेंकुशकापैना पत्र घुसेड़ते भये तिससे शुक्र जी काने होगये क्योंकि वो कुशका अग्रभाग करोड़ सूर्यसमान कांतिमान महाशस्त्र होगया जो सत्य अर्थात खाली नजावे ऐसा ब्रह्मास्त्र अरु जो शुक्रजीकी आंख फोड़नेमें चपल १४९।१५० १५१ तिससे कानेभये शुक्रजी निज एकही आंखसे सबअसुरों को बताते भये कि शस्त्रभये तिस कुशाग्रको देखो १५२ उधर राजाने शीघ्र महाविष्णुजीको तीन पैड़ पृथ्वी दई तबतो विश्व व्यापक विष्णुजी ब्रह्मलोक तक बढ़ते भये १५३ तबतो विष्णुजीने दो पैड़ से तो सबभूमिनापी अरु तीसरे पैंड़से सब ऊर्ध्वलोक नापा १५४ फिरतिनके अंगूठे से निकला ब्रह्मांड सो दोप्रकार से अर्थात भूमि आकाश रूपभया अरु तिसी अंगुष्ठसे धार निकली सो जल रूप अर्थात श्रीगंगाजी भई १५५ सो गंगाजल जो परम पवित्र सब ब्रह्मादि देवताओं को पवित्र करता अरु जो वशिष्ठ आदि सप्तऋषियोंसे सेवित अरु सुमेरु पर्वत के शिखर पर गिरता १५६ ऐसा इन वामनजी का अद्भुत कर्म देखके ब्रह्मादि देवता अरु चौदहमनु ये सब हर्षित भये इन वामनजीकी स्तुति करते भये १५७ ब्रह्मादिक बोले कि हे विष्णुजी आपको नमस्कार है जो आप परम

ईश परमात्मस्वरूप अरु परसेपर परमस्वरूपधारीहो अरु आप ब्रह्मात्मा अरु ब्रह्मबुद्धि हो १५८ अरु नहीं विशेष से आहत अर्थात् निवारण कियेजावें कर्मबीज जिनके ऐसे आपको नमस्कार है १५९ हे परमेश परमानंद हे परात्मन हे परमपर हे सनातन विश्वमूर्ते प्रमाणोंसे अतीत अर्थात् अप्रमेय आपके अर्थ नमस्कारहै १६० अरु विश्वव्याप्त चक्षु वाले आपको नमस्कारहै अरु विश्व व्याप्त भुजावाले आपको नमस्कारहै अरु विश्व शिर आपको नमस्कार है अरु विश्व गति आपको नमस्कार है १६१ सूतजी बोलेकि ब्रह्मादि देवताओं करके ऐसे स्तुतिकिये विष्णुजी तिनको निज २ स्थान बताकर हँसतेहुये अभय दान देतेभये १६२ फिर विरोचनके पुत्र बलिको बांधते भये अरु सबभोगसहित तिसे पाताललोकमें स्थानबताया १६३ ऋषीश्वरोंने पूछा कि हे सूतजी विष्णुजीने पाताल में राजा बलिके लिये क्या भोजन बनाया सो कहिये १६४ सूतजी बोले कि जो अग्निमें मंत्रहीन हवन किया जावे अरु जो अपात्रमें दानदिया जावे सो पातालमें राजाबलि को पहुंचताहै १६५ अरु जो अपवित्र यजमान से होम किया दान दिया अरु जो सत्कर्म किया सो सब नीचे गिरकर बलिको पहुंचताहै १६६ ऐसे विष्णुजीने राजा बलिको पाताल लोकदिया अरु सब राक्षसोंको भी तहां हीं बसाये १६७ अरु देवतोंको उत्तम स्वर्ग वास बताया जो विष्णुजी देवताओंसे पूजते अरु महामुनियोंसे स्तुति किये अरु गंधर्वों करके गायेजाते ऐसे विष्णुजी १६८ फिर वामन रूप भये इतभागी आश्चर्य कर्म को देख के

ब्रह्मादिक देवता आपसमें सुनकाते तिन पुरुषोत्तम विष्णुजीको प्रक्षाल करते भये १६९ फिर वे सबके आत्म रूप विष्णुजी दासलक्ष्मी सन संसारको मोहते तप करने को वनमें पधारे १७० हे ऋषियो ऐसे प्रभाववाली गंगा जी विष्णुजीके पैरसे उत्पन्न भई जिनके स्मरण से जन सब पापोंसे छूटताहै १७१ जो जन सौयोजन दूर पर भी (गंगा गंगा) ऐसा कहता सो सब पापों से छूटा विष्णु जीके लोकमें पूजित होताहै १७२ जो इस अध्याय को पढै या यत्नसे सुनै देवालय वा निजालयमें तो वो अश्वमेध यज्ञका फलपावै १७३ जो जन सावधान भया इस की व्याख्याकरै तो तिसका फिर आगमन विष्णुजी के प्रभावसे वैकुंठसे नहीं होवै अर्थात तिसकी मोक्षहोवै १७४॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषागंगाजीकीउत्पत्तिरूप गंगावलिकावृत्तांनवर्णनन्नाम एकादशोऽध्यायः॥

बारहवां अध्याय॥

दानविधि का वर्णन॥

ऋषियोंने पूछा हे सूतजी दान किसको देने अरु दान का फल कैसाहै अरु कौन विधिसें प्रहणाकरै सो सब कहिये १ श्रीसूतजी बोले हे ऋषियो सब वर्णोंका ब्राह्मण परमगुरुहै तिसको दान देनाचाहिये २ ब्राह्मण सर्वत्र भय रहित भया प्रतिग्रह लेवे पर क्षत्रिय वैश्य ये कभीभी प्रतिग्रह न लेवें ३ जो क्रोधी अरु पुत्र हीन वा पाखंड आचारीहो अरु जो वर्णाश्रमसे हीन तिसको दिया निष्फलहै ४ जो देवता अरु ब्राह्मणोंका द्वेषीहो अरु निज [illegible] जो [illegible] निष्फल दिया [illegible]हे ५ [illegible]

सें रत अरु परद्रव्यहारीहो अरु जो नक्षत्र सूची ज्योतिषी
हो तिसको दियानिष्फलहै ६ जो ईर्षायुक्त चित्त कृतघ्नी
अरु मायावीहै अरु जो अपूज्यको पुजाता तिसको दिया
दान निष्फल होजाताहै ७ जो नित्य याचना करता अरु
हिंसक अरु जो अपच जो नारायणार्थ पाक न बनावे
अरु मास बेचता अरु वेदबेचताहै ८ अरु जो दूसरे को
दुःखी करता तिसको दिया दान निष्फल होजाता है जो
जन पाप परायण अरु निज जनोंसे सदा निंदाकियेजाते
तिनका न तो कोई प्रतिग्रह लेवे अरु न तिनको आप
कुछदेवे ९। १० जो श्रेष्ठकर्म परायण अरु वेदपाठी सा-
ग्निक होवे अथवा आजीविकाहीन हो तथा दरिद्री कु-
टुंबवान् होवे तिसीको दानदेने चाहिये ११ जो द्विजदेव
पूजामें आसक्त अरु श्रेष्ठ कथा कहनेमें परायणहो ति-
सकोभरु हे द्विजो दरिद्रीकोविशेषसेदानदेना कहाहै १२

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितदेवीसहायकृततीर्थकथा
वर्णनन्नामद्वादशोऽध्यायः॥

तेरहवां अध्याय॥

भगीरथकरके गंगाजीलाना वर्णित है॥

ऋषियोंने पूछा हे सूतजी भगीरथ महाराज ने कैसे
गंगाजीके शुभ माहात्म्यको जाना अरुकैसे लाये१ सूत
जी बोले हेद्विजो तुम्हारी बुद्धि सम्यक् व्यवसित अर्थात्
ठीक निश्चित भईहै जो गंगाजीकेमाहात्म्यमेंआसक्तभये
हो जिस महिमासे लोक परमगति पातेहैं २ अरु हे सब
ऋषियो जो कि महात्मा नारदजीने सनत्कुमारको गान
करके सुनायाहै तिसी पवित्र साधनको सुनो ३ जिस सत्र

पापहारी पवित्र आख्यानको सुनके ब्रह्महत्याराभी शुद्ध होताहै ऐसे मुनि व्यासजीने कहाहै ४ सोकि जैसे सगर वंशी भगीरथ गंगाजीको लाया अरु जिस करके प्रेरणा किया गया सो सब कहतेहैं ५ सगरके वंशमें भया राजा भगीरथ इस सातों द्वीपों सहित भूमिका राज्य करताथा जो सब धर्ममें परायण नित्यही सच्चे पक्ष वाला अरु सब धर्म जानता था ६ अरु जो सत्य नियम वाला बड़भागी धर्मयुक्त विद्वान् रूपमें कामदेव समान अरु चंद्रमा के जैसे प्रियदर्शनवाला ७ जो धीरज हिमाचलके सम अरु धर्म में धर्मराजके समानथा अरु सब लक्षणों सहित सब शा स्त्रार्थ पारगामी था ८ सब संपत्ति सहित अरु सब का आनंदकारी राजा जो अतिथियोंका प्रिय अरु नित्यही विष्णुजीकी पूजामें परायण भया ९ अरु पराक्रमीगुणो निधान सबका मित्र अरु सबका हितुथा १० ऐसे राजा भगीरथ के पास किसी समय धर्मराज मिलने को आये तो तिन्हें आते देखतेही राजा उठके मिला ११ अरु तिन के कुशल समाचार पूंछे अरु रत्न जटित आसनपै बैठाय तिनके चरणधोय के पीताभया १२ भगीरथ बोला कि मेरे पितृमातृ कुल अरु जन्म कर्म धन्यहैं जो जगतके शि क्षक आप धर्मराज मेरे घरआये १३ ऐसे कह तिनको गन्ध पुष्प नैवेद्यसे सत्कारकिया अरु सुचित्तहो पूछाकि ये अनुग्रह मुझपै आज कैसे भयाहै सो कहिये यमराज बोले हेराजन भगीरथ जो जन ज्ञानी सन्मार्गी नाशी हैं तिनकी कीर्ति तीनों भुवनोंमें फैल जाती है तुम्हारी वि-ख्यातिको सुनके प्रसन्नभये दर्शनके अभिलाषी हमआये

हैं १४। १५ सो तुम्हारे दर्शनसे हमसंतुष्ट भये हैं तबतो भगीरथ राजाने इनके चरणोंमें लोटकर दराडवत प्रणाम किया अरु बोला कि मैं कृतार्थ भया १६ जो आपने आय निज दर्शनसे पवित्र कियाहै अब आप मेरे मनके संदेहोंको भी हटाने योग्यहो १७ श्रीनारद जी बोले हे सनत्कुमार ऐसे कहकै भगीरथ प्रश्न करता भया कि हे यमराजजी १८ आपके लोक कौन २ अरु कैसे २हैं तिनमें क्या२हैसोसर्वविस्तारसेमुझकोकहनेयोग्यहो १९ यमराज बोले हे राजन भगीरथ हमारे लोक में अनगिनत सुन्दर सुखदायक स्वर्गस्थान बनेभयेहैं २० जहां गये जो २ अभिलाषाहो तैसी२ ही पूर्ण होती है जो पुरायात्माहैं वे तहां जाकर संपूर्ण सुख भोगते हैं २१ अरु पापीजनोंके लिये तितनेही नरक बनेहैं तहां पापी जन जाकरअनगिनतनरकोंमें दुःखभोगतेहैं २२राजानेपूछाकि हे यमराज कौन २ तो किस किस पुरायसे तिन स्वर्गोंमें जाते जहां सब सुख भोगतेहैं २३ अरु कौन वे पापी हैं जोजायके अनेक नरकोंमें पड़े सड़तेहैं सोसब वृत्तांतकृपा करके मुझसे कहिये २४ यमराज बोले हे राजन तुमने बहुत अच्छी बात पूछी जो लोक हितकारक अरु नरकों से निवारण करनेवाली २५ हेराजन जो पुरायकरते अरु सत्संग करते तथा श्रेष्ठ शास्त्रोंको पढ़ते वे स्वर्गसुखभोगते हैं २६ अरु जो अच्छे तीर्थों में निवास करते अरु शुद्ध चित्तसे तहां परमात्माका चिंतन करते वे स्वर्गसुख भोगतेहैं २७ हेराजन जोराजा गऊ ब्राह्मणोंका भक्त है अरु नीतिके अनुसार वर्त्ते अरु पुत्र समान प्रजा पालन

करै सो स्वर्ग सुख भोगता है २८ जो ग्राम बसाता अरु तड़ाग बावड़ी बनाता वृक्षसंघ फुलवाड़ी लगवाता है सो स्वर्ग सुख भोगते हैं २९ हे राजन् तड़ागादिकों का सब से अधिक पुण्य होता है जिन करने से जन बहुत समय तक, असंख्य सुख भोगते ३० जो जन तड़ाग बनवावे या आपही बनावे तौ तिसके पुण्यकी गणना नहीं होसक्ती हे राजन् तड़ागकारी जन निज करोड़ कुलों सहित कल्पपर्यंत विष्णु जी के निकट बासकर के फिरतहांहीं मोक्षपाता है ३१।३२ हेराजन् कभी जब पथिक जन तिसतड़ागका जलपीवे तिसीसमय तिसके बनानेवाले के सबपापनष्टहोजातेहैं ३३ जो रातदिनपीने योग्यभी जलभूमि में इकट्ठाकरै तौवोसबपापों में छुटा सौवर्ष स्वर्गमें रहे ३४ जोसाधक जन तड़ाग बनाने को तय्यार होवे। सोभी सौवर्ष, स्वर्गभोगता अरु उपाय बतानेवालाभी भोगताहै ३५ जोतड़ागमेंसेमिट्टी लाकरबाहरगेरै सो सब पापोंसे छूटा बावनवर्ष स्वर्ग बासकरताहै ३६ जोदेवालय करता वा कराताहै। शिवजीका व विष्णु जीका तौ तिसका फलसुनो ३७ माता अरु पिताके सौकरोड़ कुलों सहित। तीनकल्प विष्णु के निकट वास करके मोक्षपाता है ३८ जो जनमूर्तिकामंदिरबनावे तो तिसको पुण्यहो सो हमसे सुनो कि तीनकल्प हरि निकट रहकर मोक्षपाता है ३९ अरु जो काठसे बनावेतो इससे दूगुना अर्थात छः कल्प स्वर्ग बासहो मोक्षमिलतोहै। अरु जो ईंटों से बनावे तो तिगुना अरु शिलाओंसे बनावे तो चौगुना फल मिलताहै ४० अरु शिलों में

फटिकमणि जड़ाने से दशगुनाफल मिलता है अरु तांबे का सौगुनापुण्य अरु चांदी सोनेसे बनानेका लक्षकोटि गुना पुण्य प्राप्त होता है ४१ जो देवालय वा तड़ाग वा ग्राम इनको पालै। तिसकोकरनेवालोंसे सौगुनाफलमिलताहै ४२ हे राजन् जोजन इनधर्मोंकी टहलकरते अर्थात् इनका प्रचार चलातेहैं। वे सब पापोंसे छुटे विष्णुपरम पद पातेहैं ४३ जो विघ्नरहितभये आप वा और किसीसे प्रेरणाकिये भी जो इस धर्मकोकरते। वे निज सौ करोड़ कुलोंसहित विष्णुजीके निकट हर्षेरहते हैं ४४ हे राजन् तड़ागसे आधाफल जोहड़के बनानेमें कहाहै। कूवेमेंचौथाईफल अरु नहरबनानेमें तिससे सौगुनापुण्यहोताहै ४५ अरु जो धनवान् पत्थरों से बावड़ी बनवावे। अरु मृत्तिका से दरिद्री बनावे तो तिनदोनोंको समान अर्थात् दशाकूओं के समान पुण्यफल मिलताहै ४६ धनवालातो ग्रामदेवै अरु दरिद्री एक हाथभर भूमिका भी दानकरै तो समान पुण्य होताहै ४७ धनी तो सांगो पांग तड़ाग बनावे अरु दरिद्री लघुकूपभी करादेवे तो समान फलहै ४८ जो जनसब जीवोंको सुखदायक आराम बनवावे अर्थात् वृक्ष समूहलगावेतो वो ब्रह्मलोक पाताहै जहांसेफिर आगमन नहोवे ४९ अरु दरिद्री जो एक वृक्षभी रोपदेवे तोतीनकुल सहित ब्रह्मलोकमें निवास करताहै ५० हे राजन् गऊ वा ब्राह्मण या और कोई मनुष्यभी छिनभर छायामें बैठतेही बनानेवालेको स्वर्गमें लेजातेहैं ५१ जो बड़भागी वृक्षलगाते अरु देवालय बनवाते हैं। अरुजो तड़ाग खुदाते अरु ग्राम बसाते वे विष्णुसदा विष्णुजीसे पूजेजाते हैं ५२ हे

राजन् जो सब लोकके उपकारको वृक्ष लगाते अथवा धर्म तीर्थकरते हैं तिनका फल सुनो ५३ जो कि तिन वृक्षोंमें फलते वह उनके फलहोते। तिनको मनवांछित लोकों कोमिल बासी बैकुण्ठमें बसे ५४ और जो तिन वृक्ष आदि का होना संबंधाते अथवा तिनके कांटोंका निवारण अथवा बाडलगवाते हैं। हे राजन् वे दो युगोंतक ब्रह्मलोकमें रहतेहैं ५५ और जो हे राजन् तुलसीजी लगातेहैं। तिनके पुण्यकाफलकहते हमसे सुनो। ५६ हे राजन् वे सात अरु आप इनके सौ कुलों से सहित कल्पपर्यंत नारायणनिकट निवास करतेहैं ५७ जो तुलसीमूल तलेकी मृत्तिकाका ऊर्द्ध तिलक लगातेहैं। तो तहांहीं तिनके हीसवानेवहोवे अरु जो मस्तक में चंद्रमा की कला को धारण करे ५८ जितने दिनमें तुलसी मूल तल से लगा रहाये हैं। तितनी तिनकी ब्रह्महत्या कटती हैं ५६ जो तुलसीको भी जल तुलसीजी से सींचैं। तो वो प्रलयपर्य्यन्त विष्णुजीके निकट रहताहै ६० जो तुलसी जीका कोमलदल ब्राह्मणोंको देवे। तो तीन कुलसहित विष्णुभुवनमें विराजै ६१ जो नरनित्य कानों में तुलसी दल धारण करे। हेराजन् अथवा तिसके कण्ठकीमाला पहिरे तो तिसके उप पाप सबनष्ट होते हैं ६२ जो तृण काठ या कांटों से तुलसीजीका थांवला बंधवावै हे रा- जन् तिसका भारी फल होता सो सुनो ६३ हे राजन्जोनर- ने नित्य वो तुलसी जी का थांवला देवे तिसको युग क्षय तक वो तीनकुल सहित ब्रह्मलोकमें रहताहै ६४ हे राजन् जो तुलसीजीका थांवला देवावे सो तीनकुल सहित विष्णु निकट निवास करता है ६५ जो सब तुलसीजी के

कोसल २ दलोंसे विष्णुजीको पूजै तो तिस ब्रह्मलोक से फिर आगमन नहींहोवे ६६ जो द्वादशीको वा पूर्णमासी के दिन विष्णुजी को दुग्धसे स्नान करावे तो दश सहस्र कुल सहित विष्णु सय होता है ६७ जो ढाईपाव दूध से विष्णुजीको नहवावै तो वोभी दशसहस्र कुलयुक्त विष्णु सांनिध्य पाताहै ६८ जोद्वादशीको ढाईपाव घृतसे विष्णु जीको नहवावे तो हेराजन् करोड़कुल सहित विष्णु निकट वास करताहै ६९ जो एकादशीके दिन भगवान् को पंचामृतसे स्नानकरावे तो करोड़कुलसहित विष्णुलोकमें रहै ७० हे राजन् एकादशी पूर्णिमा वा द्वादशी को जो नारियलके जलसे विष्णुजी को स्नान करावे तो तिसके पुण्यका फल सुनो ७१ हेराजनवोजन सौजन्मोंकेपापोंसे छूटा दोसौकुल सहित विष्णुजीके निकट निवास करता है ७२ जो कोई विष्णुजी को पुष्पों के जलसे वा गंधके जलसे स्नान करावे तो वो युग तक स्वर्गराज भोगै ७३ जो वस्त्रसे आच्छादित पवित्र जलसे विष्णुजीको नहवावे तो वो सब पापोंसे छुटा सौवर्ष तक स्वर्गमें हर्षा रहताहै ७४ अरु जो सूर्य संक्रांतिमें विष्णुजी को दूधसे स्नान करावै तो वो इक्कीस पीढ़ी सहित वैकुंठमें रहताहै ७५ जो शुक्ल पक्षकी द्वादशीको अष्टमीके दिन या एकादशी रविवार को या द्वादशी अरु पंचमीके दिन ७६ अरु सूर्य चंद्रमा के ग्रहणमें नव कन्यादि अरु युगादि तिथियों में व्यतिपात अरु वैधृतयोगमें अरु गजछाय योगमें ७७ अर्द्धग्रस्त कन्यार्क मन्वादि पूर्वका उदयहोनेसमय अरु पुष्य नक्षत्र रवि वार रोहिणीसहित रविको अरु रोहिणी बुधवार को तैसे-

ही शनि रोहिणीसें अरु भौम अश्विनी नक्षत्रके दिन ७८
शनि अश्विनीको अरु बुध अश्विनीको भृगुवार अरु पात
या वैधृतयोगमें तैसेही बुध अनुराधासें अरुश्रवण रविवा-
रको ७९ अरु तैसेही सोमवार श्रवण नक्षत्रको अरुहस्तके
वृहस्पति विषे बुध अष्टमी अरुबुध पूर्वाषाढ़ में भृगुवार
अरु रेवतीसें ८० इन योगोंसें दुग्धसे सावधान पवित्रभया
जो जन विष्णुजी वा शिवजीको स्नानकरावै ८१ अथवा
मधु अरु घृतसे तो तिसके फल को सुनिये हे राजन वो
स्नान करानेवाला सब पापोंसे छूट सबयज्ञों के फलको
प्राप्तहोकर इकईश पीढ़ी सहित कल्प पर्यंत वैकुंठ में र-
हताहै ८२ फिर तहांहीं जो योगियों को भी दुर्लभ ऐसा
ज्ञान पाकर तहांहीं मोक्षपाताहै जिससे फिर आगमन
न होवे ८३ हेराजन् कृष्णपक्षकी चौदश सोमवारको दुग्ध
से शिवजीको स्नान करानेसे जन शिवलोकको जाताहै
८४ अरु नारियलके भी जलसे अष्टमी सोमके दिन तिन
को स्नान करानेसे शिवलोक को जाता है ८५ हे राजन
कृष्णपक्षकी चौदश तथा अष्टमीको घृत वा सहतसे शिव
जीको नहवावे तोतिनके लोकको जाताहै ८६ हेमहाराज
सोमवारको फूल अरु फलोंके जलसे शिवजीको नहवावै
तो सौकल्प स्वर्ग वास करै ८७ जो विष्णुजी वा शिव
जीको तिलोंके तेलसे स्नान करावै तो वो तीन कुलस-
हित तिन २ के लोकको जाताहै ८८ अरु ईख के रससे
जो जन श्रद्धा से शिवजी को स्नान कराता है तो वो
सौ करोड़ कुल सहित तीनकल्प तक शिवलोकमें रहता
है ८९ जो द्वादशीके दिन घृतसे शिवलिंग को स्नान क-

रावै वा दुग्धसे तो हे बड़भागी तिसके फलको सुनो ९०
हे राजन् वो जन दशसहस्र जन्मोंके संचित पापोंसे छुटा करोड़ कुल सहित शिवसांनिध्य को प्राप्त होता अर्थात् शिवलोक कैलास में जायके शिवमय होता है ९१ जो जन देव उठनेकी द्वादशीके दिन परमभक्ति करके विष्णु जीको दुग्धसे स्नान करावै तिसका फल सुनो ९२ हेराजन् वो जन दशसहस्र जन्मोंके संचित पापोंसे छूटा करोड़कुल सहित परमपद पाता है ९३ जोकातिककी पूनों के दिन ढाईपाव सहतसे गोविंदजी को स्नान करावैं सो सौ करोड़ कुलों सहित विष्णुजीपै प्राप्त होताहै ९४ सुन्दर २ सुगंध अरु पुष्पोंसे विष्णुजी वा शिवजी को जो पूजै तो तिन २ही के लोकों को प्राप्त होताहै ९५ जोजन कमलके फूलोंसे शिवजी वा विष्णुजीकी पूजा करे तो वो तीनकुल सहित वैकुंठको पधारताहै ९६ जो जन विष्णुजीको तो केतकी के पुष्पों से अरु शिवजीको धतूरे के पुष्पोंसे पूजै तो सब पापों से छुटा वो युगतक वैकुंठ बास करै ९७ जो चंपाके पुष्पों से विष्णु जी को पूजै अरु आक के पुष्पोंसे शंकरजीको तो हेराजन् तिन २ही के कैवल्य को प्राप्त होता है ९८ जो जूही के पुष्पों से शिवजी को पूजै अरु विष्णुजी को दुपहिरिये के पुष्पों से तो सबपापों से छुटा युगभर सुमेरु शिखर पर रहै ९९ जो सात फूलों से विष्णु जी को अरु ग्यारह फूलों से शिवजी को पूजै तो तिन २ के लोक पाता है १००
जोशिवजीको वाविष्णु जी को सुन्दर २ ढाईपाव फूलों से पूजै अथवा तुलसीके पत्रोंसे पूजै तो सब काम फलपावै

१०१अरुजो आंवेके पत्तोंसे शिवजीको पूजै तौवो शिव सांनिध्यपाता अरु चतुर्दशीको पूजैतौ विशेष फल मि- लताहै१०२जोशंकर जी के वाविष्णु जीके घृत मिलित गुगुल की धूप खेवैतो जन सब पापोंसे छूटताहै१०३जो जन तिलोंके तेलका दीपक जलावैतौ सब कामफलपा- ताहै१०४ अरुजो शिवजी वाविष्णुजी कोघृत कादीपक जलावै सोसब पापोंसे छूटागंगा स्नानका फलपावै१०५ हेराजन जोघृत केवातेलसे शिवजी वाविष्णु जीके दीपक जलावैतो शिवकाफलसुनो १०६ हेराजन वोजन सबपा- पोंसे छूटा अरुसब संपत्ति सहित तीनसतै इकईस कुल सहित ब्रह्म लोकमें रहताहै १०७ अरुजोजो अभीष्टभोजन हैसोसोही शिवजी वा विष्णु जी को भोग लगावै तौचवा- लीस कुल सहित तिनतिन के लोकमें वासकरै१०८अरु जोजो प्रियवस्तुहैं तिन्हेंजो ब्राह्मणों को देवै तौवो ब्रह्म भुवनकोपधारताहै जहांसे फिरआगमननहोअर्थात मोक्ष प्राप्त होवै१०९हेराजन अन्नदान से ब्रह्म घाती भी शुद्ध होताहै इससे अन्नजलके सम और दाननहींहै न हुवा न गा ११० अन्नदेता सो प्राणदाता कहाता है अरु जिसने प्राणदिये तिसने सबकुछ दिया १११ तिस से हे राजन अन्नदाताको सबफल मिलताहै अन्नदेनेवाला दशसहस्र कुलों सहित ब्रह्मलोकको जाता है ११२ फिर तिसका आगमन नहीं हो ऐसा शास्त्रों में निश्चय है अन्नदान समान दान और न हुआनहोगा ११३ जो अन्न तत्का- लही तृप्त करता है अरु जलदान तिससेभी अधिक है क्योंकि जोसबकापाप अरु सब पापोंमें भी बुराहै परजन

दान से शुद्धहोजाता है हे राजन् शरीर अन्नसेही जन्म
अर्थात् पालित है अरु अन्नमयही प्राण हैं तिससे हे रा-
जन् जो अन्नदेता सो प्राणदाताही जानना ११४। ११५
जो अन्नदान शीघ्रतृप्त कर्ता अरु सब काम फल देता है
तिससे अन्नके समानदान नहुआ नहोगा ११६ हेराजन्
अन्नदाताके कुलमेंसहस्रोंभी जन्मतेहैं परवेनरकको देखते
भीनहीं हैं तिससे अन्नदाता श्रेष्ठहै ११७ हेराजन् जो जन
अभ्यागतको भक्तिसे उठके अन्नदेता तोवोमोक्ष पाता है
तिससे अन्नदाता श्रेष्ठहै ११८ जोभक्तिसेअतिथिके पैर
धोवे तो तिसने गंगा आदि सबतीर्थोंमें स्नानकिया जानो
संशय नहींहै ११९ हेराजन् जोजन ब्राह्मणोंकोतेलउबटना
लगावै तौवो सौबर्षभर गंगाजीमें नहायाहै १२० जोराजा
रोगी अरु ब्राह्मणोंकी रक्षा करता वो कोड कुल सहित
युगतक ब्रह्मलोक में बसे १२१ जोराजा एकभीरोगीकी
रक्षा करे तौतिसपै प्रसन्न भये विष्णु जी सब काम फल
देतेहैं १२२ मनवचन कर्मसे जो जन रोगियोंकीरक्षाकरै
तोसबपापों सेछुटा वो सबकाम फलपाताहै १२३ जोरा-
जाब्राह्मणार्थ निवासदेताहै तिसपर विष्णुजीअरुसबदेव-
ता प्रसन्नहोतेहैं १२४ जोब्रह्मवेत्ता ब्राह्मणको दूधकीगऊ
देवे तौवो पुनरागमन रहितविष्णु लोकको जाताहै १२५
कोटिसे दान लेकर भीजो गऊ को ब्राह्मण के अर्थ देता
तिसके पुण्यको हमनहीं कहसकेहैं १२६ जोजन वेदपाठी
द्विजको कपिला दूधवाली गऊ देवे तोवो हेराजन् शिव
रूप गुड जानना १२७ जोवेदवेत्ता ब्राह्मणको उभय मुखी
अर्थात् ब्यविब्याई गऊदेवै तौतिसके मुखकी संख्या सो

वर्षमें भी नहींहोसक्ती १२८ हेराजन् जो जन भयभीतोंको अभयदान देतातौवो विष्णु रूपहीहै १२९ अवसब धर्मों का जोजो उत्तम फल मिलताहै सोहेराजन् प्रीतिसे कहते हमसे श्रवणकरो १३० एक ओरतो दक्षिणा सहित सारे यज्ञ अरु एक ओर प्राणी के प्राणों का रक्षण अर्थात् दोनों समानहैं १३१ हेराजन् जोजन भयभीत ब्राह्मण की रक्षा करे तो वो सौवर्षभर गंगाजीमें नहायाजानना १३२ सोकि वस्त्रदेनेवाला तौशिवलोकमें निवास करताहै कन्यादान देनेवाला ब्रह्मलोकमें अरु सुवर्ण देनेवाला विष्णु भवनमें सौ कुल सहित रहता है १३३ जो कन्या को आभूषित करके विद्वान को देवै तौसौ कुल सहित ब्रह्म लोकमें निवास करताहै १३४ हेराजन्कार्तिककी पूर्णिमाको वा आषाढ़कीको जोशिवजीकी प्रसन्नताके लिये बैलको छोड़ै १३५ तोवोजन सातों जन्मोंके पापों से छूट शिवरूपहोके शिवमयहर्षित रहताहै १३६ जोशिवलिंग का चिन्हकरके वृषभकी नाईं भैंसेको छोड़ै तौ तिसको यमकी पीड़ाकुकभी कभीनहोवेगी १३७ हेराजन् जोयज्ञा से तांबूल दानकरे तौतिसे प्रसन्न भये विष्णु जी श्रीयुक्त स्थानदेतेहैं १३८ हेराजन् दुग्धदाता अरुघृतदाता मधुदाता अरु दधिदाता ये दिव्यवर्षोंके युगपर्यंत स्वर्ग में सुखी रहतेहैं १३९ हेराजनईख देवै सोइंद्रलोकको जाता अरुगंध पुष्प फल देनेवाला ब्रह्मलोकमें जाताहै १४० जोगुड़ अरु ईख का रस देवै सो क्षीर समुद्रमें वास करता है मिष्टान्न अरु जल देता सोसूर्य लोक में सुखसे विराजमान रहता है १४१ विद्याके दानसे कैवल्यमोक्षहो क्योंकि ये भाग

करैतौनर विमानोंमें विराजमान होये अरु महिखी देवै
तौ अपमृत्यु को जीतै इसमें संशय नहींहै १५४ । १५५
अरु गउओंको चारादेनेसे उत्तम शिवलोक को जाता है
हेराजन् नमक देतौ वरुणलोक पाताहै १५६ जोजननिज
आश्रम धर्मपरायण अरु सत्कर्मोंमें सादा उद्यतहैं अरु दंभ
लिंग इनसे रहितहैं वेब्रह्मपद पातेहैं १५७ जोपरको उ
पदेश करते राग अरु अहंकार सेरहितहैं अरु जो सत्संग
को चावसे करते अरुजो सबके हितमेंरतहैं १५८ अरुजोपर
अपवादसे रहितहैं वे यमलोकको नहींदेखते हैं अरु जो
नित्यवाक् ब्राह्मणोंके हितमें परायणहैं १५९ अरुजो पर
स्त्रीसंगसे रहितहैं वे यमालय को नहीं देखतेअरुजो जित
इंद्रियआहार रहितहैं अरु उँचीप्रोपैदयालुहैंअरुजोब्राह्मणों
के हितकारहैं वे परमपदको प्राप्तहोतेहैं १६० । १६१ अरुहे
राजन् जोअग्नि अरुगउओंकी रक्षाकरै अरुजो निजस्वा
मीकीसेवाकरता वो यमलोकमें नहींजाताहै १६२ जोसदा
देवपूजामें रतअरुसदानाम जपते अरु जोप्रतिग्रह रहितहैं
वे यमलोक नहीं देखते हैं १६३ जो जन अनाथ ब्राह्मण
के मृतदेहको जलावे तो वो सहस्र अश्वमेधोंका फलपाता
है १६४ हे राजन् पत्र पुष्प फल जल इनसे रहित अर्थात
शून्यलिंगको जो पूजे तो वो लक्ष अश्वमेधोंका फलपाता
है १६५ जो पूजा रहित शिवलिंग को षोडश उपचारसे
आप पूजाकरै तो वो अचल कैलाश वासकरताहै १६६
हे राजन् जो चुलूभर जलसे भी न पूजे शिवलिंगको स्नान
करावे तो वो भी लक्ष अश्वमेधों का फलपाताहै १६७ जो
पत्रोंसे वा फूलोंसे शून्य लिंगकी पूजा करै वो बरा लक्ष

अश्वमेधोंका फलपावे १६८ जोभक्ष्यभोज्य फलोंसे शून्य लिंगकी पूजाकरै तो वो मिष्टायुक्त मोक्ष पावे जहां से फिर आगमन न होवे १६९ अरु हे सूर्यवंशी राजन् जो पूजा रहित विष्णुजीकी पूजाकरै तो तिसके फलको कहते हमसे श्रवणाकरो १७० सोकि जो पूजारहित विष्णुजीको जलसे स्नान करावे वो सत्तर पीढ़ियों सहित विष्णु निकट निवासकरे १७१ अरु जो न पूजे विष्णुजीको पत्र पुष्प फलोंसे पूजै तो वो दोसौ कुल सहित विष्णु निकट निवास करै १७२ हे राजन् जोन पूजे विष्णुजी को भक्ष्य भोज्य आदिसे पूजाकरै तो वो दशसहस्र कुलों सहित मोक्ष पाताहै १७३ हे राजन् जो फूटे देवालयको सुधरावे तो तिसके फलको हमसे सुनो १७४ हे राजन् सौ जन्मोंके पापोंसे रहित तीनसौ कुल सहित वो जन कल्प पर्यंत वैकुंठ में रहके तहांहीं मोक्षपाताहै १७५ जो देवालयमें बुहारी देवे तिससे जनको जो फल मिलै सो श्रवणकरो १७६ सोकि जितने कणके वो बुहारता है तितनेही सहस्र युगोंतक विष्णुलोकमें विराजै १७७ हे राजन जो देवालयमें गोचर्म मात्र अर्थात् जहां गऊ बैठ सके इतने स्थानमें भी छिड़काव करै तिसका फल सुनो १७८ हे राजन् जितने छिनके तिव जलसे गीले होवें तितनेहीं जन्मोंके पाप शीघ्र नष्ट होजाते हैं १७९ जो जन सुगंधित जलसे छिड़काव करै तिसका फल मिलता सो हमसे श्रवणाकरो १८० हे राजन् तिसजलसे जितने छिनके गीले रों तितनेहीं सहस्रकल्पोंतक विष्णु निकट जन निवास करताहै १८१ जोनर मृत्तिका सेवा वालोंसे चित्रित देवा-

सहस्रोंको अर्थात् देवालयमें चित्र खिंचवाते तोवो दोनों कुलों सहित कल्पतक विष्णुलोकमें वसताहै १८२ हे राजन् जो मनुष्य शिव अथवा विष्णुके देवालयमें स्वस्तिकआदि मंडल करताहै तिसका फल सुनो १८३ हेराजन् जितने छिद्रके तिलमें लगायेगये तितने हीं सहस्रयुगों तक विष्णु जीके निकट विराजताहै १८४ जो देवालयमें दीपोंकी पंक्ति लगावै तिसकी पुण्यकी संख्या सौवर्षमें भी नहीं करीजाती है १८५ जोजन विष्णुजी वा शिवजीके मंदिरमें अखंड दीपक लगाता तो वो प्रतिदिन अश्वमेधका फल पाताहै १८६ जोजन पूजेभये मंदिर जी वा विष्णु जीको देखके प्रणाम करता सो हेराजन् वो सौवर्ष स्वर्ग वास करता है १८७ हेराजन् जोजन विष्णु जीकी तीन प्रदक्षिणा करैतो सब पापों से छूटा इंद्रपदवी पाता है १८८ जो पराक्रमी विष्णुजीके अंगोंकी परिक्रमा करै सोतो एक एक परिक्रमा करके एक एक अश्वमेधकाफल पावै १८९ जोजन भक्तीयुक्त होकर शिवजीकी आधी २ प्रदक्षिणा करैसो जिसफलको पावताहैसो सुनो १९० हे राजन् शिवजीकी एक अर्द्ध प्रदक्षिणासे तो ब्रह्महत्या से छूटै और दूसरीसे [illegible] और तीसरीसे इंद्रपदवी पाताहै १९१ शिवजीकी प्रदक्षिणा करताजन शिव जीकी जलहरी को नहीं उलंघै किंतु शिव पूजन में कहे (सूर्य चंद्रन २) इन प्रमाण के अनुसार आधीही परिक्रमाकरै १९२ जो आनंदयुक्त नारायण जीकी स्तोत्रों से स्तुतिकरै तो जोजो इच्छा चाहै तिनतिन मनकामों को प्राप्त होताहै १९३ जोजन भक्ति सहित देवालय में नृत्य

साथ हर्षसे रहताहै २०५ हेराजेंद्र ऐसे २ अनेक सैकड़ों सहस्रों धर्महैं कुछ हमने तुमसेकहे अरु हेराजन् सबोंको तो कौन कह सक्ताहै २०६ जोसर्व भोक्ता ज्ञानरूपी देवविष्णु जी हैं सोही संपूर्णधर्मों के फल को देते हैं २०७ जिनदेवों के देव चक्रधारी विष्णु जी के स्मरण हीसे हे राजन् सबकर्म सफलहोतेहैं २०८ परमात्मा अविनाशी जो अनंत विष्णु जी हैं सोही कर्म फल देते हैं अरुवेही सत्कर्मोंसे स्मरण किये शीघ्र सबपीड़ानष्ट करते हैं २०९ धर्महैं सो विष्णुजी हैं अरु फलहैं सोभी विष्णुजीहैं कर्म विष्णुजी अरु भोगने वाले भी विष्णु जीहैं कार्य अरु कारणभी विष्णुजीहीहैं तिसते विष्णु जी से परे और कुछनहीं है २१० ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितगंगोत्रीमहाचक्रतधर्मकथन वर्णनन्नामत्रयोदशोऽध्यायः१३ ॥

चौदहवां अध्याय ॥

पापभेद अरु नरकोंका वर्णन ॥

यमराज बोले हे महाराज अब हम पापोंके भेद अरु महाभयंकर नरकोंका वर्णन करतेहैं अरु तहां जो२ पीड़ा होती सो सब कहतेहैं तुम सुनो १ सो कि जो खोटे पापी जनहैं वे निरंतरही नरकरूप अग्निमें पकतेहैं तिन भयंकर फल देनेवालों को हमकहतेहैं २ सोकि (तपन) जो तपावे अरु बालुकाकुंभ जिसमें तप्तबालू भरी (महारौरव) अरु (रौरव) अर्थात् रुवाने वाले (कुंभी पाक) अरु निरुच्छ्वास-जिसमें श्वासन आसक्ता हो सक (काल-

सुब) अरुप्रमर्दन-जिससें अत्यंत मसलाजावे ३ भयंकर अ
सिपत्रवन-जहां वृक्षों के तलवार सिरखे पत्र (लालाभक्ष
जहां लालचाटनी पड़े) अरुहिमोत्कट-भारी बरफवाला
मूढ अवस्था जिससें हो अरु सहा(वैतरणी-नदी ४ अरु
श्वभक्ष-जहां कुत्तेकाटें) मूत्रपान-जहां मूत्र पीना पड़े अरु
पुरीषहृद-विष्ठाकाकुंड तपे(शूलोंवाला) तप्त शिलोंवाला
अरु शाल्मली वृक्ष ५ तैसेही भयंकर रुधिर कूप अरु
[रुधिरपीना) कृत्तोंका मांसखाना आगकी झलोंमें घुस
ना ६ शिलोंकी वर्षा शस्त्रों की वर्षा तैसेही अग्नि की
वर्षा खारीजल अरु तप्त जल पीना अरु तप्तलोह पिंड
निकलना ७ नीचे शिरहोना सुखला पहाड़परसे गिरना
तैसे पत्थरके यंत्र अरु कीड़ों का भोजन जिससें ऐसा न-
रक ८ अरु खारीजल पीना असदा तैसेही छिद्रसे फ-
टना विष्ठलेपन अरु विष्ठाभोजन जिससें ऐसा नरक ९
महाघोर वीर्य पीयानेवाला अरु सब संधोंसें जलन होवे
जहां ऐसा अरु अंगारोंपर सोना अरु मुसलों से कुटना
१० अरु बहुतसे काठके यंत्र हैं सोकि खें दनेवाला काटने
वाला अरु पर्वतोंसे गिरना अरु गदा दंड आदिकों की
चोटलगे जिससें ऐसा ११ अरु हाथियोंसे चिराना अरु
अनेकसे सर्पों से कटाना धूवांपिलाना फांसिसे बांधना
अरु अनेक शूलोंपर चढ़ाना १२ अरु मुख नाकसें खारी
जल छिड़कना घोरखारी जल पिलाना अरुलवण भोजन
१३ नसकाटना अरु नस बांधना तैसेही हाड़फोड़नाखारी
जलभरे गड्ढोंमें डाहना अरु मांसभोजन १४ वृक्षसे गि-
रना अरु जलमें डुबना महाघोर पित्तपीना अरु कफ स्व-

स्नार खाना १५ निंद पर दहेअर करना अरु खाटों पर
सोना कौड़ि योंसे खेलना अरु भिक्षुकोंसे पीड़ा दिवाना
१६ दक्षोंसे कौड़ों से रक्षा जैसोंसे पीड़ा करना तैसे
ही कौशमें सोना दुर्जनसे स्थापमें रखना बहुत लोगों
पर सोना अरु महाकुष्ठा सेवन करना १७ अत्यंत तक्र
तैल पीना महाकली ।। भोजन करना कालीना ज गपीना
अरु गलकुष्ट करना १८ अरु अति तप्तजलसे स्नान तैसे
ही कुन्होंसे तोड़ाजाता रूपे खोटे पर मायल तन अरु भीत
जल छिड़कना १९ अरु देवी किं तोड़को गंकु अर्थात् त-
लाबे तहूचलाना अरु लिंग अरु खंडों को तोड़ फोर लूट
करना २० दलराज जानतेहैं हेवडभागी राजद्र जैसी २
करोड़ों पीड़ाहैं तिनको मैं रहुन दौतका भी गिनको
सक्ता २१ जब इन्नों औरभी पाप करनेवाले कहतेहैं तिन
सबको हे राजेन्द्र मैं वर्णन करता हूं तुमसे सुनिये २२ ब्रा
ह्मणका घाती अरु सुरापीने वाला सुवर्ण चुराने वाला
अरु गुरु भाग करने वाला ये चारों महापापीहैं अरु इन
से जो संपर्क करे सो पांचवां महा पापी जानना २३
अरु जो पंचनमें पैकराके हुआ अर्थात् अरु जिमानकिये
बिना भोजन आगे लिखेंगे पाक बनावे सो अरु जो ब्रा
ह्मणोंका निंदक हैं अरु इन को आदिन आज्ञा करना
अरु आप मिती किसी दवाणमानना अरु जो इन्द्रबना य
पांचों भी ... करने २४ अरु जो ब्राह्मणों को बु-
लाकर [बन आदिकै भोजन] देके नाह दिये [नहीं है]
ऐसेकरना औरी ब्रह्मघाती है २५ किये जो बनाई
लिखी में जो स्वर्णा छेद करना अरु पुराने फरखना

वोभी ब्रह्म घातीहै २६ जो गऊ चारे बिन भूखी मरती
तृण चरनेको आईहों । तिन्हें जो हटावे सो ब्रह्मघातीहै
२७ जो न्हाने वा खानेको जाते ब्राह्मणको रोके अरु
विघ्नकरे । तो वो ब्रह्मघाती है २८ यमराज ने कहा हे
राजन् भगीरथ अब सुरापीने वालेके समान पापियोंको
सुनो२९ कि जो राजा मद्यपीनेवालोंको दंड नहींदेता ।
वो अधर्मी सुरापीनेवालेके समान पापीजानना३० अरु
जो मद्यपीतेको देखके बरजैनहीं । अरु मदिराका व्या-
पारकरै सोमद्यपीनेवालेकेसमानजानो३१जोमदिरापीने
से घिन नहींकरै अरु तिनसे संगरखता सो मद्यपीनेवाले
केसमानपापीजानो३२हेराजन् भगीरथ अबसुवर्ण चुराने
वालोंकेसमान पापियोंकोहमसे सम्यक्प्रकार सुनो ३३
जिस राजाके राज्यमें चोरीहो अरु वो प्रबंध न करै तो
स्वर्णस्तेयीके समान पापीजानना३४ जो चोरीकी वस्तु
को जानबूझके लेता । अरु चोरोंकी साक्षीदेता सो स्वर्ण
स्तेयीकेसमानपापीजानो३५जोदेवता गुरु ब्राह्मणके द्र-
व्यकोचुराता अरु जो इनके द्रव्यको लेकेनदेवे सोस्वर्णस
मानपापी३६ हे राजन् अबगुरुस्त्रीकेसे विषयकरनेवा-
लेके समान जो पापी तिन्हें गिनातेहैं सुनिये३७ जोनर
मातापक्षके कुलकी स्त्रियों से अरु पिताके कुलकी स्त्रि-
योंमेंगमनकरै वो गुरु तल्पगके समान पापी जानना३८
जो भाईकी स्त्री में वा स्वगोत्र वालेकी स्त्रीसे संगकरैवो
गुरु तल्पगके समान पापी जानना ३९ जो निज गोत्रकी
स्त्री से विवाहकरै । अरु स्त्री संग करनेवालों से प्रीति
करै वो गुरुतल्पग के समानपापी ४० हे राजन् भगीरथ

ऐसे२ पापियोंके संगसेभी महापापी समानहोकेतैसीही दुर्दशा भोगते हैं ४१ हे राजन् अब ब्रह्मघाती की गति होतीहै। तिसे हमसे श्रवणकरिये ४२ कि ब्रह्मघातीकी खोटे समय दक्षिणायन में अरु अशुद्ध स्थानमें कुमृत्यु अर्थात् अकाल मृत्यु होताहै ४३ अरु तिस मरेको पीछे सेदिये पिंड जलांजलि तथा दिया अन्नवस्त्रादिक कुछ भी नहीं पहुंचताहै४४ अरु वोपापी यमलोक में जाकर यमराज की आज्ञा से सौकल्प तक महाघोर नरकों में डालाजाताहै४५ तहां अत्यन्त दुःखभोगता निजकर्मोंको यादकरता हावैव मैंने क्याकिया ऐसा फिरनहीं करूंगा ऐसे कहर पछताताहै४६ फिर तहां नरक भोगके कर्मों का क्षयभये इसी भूमिपर आकर कीड़े पतंगआदि तुच्छ योनियों में जन्मलेताहै ४७ फिर अनेकयोनि भुगतकर नीच कुलमें महादरिद्रीके घर जन्मलेताहै तहांभी कुकर्म करके पूर्ववत् नरकों में पड़ता फिर जन्मले पाप करता ऐसे संसार चक्रमें भ्रमताहै ४८ जब कभी सत्संग अरु शिवदेव भक्तिहोवे । तथा सतशास्त्र पठनसे ज्ञानहोवे तब तिसकी संसार से निवृत्ति होतीहै४९हेराजन् इन महा-पापियों की ब्रह्मघाती के समानगति जाननी । तैसेही तिनके संगियोंकी भी५० अब जिस किसी पापसे जो गति होतीहैं सो हेराजन् हम तुमसे कहतेहैं सावधानभये श्रवणा करो५१हेराजन् स्त्रियोंको अरु बिन यज्ञोपवीत वालोंको तथा शूद्रोंको । विष्णु जीको वा शंकरजीको छूनेका अधिकार नहींहै५२हेराजन् जो निज२ आचार धर्मोंसे रहित हैं तिनसे पूजेभये शिवजी वा विष्णु जीको

सपने में भी पूजा न करे ५३ जो जन शूद्रसे प्रतिष्ठाकिये शिवलिंग वा विष्णु जीको प्रणाम करै तिसे यहांहीं अत्यंत दुःख होनेलगते फिर परलोक में तो होवेहींगे ५४ हे राजन् जन शूद्रसे पूजे लिंग वा विष्णु जीको प्रणाम करतेही नष्टहोजाता और कहनेसे क्याहै ५५ शूद्रहो वा विन जनेऊ वालाहोस्त्री हो वा पतितहोवे । शिवजी वा विष्णु जीका स्पर्शकरै तो नरक भोगता है ५६ अरु हे राजन् ब्रह्म हत्यादिक पापोंका तो निष्करण अर्थात प्रायश्चित्त भीहै अरु जो ब्राह्मणों से द्वेषकरे तिसका प्रायश्चित्तभी नहींहै ५७ अरु हेराजन् जो विश्वास घाती अरुकृतघ्नीहैं ५८ अरु जो शूद्रकी स्त्रीसेसंगकरते तिनका प्रायश्चित्तनहींहै अरुजिनके देहशूद्रके अन्नसेपुष्टहैं अरु जो वेदनिंदकहैं जोगुरुओंकी निंदा करते तिनका प्राय-श्चित्त नहींहै ५९ अरु जो शिवजीकी निंदा करते अरु विष्णुजीकी निंदा करतेहैं अरुजो श्रेष्ठ कथा की निंदा करते तिन का प्रायश्चित्तनहींहै६० जो द्विज जैनमंदिरमें चलाजावे तो तिसकी सैकड़ों प्रायश्चित्तों से भी शुद्धि नहीं होतीहै ६१ हे राजन् जैनी पाखंडी अरु वेदनिंदक हैं तिससे वेद भक्त द्विज तिनका दर्शन नहींकरै ६२ जो द्विज जानें वा न जानेसे जैन मंदिर में चलाजावे तो जान कर जानेवालेका प्रायश्चित्त नहींहै यह शास्त्रोंका नि-श्चयहै ६३ हेराजन् बहुत पाप होनेसे उनको कोटिकल्प तक नर्क होता है अरु वे पाखंडीहैं इससे उन का प्राय-श्चित्त नहींहै ६४ अरु हेराजन् जिन्होंका प्रायश्चित्त नहीं कहा तिनको जो नरक होतेहैं सो सुनिये ६५ कि करोड़

सहस्रकल्प तथा सौ करोड़ कल्पतक दश २ सहस्र कुलों सहित वे पापी घोर नरकों में पड़े सड़ते हैं इसमें संशय नहीं ६६ फिर भी कुकर्म शेष रहनेसे वृक्षादिक होते हैं तीनकल्प तक फिर वेही कीड़े होते हैं फिर कल्प तक सर्प होते फिर वे पशुओंकी योनिमें जन्म लेतेहैं ६७ ऐसे सहस्र युगों तक फिर वे म्लेच्छजाति होते हैं सोकि तिस ही कर्म शेषके क्रमसे वे गोलक अर्थात् विधवा स्त्रियों के व्यभिचारसे भये गर्भमें पड़कर जन्म लेतेहैं ६८ अरु एक जन्मसे कुंड अर्थात् पिता जीवते व्यभिचारसे जन्म तेहैं फिर दरिद्री द्विज होतेहैं ६९ सो नित्य दरिद्र से पीड़ित हुये प्रतिग्रह लेतेहैं अरु पाप प्रतिग्रह खेंचने से वे फिर नरकों में पड़ते हैं ७० हे राजन् जो २ हमने तुमको यमयातना कहीहैं तिनमें ये महा पापी युग२ भर रहते हैं ७१ फिर पृथ्वीपर आकर सात जन्मतक गधे होते हैं फिर कुत्ते अरु सूकर होते दशजन्म तक ७२ फिर सौवर्ष तक विष्ठाके कीड़े फिर हेराजन् वे चूहे होतेहैं फिर बारह जन्म तक सर्प होतेहैं ७३ फिर सहस्र जन्म तक मृग आदि वनके पशुहोतेहैं फिर सौवर्ष तक वृक्षादिक फिर गऊ बैल होतेहैं ७४ फिर सात जन्म तक चांडाल होते हैं फिर सोलह जन्मतक शूद्र आदि हीन जाति होते हैं ७५ फिर दोजन्म तक वैश्य अरु क्षत्रिय होतेहैं तहां भी नित्य शत्रुओंसे पीड़ितही रहते हैं ७६ फिर भी ब्राह्मणपनको पहुंचते सो दरिद्री अरु रोगी तथा नित्य प्रतिग्रह लेते तिस मे फिर नरकमेंही पड़ते ऐसे संसार चक्र में भ्रमते हैं ७७ अरु हेराजन् जो ईर्ष्या युक्त चित्तहैं वे रौरव

नरकमें पड़ते हैं तहां दो कल्पतक रहके कोड़ जन्म तक
चांडाल होतेहैं ७८ अरु जो गऊ ब्राह्मण अग्निमें देतों
को [मतदेओ] ऐसे कहै वो सौ बेर कुत्ता होके चांडाल
होताहै ७९ फिर कल्पतक विष्टामें कीड़ा फिरतीनजन्म
तक बघेरा होताहै फिर भी इकईश युगों तक नरकों में
पड़ताहै ८० अरु हेराजन् जो परनिंदा करते अरु निठुर
वचन कहते हैं अरु जो दान देतों में विघ्न करते तिनके
पाप फलको सुनो ८१ कि तिनके मुखमें तो तपायेलोहे
का गोला अरु नेत्रोंमें तक्षू फिर नीचे शिर अरु ऊंचे
पैर करके यमकिंकर ताड़ना देते हैं ८२ ऐसे सौवर्षतक
दुःख पाकर फिर रुधिरके कुंडमें गलमें पत्थर बांधकर
डुबोये जातेहैं ८३ फिर सहस्रवर्ष सारे घोर नरकोंमें पड़
कर फिर कर्मके शेषसे मांस भोजी अर्थात् कसाई होते
हैं ८४ हे राजन् अब पराया द्रव्य हरनेवालों के नरक
सुनो हेराजन् चोर जन मूशल से ओखल में कूटेजाते हैं
८५ फिर तीनवर्ष तक तपे पत्थरोंमें रहते हैं फिर सात
वर्ष काल सूत्रयंत्रसे खैंचे जातेहैं ८६ फिर वे चोर निज२
कर्मोंका शोच करतेहैं फिर क्रमसे तिन२ही अग्निरूप
नरकों में पड़तेहैं ८७ फिर वे भी पूर्वक्रमसे अग्निमें पड़ते
हैं अब अपनी पराई चुगलीकरें तिनका नरकसुनो ८८
वे सहस्र युगोंतक तपे लोहे का गोला मुख में रखते हैं
अरु अत्यंत दृढ चिमटोंसे तिनकी जीभ निकालीजाती
है ८९ फिर कल्पभर तक वे श्वास रोकनेवाले नर्कमें र-
हतेहैं हे राजन् अब परस्त्री गामियों के नरक सुनो ९०
कि तिनसे तपाये तांबेकी बनी स्त्रियें वेगसे रमण कर

ती हैं तिसे आप पकड़कर बहुत काल दाढ़से संगकरती हैं ९१ फिर वे जलते लिङ्ग [illegible] को धिक्कारते हैं अरु जो नारी अपनेपतिको तजि औरको भजती हैं ९२ तिनको जो २ नरकहोते तिन्हें तुम श्रवणकरो कि तपाये लोहके पुरुष तप्त लोहकी सेजपर दाढ़से पकड़कर कल्प पर्यंत तिनसे विषय करतेहैं ९३ फिर वे स्त्रियें अग्निके समान लाल भये लोहेके थंभको सहस्रवर्षों तक लपटाई जातीहैं ९४ फिर खारी जलके स्नान अरु खारीजलका सेवन फिर सारे नरकोंमें क्रमसे पड़ती हैं ९५ हे राजन जो गऊ अरु ब्राह्मणोंको मारै तो वो वेही पहिले कही सारी पीड़ा पांचकल्प भोगता है ९६ अरु जो बड़ों की निन्दा को आदर से सुनै तिसका नरक सुनो कि तिनके कानों में तपाये लोहे की कीलें चलाईजाती हैं ९७फिर तिनके फूटेकानोंमें अत्यंत तपाया तेल पूराजाताहै अरु फिर कुंभीपाक नरकमें बहुत कालतक डालेजातेहैं ९८ अब हेराजन जो२ नास्तिकोंको नरकहोते सोसुनो। कि तिनकोकरोड़वर्ष पर्यंत नरक चबवातेहैं९९ फिर कल्प तक विष्ठा खुआतेहैं। फिर रौरव नरकमें पड़ते फिरकिनको खातेहैं१००जो ब्राह्मणों को कोपदृष्टिसे देखते तिनकी आखोंमें तपाये लकड़ी [illegible] चलादेनारे हैं १०१ फिर वे खारी जलकी धारोंसे छिड़के जातेहैं फिर वे पापी कुल्हाड़ों से काटेजातेहैं १०२ जो विश्वासघाती अरु म-र्यादघातीहैं। अरु जो पराये अन्नके लोभीहैं तिनके नरकों अब सुनिये १०३ वे निरन्तर [illegible] [illegible] अरु [illegible] भी [illegible] [illegible]। [illegible] नरकों में [illegible] २ [illegible]

रहतेहैं १०४ जोप्रतिग्रह खेंचलेंअरुजोविनजाने ज्योतिषी बने। अरु जो द्रव्यलोभसे देवतों की सेवा करें अर्थात (पुजारी)तिनको नरकसुनो १०५ हे राजन वे कल्प पर्यंत सारी पीड़ा भोगते हैं। अरु वे पापी सदा विष्ठा खाते तिसीसें पड़े रहते हैं १०६ फिर भूमिपर आकरसातजन्म तक चांडाल होते अरु रोगी दरिद्रीभी होतेपीड़ा भोगते हैं १०७जो मिथ्यावादी अरु कठोर बोलने वालेहैं तिनकी दृढ चिमटों से जीभ निकासी जातीहैं १०८ फिर वे तप्ते तेल में छोड़े जाते अरु यंत्री में खेंचेजाते हैं फिर खारी जल में न्हाते और विष्ठा मूत्र पीते खातेहैं १०९ फिर वे भूमिपर आकार म्लेच्छजाति होतेहैं। जो औरोंके चित्त को उद्वेग करते वे वैतरणीनदीमें गिरतेहैं ११०जोसंध्या तर्पण आदि नहीं करते वेलालसूत्र में गिरतेहैं। जोचुल्लू नहीं लेता वो रौरव नर्क में गिरताहै १११ जो अनुष्ठान हीनहैं वे कीड़ोंमें पड़ते हैं। अरु हेराजन तिनको पांचयुग तक वो दुःखहोताहै ११२फिर भूमिपर भी आकार पराये चाकरही होतेहैं। हे राजन जोराजाब्राह्मणोंकेग्रासमेंकर लगावै तिनकोपीड़ासुनो ११३कि वो प्रलयपर्यंत नरकों में गिरा रहताहै। अरु जो ब्राह्मणों के ग्रास में अधिक कारलगावै ११४तो वहरहसहस्रकरोड़कल्प तक नरक भोगताहै अर्थात ब्राह्मणभजन रूपदावारते तिससे द्रव्य कालोतहैं ११५ जोब्राह्मणोंके ग्रासमें कारलगाकरतितन के अनुमोदरूप पापको करता सो हे राजन सातों दग्धस-हस्र्त्रकलकल्पकरताहै ११६ अरुयमलोकमें निरंतरश्वान विष्ठाखाते अरुफिर पै तिलके यंत्रोंमेंबोंबे जातेहैं ११७

अरु वे धूआं पीते प्रलय पर्यंत दुःख भोगते हैं फिर भूमि
में सहस्र जन्मतक चांडाल के घर जन्मपातेहैं ११८ जो
देवपूजा के लिये बनायी वाटिका में से पुष्प चुरावे
अग्निकी झलोंवाले घोर नरकमेंपड़ाता है ११९ जोजल
में वा देवालयमें मैलछोड़े । अथवा उच्छिष्टडालेतो तिस
के पाप फलकोसुनो १२० वेसेल से चुभोये गदाओंसेभेदे
भारीशब्द करते । फिरअति तपायातैलपीतेहैंफिरकुम्भी-
पाक नरक भोगते हैं १२१ जोब्राह्मणका द्रव्य या तृण
काष्ठभी चुरावे तोवो प्रलय पर्यंत घोर नरकमें पड़ताहै
१२२हेराजन ब्राह्मणोंकाद्रव्यचुरानायहां अरुवहांदुःख
देताहै । यहां तो तिसकी संपति नष्टहोती अरु परलोक
में नरक१२३ जो झूठी साक्षीदेवे तिसके पापका फल
सुनो वो प्रलय पर्यंत सारीपीड़ाभोगताहै १२४ अरुयहांतो
तिसकापुत्र नाशहोता अरु परलोकमें नर्कभोगता है जो
साक्षी झूठबोले १२५ हे राजन जोजन अति कामी अरु
मिथ्या बोलते हैं तिनके मुखमें सर्प सिरखी जोक चि-
पटाई जातीहैं१२६ ऐसे साठसहस्रवर्ष फिरखारीजल पि-
लातेहैं अरु वे कुत्तेकामांस खाते खारी कीचड़में पड़तेहैं
१२७फिर हाथियोंके आगे अरु पर्वतोंसे गिरातेहैं फिर
भूमिपर आकर हीनजातिमें जन्मलेतेहैं १२८जो पापियों
केपापोंको कहै सो तिनहींके समान पापीहैं अरुजिनके
पापकहता वे निष्पाप होजातेहैं१२९ हेराजन् जो ऋतुस-
मयमें निजस्त्रीमें संगनहीं करता वोब्रह्महत्यारा होताअरु
महाघोर रौरवनर्कमें जाताहै १३० अरु जो समर्थजन अ-
नाचार करते मनुष्योंको वर्जना नहीं । वो तिनके चौथाई

पापको भोगता है क्योंकि तिसनेदेखा इससे १३१ अरु
जोकुछ न पापियोंके पापोंको गिनै। सो सच्चेगिनै तो
तिनके समानपाप अरु मिथ्या गिनै तो तिनसे दुगुना
पाप भोगताहै१३२अरु जो निष्पाप में पापलगाताअरु
तिसकी निंदा करताहै वो प्रलयपर्यंत घोर नर्कोंमें पड़ताहै
१३३अरु जो कन्यासे प्रीतिकर्ता वो वहां कुत्तोंसेकटाया
जाता अरु फिरधुआंपीता अरु विष्टाखाताहै अरु मोहित
होताहै १३४ अरु जो व्रत धारणा कर बिन समाप्त किये
ही छोड़देवे वो असि पत्रवन में लेजाकर तरवार सरीखे
पत्तोंसे कटाया जाताहै १३५ जो औरोंसेकियेव्रतोंमेंबिघ्न
करै वो इकईस कुलसहितकपटके नर्कमेंगिरताहै१३६जो
न्याय अरुधर्मशास्त्रकी शिक्षामेंपक्षपातकरताहै हेराजन्
तिसकी सौ प्रायश्चित्तोंसे भी शुद्धि नहींहोती १३७ अरु
जो अभक्ष भक्षण करै वो दशसहस्र वर्षतक घिन खखार
पीताहै अरु भूमिपर चांडाल वंश में जन्मके सदा गोमांस
भक्षण करै १३८ जो ब्राह्मण का अपमान करै वो ब्रह्म
हत्यारा होता अरुरवपीड़ाभोगके दशजन्म तक चांडाल
होताहै १३९ जो ब्राह्मण को दानदेते विघ्न करै सो दश
सहस्र ब्रह्महत्याओंको प्राप्त होताहै १४० जो किसीका
धन चुराकर दान करता तो वो नरक में जाता अरु जिस
का द्रव्य था तिसको फल मिलताहै १४१ जो अन्याय
से कमाइके दूसरे को धनदेवे सो घोर नर्क में गिरता अरु
धनपानेको फल मिलताहै १४२ जो कहकर दान न करै
वो लार चाटता है जो तपस्वी की निंदा करै वो शिलिप
पंच नरकमें जाताहै १४३ अरु जो नारके वृक्ष काटते वे

इकईस युग नर्कभोगते हैं सो कि तिनको कुत्ते काटते अरु
कालसे सारे नरकोंकी पीड़ा होती हैं १४४ अरु जो देव
मंदिर अरु तड़ाग फोड़तेअरु पुष्पवाड़ी उजाड़ते हैं तिन
की गति श्रवणकरो १४५ कि वे करोड़ २ कुलों सहित
कल्पतक न्यारी२ भारी पीड़ा भोगतेहैं १४६ फिर क-
रोड़ कल्पतक विष्ठाके कीड़े होतेहैं फिर इकईस कल्प वे
विष्ठाखाते फिर तैसेही वे २१ युगतक कीड़ों काही भो-
जन करते हैं फिर भूमि पर आकर करोड़ जन्म चांडाल
होतेहैं १४७।१४८ हेराजन् जो ग्राम उजाड़ देते तिनके
महाभारी पापको तो मैंकरोड़जन्मों में भी नहीं कहसक्ता
१४९ अरु जो देवमूर्त्ति चुरानेवाले अरु ग्रामजलानेवाले
हैं वे जबतक ब्रह्मा जी सृष्टि रचते तब तक नरक भोगते
हैं १५० जिसके पाप का जो अनुमान करे वो नर जहां
पाप संभाले जाते तहां जाता अरु क्रम से नरक भोगता है
१५१ हेराजन् ग्रामज अरुगोलक इनका अन्नखानेवाला
अरु गांवभरको जो पुजवाता न पूजने योग्योंको वो म-
हापापी है १५२ हे राजन् बुलानेवाले अर्थात् मनुष्यों
को पापकर्म में प्रवर्त्तकरे वो अरु पूजारि अरु गांवभर
में कितनोंके ज्योतिष बताता ये अरु चांडालहैं १५३ उन
को इकईस युगोंतक भारी पीड़ा होती है फिर भूमि पर
आकर लाखजन्म चांडाल होतेहैं १५४ जो उच्छिष्ट खाते
अरु जो स्त्रियोंसे भोग करते हैं तिनको प्रलय पर्यंत भारी
पीड़ा होतीहै १५५ जिन्होंने देवता अरु पितरोंकी पूजा
नहीं अरु वेद शास्त्र सुहाये वे पाखण्डी कहाते अरु
तिनको बहुतसी पीड़ा होतीहै १५६ हेराजन् ऐसे २ बहुत

से पाप अरु उपपाप कहे हैं तिन सबों की तो संख्या बहुतहै तिनमेंसे कुछ तुमसे कहेहैं १५७ हेराजन्‌ धर्म पाप पीडा इनको जिननेके लिये विष्णुजी बिन संसारमें और कौन समर्थ है १५८ हे राजन्‌ भगीरथ कहे भये इन सब पापोंका धर्मशास्त्रकी विधिसे प्रायश्चित्त करने से पाप समूह नष्ट होजाता है १५९ अरु प्रायश्चित्त विष्णु जी के समीप करने तिससे वे सफल होते अरु तिनमें कुछ न्यून अति रिक्तपन नहीं होताहै १६० हेराजन्‌ गंगा तुलसी सत्संग अरु हरिनाम अरु निन्दा न करनी अरु अहिंसा इनसे सब पापनष्ट होते हैं १६१ हे राजन्‌ विष्णु जीके अर्पण किये कर्म सफल होतेहैं अरु जो अर्पणनहीं भये तो भस्ममें होमे चरुके समानहैं १६२ नित्य नैमित्य काम्य अरु और भी जो मोक्षका साधक कर्म है सो सब विष्णु अर्पण किया सात्विकी कहाता अरु सफल है १६३ जो विष्णुजीकी परमभक्ति है सो सबपाप नष्टकरती है अरु भक्तिवालोंका किया कर्म सफल होताहै १६४ सो हेराजन्‌ वो भक्ति दशप्रकारकी जाननी सोकि सात्विकीय राजसीय तामसीय भक्तोंसे जो करीजातीहै १६५ जो दूसरेके नाशके लिये विष्णुजी की पूजा करे सो हे राजनवह फलवाली भक्ति२अधमतामसीकहातीहै१६६ जो दुष्टबुद्धिसे मानों व्यभिचारिणी स्त्री निजपतिको तज दूसरेको भजै तैसेविष्णुजीकोपूजै तो वो मध्यमतामसी२ भक्तिहै १६७ जो दूसरोंको पूजते देखके अहंकारसे पूजा करै हे राजन्‌ वो भक्ति उत्तम तामसी३ कहाती है १६८ अरु जो धन धान्य आदि चाहता विष्णुजीको पूजै अरु

परमश्रद्धा रक्खे तो वो मध्यम राजसी४भक्तिहै १६९ जो
सबलोकों में कीर्त्ति विख्यात करके विष्णुजी को परम
भक्तिसेपूजै वो मध्यमराजसी५भक्तिहै१७० जोमोक्षआदि
विचार करके विष्णुजीको पूजै हेराजन वह उत्तमराजसी
भक्ति ६कहाती है१७१जो निज पापक्षयके लिये विष्णु
जीको परम भक्ति से पूजै वह अधमसात्विकी ७भक्तिहै
जो नर विष्णुजीकीप्रीतिसे सेवा करता वह सात्विक म
ध्यम ८भक्ति है१७२जो विधिसे सदा विष्णुजी को पूजै
वह सब में श्रेष्ठ उत्तम सात्विकी ९है१७३ अरु जो नर
नारायणजीकी महिमा धारणा करके अर्थात तिन्हींका
विचार करे अरु तन्मय होके प्रसन्न रहै सोभी भक्ति उ-
त्तम सात्विकी १०है १७४ जो मैंहीं परम विष्णुहूं अरु
मुझसेंहीं यहसबप्रपंच विस्तारितहै ऐसे जो निरंतर देख
ता वह उत्तमभक्त जानना१७५ ऐसी दशविधिकी भक्ति
संसारको निवृत्त करतीहै तहांभी सात्विकभक्तिसबपुराय
फल देतीहै१७६तिससेहेराजनजो संसारसेनिवृत्तिचाहता
वह जन विष्णुजीमें भक्ति करै१७७अरु जोनिजकर्म तज
के भक्तिकरै तिसपर विष्णुजी प्रसन्न नहीं होते क्योंकि
निज आचारसेही जनपूजा योग्यहोताहै१७८सबशास्त्रों
का प्रथम धर्म आचारही कहाताहैधर्म आचारोंसेहोता
है अरु धर्मकेस्वामी विष्णुजीहैं१७९तिससे निजकर्म से
विरुद्धलोगोंसेभीयेह विष्णुजीमें भक्तिकरनी अरु जो श्रेष्ठ
आचारधर्मोंसेहीनहैं तिनके किये धर्मभीदुःख देतेहैं १८०
हे राजन जो तुमने पूछा सो सब तुमसे कहा। तिससेतुम
नियमवाले होके तुमभी सुखीहोओ १८१ सो क्रियम

से तिन आरोग्यरूप विष्णुजीकी पूजाकरो। तिनकीपूजा किये सब कामोंको प्राप्तहोओगे १८२ अरुहेराजन् शिव विष्णुजीको एकबुद्धिसे पूजाकरो अर्थात् भेदमत मानो भेदकरने वालेको दशसहस्र ब्रह्महत्याहोतीहैं १८३ शिवजी साक्षात् विष्णुजीहैं अरुविष्णुजी साक्षात् शिवजीहैं। इनमें जोभेदकरै वहकरोडोंनरक भोगताहै १८४ हे राजन् आत्मघाती पापी तुम्हारे बडे। कपिल मुनि जीके तेजसे जले नरकोंमें पडे हैं १८५ अब हे महाराज गंगाजल छिडक करके तिनका उद्धारकरो हेराजन् गंगा जी सारेपापों को नष्ट करतीहैं १८६ हे राजन् केश वा हाड नाँह दंत अथवाभस्म। गंगाजल भिंटतेही ये विष्णु लोकमें जातेहैं १८७ हे राजन् जिसके अस्थि वा राख गंगामेंगिरें। वह महापापों से युक्तभी होवे पर परमपद पाताहै१८८हेराजन् सत्यसुनो येगंगाजी पापनाशिनी हैं जिनकी बूंदके सेवनसेही जनपरम पद पाताहै १८९ हे राजन् जितनेक पापतुमसे कहे। वेसब गंगाजीकी बूंदके छीटेसे नष्टहोजाते हैं १९० श्रीनारदजी बोले हे सनत्कुमार यमराज तिसराजा भगीरथको ऐसेधर्म सुनाकर अंत र्धानभये। अरु राजाभी तपकरने को वनमें गया १९१ सोकि सारीपृथ्वी मंत्रियोंको सौंपके। आपतप करने के लिये हिमालय पहाडमें जाताभया १९२॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितदेवीसहायकृतमेंभगीरथ यम संवाद गंगामाहात्म्य वर्णनन्नामचतुर्दशोऽध्यायः १४॥

———

पन्द्रहवां अध्याय ॥

भगीरथकरके तप करनाअरु श्रीगंगाजीलाने का वर्णन

ऋषीश्वरोंने पूछा हेसूतजी भगीरथने हिमालय पर जाकर फिर क्याकियाअरुगंगाजीको कैसेलाया सोआप सब कहिये १ श्रीसूतजी बोले हेशौनकादिको जटाचीर धारी राजाभगीरथ वनसें विचरता भया तपकरने को हिमालय पर जाताथा सो (गोदावरी) नदीके तीर पर पहुंचा २ तहां महावनमें उत्तम मुनि भृगुजीके आश्रम कोदेखा । जो कृष्णमृगोंसे घेरा अरु हाथियों से सेवित ३ भौंरे जिसमें भ्रमणा कररहे पक्षिशब्द कररहे । सूकर समूह जहां डोलरहे अरु जोचमरी गउओंके वालोंसे वीजित अर्थात चमर ढुलरहे जिसवनमें ४ अरु मोर जहां नाचरहे अरु समयके अनुसार जहां पपीहा कूकरहा अरु मुनि कन्याओं से सींचनेसे वढेभये वृक्ष जिसमें ५ सो कि शाखू ताड़ तमाल इनवृक्षोंसे संयुक्त अरुआम नागकेसर इनसे सहित अरु शिरस अर्जुन वृक्ष अमलतास आक सुपारी नागकेसर इनसे संयुक्त अरु पकरिया गूलर कचनार जांठ अरंड इनसे शोभित । अरु जुही चमेली चंपा मोगरा पीपल इनसे जो विशेष भूषित वन है । ७ अरु जो खिले फूलों सहित ऋषिसमूहसे सेवा किया । अरु जो वेदशास्त्रके शब्दसे युक्त ऐसे भृगु आश्रममेंभगीरथने प्रवेशकिया ८ जो भृगुजी परब्रह्मको ध्यारहे अरु शिष्यों सहित । जो तेजसे सूर्यसमान ऐसे भृगुजीकोदेखे ९ तबतो तिन मुनिजीको तिसराजाने दण्डवत प्रणाम

किया। तबगुरु भृगुजीने भी तिसका यथायोग्य आतिथ्य भाव सतकारकिया १० फिर सत्कार कियागया राजा भगीरथ अंजलि बांधके तिन मुनिजी को ये कहताभया राजाबोला कि ११ हे भगवन् सब धर्मज्ञाता सबशास्त्रों में कुशल! जिससे संसारके तिरानेवाले विष्णुजी प्रसन्न होवें १२ अरु जिसकर्मसे तिन विष्णु जी का आराधन होवेसोही हेब्रह्मन् आपमुझपर अनुग्रहकरके कहिये१३ भृगुजी बोले हे राजन् तुम्हारा वांछित हमने जाना तुम पुण्यात्माओं में श्रेष्ठहो नहीं तो निजकुल का ऐसाउद्धा रकौन करसके। जोराजा गंगाजी की सेवासे निज वृद्धों का उद्धार करनाचाहता सो विष्णुरूप जानना १४ जो विष्णुजी जिसकर्म से मनुष्यों को वांछित फल देतेहैं। तिसोकर्म को हेराजेन्द्र हम कहतेहैं तुम सावधान भये श्रवणकरो १५ सो हेराजन् तुम अहिंसा अरु सत्यमेंपरा-यणहोओ। तथानित्यही सबकेहितमें रतहो अरुमिथ्या कभीभीमत बोलो ऐसानियम करो १६ हे राजन् दुर्ज-नोंका संपर्कतज अरु सत्संग आचरणकरनित्यपुण्यकर अरु रात्रिदिन विष्णुजीको भजतारहु १७ अरु महावि-ष्णुजीकी पूजाकर तिससे उत्तम सुख पावेगा। सो कि द्वादश अक्षरोंका महामंत्र जप तेरा कल्याण होवेगा १८ राजाबोला कि हे मुनिजी सत्यकैसाहै अरु अहिंसाभी किसे कहतेहैं। अरु हेभृगुजी सबमें हितपन कैसाकहा है १९ अनृत किसेकहा अरु दुर्जन कौन हैं। तथा साधु जन कैसेकहे अरु पुण्य कैसाहै २० वे विष्णुजीकैसेध्यान अरु तिनकी पूजा कैसी है। (गांनि) ये किसका नाम

कहा अरुअष्टाक्षर मंत्रकौनसाहै २१हेसवशास्त्र अर्थमेंकुशल तत्त्व अर्थज्ञाता मुनिजी। इससेरे संशयको हटाओ अरु पुत्रकौनाई मुझेसमझ के मुझको सबवृत्तांत कहने योग्यहो २२ भृगुजीबोले हे महामते अच्छा २ तुम्हारी बुद्धि उत्तमहै। अवजो तुमने पूछा सो सबही हम तुमसे कहतेहैं २३ हेराजन् यथार्थ कहनेको विद्वान्जन सत्य कहतेहैं। सोधर्म परायण जानो करके धर्म अनुसारवचन कहना २४ तथादेश कालआदि जाननेसे अरुनिज धर्म के अविरोधसे अर्थात जिससे धर्मविरोध नहींहोवे ऐसा जो वचन कहाजाता सो सत्य कहाताहै २५ सबहीप्राणियोंको जिससे कुछभी कलेशनहो। सो हे राजन सब अर्थदेनेवाली श्रेष्ठ(अहिंसा) जानना २६ हे राजन धर्म के कामसें सहायपन अरु कुकाज से विमुखता उसेविद्वान सबसें हितपन कहते हैं २७ अरु हे राजन जो धर्म अधर्म को न जान करके इच्छा के अनुसार कहा जावे सो सब कल्याणों का विरोधी अनृत-झूठ जानना २८ हे राजन् जो लोक विद्वेषी अरु मर्व तथा कुमार्ग में मन लगाते हैं वे सब धर्मोंसे बाहर किये (दुर्जन)कहे हैं २९ जो धर्म अधर्म के जानसे वेदमार्गके अनुसार रहते अरु सब लोकों के हितमें परायण हैं वे (साधु जन) कहे ३० जो विष्णुजीका प्रीति कारी अरु सज्जनों में रंजा अर्थात जिसेसज्जन सराहते अरु अपनेको जो प्रीति उत्पन्न करे जो विद्वानों मे (पुण्य) कहा गया है ३१ अरु ये सब जगत विष्णुरूपहै अरु विष्णुजीही सबके कारणहैं अरु में भी विष्णु रूपहीहूं ऐसे जो जाने तिसे

स्मरण कहतेहैं ३२ अरु विष्णु जीही सर्वदेव मयहैं ऐसे समझके पूजन अरु मनसे जो प्रीति करनी सो (भक्ति) कहातीहै ३३ विष्णु जी सर्व प्राणमय परिपूर्ण अरु सनातनहैं ऐसी अभेद बुद्धिसे जो भक्ति सो (पूजा) कही जातीहै ३४ हेराजन् शत्रु मित्रमें समानपन अरु वशीपना तथा दैवेच्छासे मिले संतुष्टता सो [शांति] नामकही ३५ हेराजन् ये सब तप सिद्धि देने वाले धर्म हैं जो सब पाप समूहोंके शीघ्र नाशकरने वालेहैं ३६ अब हे राजन् हम आठ अक्षरके महामंत्रको कहते हैं जो सब पापनाशक है अरु जो मंत्र विष्णुजीका प्रीतिकारक अरु सबसिद्धि दायकहै ३७ ऐसा जो धर्मादि पुरुषार्थोंका मुख्यकारण मंत्रहै सो कहते हैं सो [नमोनारायणाय] इस मंत्रको प्रणाव-ॐ) सहित जपै ३८ अरु विष्णु जीका ध्यान करे जो विष्णुजी शंख चक्रधारी शांत नारायण आरोग्यरूप लक्ष्मी जिनके वामें अंगमें अरु अभय कारी प्रभु ३९ मुकुट कुंडलधरें अनेक भूषणोंसे भूषित प्रकाशमान कौस्तुभ मणियुक्त माला डाले श्रीवत्स चिन्हसे अंकित हृदय जिनका ४० पीताम्बरधारी देव जो सुर असुरोंसे नमस्कार कियेऐसे आदि अन्तरहित विष्णुजीकोध्यावे जोसवकाम फलदाता ४१ ऐसे महा विष्णुजीका अपने आत्मा में बिचार करे सो सब कल्याण पावे हेराजन् ऐसा जानों ४२ वाच्य ते नारायण जी कहे अरु मंत्र तिनका वाचकहै ऐसे तिन महात्मा विष्णुजी का वाच्य वाचक संबंध नित्य जानना ४३ जैसा ये अनादिरूपा घोरसंसार है तैसेही इस संसारसे छुड़ानेवाले अनादि विष्णु जी हैं

४४ सोही विष्णुजी जगतपालक अरु सब कर्म फलदाता हैं जो सबके हित प्रति नारायण परसे पर हैं ४५ अरु वेही अंतर्यामी ज्ञानरूप परिपूर्ण सनातन हैं ऐसे तुमसे कहा जो तुमने पूछाथा ४६ तुम्हारा कल्याण होवे तप की सिद्धिपावो अब सुखसे जावो श्रीसूतजी बोले ऐसे परमऋषि भृगुजीसे कहा राजा भगीरथ ४७ परमप्रसन्न भया तपकरनेको वनमेंगया । सोहिमालयपर्वतमें जाके सुन्दरगंगाजीके तीरपर ४८ (नादेश्वर) महाक्षेत्रविषे महा-कठिनतप करनेलगा । सो राजात्रिकाल स्नानकरता अरु कंदमूल फलखाता । अतिथियोंका सत्कार करता अरु नित्यही होममें परायण ४९ अरु कंद मूलफल जलों में नित्यही विष्णुपूजा करता ऐसे बहुतकालतक अतिधैर्य वान राजा ५० नारायणजी का ध्यानकरतासूखे पत्ते खाता भया । अरु प्राणायामों के परायण हुआ परम धर्मात्मा राजा ५१ चारप्रकारके तपकरनेलगा ऐसेपरम देवनारायण जी को ध्याता साठ सहस्र वर्ष तक श्वास रोकिरहा ५२ अरु तिसराजाकी नासिकासे भयंकर धूआं निकलता ऐसे तिसको देख के देवतों को अत्यंत भय होताभया ५३ तबतो तिनअग्निरूपके भयसेडरे देवता महाविष्णुजीपैगये । जहां विष्णुजी विराजतेहैं ५४ सोईदेवता क्षीरसमुद्रके उत्तर तीरपर जाय कांकोतहां देव पशु पापमोचक विष्णुजी की स्तुति करते भये देवता बोले । हम जगत्के मुख्यनाथ विष्णुजी की स्तुति करतेहैं । जो स्मरण करतेजनोंकी सबपीडा हरतेजो शुद्ध भाव अरु पूर्णभाव हैं अरु ज्ञानीजन जिन को ज्ञान

गम्यकहतेहैं ५५ जोपरमात्मा सदा स्वेच्छा शरीरधारी मुनिजनोंसे ध्यावेजाते अरु देवोंका कार्यकरतेहैं। जोस मस्तसंसारके अधिनाथ तिनपुरुषोत्तम विष्णुजीको नम स्कारहो ५६ जिनविष्णु जीके नामउच्चारणसे सबपाप नष्ट होतेहैं। तिनआदिईश नारायणजी को निजपुरुषा र्थसिद्धि केलिये हम नमस्कार करतेहैं ५७ जिनकेतेज से सूर्यआदिक प्रकाशते हैं। अरु नदनदी समुद्र जिन्हें उलंघनहीं सकते अर्थात् जिनहीकी सत्तासेवर्त्तरहे हैं ऐसे कालरूपी अरु देवोंके ईशतथा पुरुषार्थरूप विष्णुजी को हमप्रणाम करतेहैं ५८ जोवर वर्णोंकर सब लोकमहं- र्त्ती अरुसुर असुरोंसे पूजित चरणकमल विष्णुजी। अरु ये सभक्तों की वांछित सिद्धिके कारण तथा केवलना- रायण ऐसेदेव विष्णुजीको हमप्रणाम करतेहैं ५९ जो आदिमध्य अंतरहित अजन्मा परमेशजीहैं। अरु जो अ- ज्ञानियों से नहींजाने जावें। अरु जो सच्चिदानन्द स्वरूप ऐसे जो रूपरहित विष्णुजी हैं तिनदेवजी को प्रणाम करतेहैं ६० जो नारायण अनंतईश पीताम्बर ब्रह्माजी से सेवनीय विष्णुजीहैं। अरु यज्ञप्रिय यज्ञकारी निर्म लहैं ऐसे तिनसर्वोत्तम इष्टदाता विष्णुजी को प्रणाम करताहूं ६१ सनत्जीबोले कि जबइन्द्र आदि देवताओं से ऐसेस्तुति कियेगये तब महाविष्णु जी। तिन राज- र्षिभगीरथ का चरित्र सब देवोंको सुनाते भये ६२ अरु देवोंकी वीरजवंशके अहातन्हैं (सनतउवाच) ऐसाकहकर हरी भगीरथ तपकर रहाथा तिसस्थान में पहुंचे ६३ जो देवों शंखचक्रधारी अरु आनन्दस्वरूप। तथापुन

अगारके गुरु ऐसेविष्णुजी तिसके प्रत्यक्षभये ६४ तब तो राजाने विष्णुजी को देखे जो निजकांतिसे दिशोंको प्रकाशितकररहे। जोअलसी के पुष्प समान कांतिमान् अर्थात् श्यामवर्ण अरु झलकते कुण्डलों से सजे ६५ खिलेकमल समान नेत्रोंवाले चमकते मुकुटसेप्रकाशमान श्रीवत्स चिह्न अरु कौस्तुभमणि धारणकिये पीत-पट ओढ़ें हैं ६६ दीर्घ भुजोंवाले उदार देवोंसे पूजितचरणा-रविंद ऐसे विष्णुजीको देखके राजा भूमिमें पड़दंडवत् प्र-णाम करता भया ६७ जो अत्यंत हर्षसे भरा अरु रोम खड़े गद्गद वचन भया अरु [हे कृष्ण २] ऐसे बेर बेर कहता भया ६८ तबतो तिसपै प्रसन्न भये अंतर्यामी वि-ष्णुजी कृपा भरे भगीरथ से यह कहने लगे ६९ विष्णु जी बोले हेबड़भागी भगीरथ तुम्हारा कल्याण होगा मां कि तुम्हारे बड़े हमारे लोक में पहुँचेंगे ७० परहमारीही दूसरी मूर्त्ति जो शिवजी हैं तुम तिनका आराधन करो वे तुम्हारे सब वांछित सिद्ध करेंगे संशय नहीं ७१ हमभी तिन्हींको जाननेके लिये हेराजन सदा ध्याते हैं तिससे तुमभी शंभुजी का आराधन करो जो सुखदायक हैं ७२ अरु आदि अंतरहित देवजी सबकाम दाताहैं ऐसे शिव जी तुमसे पूजे सब सिद्धि करेंगे ७३ ऐसे कह जगतपति विष्णुजी तो अंतर्द्धान भये फिर राजाभी उठा अरु सोचने लगाकि ये स्वप्नसा क्या भया येसत्य है वा मिथ्या ऐसे विस्मित भया ७४ अरु चिंतासे व्याकुल हुआ यहकहने लगा किमैं क्याकरूं उतने मेंही आकाशवाणी भई कि हे राजन [यहक्या] ऐसी चिंताको तुमतजकर किंतुशिव

जीका आराधन कर ७५ फिरतौ प्रसन्न भया उठकरलो-
क कर्ता सर्व देवमय शिवजीकी स्तुति करता भया ७६
कि मैं जगदीश्वर शिवजीको प्रणाम करताहूँ जोभक्तोंकी
पीड़ा नष्टकरते जिनका प्रमाण नहीं किया जावै ऐसे
देव शिवजी ७७ जो प्रणाव रूप जगन्मय अजन्मा अरु
रचना पालना संहार करते ऊर्ध्वरेता अरु तीव्र नयन हैं
अरुजो विश्वरूप ऐसे शिवजीको प्रणाम करताहूं ७८ जो
आदि मध्य अंतरहित अनंत अविनाशीहैं जिनकोयोगी
जन [पुष्टिवर्धन] बलबधाने वालेकहते तिन शिवजीको
प्रणामकरताहूं ७९ नीलकंठ शिवजीकोनमस्कार अरुवंच-
नापरिवंचनाकरतेअर्थात्निजमायासेसबकोअत्यंतमोहि-
तकरतेआपकोनमस्कारहै ८० लोकाधिनाथ आपकोनम-
स्कार पशुपति आपको नमस्कार चैतन्यरूप आप को
नमस्कारअरुदुष्टोंकेपति अर्थात्शिक्षकआपकोनमस्कार
है ८१ पापनाशक अरु मीढुष्टम आपको नमस्कार अरु
देवजीकोनमस्कार अरु महारुद्रप्रचेताआपको नमस्कार
है ८२ पिनाकधनुषधारी आपको नमस्कार शूलहस्त आ-
पकोनमस्कार चैतन्यरूप अरु शूलपुष्टोंकेपति आपको
नमस्कार है ८३ सर्वाभरण भूषित अरु घंटा हस्त आपको
नमस्कारपंचाननदेव अरु क्षेत्रोंकेपति आपको नमस्कार
कपाल अरु मुदगरहस्तआपकोनमस्कारअरु संपर्णपापों
को हरते आपको नमस्कारहै ८४ गणोंके अधिदेवता नि-
र्गुणाअरु परमात्मा आपको नमस्कार गणाधिनाथ अरु
गणोंके पति आपको नमस्कार है ८५ हिरण्यगर्भ अरु
हिरण्यपति आपकोनमस्कार हिरण्यरेता अरुविश्वरूप

आपको नमस्कारहै ८६ ध्यानस्वरूप अरु ध्यानके साक्षि- रूप आपको नमस्कार ध्यानस्थित अरु अकुिंठ्य आप कोनमस्कारहै ८७ जिनशिवजीसे यहचर अचरसंसार अरु प्रकृति पुरुष ये मेघसे जैसे वर्षाहोती तैसे उत्पन्नभये ८८ ऐसे स्वयं प्रकाश महात्मा सनातन परमज्योति रूपको तत्ववेत्ता जनकहते तिन शिवजीको नमस्कारहै ८९ अरु जिन्हींको जगत्के चक्षु सविता कहते तिन शिवजी को नमस्कार है उमाकांत विरूपनेत्र नीलकंठ सदाशिवजीहै मृत्युंजय महाभाग जोकल्याणहै सो सब ओरसे उत्पन्न करो अर्थात सुखदेओ ९० । ९१ जटा जूटधारी आपको नमस्कार अरु नीलकंठ आपको नमस्कार अरु अग्निने- त्रा आपको नमस्कार है शिवजी आप सुमन अर्थात हम पै प्रसन्न होओ ९२ जिन शिवजीसे समुद्र नदी पर्वतअरु यक्ष गंधर्व अप्सरा सिद्धसमूह भयेहैं अरु जिनकी सत्ता से प्राणी चेष्टा करते अर्थात निजनिज काजकरतेहैं वोशि- वजी हम पै प्रसन्न होवें ९३ अरु जिन निर्मल शिवजी को योगी जन ध्याते हैं अरु जो सबके अंतर्यामी रूप रहितेहैं ऐसे स्वतंत्र केवल गुणानिधान शिवजीको बार- वार प्रणाम करताहूं ९४ जो इस सगर वंशी भगीरथ से किये शिवजी के स्तोत्र को त्रिकाल पढ़े सो सब काम फल पावैगा ९५ फिर ऐसे स्तुति किये लोक कल्याण कारी शंकरजी तपसे संतप्त भये भगीरथके आगे प्रकट भये ९६ अरु भगीरथ तिन्हैं पंचानन दशभुज अरु चंद्र- शेखर त्रिनयन नाग यज्ञोपवीत वाले ९७ विशाल वक्ष- स्थल वाले देव महा पराक्रमी जो गज चर्म ओढे अरु

सुर असुरोंसे पूजित चरण कमल ९८ ऐसे शिवजी को देखतेही राजा भगीरथ ने भूमिमें पड़के दण्डवत् प्रणाम किया अरु हे महादेव हे महादेव ऐसे कहता भया ९९ तबतो चंद्रशेखर शंकर जी तिस राजा की ऐसी भक्ति जानकर बोले कि हे राजन् हम प्रसन्नहैं वरमांगो २०० हे निष्पाप तुमसे भक्ति औस्तोत्र करके हम प्रसन्नभये इससे तू यहाँ अतुल भोग भोगके अंतमें मोक्ष पावैगा २०१ देवेश शिवजीसे ऐसेकहा प्रसन्न मनभया भगीरथ हाथजोड़कर जगदीश्वर शिवजीसे बोला २०२ कि हे महेश्वर जी जो आप मुझको वरदिया चाहतेहैं तौगंगाजी देकर मेरे बड़ोंका उद्धारकीजिये १०३ तबशिवजी बोले किहे राजन् हमने गंगादई अरु तिनको परमगति अरु मोक्षभी दई ऐसे कह शिवजी अंतर्द्धान भये १०४ अरु शिवजी के मुकुटसे निकसी लोक पावनी गंगा जी सब जगतको पवित्र करती भगीरथ के पीछे २ चली १०५ तभीसे वो निर्मल सबके मल हरनेवाली गंगाजी सबलोकोंमें [भागीरथी] ऐसे विख्यात भई १०६ अरु हेमुनीश्वरो जहाँ पहिले सगरके पुत्र भस्म भयेथे तिसी स्थान को येह गंगाजीने जाय पवित्र किया २०७ सो जिस २ की हड्डी को गंगाजी ने पवित्र करी वोही नरक में पड़ा तिसकी क्षण में निष्पाप भया १०८ पहिले जिनको यमने ताड़ना दीथीवेही फिर गंगाजल से पवित्र भये तिन की कारको पूजनये १०९ फिरतो यमराज तिनको निष्पाप भये जानकर विधिसे प्रणाम करके यह कहने लगा ११० यम बोला कि तुम ने निज कर्मोंसे इससमयतक

अत्यंत घोर नरक भोगे अब तुम्हारे वंशमें भगीरथ भया सो धन्यहै १११ तिसने तुमको घोर नरक से तिराये हैं अब तुम सब काम सहित इन विमानों में बैठकर विष्णु-भुवन पधारो जो सबसे उत्तम लोक तहां ११२ यह सेयम राजसे कहे निष्पापमहात्माभये वे सौकरोड़ कुलोंसहित विष्णु भुवनको पधारे ११३ हेऋषियो ऐसे प्रभाववाली विष्णुपद से भई गंगा जी सब लोकों में विख्यात महापाप नष्टकरने वालीहैं ११४ जोइस सबपापनाशक पवित्र आख्यानको पढ़ै या सुनै सो गंगा स्नान फलको पावै ११५ जो इस पवित्र आख्यान को देवमंदिर मेंकहैसो प्रलय पर्य्यंत विष्णु-निकट निवास करताहै ११६

इतिश्री बृहन्नारदीय पुराण भाषा पंडित देवीसहाय कृत गंगामहात्म वर्णनन्नामपंचदशोऽध्यायः १५ ॥

सोलहवां अध्याय ॥

व्रतों का वर्णन किया है ।

श्री सूतजी बोले हे मुनिवरो अब तुम से व्रतोंका वर्णन करतेहैं जिनकरके सहजही विष्णुजी प्रसन्न होतेहैं १ अरु सर्वत्र जिनसे सुख होता अरु वृद्धि भी होती है जिस किसी भी उपाय से जो हरि पूजामें परायण हैं वे परमधामको पधारतेहैं से महर्षि जन कहते हैं सोकि मार्गशिर के शुक्लपक्षकी द्वादशी को व्रत करके श्रद्धासहित जन विष्णुजी की पूजा करै २ । ३ सो पहिले दन्तधावन कर नहाय श्वेत वस्त्र पहिर कर गंध अक्षत पुष्पादिकों से विष्णु जीकी पूजाकरे ४ अरु [के-

शवाय नमः] इस मंत्र से विष्णु जी को पूजै अरु इसही मंत्रसे अग्निमें तिलोंका होमकरै ५ अरु शालिग्रामशिलाके निकट रात्रिको जागरणकरे । अरु सवासेर दुग्ध से विष्णुजीको स्नानकरावे ६ अरुगीत वाजेभक्ष्यभोज्य नैवेद्योंसे महालक्ष्मी सहित नारायणजी को त्रिकालपूजै ७ फिर सवेरे उठ अरु नित्यका कर्म करके पहिले की नाईं सावधान पवित्रभया देवजीको पूजै ८ अरु घृत मिलाई खीर जिसमें गिरीमेवा डालीहो । सो इसमंत्र से भक्ति पूर्वक दक्षिणा सहित दानकरै ९ मंत्रहै । केशी-राक्षस के हंता केशव देवजी जो सबसम्पत्ति दायकहैं । सो इसश्रेष्ठ अन्नदानसे मेरा वांछित सिद्धकरैं १० फिर श्रद्धा सहितभक्ति से ब्राह्मणों को भोजन करावे । फिर नारायणमें परायण मौनभया आपभी भोजन करे ११ इसप्रकार से भक्तिकरके जो उत्तम विष्णुजी का पूजन करे । सो विष्णुजीके प्रिय यज्ञके आठगुने फलकोपाता है १२ जो पौषशुक्लकी द्वादशीको व्रतीरहा)नमोनारायणाय) इस मंत्रसे विष्णुजीकी पूजाकरे १३ अरु सवासेर दुग्धसे नारायण जीको स्नान कराके त्रिकालपूजन करता रात्रिको जागरणकरे १४ सो कि धूप दीप नैवेद्य अरु सुन्दर पुष्पों से । अरु नृत्यगीत वाजे अरु स्तोत्रोंसे विष्णुजीको पूजै १५ अरु घृतदक्षिणा सहित खिचड़ी दानकरे मंत्रहै आत्मा सबलोकोंके ईश सनातन नारायणजी १६ इस खिचड़ी के दानसे [प्रसन्नहोवें] इसमंत्र से श्रद्धायुक्त भया ब्राह्मणको देवे फिर ब्राह्मण जिमावै फिर आपभी भाइयों सहित भोजन करे १७ । १८ ऐसे

जो भक्तिकरके नारायणजी को पूजताहै । अग्नि होम यज्ञके आठगुने फलको पाताहै १६ अरु जो माघशुदी द्वादशी को पहिले की नाईं व्रतीरहा [नमोमाधवाय] इसमंत्रसे हवनकरके २० अरु सवासेर दुग्धसे विष्णुजी को स्नान कराकर । सावधान भया गंध अक्षतादिक से पूजाकरै २१ रात्रिको जागरणकरे फिर सवेरे नित्यकर्म करके फिरमाधवजी की पूजाकरे २२ सवासेर तिलब्राह्मणको इसमंत्रसे देवे । अरु सबपापों की निवृत्तिकेलि येदक्षिणा वस्त्रदेवे २३ मंत्र सबप्राणियों के आत्मामाधवजी सबकाम फलदाताहैं सो तिलोंके महान दान से सबकाम सिद्धकरें २४ इसमंत्र करके भक्ति से ब्राह्मण कोदेवे फिर प्रभुमाधव जीका स्मरण करता ब्राह्मणोंको भोजन करावे २५ हेद्विजो जोऐसी भक्तिसे तिलदानकरै । सो सौवाजपेय यज्ञोंका संपूर्ण फल पाता है २६ अरु फाल्गुण शुदीद्वादशी को जो व्रतीरहा [गोविंदायनमः] इसमंत्रसे विष्णुजी को पूजै २७ फिर घृतमिलित तिलों से एकसौ आठ आहुति देकर । सवासेर दुग्धसे विष्णुजीको स्नान करावे २८ ऐसे त्रिकाल पूजन करता रात्रि को जागरणकरै । फिरनित्य के कर्म करके विष्णुजीकी पूजाकरै २९ अरु वस्त्र दक्षिणा सहित सवासेर चावल ब्राह्मण को इसमंत्रसे दानकरै ३० कि हे सबके प्रियईश गोपियों के वल्लभ विष्णुजी । इस अन्नदान से आप मुझसे प्रसन्नहोओ ३१ ऐसे जो व्रतकरै सो सब पापों से छूटा (सोमेध) के संपूर्ण फलको पाताहै ३२ अरु जो चैत्र शुदीद्वादशीको व्रतीजन (विष्णवेनमः) इसमंत्रसे पूजै ३३

अरु सवासेर दुग्ध से विष्णुजी को स्नान करावे। फिर ऐसेही सवासेर घृत से स्नान करावे ३४ अरु रात्रि को जागरणकरकेपहिलेकी नाईंपूजै फिर नित्यके कर्मकरके पूजाकरै ३५ अरु सहतमिले तिलोंको एकसौ आठआहुतिदेवे अरु दक्षिणा सहित पांचसेर चावल विप्रकोदान करे ३६ मंत्र [प्राणरूपी महाविष्णुजी प्राणदाता] प्राण वल्लभहैं। सोजनार्दनजी तंडुलदानसे मुझपर प्रसन्न होवें ३७ ऐसी भक्तिसे जोजन करै सो सब पापोंसे छूटा। अ ग्निष्टोम-यज्ञ के आठवें फलको पाताहै ३८ अरु जो वैशाखशुदी द्वादशीको व्रतीजन विष्णुजीको पूजै। अरु बीनअर्थात् बीससेरदुग्धसेविष्णुजीका अन्हवावे३९अरु निश्चिंत मनसे तहां रात्रिको जागरणकरै अरु [हे मधुहंता विष्णुजी आपको नमस्कार] इसमंत्रसे घृतमिलितआहुतिदेवे ४० और बीससेर दुग्धसे विष्णुजीको स्नान करावे। अरु आत्मवेत्ता द्विजको सवासेर दक्षिणासहित घृतदेवे ४१ फिर अपनी भक्तिसे ब्राह्मणोंको भोजनकरावे घृतदेने का मंत्र हे सबलोकोंके पवित्र कर्ता विष्णु जी आपको नमस्कार। हेदेवेश इसघृतके दानसे मेरेसब मनोरथ संपूर्णकीजिये ४२ हे द्विजो ऐसे ब्राह्मणों का घृतदे अरु विष्णुजीको पूजाकरके। सब पापोंसे छूटो जन अश्वमेधके फलको पावे ४३ जो ज्येष्ठशुदी द्वादशी को व्रतीजन। पांचसेर दुग्धसे विष्णुजीको स्नान करावे ४४ अरु त्रिविक्रमायनमः इसमंत्रसे पूजाकरे। अरु खीरसे एकसौ आठ आहुतिदेवे ४५ फिर जागरणकरके पूजाकरै अरु ब्राह्मणोंको दक्षिणासहितबीसपूवेदेकर ४६

अरु हे देवों के देवजगन्नाथ जी हे परमेश्वर प्रसन्न होओ। इस भेंटकोलेके आप सब वांछितदेओ ४७ ऐसे फिर ब्राह्मणों को भोजनकरावे अरु मौनभया आपभी भोजनकरे। तोसब पापोंसे छूटा वा आठ नरमेध-यज्ञोंके फलको पाताहै ४८ अरु आषाढ़ शुदी द्वादशीको व्रती रहाजो जितेंद्रिय। सवासेर दुग्धसे (वामनजीको स्नान करावे] अरु वामनाय नम] इस मंत्रसे दूर्वाहवन करे। अरु सम्यक प्रकारजागे फिर वामनजीको पूजै ४९।५० अरु नारियल दक्षिणा सहित दधि अन्न। आत्मज्ञानी वामनजी को पूजनेवाले ब्राह्मण के अर्थदेवे ५१ अरु वामनजी बुद्धिदाता वामनजी द्रव्यमें स्थितहैं। अरु लेने वालेभी वामनजीही है ऐसेतिन वामनजीको नमस्कार ५२ इससे दधिअन्न दानकरे फिरशक्तिसे ब्राह्मणजिमा-वे तो हे द्विजोत्तम सौगोदानों के फलको पाताहै५३ जो श्रावणशुदी द्वादशीकोव्रतीजन सहनमिले सवासेरदुग्धसे विष्णुजीको स्नान करावे ५४ अरु श्रीधरायनमः इसमं-त्रसे गंधआदि सहित पूजाकरे। अरु यथाशक्ति घृतसे हवनकरे। तथा जागरण करे फिरपूजा करे। अरु ब्राह्म णको पांचसेर दुग्धदेवे ५५।५६ तथा वस्त्र दक्षिणाअरु सुवर्णके कुण्डल दानकरे। अरु हेद्विजोसब कामसिद्धि कोलिये यह मंत्रपढ़े ५७ कि हे क्षीरसमुद्र शायी पशुपा शमोचक देव विष्णु जी। क्षीरदानसे प्रसन्नभये आपहम को सुखदेओ ५८ ऐसे दानकर श्रद्धासे ब्राह्मण जिमा वे। तो सहस्र अश्वमेधोंके संपूर्ण फलको पाताहै ५९ जो भाद्रपद शुदी द्वादशीको व्रतीजन। सौनभर दुग्धसे जग-

तके गुरुविष्णु जी को स्नानकरावे ६० अरु हे हृषीकेश
जी [आपको नमस्कार] इसमंत्र से पूजाकरके । सहततिम
लाये घृतसे यथाशक्ति हवनकरे ६१ अरु जागरणआ-
दिकरके आत्मवेता ब्राह्मण को । अढाई सेर गेहूं अरु
दक्षिणा श्रद्धासेदेवे ६२ अरु हे हृषीकेशजी सबलोकों
के मुख्यकारण आपको नमस्कार गेहुंओंके दानसेमुझ
को सबसुख देओ ६३ फिर श्रद्धासे ब्राह्मण जिमावे अरु
आपभी भोजन करे सोसब पापोंसे छूटा ब्रह्मसेध-यज्ञ के
फलको पावे ६४ अरु जो आश्विन शुदी द्वादशी को
व्रतीजन [सवासेर दुग्धसे पद्मनाभि] जीको स्नान क-
रावे [अरु पद्मनाभायनमः] इसमंत्रसे यथाशक्ति होम-
करे ६५ हे सबलोकोंके ईश्वरहृषी केशजी आपकोनम-
स्कार मेरेको आपसदा सुखदेओ मैं आपहीके शरणहूं
६६ ऐसे फिर जागरणके अन्तमें फिरपूजाकरे । अरुब्रा
ह्मणको दक्षिणा सहित सहत अरु कांजीदेवे ६७ हे लो
कोंके पितामह अरुकमल नाभि आपकोनमस्कारमधु-
दानसे प्रसन्नभये आप मुझपै प्रसन्न होइये ६८ ऐसेभ-
क्तिसे जो पद्मनाभजीका पूजन करता सो सहस्रब्रह्मसे-
धोंके संपूर्ण फलको पाताहै ६९ अरु जो कार्तिक शुदी
द्वादशी को व्रत रहा जितेन्द्रिय जन पांच २ सेर दुग्ध
दही अरु घृतसे ७० [दामोदरायनमः] इसमंत्रसे भक्तिकर-
केस्नान करावे अरु सहत मिलित तिलोंसे एकसौ आठ
आहुति देकर ७१ त्रिकाल पूजनमें परायण भया रात्री
को जागरणकरे फिर सवेरे कमलके सुन्दर पुष्पोंसे पूजा
करे ७२ फिर घृत तिलोंसे एकसौ आठ आहुति दे अरु

मंत्र हे लक्ष्मीकेपति आपको नमस्कारहै हे देवेश आप लक्ष्मीसहित इसअर्घको ग्रहणाकीजिये१०० जिनविष्णु जीकेस्मरण अरु नामोच्चारणसे तपयज्ञ आदिकर्मोंमें जो न्यून भी हो अर्थात् करनेसे रहगयाहो सोभी संपूर्णहोवै तिन आच्युतजीको हमभीम्र श्रद्धासे वन्दनाकरतेहैं १०१ ऐसे विष्णु जीकी प्रार्थनाकरके व्रती वस्त्रसहित विष्णु मूर्त्ति आचार्य्य अर्थात् कर्म करानेवाले को देदेवे १०२ फिर ब्राह्मणों को भोजन करावे अरु तिन्हें यथाशक्ति दक्षिणादेवे १०३ फिर मौनभया भाइयों सहित आप भी भोजनकरे । फिरभी ब्राह्मणोंसे विष्णु जीकी कथा सुनै १०४ हे विप्रो ऐसे भक्तिकरके जो इसपावन द्वादशियोंके व्रतकरता । सो सब कामफल पाकर उत्तमभोगभोगताहै १०५ अरु इकईस कुल सहित सब पापों से छूटा। ब्रह्म भुवनको पधारताहै जहां गये शोचनहींकरता १०६ जो इस द्वादशी व्रतोंकी कथाका श्रवणकरै सो वाजपेय यज्ञके फलको प्राप्त होताहै १०७ ॥

इतिश्री बृहन्नारदीय पुराण भाषा पण्डित देवीसहाय कृत द्वादशीव्रत निरूपण वर्णनन्नाम षोडशोऽध्यायः १६

सत्रहवां अध्याय ॥

पूर्णिमाके व्रतोंका निरूपण ॥

श्रीसनत्जी बोले हे ऋषीश्वरो अब हम और व्रतवर्णन करतेहैं तिनकेतुम सावधान भये श्रवणकरो । जो व्रत सब पापनाशी पवित्र अरु सब दुःख नाशकहैं १ अरु जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंको अरु स्त्री शूद्रोंको । धनसंपत्ति

बधाता अरुसबकामफलदायकहै जो२ दुःस्वप्ननाशक धन्य
अरु दुष्टग्रहों को हटानेवाला है। अरु जो उत्तमब्रत सब
लोकब्रतोंमें विख्यातहै३ तिसकी विधिहमसेसुनो। जिस
के करनेसे करोड़ों पापनष्ट होतेहैं सो मार्गशीर्षकेशुक्ल
पक्षकी पूर्णिमाको पवित्रजन यथा आचारसे पहिलेदन्त
धावन करके न्हाय शुक्ल वस्त्र पहिनकर शुद्धस्थान में
बैठा ४ पैर धोय आचमनकरके नारायणजीका स्मरण
करता नित्यका देव पूजन करके फिर संकल्प करै ५
फिर भक्तिभाव से देवनारायण जी का स्थापित करै
फिर आवाहन आसनआदिकों से ब्रती नमोनारायणाय
इसमंत्रकरके पूजाकरे ६ फिर गीत बाजेनृत्यअरु पुराण
पठन आदिकों से अरु नियमवान पवित्रभया स्तोत्रों से
विष्णुजी को पूजाकरे ७ फिर विष्णुजीके आगे गोल
बेदी बनावे जो छोटी अंगुलीरहित मुट्ठीके समान तिस
परगृह्यविधि अर्थात पंचभूमि संस्कारकर के अग्निस्था-
पनकरे ८ तहांपुरुषसूक्त सहस्रशीर्षा इसलेके श्रीश्चते
तक हवनकरै। चरुतिलोंसे वाघृतसेआहुतिदेवे९ फिर
मूलमंत्रसे एकसहस्रआठ वाएकसौआठ यथाशक्तिहवन
करे। प्रयत्न से जिस करके सबपाप दूरहोवें १० अरु
अज्ञात पापोंका प्रायश्चित्तभी तहांहींकरे। ऐसीविधि
से हवन समाप्त करके फिरशांति सूक्तोंका पाठकरे ११
फिरसुचित्तहोकर विष्णुजीको विधिसे पूजाकरे। फिर
प्रार्थना पूर्वक तदपूजन विष्णुके समर्पण करे १२ फिर
भाइयों सहित आपभी नक्तव्रत भोजन का ग्रहणकरे। अरु
देवजीकी प्रार्थना करै कि हे विष्णुजी मैंनेइस पूर्णिमा

को व्रतीरहकर फिर हे पुण्डरी काक्ष विष्णुजी आपकी आज्ञासे पिछलेदिन भोजन करूंगा ऐसे विष्णुजी की प्रार्थनाकरके चन्द्रमाको अर्घदेवे। सो भूमिमें दोनोंगोड़े लगाकर गंधपुष्प अक्षतोंसे सहित अर्घ इस मंत्रसेदेवे १३ १४ १५ हे क्षीर समुद्रसेभये अत्रिगोत्रमें उत्पन्न चन्द्रमा जी आपनिजपत्नी रोहिणी सहित मेरेदिये इस अर्घको ग्रहणकरो १६ ऐसे अर्घदेके प्रार्थना करे। सो अंजलि बांधके पूर्व में मुखकरके १७ चन्द्रमाको देखता कि हे स्वच्छ किरणोंवाले हे द्विजराज आपको नमस्कार है रोहिणीकेपति अरु लक्ष्मीकेबंधु आपको नमस्कारहोवे १८ १९ फिरपुराणश्रवणादिकोंसेजागरणकरे। जिते-न्द्रिय अरुवशी शुद्धपाखण्ड रहितभया २० फिर सवेरे उठकर यथा आचार से शुद्धिकरे। फिर यथा योग्य विष्णुजीकी पूजाकरे २१ फिरश्रद्धासेब्राह्मणोंकोभोजन करावे अरु भाई बन्धुसहित मौनभया आप भी भोजन करे २२ ऐसे पौषआदि महीनोंकी पूर्णिमाओंकोव्रती-रहा। मनुष्यभक्तिसहित पहिलेकीनाई विष्णुजीकीपूजा करतारहे २३ ऐसे वर्षदिन करके फिरकार्तिककी पूर्णिमा कोदिन। उद्यापनकरै तिसका विधान कहतेहैं २४ विष्णु जीका सुन्दरगोल मंडप बनावे। जो पुष्प मालाओंसेमण्डित अरु चंदन व ध्वजाओं से शोभित २५ बहुत से दीपकों सहित अरु घुंघुरोंकी झुंकारवाला। अरु जो दर्पण कलश चमरोंसे संयुक्त २६ अरु तिसके मध्य सर्वतोभद्र जोपंच रंगोंसेशोभित। अरु जलभराकलशतिसके मध्यमेंधरे २७ फिर तिसकोसफेदवस्त्रसेढके फिर सुवर्णचांदी वा

तामेंकीहीलक्ष्मीनारायणजीकी मूर्त्तिबनाकरतिसकलश
पर विराजमान करे तिन्हें पंचामृतसे स्नानकरा अरु गंध
पुष्प आदिसे २८।२९ अरु भक्ष्य भोज्य आदि नैवेद्योंसे
भक्ति करके तिनकी पूजाकरे। अरु श्रद्धासहितजागरण
करे ३० फिर सबेरे पूर्वक्रमसे विष्णुजीकी पूजाकरे।
फिर वस्त्रसहित प्रतिमा आचार्य द्विजको देवे ३१ फिर
यथा श्रद्धासे भक्तियुक्त ब्राह्मणोंको भोजन करावे। फिर
यथाशक्ति तिलोंका दानकरे ३२ अरु पूर्वक्रमसे अग्नि
में तिलचरुका हवनकरे। ऐसे क्रमसे नर इसलक्ष्मीना-
रायण व्रतकोकरे ३३ तो यहां पुत्रों सहित महाभोगभोग
कर। सब पापोंसे छूटा दशसहस्र कुलोंसहित ३४ विष्णु
भुवनको पधारता जो योगीजनोंको दुर्लभ। अरु जनोंको
मोक्ष ज्ञानदाता सो इस व्रतके प्रभावसे प्राप्तहोवे ३५॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषा पण्डितदेवीसहायकृतमेंपूर्णिमा

व्रतनिरूपणन्नामसप्तदशोऽध्यायः १७॥

अठारहवां अध्याय॥

ध्वजा रोपण व्रतका निरूपण है॥

श्री सूतजी बोले कि हेऋषियो अबहम ध्वजारोपण
नाम और व्रत कहतेहैं जोसबपापहारी पवित्र अरु विष्णु
प्रीतिकारक है १ अरु ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अरु स्त्री
शूद्रोंके सबदुःखोंका नाशक अरु संसारसे निवृत्ति करने
वालाहै २ हेऋषियो जो विष्णु मंदिरमें उत्तम ध्वजारोपै
सो ब्रह्मादिकों करके पूजाजाता है और कहनेसे क्याहै ३
हे ऋषियो जो सवर्णोंके सहस्र भार कुटुंबी द्विजकोदेवेतो

तिसकाफलसो ध्वजारोपणसे तुच्छही होताहै ध्वजारोपण तो उत्तम गंगा स्नान के समान है ४ अथवा तुलसी जीकी सेवा अरु शिवलिंगका पूजन ये ध्वजारोपणके समान हैं हे ऋषियो ये ध्वजारोपण कर्म आश्चर्य पूर्वक अरु सब पापहारकहै जितने कर्म बुद्धिमान् विष्णु भक्त को करने चाहिये ते सब कहते हैं हमसे सुनो ५ । ६ सोकि कार्त्तिक सुदी दशमीको सावधान भया जन यत्नसे पहले दंतधावन करके स्नान करै ७ फिर एकवार भोजी ब्रह्मचारी रहै अरु नारायण जी का जप स्मरण करतुये बस्त्र पहिरे शुद्धहो नारायणके आगे सोवै फिर प्रातःकाल उठै यथा विधिसे आचमन कर अरु नित्यके कर्म करके फिरविष्णु जीकी पूजाकरै ८।९ सोचार ब्राह्मणोंके साथ स्वस्ति बाचनकरके ध्वजा रोपण कर्ममें नांदीमुख श्राद्ध करै १० फिर वस्त्र ध्वजा थंभों को जल से पवित्र करै अरु सूर्य वा गरुड़ अथवा चंद्रमा को ध्वजा में स्थापन कर पूजै ११ अरु धाता विधाताको दोनों थंभोंमें हरिद्रा क्षत गंधादिक से विशेष करके पूजै १२ फिर गऊबरै इतने प्रमाणकी वेदीको लिपके अरु गृह्य सूत्रकी विधि से अग्निस्थापन कर अरु कमसेचाज्यभाग आदि आहुति देके पायस घृतसे मिलीहुई आठ आहुतिदेवै १३ । १४ पहिली तो पुरुष सूक्तसे फिर विष्णोर्नुकं इस मंत्रमे फिर वैनतेयायस्वाहा इससे ग्रास (उत्सवता) इस करके १५ फिर [सोमोधेनुं] अरु (उदत्यं) अरु इमंमे (सूर्याय स्वाहा (चंद्रमसे स्वाहा) इसे घृत आहुति देवै १६ ऐसेहि हो फिर तहां सूर्य संबंधी अरु गरुत्मांत सूक्तका पाठकरै

अरु पवित्र भया हरिके समीप जागरण करै १७ फिर सवेरे उठ नित्यकर्म समाप्त करके गंध पुष्प अक्षतों से पूर्ववत विष्णुजीकी पूजै १८ फिर मंगलबाजोंसे अरु सुंदर सूक्तपाठोंसे नृत्य अरु स्तोत्र पाठोंसे सहित तिस ध्वजा को १९ देवता के द्वारपर वा शिखर पर हर्ष युक्त भया दृढ़ स्थापन करे सुंदर खम्भे लगावे फिर गंधपुष्पअक्षत अरु सुन्दरधूपदीपोंसे २० अरु भक्ष्य भोज्यआदि सहित नैवेद्यों से भगवान्कोपूजे ऐसे देवमंदिरमेंउत्तम ध्वजा लगावै २१ अरु प्रदक्षिणा करके यहस्तोत्रपढ़ै श्रीसूतजी कहतेहैं हे पुंडरीकाक्ष हेविश्वभावनआपको नमस्कार २२ हे हृषीकेश हे पूर्वजनमा महापुरुषविष्णुजी आपकोमैं प्रणाम करताहूं २३ जिन से येसंपूर्ण प्रपंचभया अरु जिन में विराजमानहै अरु जिनहीं में लीनहोता है तिनमाधव जी को मैं प्राप्तहूं २४ जिनके परमभाव को ब्रह्मादिक देवता भी नहीं जानते अरु योगी जनको प्रशंसा करते हैं तिन ज्ञानरूपी विष्णु जीको मैं वंदना करताहूं २५ अरु जिन विष्णुजीका आकाशतो नाभिअरु आकाशही जिनका मस्तकहै । अरु पृथ्वी जिनके पैर हैं तिन विष्णु जीकी वंदना करताहूं २६ अरु दशोंदिशा जिनके कान अरु सूर्य चन्द्रमा जिनके नेत्रहैं अरु यजुः साम अथर्वण ये जिनकी वाणीहै तिन ब्रह्ममूर्त्ति विष्णु जीकी वंदना करताहूं २७ अरु जिन विष्णु जीके मुखसे ब्राह्मण भये अरु भुजोंसे क्षत्रिय भये । अरु जिनके ऊरु से वैश्य अरु पैरोंसे शूद्रभये २८ चन्द्रमा जिनके मनसेभया अरु सूर्यनेत्र से भया अरुप्राणोंसेपवनभया अरु मुखमे अग्निभया २९

अरु माया के संगही से जिन विष्णु जीको पुरुष कहते अर्थात् वस्तु से चित्तरूप हैं। अरु स्वभाव निर्मल शुद्ध निर्विकार निरंजनहैं ३० अरु जो क्षीरसमुद्र शायी अनंत अपराजित अर्थात् नहारने वाले विष्णुजी हैं अरु जेय भक्त वत्सल ज्ञानगम्य हैं तिनको प्रणाम करता हूं ३१ अरु जिनसे पृथिव्यादि पंच महाभूत अरु पंच तन्मात्रा अरु इंद्रियें उत्पन्नभई तिन सर्वभुज विष्णु जीको प्रणाम करताहूं ३२ अरु वे विष्णु जी निर्विकार अज अरु शुद्धहैं अरु जिनको योगीजन सब कारणोंके कर्ता कहतेहैं तिन विष्णुजीकोनमस्कारहै ३३ महान्‌विष्णुजीतो एकहैं अरु पृथक्‌भये अनेकहैं तिन सबोंको त्रिलोकीमें व्याप्तहोकर विश्वके भोक्ता विष्णु जी भोगतेहैं अर्थात् एकही विष्णु जी निज सत्तासे सर्वत्र विराजमान होरहेहैं ३४ जो सब प्राणियों के अंतर्य्यामी जगन्मय निर्गुण अरु परम आनंदहैं सो विष्णुजी हमपै प्रसन्नहों ३५ जो मायासे मोहित चित्तवालोंके हृदयमें स्थित भी दूरहैं। अरु जो ज्ञानियों को सर्वत्र व्याप्त प्रतीतहोते सो विष्णु जी प्रसन्न हों ३६ जो अनेक अवतार धारके भूमिभार उतारते अरु जनोंकी सब पीड़ा हरनेवाले ऐसे विष्णु जी हमपर सर्वदा प्रसन्न होवें हम तिन्हें बेर२ नमस्कार करतेहैं ३७ अरु जोज्ञानी अरु कर्मवालोंको तथा भक्तिमान जनोंको गतिदेते सो विष्णु जी हमपरप्रसन्न हों ३८ जिन विष्णुजीकारचीलीला में शरीर धारण किये जाते। अरु विद्वान् जन जिनकी पूजाकरते सो विष्णुजी हमपरप्रसन्नहों ३९ अरु संतजन जिनको सच्चिदानंद स्वरूप कहते हैं तथा निर्गुण अरु

सगुणाभी कहतेहैं सो विष्णुजी हमपर प्रसन्नहों ४० जो परमईश अरु परम आनंद अरु परमेश्वर प्रभुहैं अरु जो चित्तरूप अरु चित्तज्ञेय सोविष्णुजी हमपरप्रसन्नहों ४१ जो निरंजन परमात्मा सबके आधार हैं अरु जो सतरूप नित्यकामदाता सो विष्णुजी हमपरप्रसन्नहों ४२ जो इस स्तोत्रों में उत्तम स्तोत्रको नित्यपढ़ै सो सब पापोंसे छूटा विष्णुलोकमें विराजता है ४३ हे ऋषियो ऐसेस्तुतिकरके विष्णुजीको प्रणामकरे अरु ब्राह्मणकी पूजा करे फिर वस्त्र दक्षिणादिक करानेवालेको देवे ४४ फिर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भक्तिभावसे भोजन करावे। फिर भाई पुत्र आदिसहित आप भी भोजनकरे ४५ हे मुनियो जो इस ध्वजारोपण कर्मको करता तिसके फलको कहते हैं तुम सावधान होसुनो ४६ हेद्विजो जबतक जितनोबेर वहध्वजा का वस्त्र पवनसे हिलै तितनेही पाप समूह तिसके नष्ट होतेहैं ४७ जो महापापों से वा सबपापोंसे भी युक्तहोवे पर विष्णु मंदिरमें ध्वजा लगाने से सबसे निवृत्त होताहै ४८ हे द्विजो जितने दिन वह ध्वजा विष्णु मंदिर में रहै तितनेही सहस्र युगोंतक विष्णुनिवास होताहै ४९ जो धर्मात्मा लगाई ध्वजाको सराहते वेभी करोड़ों उपपापों से छूटतेहैं ५० मंदिरमें लगायी ध्वजा निज फटकारोंकरके ताके सब पापोंको हटादेती है ५१ अब हे ऋषियो इतिहासकहकहतेहैं जोसबकामदाता नारदजीसे कहागयाहै सो कि सतयुग में (सुमतिनाम) राजाभाया ५२ जोसोमवंशमेंउत्पन्न बुद्धिमान् अरुसातोंद्वीपोंकाराजाधर्मात्मा सत्यवंत पवित्र दमनशील चतुर अरु अतिथियोंका प्या-

रा ५३ सब लक्षणों सहित अरु सब संपत्तियोंसे संयुक्त। अरु सदा हरि कथा सेवन करता अरु विष्णुभक्ति में तत्पर रहता ५४ अरु विष्णु भक्तोंकी टहल करता अहंकार रहित। अरु पूज्योंकी सेना में परायण समदर्शी अरु गुणों से संयुक्त ५५ सबकाहित्ती अरु शांत कृतज्ञ अरु कीर्त्तिमान् ऐसा राजा। अरु तिसकीरानी जो बड़भागिनी सबलक्षणोंसहित ५६ [सत्यमती] नामसे विख्यात भई जो पतिव्रता अरु पतिही प्राण जिसके। तो वे दोनों स्त्री पुरुष नित्यही हरि पूजामें परायण भये ५७ अरुजो ज्ञाति श्रेष्ठ बड़भागी नित्यही सत्कर्म में तत्पर भये। अरु जो नित्य अन्नदान मेंरत अरुहरि पूजा में परायण ५८ नित्य अन्नदान करते अरु जलपिलाते अरु तड़ाग उपवन फुलवाड़ी जिन्होंने अनेकही बनवाये ५९ अरुवो [सत्यमती] पवित्र प्रसन्नभई नित्य विष्णु मंदिरमें नृत्य कियाकरती जो सुन्दर अरु कोमल बोलने वाली ६० अरु वहभी बड़भागी राजा सदा द्वादशी २के दिन बहुत सुंदर भारी ध्वजा लगाया करता था ६१ ऐसे धर्मात्मा चतुर राजाको अरुतिसकी प्रिया सत्यमती की देवता भी सदा स्तुति किया करतेथे ६२ ऐसे त्रिभुवन में विख्यात तिन स्त्री पुरुषों को देखने को बहुत से शिष्यों सहित मुनि (विभांडुक) जी आये ६३ तबतो राजा विभांडुकजी को आये देखके उठकर बहुत विस्तार पूजा लेकर तिनके सामने आया ६४ अरु तिनका सन्मान करके सुंदर आसनपै बैठायके नम्रभया तिनसे यह कहताभया ६५ राजा बोला कि हे मुनिजी मैं आप के आगमन से

धन्य हूं सुख दायक सज्जनों के आगमन को मुनिजन सराहतेहैं ६६ जहां सज्जनों का प्रेमहो तहां सब संपदा हैं अरु तेज कीर्त्ति धारणा बुद्धि येभी तहांहीं रहते ऐसे विद्वान्जन कहते हैं ६७ हे मुनिजी जिस दिन कल्याण उदय होनेहोवें तबही सज्जनोंका आगमन होताहै ६८ हे मुनिजी सज्जनों के चरणों के जलको मस्तकपर चढ़ावे वह सबतीर्थोंमेंन्हायाअरुपुण्यवान्है इसमेंसंशयनहीं ६९ मेरेपुत्र धन स्त्री अरु सब संपत्तिये श्री भगवान्के अर्पण हैं अब आज्ञाकीजिये हे मुनिजीमैं आपकी क्या शुश्रूषा करूं ७० ऐसेकहते अरु विनयसे नम्रभये राजाकोदेखके मुनिजी हर्षित होकर तिससे यह वचन कहते भये ७१ कि हे राजन् जो २ तुमने कहा सो २ सब तुम्हारे कुलमें उचितहै जो विनयसे नीचेरहते तिनके सबकल्याणहोते हैं ७२ हे राजन् धर्म अर्थ काम अरुमोक्ष येसब विनयसे हो

करतेहो हेदुतो वेदविहित धर्मसत्य हैं इसमें संशय नहीं
अरजो इससे धर्मभयेसो कहतेहैं कि ये विष्णुजी कीट
हलमें रहतेथे इससे सबपापोंसे छूटे १०५ अरु फिरउन
ने ध्वजा बनाई अरुये नाचतीभई अरहे दूतोअंतकालमें
विष्णुभुवनमें मृत्युपाई १०६ इससे ये विष्णुजी से भी
पूजनीय भये ऐसे इनको तुमशीघ्र छोड़ो हे दूतो विलंब
न करो १०७ सदा सबमें जन जिनकानाम सुनने से
भी परमगति पातेहैं फिरतिनकी शुश्रूषा में रतहोतिनका
क्याही कहनाहै १०८कोई महापातकों से वा सबपापों
सेभी युक्तहों पर अचलभक्ति करके परमगति पाते हैं
१०९ जोयती अरु ब्रह्मवेत्ताओं की सेवामें परायणहैं
प्रत्यक्ष पापीभी परमगतिको प्राप्तहोतेहैं ११० मुहूर्त्तवा
आधेमुहूर्त्त अथवा दोघड़ी वा एकघड़ीभी जोविष्णुमंदिर
मेंरहै१११वोपरमस्थान पाताहै फिरयेतो शुश्रूषा करतेथे
अरुजोमंदिर लेपैं अरुबुहारी देवें जो जलछिड़कें अरु दी-
पकजलावें११२इनलोगोंको तुमयमकोपासकैसेलेजातेहो
हेकृषियो वेतिन दूतोंसे ऐसे कह अरु पारिषादको सबै
विमानमें बैठाकर शीघ्रहीविष्णुजीकेपरमधामको लेगये
तबहरि विष्णुजी के निकट पहुंचे अरु जिनमें समाचार
इसने श्रेष्ठ भावसोंमें तिस जनयको सुनिये ११३।११४
कि भी करोड़ वर्ष अरु जनम ... सुखको विष्णुभुवन
में रहकर ब्रह्मलोकमें आये ११५ तहां भी तिनने अनेक
कल्पतक फिर इंद्रपदवी को प्राप्तभये तहां भी दिव्य भोग
भोगके फिर पाताल के राजा भये ११६ अरु के पुनिर्भी
विष्णुपूजाके प्रभावसे तहांभी अनुग्रह ... किन

इच्छासे भी करनेसे येपद पायाहै ११७अर्गिप्रवेश वि-
ष्णु जीको अब मैं सम्यक् आराधन करके प्राप्तहोऊंगा
यह ऐसी निश्चयमतिहै ११८हेद्विजेन्द्रोजिन विष्णुजीके
निमित्त अवश से भी किया गया कर्म सुन्दर महाफल
देताहै फिर सम्यक् पूजनेसे तो क्योंनहींहो ११९ हेमुनियो
यह सब वृत्तांत सुन विभांडुकमुनि राजाको आशीर्वाद
देके निज तपोवनको चले गये १२० सूतजीबोले हे द्वि-
जेन्द्रो तिससे देवोंकेदेव चक्रधारी विष्णुजीकी सेवा
सबको कामधेनु समानहै १२१ जोविष्णुजीकी पूजा में
परायणहैं तिनको सनातन आद्य भगवान् सबकाम फल
देतेही हैं१२२जो इससबपाप हारक पवित्र आख्यानको
सुनै वा कहै तो ध्वजारोपनेके पुण्यको प्राप्त होवे १२३॥

इतिबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमेंध्वजारोपणधर्मकानिरूपणइस
नामसेअध्यायअठारहवांभया १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

हरिपंचकव्रतका निरूपण ॥

श्रीसूतजीबोले हे ऋषियो अब हम और व्रत वर्णन
करतेहैं जो [हरिपंचक]ऐसे विख्यात अरुलोकदुर्लभ
है १ अरु जो नरनारियों के सब दुःखहटाने वाला अरु
धर्म अर्थ कामभोक्ष इन पुरुषार्थों का मुख्य कारण है२
अरु सब वांछित दाता अरु सब व्रतोंके फलको देता है
सब व्रतोंमें श्रेष्ठ अरुसबकाम फलदायकहै ३सोहेऋषियो
मार्ग शीर्षमुदी दशमी को जितेन्द्रिय भया जल दन्तधा-
वन पूर्वक स्नानकरि अरु सम्यक प्रकारसे देव पूजनकरया

पंचगव्य भक्षणकरै ४ अरु तिसदिन एकवार भोजनकर फिर एकादशीको प्रातःकाल उठिकै यथा चारस्नानकरके तिन वस्तें विष्णुजीकी पूजाकरै ५ पीछे विष्णुजी को स्थापन करै अरु पंचामृतसे स्नानकरावे अरु परमभक्ति से गंधपुष्पादिकों से अरु धूपदीप नैवेद्य तांबूल दक्षिणा प्रदक्षि ।। इनसे पूजाकरै अरु ऐसा पढ़ै ६।७ हे देवोंकेईश देवजी आपको नमस्कार जो आप ज्ञानरूपी ज्ञानवाला अरु सब सिद्धिदायक ऐसे आपको नमस्कार है ८ ऐसे देवोंकेईश देव जनार्दनजीको प्रसन्नकरकेकाठे जोडिकरि संकल्प पांचदशनलाय कल्पर्पणकरै ९ जो सब हे केशवजी है लालित आपकी आज्ञासे मैं आज से पांचदिनताई नि- राहार रहूंगा सो आपजन वांछित दाताहो १० ऐसे देवजी- को उचारन समर्पणकरके जितेंद्रिय हुआ एकादशी की रात्रीको जागरणकरै ११ अरु द्वादशी त्रयोदशी चतु र्दशी अरु पूर्णिमाको भी ऐसे विष्णुजीका अर्चन करै १२ अरु हे द्विजो पूर्णिमाको फिर जागरणा करै अरु पं चामृतसे स्नान कराके पूजन पांचोदिन करनाहै १३ अरु पूर्णिमा को कार्तिकी पूर्णमे स्नान करके हे मुनीश्वरो फिर तिलोंकाहोम अरु तिल दानकरै १४ फिर तदनंतर ब्राह्मणों जिन निमन्त्रणकर दक्षिणाकि सहितभक्ति भोजनदे १५ फिर यथा विधि विधानसे ब्राह्मणों को जिमावे फिर भाइयों सहित निमन्त्र आदि भोजनकरै १६ हे ब्राह्मणो फिर पौषमासादि कार्तिक तक महीनों के पूर्णमासी में पूर्णिमा विधानसे व्रतकरै १७ फिर वर्षदिन वत इस पापनाशन व्रत को [illegible] फिर [illegible]

पूर्णा भये उद्यापन करै १८ सो एकादशी को पहले की नाईं निराहार रहै अरु द्वादशी को सावधान भया पंचगव्यपीके अरु गंधपुष्पादिकों से जनार्द्दन देवजीको पूजै फिर जितेन्द्री भया भक्तवाला विष्णुजीकोभेटदेवे १९।२० जो घृतयुक्तखीर जो देवसिद्ध सहित अरु सुगन्धजलयुक्त दक्षिणा सहित कलश जो वस्त्रसेढका अरु पंचरत्नसहित सो हे मुनीश्वरो शास्त्रवेत्ता ब्राह्मण को देवे यहमंत्र पढ़े २१।२२हे सर्वात्मन् सर्वभूताशयोंकेईश सनातनसाधोंजी इस येढका कलशे दानसेतुमपर प्रसन्नहोश्रो इसमंत्रसे भेटदेवे फिर श्रद्धासे ब्राह्मण जिमावे अरु दीनभया भाइयों के सहित आपभोजनकरै २३।२४हेमुनियो जोइसहरिपंचक व्रत को करता तिसका ब्रह्मलोक से फिर आगमन नहीं होताहै २५ उत्तम लोककी इच्छावालोंकोभवप्रथमकर्त्तव्य है सो लोकरूपी वनकादावा अग्नि है २६ अरु हे द्विजो करोड़सहस्रगऊपदान जनजो फलपाता जो एकउपवास से प्राप्त होताहै जो विष्णुजी में परायण भया इसम्राख्यान को सुने वह करोड़ों महाघोर पापोंसे छूटता है २७।२८

इतिहबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादेहरिपंचकव्रतकानिरूपणउनीसवांअध्यायसमाप्त॥

बीसवां अध्याय ॥

मासोपवासव्रतकाविधिवर्णन ॥

श्रीसूतजी बोले हे ऋषियो अब हम और एक व्रत वर्णन करते हैं सो एकबार सारी पवित्र अरु सबलोकोंका उपकारकहैं १ जो आषाढ़ श्रावण वा भाद्रपदके महीने

में तथा आश्विन में हे द्विजो इनअंतको वा २ इनमेंसे किसी महीने के शुक्लपक्षमें जितेन्द्रिय जन पंचगव्य पीवे अरु विष्णुजीके निकटशयनकरे ३ फिर प्रातःकालमें उठ नित्य कर्म समाप्त करके वशवाला क्रोधरहित जितेन्द्रियभया विष्णुजीकीपूजा करे ४ सो विद्वानोंके सहित यथाविधि विष्णुपूजनकरे सो कि पहिले स्वस्तिवाचनकरके प्रतिज्ञासंकल्पकरे ५ कि हे देवजी आजसेमहीनेतक निराहाररहूंगा ऐसे फिर महीनेके अन्तमें हे देवजी आपकी आज्ञासे पारणाकर व्रतसमाप्तकरोंगा ६ हे तपोमय अरु तपोंके फलदाता विष्णु जी आपको नमस्कार मेरेवांछितको देओ अरु सब विघ्नों को हटाओ ७ ऐसे देवविष्णुजीको शुभव्रत समर्पणकरके तबसे ले महीनेतक विष्णुमंदिरमें रहै ८ सो नित्यदेवजीको पंचामृतसे स्नानकरावे अरु तिस महीनेमें विष्णुमंदिरमें निरंतर दीपदानकरे ९ अरु प्रतिदिन आंगेके काष्ठसे दन्त धावनकरे फिर विष्णुभक्तिमें परायणभया भक्तिसे स्नान करे १० अरु केशव आदि विष्णुजी के नामों से तर्पण करे अरु सोलहवें अध्यायमें कहे इनहीं बारह नामों से विष्णु पूजा करे ११ ऐसे भगवद्भक्ति में परायण भया महीने तक उपवास करे फिर अंतमें विधि से स्नान करे अरु पूर्वविधिसे विष्णुजीको पूजे १२ अरु यत्न से भक्तियुक्त भया दक्षिणा सहित ब्राह्मण भोजनकरावे फिर मौनभया भाइयों के साथ आपभी भोजन करे १३ फिर यथाशक्ति दक्षिणा अरु वस्त्र आभूषण दान करे ऐसे एक महीनेके उपवाससे वाजपेय यज्ञका फलपावे १४ अरु जो दोमास उपवासकरै तो तिसको पौंडरीक यज्ञ

का फलमिले जो सावधान भया तीनमासके उपवासकरै १५ सो प्राजयाप यज्ञ के दुगुने फलको पाता है अरु है ऋषियो जिसने चार मासोपवास किये १६ वह आठ अग्निष्टोम यज्ञोंके संपूर्ण फलको पाताहै जिस महात्मा ने पांचकेर इसव्रतको किया १७ तिसे अत्यग्निष्टोम यज्ञ का आठगुना फल मिलताहै जो सावधान भया छैमहीने के उपवास करै १८ तिसे ज्योतिष्टोम यज्ञका आठगुना फल मिलताहै जो निराहार रहके सातमास व्रतकरै १९ वह अश्वमेधके आठगुने फलको पाताहै जो आठ मासो-पवास करै तो तिसे नरमेधयज्ञका पचगुना फलमिलता है अरु जो नवमास उपवासकरै २०।२१ तो तिसे तीन गोमेधयज्ञों का फल मिलताहै अरु जो दशपूर्णिमा तक इस व्रतको करता २२ वह ब्रह्ममेध के तिगुने फल को पाताहै अरु जो जितेंद्रिय ग्यारहमास व्रतकरता है २३ वह पच यज्ञोंके फलको पाकर विष्णुजीके निकटवास करता है अरु जो सावधान भया बारह पूर्णिमा पर्यन्त

वनप्रस्थ यती वा ब्रह्मचारी हो २९ वा द्वैतवादी ज्ञानशून्य हो परवह मोक्षभागी होता है इसमासोपवासव्रतके करने से ३० जो विष्णुजी में परायण इस मासोपवास व्रत के महात्म्यको सुनेवा सुनावे तो सब पापोंसे छूटताहै ३१ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमेंमासोपवासनिरूपण नामसेवीसवांअध्यायभया ॥

इक्कीसवां अध्याय ॥

एकादशीव्रतकानिरूपणहै ॥

श्रीसूतजीबोले हे ऋषियो अबहमइसव्रतकानिरूपण करतेहैं जो सब लोकों में विख्यात सब पापनाशक अरु सब काम फलदायक है १ जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंको अरु स्त्री शूद्रोंको मोक्षदाता अरुविष्णुजीका अत्यंतप्रिय है २ जो कि(एकादशी) ऐसेविख्यातसबकाम दायकव्रत है सो सर्वथा कर्त्तव्यहै जो विष्णु संतुष्टिकरनेवाला व्रत है ३ हेऋषियो दोनोंपक्षोंमेंकी एका दशीके दिनभोजन न करे.जो करे तो पापीहोय नर्कमेंपड़े ४ हेद्विजो एका-दशीके व्रतमें चारबेरका भोजनछोड़े तबसंपूर्ण फलहोता है सो दशमीकी रातिको १ एकादशीकेदिनको २ रातको ३ अरुद्वादशीकी रातको ४ । ५ हे द्विजो जोएकादशीको भोजन करनाचाहै वह लोभी सब पापोंको भोगताहैइसमें संशय नहीं है सोदशमीको अरु द्वादशीको एक बेरभोजन करै अरु एकादशी को निराहार रहै जो मुक्तिचाहैतो हे ऋषियो ब्रह्महत्याकेसमानभी बड़े २ पापहैंवएकादशीको अन्नमें आरहतेहैं ७ अरु हे द्विजो ब्रह्महत्यादिकपापोंका

तो प्रायश्चित्त भीहै जोएकादशीको अन्नखाताहै तिसका
प्रायश्चित्त नहीं ८ जो महापाप अरुसब पापोंसेभी युक्त
है पर एकादशी निराहाररहकर परमपदपाताहै९ ये महा
पवित्र एकादशी तिथि विष्णुजी की अत्यंतप्यारीहै सो
संसारसे निवृत्ति चाहनेवाले जनों करके अवश्यकर्त्तव्य
है १० सो दशमीको प्रातःकाल उठ दंतधावनपूर्वकस्नान
करके जितेंद्रीभया विधिसेविष्णुजीकी पूजाकरै ११ अरु
एकादशीहोय जिसदिन नारायणमें परायणभया विष्णु
जीकेआगे दशमीकी रात्रिकोसोवै १२ फिरएकादशीको
उठ तैसेही न्हाय अरु विष्णुपूजा करके सम्यक प्रकारसे
ये मंत्रपढ़ै १३ मैं एकादशीको विष्णुमें परायण निरा-
हाररहके द्वादशीको भोजन करूंगा सो हे पुण्डरीकाक्ष
आपमेरे रक्षक होवो १४ ये मंत्र पढ़करके प्रसन्नभयाचक्र
धारीदेव विष्णुजीकोउपवाससमर्पण करै १५ अरु देवजी
के आगे नियमसे गीतबाजेअरुपुराणके श्रवणसेरात्रीको
जागरणकरैफिर द्वादशीको प्रातःकालउठकरअरुविधिसे
स्नानकरके सावधानहुआ विष्णुजीकीपूजाकरै तोएका-
दशीको तो विष्णुजीको पंचामृतसे स्नान करावे अरुद्वा-
दशीकोदूधसे१६।१७ तो विष्णुजीके निकट निवासकरे
अरु ये मंत्रपढ़े कि हे केशवजी अज्ञान अंधकार से अंधे
भये मुझको इस व्रत से ज्ञानदृष्टि देवो १८ अरु प्रसन्न हो
ओ हे ऋषियो देवोंके देव विष्णुजी को ऐसे विज्ञापन
करके ब्राह्मण जिमावे अरु दक्षिणा देवे १९ फिर भाइयों
करके सहित नारायणमें परायण भया आप भी भोजन
करै २० हे ऋषियो जो सावधान हुये इस एकादशी व्रत

जो जावैं सो विष्णुभवनको पावे जहांसे फेर आगमन न होय २१ हे विप्रो उपवास व्रतमें पराङ्मुख भया जो कुधर्म कारी है सो चांडाल अरु पतितोंसे संभाषण न करे २२ अरु नास्तिक भिन्न मर्यादा वाले निंदक और चुगली उपहास करनेवाला आलापनकरे २३ अरु वृषल अर्थात व्यभिचारियोंसे अरु दाइको पति अरु व्यभिचारिणियों के पतियोंसे अरु अयाज्यको पुजाने वालेसे मद्यवाला व- सावे नहीं २४ अरु कुंडाशी अर्थात पिता जीवते व्य- भिचारसे भया जो कुंड तिसका जो अन्न खावें सो कुंडाशी तिनसे और खानेवाले अर्थात बहुदेवलया पुजारीसे अरु वैद्यसे काव्यरचने वाले अरु देव ब्राह्मणोंसे विरोधवाले से अरु परान्न लोभीसे अरु परस्त्री गामीसे व्रतमें पराङ्मुख होनेवालोंसे भी पूछे नहीं अर्थात इनसे न बोले २५।२६ इत्यादि दोषनिवर्जित शुद्ध अरु जनको जितने व्रत उपवास में परायण होके परमसुख पाताहै २७ विष्णुजीसे प- रे कोई देव नहीं अरु व्रतसे परे तपनहीं वेद समान और शास्त्र नहीं अरु शांतिके समान सुख नहीं है २८ गंगाके समान कोई [illegible] नहीं अरु न [illegible]के समान [illegible] नहीं रसना समान कोई [illegible] अर्थात जिह्वा नहीं अरु कीर्तिके समान कोई धन नहीं है २९ ज्ञानके समान कोई [illegible] नहीं अरु न [illegible]के समान [illegible] नहीं [illegible] ने सर्वोंको इनकी आवश्यकताहै ३० [illegible] [illegible] नियमोंसे [illegible] पुत्रादिक [illegible] करतेहैं [illegible] [illegible] ३१ [illegible] [illegible] (वा नर) [illegible]

त्यपरायणभये जो शांत दांततपोनिधान ऐसे वे नर्मदानदी के तीरपर रहते थे ३२ जो तट बहुतसे पक्षियोंसे अरु अनेक प्रकार के वृक्षों से संयुक्त था अरु सिद्ध चारण यक्ष गंधर्व विद्याधर इनसे सेवित था ३३ जो कन्दमूल फलों से पूर्ण अरु मुनिजनों से सेवित था तहां [गालव] मुनि जी रहतेथे ३४ तिनको खंजा स्त्रीसे [भद्रशील] पुत्रभयाजोजातिस्मरणकेधारी नारायणजीकी भक्तिमेंपरायणभया ३५ ऐसा वहमहामतिसाधु भद्रशीलबालकोंमें खेलनेकेसमय भी मृत्तिकासे विष्णुजीकी मूर्ति बनाकर पूजाकरताथा ३६ अरु पूजाके पिछाड़ी बालकों को श्रुतियों का बोध कराताथा कि हे बालको विद्वानोंको एकादशी व्रत अवश्य करना चाहिये ३७ तब तो तिससे बोधित भये वे बालकभी मृत्तिकाकी विष्णु मूर्ति बनाकर पूजतेभये ३८

पिताका वचन सुन प्रसन्नभया भद्रशील अपना अनुभव किया सब वृत्तांत निजपितासे कहता भया ४५ भद्रशील बोलाहे बड़भागी पिता जो मुझमेंपहिलेबीताजोकियमने मुझसे कहा मैं स्मरणहोनेसे जानताहूं ४६ ये सुनके विस्मितभये मुनि गालवजी प्रसन्नहोके महामति भद्रशील से बोले ४७ कि हे महाभाग तूपहिले कौनथाअरु यमराज ने तुझसे किसहेतुसे क्याकहा सो सब तूकहने योग्यहै ४८ भद्रशील बोला मैं पहिले सोमवंसी राजा (धर्मकीर्ति) ऐसे विख्यात दत्तात्रेयजीका शिष्यथा सो मैंने नौसहस्र वर्षतक सब पृथ्वीकी पालनाकरी अरु मैंने धर्म अधर्मभी बहुत से किये ४९।५० सो लक्ष्मीसे प्रमत्तभये मैंने बहुत से अधर्मकिये जो कि वेदमार्गथा सो पाखंडियों के समझायेसे मैंने छोड़दिया ५१ अरु कपटयुक्ति जानते मैंने सुशील सखाओं से स्नेह तोड़ा तब तो मेरी प्रजा मुझको अधर्ममेंरत देखके ५२ दूरकरतीभई तबतोतहांमेराराज्यभंग होगया ऐसे पाप आचरण करता दुःख में सुख मानता मृगया खेलनेमें रमणकरता महावनमेंचलागया ५३ तिस वनमें सेनासहित मैं बहुतसे मृगोंकोमारके भूख प्याससे थका रेवानदीकेतीरपै आया ५४ तो बड़ीदाहसे घबराया रेवामेंन्हाया। सेना मुझको न दीखतीथी मैंअकेला अत्यंत क्षुधासे पीड़ित था ५५ तबवहांपर। किननेही तिसके तीर वासी एकादशी व्रतमें परायण सांझसमय मैंने देखे ५६ अरु मैं तहां निराहार तिनजनोंकेसाथ रात्रिको जागरणा करताभया ५७ फिर हेतात मार्गकेखेदसे थका अरु क्षुधा तृषासे पीड़ित मैंतहांहीं पंचत्वको प्राप्तभयाअर्थात म-

गया ५८ तब तो बड़ी २ दाढ़ोंवाले भयंकर यमदूतोंने मुझे बांधा अरु अनेकमार्गोंमें क्लेशभोगतामैं यमराजकेनिकट पहुंचा ५९ तहां दाढ़ोंसे भयंकर मुखवाले यमराजको मैंने देखा फिरतिसनेचित्रगुप्तकोबुलाकरकेकहा ६० किहे चतुर इसकोयथावत्शिक्षादेवोतब यमराजसे ऐसेकहे चित्रगुप्त ने देरतक विचारकिया फिर येबोला ६१ कि हे धर्मराज ये पापोंमें परायण तोहैपर सुनिये एकादशीको निराहार रहनेसे सब पापोंसे छुटा ६२ क्योंकि यह एकादशी के दिन सुन्दर रेवाजीके तीरपर जागरण अरु उपवास करके पापोंसे छुटाहै ६३ जितने कि बहुत से पाप किये हों परवेसब उपवासके प्रभावसे नष्टहोजातेहैं हेपितातबचित्र-गुप्तसे ऐसेकहे यमराजने मुझको भूमिमें पड़के दण्डवत प्रणामकिया ६४ अरु भक्तिभावसे धर्मराजने मेरीपूजाकी फिर सब दूतों को बुलाकर यह कहता भया ६५ यम-राज बोला कि हे दूतो मेरा वचन सुनो मैंतुम्हारा उत्तम हितकहताहूं कि धर्ममें परायण मनुष्यों जो मेरेनिकटमत लावो ६६ जोविष्णुभक्तिमेंरत अरु कृतज्ञ अरु एकादशी व्रतकरते अरु जितेन्द्रियहैं अरु हे नारायणअच्युत हेहरे शरणहोवो ऐसेजो निरंतर कहते तिनेदूर त्याग देवो ६७ अरुजो हेनारायणअच्युत जनार्दनहेकृष्णविष्णुजीलक्ष्मी के पति ब्रह्माजीके पिता अरु हे शिवशंकरजो ऐसे जो नित्यकारतेअरु सब लोकोंके हितूअरु शांतहैं तिन्हेंहेभटो दूरही से छोड़देवो ६८ अरु जो नारायण में बुद्धि अर्पण करते अरु हरिभक्तों के भक्तहैं अरु जो पाखण्ड संग से रहित अरु हरि भक्ति नियहैं अरु सतसंगके लोभीहैं ६९

अरु जो शिवजी अरु विष्णुजीमें समानबुद्धिहैं अरु ज्ञानों
का उपकार करते तिनको त्यागदेवो अरु जो विष्णु जी
की कथा रूप अमृत को पीनेवालोंकरके देखेगये कैसेहैं
वोहि जो तीर्थयात्राके रस्तासें पराङ्मुख अरुब्राह्मणोंके
चरण जलसेवनसे हर्षित ऐसों करके देखे पापियों को
भी हेदूतो अवश्य छोड़देवो ७०। ७१ अरु जो मा बाप
को धिक्कार करते अरु जनोंसे द्वेषकरते अरुब्राह्मणोंका
अहितकरते अरुलोभसे देवद्रव्यचुराते अरुजनोंका नाश
करते ऐसेअपराध वालों को हेदूतो लेआवो ७२ अरु जो
पूजा दया सतसे रहित अरु तीक्ष्ण स्वभाव वालेहैं अरु
पराईनिन्दा करते अरु लोक अपवाद से पराङ्मुखहैं ७३
अरु ग्रामउजाड़े सज्जनोंकी निन्दाकरैं अरु ब्राह्मणों के
धनमें लोभकरैं ऐसों को लेआवो ७४ अरु जो विष्णुभक्ति
से विमुख अरु शरणागत पालक विष्णु जीको प्रणाम
नहीं करते अरु जो अति मूढ़हैं विष्णु जीके मंदिरमें नहीं
जाते तिन ऐसे अत्यंत पापियों को लेआवो ७५ हे
पिता ऐसे मैंने यमका कहना सुना तब मैं अपने क-
र्मोंका स्मरण करके डरसे जलनेलगा ७६ हे पिता
तब दुःख से अरु यह वचन सुनने से मेरे सब पाप नष्ट भये
तबतो सब पापों से छूटे अरु प्रकाश सूर्यों के समान तेज
रूप भये ऐसे मुझको यमराज ने प्रणाम किया तबतो
यमराजके दूत यह देख के विस्मित भये अरु तिस समय
सब आश्चर्य करते भये ७७। ७८ फिर तो यमने मुझको
पुष्प विमानमें बैठाय शीघ्र विष्णुजीके परमपदको पहुं-
चाया ७९ सो विमानोंकी पंक्तियों शोभित तिनमें सब

भोगाथे अरु तिस कर्मसे मैंने हेपिताजी विष्णु लोक में निवास किया सो सौ सहस्र अरु करोड सहस्र कल्पतक विष्णुलोकमें रहकर फिर इंद्रलोक में आया ८० । ८१ तहाँ वो सब भोगों सहित अरु सब देवताओं करके सेवित कितनेही समय तक स्वर्ग में रहकर फिर भूमि में आया ८२ तो यहांभी ब्राह्मण के भारीकुलमें जन्म लिया अरु हे मुनिजी स्मरण होनेसे मैं यह सब जानताहूं ८३ तिससे हे पिताजी मैं पूजनके उद्योगमें पराङ्मुखहूं एकादशी व्रत करनेवालों को इससे हेपिता मैं उत्तम एकादशी व्रत को करूंगा ८४ क्योंकि विष्णु पूजा नित्यही स्वर्गमें जानेकी इच्छा करके करते अरु जो एकादशी व्रत करते वे परम आनन्द दायक वैकुंठलोक को प्राप्त होतेहैं ८५ अरु जो इसे नित्य श्रवण करे अरु भक्ति भावसे कहै सोसब पापोंसे छुटा विष्णु लोकको जाताहै ८६ सूतजी बोले हे ऋषियो ऐसा पुत्रका वचन सुनके प्रसन्नभये मुनि गालवजी ८७ अरु परम प्रसन्नभये अरु मनमें अत्यंत हरखे कि मेरा जन्म सफ़लहुआरु वंश पवित्र भया जोकिये विष्णु भक्त मेरे कुलमें जन्मा ८८ ऐसे तिस बुद्धिमान पुत्र पर प्रसन्न भये मुनि गालवजी तिसको पूजाके लिये चिताते भये ८९ सूतजी बोले ये सब वृत्तांत हमने तुमसे विस्तार से कहा अब फिर पूछो सो कहैं ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषा पण्डितदेवीसहायकृत एकादशी व्रतनिरूपणनाम एकविंशोऽध्यायः २१ ॥

— —

बाईसवां अध्याय ॥

वर्णाश्रमधर्मनिरूपणकियागयाहै ॥

शौनक आदि मुनिजनोंने पूंछा हे सूतजी तत्त्ववेत्ता! आपने गंगाजीका महात्म्य श्रेष्ठप्रकारसे कहा अरु धर्म अधर्मभी कहे१ अरु हरिपूजाका विस्तारतथा एकादशी व्रतका महात्म्यभी आपने विशेषसे वर्णनकिया अबहम वर्णआचारविधिको सुनाचाहतेहैं२ अरुहेमुनिजी तैसेही आश्रमधर्म अरु प्रायश्चित्त विधि यह सब वृत्तांत परम कृपाकरके यथावत कहनेयोग्यहो ३ यौसूतजी बोले हे ऋषीश्वरो जो वर्णआचार निर्णय नारदजीने सनत्कुमार से कहा सोही तुमसब श्रवणकरो४सो अविनाशी विष्णु जी वर्णाश्रम आचार युक्तों करके पूजेजाते हैं तिन में हे द्विजेन्द्रो जो आश्रम धर्म मनुआदिकोंने कहाहैसोही हम कहतेहैं ५ सो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये चारवर्णोंके इनमें ब्राह्मणवर्ण सबसे अधिकउत्तम है ६ ब्राह्मणक्षत्री अरु वैश्य ये तीन द्विजकहे सो माताप्ते जन्म लेने में अरु गुरुसे संस्कारपदपालेने अर्थात उपनयनसे७ इन चारोंकरके निज२वर्णोंके अनुकूल धर्मकरनेयोग्यहै अपनेनिजवर्ण आश्रम धर्म त्यागना इसहीको बुद्धजन पाखण्ड कहतेहैं ८ तिस गृह्य सूत्र कथित कर्मको करना द्विज पुरुषो। करता है नहीं सो तिसे सब धर्मोंसे बाहरकिया पतितजानना ९ सो इन वर्णोंकरि यथा योग्य युग २ के अनुसार धर्म उसका करने चाहिये अरु तैसेही निज ग्रामकुल आचार उसका करना जो वेद विरुद्ध न होवे १० अरु मन वचनकर्मसे

अर्थात सर्वथाधर्मको आचरणकरे अरु जोहिंसात्मक अरु
लोक निन्दित धर्म भीहै पर तिसेकभी भी नकरे ११ जैसे
समुद्रकी यात्रा करना अर्थात समुद्रपार व्यापारको जाना
अरु कमण्डलु रखना अर्थात संन्यासलेना अरु ब्राह्मणों
को औरवर्णाकीकन्याओंसेविवाह करना १२ अरुदेवरसे
सन्तानहोनी अरु विवाहमें मधुपर्कमेंगमयपशुकोमारना
तैसेही श्राद्धमें मांसखाना अरुवानप्रस्थ आश्रम १३ अरु
एक बेर सत भई अर्थात विहयोनि कन्याका औरवरको
दान बहुत काल ब्रह्मचर्य्य अरु अश्वमेध नरमेध यज्ञ १४
भारीयात्रा करनी अरु गोमेध यज्ञ इतने धर्म भी कलि-
युग में वर्जनीयहैं १५ अरु जनोंको निज२देशाकाआचार
ग्रहणाकरना और प्रकार से सबधर्म बहिष्कृतपतितजान-
ना १६ अबहेनरदिपो हमब्राह्मणा क्षत्रिय वैश्योंके अरु
स्त्री शूद्रों के कर्म वर्णन करते हैं सो तुम सावधान भये
श्रवण करो १७ सो कि ब्राह्मण ब्राह्मणों को दान देवे
अरु यज्ञसे देवतों को पूजै अरु निज आजीविकाके लिये
औरों को यज्ञकरावे अरु पढ़ावे १८ अरु पूजने योग्यों
को पुजवावे अरु नित्य जलदान करे अरु वेदोंको संचित
करै पढ़ै अरु यज्ञसे देवतोंकी पूजा करै १८ अरु शास्त्र
की आजीविका करे अरु अग्नि रखतारहै अरु अपने प-
राये इनमें समान भीतरहै १९ सबका हितकरै अरु मृदु
वचन कहै अरु सदा ऋतुकाल में स्त्री से संग करे ये ब्रा-
ह्मणोंका कर्तव्य कर्म हैं २० अरु क्षत्रिय किसीको भी अ-
हित वचन न कहै अरु विष्णुपूजा में तत्पर रहै अरु ब्रा-
ह्मणोंके चरणका सेवे २१ पढ़ै अरु यज्ञसें देवोंको

पूजे शस्त्रोंसे आजीविका करे अरु यत्नसे पृथ्वी को पालना करै २२ दुष्टोंको दण्डदेवै अरु शिष्टजनों को रक्षा करै अरु हे द्विजो पशुपालन अरु बणिज खेती अरु वेद पढ़ना यह वैश्यका धर्म कहा है अरु ब्राह्मणों को दान देवे यज्ञसे देवता पूजै २३। २४ विवाह करै अरु धर्मके आचरण करै अरु संग्रह करना बेचना तथा कारीगरीमें द्रव्य कमाना २५ अरु शूद्र भी ब्राह्मणोंको दानदेवे अरु पाकसे यज्ञकरै अरु ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्योंकी टहल करता रहै २६ अरु इनको निज२ स्त्रियोंसे ऋतुसमयमेंही संगकरना कहाहै अरु सबका प्यार चाहना अरु मंगल प्रिय बोलना २७ बहुत परिश्रम न करना उत्साहसे रहना त्यागकी इच्छा रखनी अरु अभिमान न करना यह मुनिजनों ने सामान्य से चारों वर्णों का धर्मकहाहै २८ निज २ आश्रम उचित धर्म करनेसे सब मोक्ष भागी होते हैं अरु आपत्तिमें ब्राह्मण क्षत्रिय धर्मकाभी आचरण करलेवै २९ अरु अति आपत्तिमें क्षत्रिय वैश्यकी वृत्तिकरलेवै पर हे द्विजो अत्यन्त आपत्तिमें भी शूद्रकी वृत्तिकभी नहीं ग्रहण करै ३० अरु जो शूद्र द्विजकर्म तोवह चांडाल जानना ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ये द्विजकहे अरु शूद्र सहित चार तिन वर्णों के आश्रम हैं पांचवां कोई नहीं है हे द्विजो ब्रह्मचारी गृहस्थी अरु वानप्रस्थ ३१। ३२ अरु संन्यास ये चार आश्रम हैं पांचवां कोई नहीं है इन चारों आश्रमोंमें उत्तम धर्म सोजानना है ३३ हे द्विजो ... आश्रम धर्म करने वाले पै विष्णु जी प्रसन्न होते हैं जो ... निज २ धर्म में परायण हैं वे परम

धाम को पधारते हैं जहां से फिर आगमन न हो ३४ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषापंडितदेवीसहायकृतअनुबादमें वर्णाश्रमधर्मवर्णनन्नामद्वाविंशोऽध्यायः २२ ॥

तेईसवां अध्याय ॥

वर्णाश्रमोंके आचार धर्म का वर्णन ॥

श्री सूतजी बोले हे ऋषियो अब हम वर्णाश्रमों के आचार धर्मको विशेषसे कहते हैं सो तुम सारे सावधान भये सुनो १ जो निज धर्मका परित्याग करके परधर्मका सेवन करता वह सब धर्मोंसे बहिष्कृत पाखंडी जानना २ सो द्विजोंको गर्भाधान आदि संस्कार मंत्रोंसे करने अरु स्त्री के यथा कालमें अमंत्र से संस्कार करे ३ सो सीमंत संस्कार गर्भके प्रथम मासमें कहाहै या छठें सातवें आठवें में यथा विधिसे करै ४ सो पुत्र जन्मतेही पिता वस्त्र सहित जातकर्म संस्कारसें पहिले स्वस्तिवाचनपूर्वक नांदीमुख श्राद्धकरे ५ सो सुवर्ण दक्षिणा से जन्म श्राद्ध करै जो अन्नसे करै ब्राह्मण जिमावे तो चांडाल समानजानना ६ सो पिता पुत्र भये नांदीश्राद्ध करके फिर सूतकके अंतमें यथा विधिसे नामकरण संस्कार करै ७ सो अस्पष्ट अरु अनर्थक बहुत अक्षरों वाला अरु तैसेही विषम अक्षरोंवाला ऐसा नाम न रक्खे ८ फिर तीसरे वर्ष वा पांचवें छठे वर्ष चौल संस्कारकरे अर्थात सौर बनवावे तथा सातवें आठवें वर्षमें गृह्यसूत्र की रीति से करे ९ जो दैव योगसे गर्भाधान कर्म न होसके तो चौथाई कृच्छ्र अर्थात जिसमें ग्रास घटाये बढ़ाये जावें ऐसा व्रत करै अरु सौर

कार्य में आधा कृच्छ्र व्रतकरे १० अरु गर्भसे वा जन्मसे आठवें वर्षमें ब्राह्मणका यज्ञोपवीत करना अरु सोलहवें वर्षतक तिसका गौणकाल कहाहै ११ अरु गर्भसे ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय का उपनयन करना अरु बाईसवें वर्ष तिसका गौणकाल कहतेहैं १२ अरु वैश्यका उपनयन गर्भसे बारहवें वर्ष करना अरु चौबीसवर्ष तक तिसका गौणकालहै १३ अरु जिस द्विजका इससे भी अधिक काल बीतजावेतो तिसे सावित्रीसे पतित जानना अर्थात् तिसको गायत्री का अधिकार नहीं अरु तिसमें संभाषण भी नहीं करना १४ हे द्विजो जो ब्राह्मणके उपवीतकाल का अतिक्रम होजावे तो वह बारह वर्ष कृच्छ्र व्रत करै फिर चांद्राय करै १५ अरु सो तपन कृत करै फिर कर्म का आचरण करै नहीं तो पतित जानना वह कर्ताभी ब्रह्मघाती होताहै १६ अरु ब्राह्मणको तो मूंजकी मेखला कही अरु क्षत्रियके धनुषका चिल्ला मेखलाहै अरु वैश्य के शणकी जाननी अब इनकी चर्म सुनो १७ ब्राह्मण के हिरणकी चर्म अरु क्षत्रियके गौरमृगकी वैश्य के बकरे की अब क्रमसे इनके दण्ड कहते हैं १८ ढाक का तो ब्राह्मणको कहा अरु क्षत्रियको गूलरका वैश्य को बेलका अब प्रमाण भी सुनिये १९ सो ब्राह्मणके तोकेश समान दण्ड अरु क्षत्रियके मस्तकतककहा वैश्यकेनासिका समान दण्ड कहा २० अर्थाद्ब्रह्माविकोंके क्रमसेदण्ड कहनेके सोइना अरु सजोर्दा अरु पो पा वे कहाहै २१ हे द्विजो उपनयन विधा ब्राह्मण क्षत्रियोंको भिक्षा मांगना भिक्षा वैश्योंको भवतकी तहीदेहिये २२ सो वीतयाचागप्राय-

काल न्हावे अरु पत्ते समिधकुशादिकसमय २ पर गुरुजी के लिये लाता रहै २३ अरु हे द्विजो यज्ञोपवीत मृग चर्म अरु दण्ड ये नष्ट वा भ्रष्टभये मंत्र से नवीन धारण करे अरु भ्रष्टभये अर्थात् अशुद्ध भये को जलमें फेंकदेवे २४ अरु ब्रह्मचारी को केवल भिक्षान्न सेही निर्वाह करना कहाहै सो भिक्षा जितेन्द्रीय वेदपाठीके घर से लावै २५ सो ब्राह्मण को तो भवत् शब्द पहिले लगाना कहाअर्थात् (भवति वा भवान् भिक्षांदेहि) ऐसा अरु क्षत्रिय को (भवत) मध्यमें कहना अरु वैश्य को अंतमें कहना यह भिक्षा लाने में वचन है २६ अरु ब्रह्मचारी सांझ सवेरे यथा योग्य अग्नि कार्य अर्थात् पाक बनाना इत्यादि करता रहै अरु प्रतिदिन तर्पण अरु ब्रह्मयज्ञ करता रहै २७ अग्निकार्य के विना पतित कहाता है अरु ब्रह्मयज्ञ के विना ब्रह्मघाती कहाताहै २८ देवता पूजन अरु गुरुजी की टहल सदा करता रहै नित्य भिक्षा का अन्नखावै अरु सदा एकही अन्न न खाय २९ सो जितेंद्रिय भया अनिंदित ब्राह्मणों के घरसे भिक्षालाय गुरुजीको सौंपके तिनकी आज्ञासे आपभी भोजन करै ३० अरु मधु स्त्री मांस लवण तांबूल दंतधावन उच्छिष्ट भोजन अरु दिनमें शयन ये न करै ३१ अरु छत्र उपानह सुगंध तैसेही फूल माला पहिरनी सुगन्ध लगाना जलक्रीडा अरु जुआ गीत नाचे ये वर्जितहैं ३२ परसे विवाद क्रोध दुःख वृथालाप अरु अंजन पाखंडी जनोंसे संग अरु शूद्र संग ये न करै ३३ अरु क्रमसे वृद्धों को प्रणाम करता रहै सो वयसा वृद्ध ज्ञानवृद्ध अरु तपोवृद्ध ये तीन

प्रकार के वृक्ष हैं ३४ जो अपने दुखों को हटावै सो गुरु जो वेद शास्त्रवता को सब अज्ञान नष्ट करे इससे तिसको प्रथम प्रणाम करे ३५ अरु प्रणाम करता ब्राह्मण मैं फलाना आपको प्रणाम करताहूं ऐसेकहे अरु क्षत्रिया-दिकों को ब्राह्मण कभीभी प्रणाम न करे ३६ अरु ना-स्तिक को भिन्न मर्य्यादवाले को कृतघ्नी अरु गांवभरको पुजाता फिरे तिसको चोर अरु धूर्त्तको कभीभी प्रणाम न करै ३७ अरु पाखंडी पतित असंस्कारहीनको अरु नक्षत्र सूची को तैसेही पातकी को कभी भी प्रणाम न करै ३८ उन्मत्त शठ अरु धूर्त्तको भागते अरु अशुद्ध को शिर मसल धोते अरु जप करते को प्रणाम न करे ३९ तैसे ही स्नान करते को अरु समिध पुष्प हाथलिये को जलपात्र लिये अरु भोजन करते को कभीभी प्रणाम न करे ४० विवाद शीलवाले को तीव्र स्वभाववाले को व-मन करते अरुजलमें स्थितको भिक्षा लेतेको अरुसोतेको कभीभी प्रणाम न करै ४१ अरु जो स्त्री भर्त्ता को हने तिसको अरु रजस्वला को व्यभिचारिणी को प्रसूति को अरु गर्भ गिराने वालीको कृतघ्नी अरुप्रचंड स्वभाववाली को कभी भी प्रणाम नहीं करै ४२ अरु सभामें यज्ञ-शाला में अरुदेव मंदिरों में भिन्न २ जनको प्रणाम कर ना पूर्व किये पुण्य का नाश करता है ४३ पवित्र सेत्र अरु तीर्थपर अरु पढ़नेके समय में भिन्नभिन्न नमस्कार करना पूर्व पुण्य नष्ट करता है ४४ श्राद्ध व्रत अरु दान देवता पूजन अरु यज्ञ तर्पण करतेको प्रणाम न करै ४५ जो प्रणाम करने में कुछ उत्तर नहीं देता अर्थात् कुन

के चुप रहजाता तो फिर तिसे कभीभी प्रकाश नकरै जैसा शूद्र तैसा वहभी है ४६ अरु हे द्विजो द्विज जिन गुरुजीके परलोकेय अरुएकाङ्क्षकरशास्त्रअध्ययनकरैअरु कहे जाने वाले इन अनध्यायोंको छोड़े ४७ सोकि अ-ष्टका अरु चतुर्दशी को प्रतिपदा अरु पर्व तिथियों में हे द्विजो महाभरिणी अरु श्रवण नक्षत्र द्वादशी तिथि को ४८ भाद्रपद सुदी द्वितीया को अरु देव उठनी द्वाद-शी को अरु गुरुजी के मरने के दिन ४६ अरु आषाढ़ की कार्तिककी अरु हे द्विजो फाल्गुन की शुक्लपक्षकी द्वितीया को अरु ग्राम में अग्नि लगजावै तिसदिन ५० माघ सुदी सप्तमी अरु आसोज की नवमी सूर्य मंडलक्ष-ये वेद पाठ घर में आवैं तब ५१ अरु हे द्विजो मन्वादि तिथियोंमें अरु युगादिकतिथियोंमें सब कार्य फल चाहने वालाद्विज अध्ययन नकरै ५२सो वैशाख सुदी तीज अरु पित्र पक्षकी चर्थातआसोजवदीतेरस कार्तिकसुदीनवमी अरु माघमासकी पूनों ५३ये युगादिक तिथियें कही जो दिये काप्रसंग करनेवाली अर्थात इनमें दान उत्तमहै अब मन्वादि तिथियें कहते है हे द्विजो सावधान भये सुनो ५४ सो आसोज सुदी नवमी कार्तिक सुदी द्वादशी चै-त्रमास अरु भाद्रपदकी तीज आषाढ़ सुदी दशमी अरु माघ सुदी सप्तमी ५५ श्रावण वदी अष्टमी अरुआषाढ़ की पूर्णिमा फाल्गुनकी अमावस अरु पौषकी एकादशी ५६ ये मन्वादिक कही सो दान को अक्षय करने वाली तिथियों मन्वादिक अरु युगादिक तिथियों में श्राद्धकर-नाचाहिये ५७ अरु अष्टका तिलंगादिकमें अरुसूर्यचन्द्रमाके

ग्रहणमें अरु उत्तरायण वा दक्षिणायन में द्विजपढ़ै नहीं ५८ अरु मृतकके पीछे जालेमें अरु आरण्यकको पढ़कर अरु जाके घरे के नरकमें न पढ़ना कहा है ५९ सर्पआदि के देखनेमें अरु भूमि कम्पन अर्थात् भैराजमें इत्यादिकों में नहीं पढ़नाकहाहै ६० जो इन अनध्यायों में पढ़ै तिनके वुद्धि यश लक्ष्मी आयुबल अरोगपन येनष्टहोजातेहैं ६१ जो अनध्यायोंमेंपढ़ै तिसेब्रह्मघाती जानना हे द्विजो तिस से संभाषणा न करे अरु न तिसके साथ निवासकरे ६२ अरु कई कुण्ड गोलक अर्थात् पतिके जीवते मरे व्यभिचारसे भये पुत्रों का उपवीत करना कहते सो नहीं हो सक्ता ६३ जो वेद न पढ़कर और शास्त्रों को पढ़ता वह शूद्रसमानजन जानना अरुवह नरकमेंपड़नेकोहीजन्मलेता है ६४ अरु नतिसको आचारधर्मका फलमिलताहै जैसा शूद्र तैसाही वहहै ६५ अरु जो ब्राह्मण न पढ़कर नित्य नैमित्त काम्य आदि जो २ कर्म करे सो २ सब तिस का निष्फलहोताहै ६६ वेद साक्षात् शब्दमय विष्णुजीहैं तिस से हे द्विजो वेदपढ़नेवालाहै सो सबकाम फलपाताहै ६७॥

इतिश्रीवृहन्नारदीय पुराणभाषानुवादमें वर्णाश्रमधर्मकथनमें निरूपणनामसे तेईसवांअध्याय भया २३॥

चौबीसवां अध्याय॥

गृहस्थीकेधर्मोंका निरूपण॥

श्री सनतजी बोले कि ब्रह्मचारी वेद पढ़ने समय तक नियममें गुरुजीकी सेवामें परायणभया फिर तिनहींकी आज्ञासे अग्निका परि ग्रहणकरे अर्थात् अग्नि स्थापन

अरुवेद वेदांग अरुधर्मशास्त्र पढकर गुरुदक्षिणादेवे अरु गृहस्थीहोवे अर्थात निज विवाहकरे २ सो ऐसी कन्या विवाहै जो रूपवाली अरु सुलक्षणा वतीहोवे गुणा वाली अरु श्रेष्ठ कुलकीहो तथा श्रेष्ठशीलवाली अरु धर्म में परायणाहोवे ३ अरु माताकेकुलसे तो पांचपीढीसे ऊंची अरु पिताके कुलकी सातपीढीसे परेहो ऐसी कन्याको द्विज विवाहै नहीं तो गुरु तल्पगामी अर्थात महापापी होताहै ४ अरु ऐसीसे विवाह नकरे जो रोगवाली अरु वृत्तगोल नेत्र जिसके ऐसी अर्थात गोलआंखोंवाली अरु रोगी कुलमें जन्मी बहुत बालोंवाली अरु जिसके केश नहीं होवें अरु बकवादन ऐसी न होवे ५ अरु जो वोंनी अरु कायस्थ अरु वैश्यसे शूद्राणी में जन्मी अरु बहुत लम्बी अरु कुरूप वाली होवे अरु घट बढ शरीरवाली बावली अरु निन्दा करतीऐसीसे विवाह न करे ६ अरु जो मोटे टकनों वाली अरु लम्बी जांघों वाली अरु जो जो पुरुषके जैसे आकार वालीहो अरु जिस के मुखपर बालहों अरु अधिक अंगवाली ऐसी न विवाहै ७ अरु जो वृथा हसती अरु सदा दूसरे घर जानेको चाहती हो अरु विवाद करती भ्रमचित्त अरु निठुर ऐसी नव्याहे ८ अरु बहुत खानेवाली बडे दांतोंवाली मोटे होठोंवाली बैठे गल गदावाली अत्यंत काली लाल वर्णवाली अरुहदी ली ऐसी न विवाहै ९ अरु सदारोनेवाली पीलेवर्णवाली अरु निन्दकअरु सांप कोजोआदिसे हत अरु बहुतसोने वाली ऐसी से विवाह नहीं करना १० अरु जो अनर्थ भाषणी अरु [illegible] करती अरु पर[illegible] करती ऐसी

से न विवाह करै १२ जो छोटही अरु लंबे नावोंवाली घने अरु केशवाली जिनके बालकोंवै रावेवाली अरु कुले को सी भक्ति वाली अर्थात् कपटी ऐसीसे सर्वथा विवाह न करै १२ हे ऋषियो जो बालपने में अनाथसे स्त्रियों को व्याह भी लेवेतो निर्गुणा अरु मूर्ख जानकर तिसका परि-त्यागकरदेवै १३ अरु जो स्त्री भर्त्ता अरु पुत्रोंसे निठुर रहती हो अर्थात् तिनके अनुकूल नहो अरु पराई सीख मानती हो ऐसी नारी का सर्वथा परित्याग करदेवै १४ अरु हे ऋषियो विवाह [ब्राह्म्य] आदि आठ प्रकार के होते हैं सो पहिले २ के अभाव से दूसरा २ करना १५ सो ब्राह्म्य दैव अरु आर्ष (प्राजापत्य) अरु (आसुर गांधर्व अरु राक्षस) अरु आठवां [पैशाच] विवाहहै १६ सो ब्राह्मण तो ब्राह्मविधि अर्थात् शास्त्ररीतिसे ब्राह्मण की कन्याके साथ विवाह करै १७ अथवा दैव विवाह करे अरु कोई आर्ष अर्थात् कन्या पितासे गऊलेके विवाह करदेवै ऐसी विधि कहतेहैं १८ अरु हे द्विजो [प्राजा पत्य] आदि पांच विवाह हैं सो निंदित हैं जो कहे विवाह न होसकें तो प्राजापत्यादिकोंकोही करै १९ अरु य-ज्ञोपवीत [illegible]

नित्यही पढ़ता रहै अरु यथा योग्य आचार धर्मसे रहै
पराया अन्न न खावे अरु पर निन्दा न करे पैर से पैर न
धरै झूठको उलंघे नहीं दोनोंहाथ मिलाकर शिर नखुजावे
पूजन योग्य स्थान अरु देवमंदिर इनको सदा दाहिने देके
चले २३।२४ अरु देवपूजन आचमन स्नान व्रतश्राद्धआदि
कर्मोंमेंखुलीशिखा नरक्खेअरुएकवस्त्र धारणा नकरे २५
खोटी सवारीपर न चढ़ै अरु खाली विवाद न करे परस्त्री
गमन नकरे अरुनिन्दा रहितरहै २६ अरु हे द्विजो पीपल
अरु चौराहे को बायेंदेके न चलै बड़ोंकी निन्दा न करे
अरु दिनसें न सोवे २७ पराये पापोंको न कहै अरुअपने
पुण्यका कथन न करै निजबल अरु निजजन्मनक्षत्र निज
नाम इनको यत्नसे रक्षाकरे २८ नतो खोटे जनोंकेसाथ
निवासकरे अरु न खोटे शास्त्रसुने अरु मद्यजुआ गीत इन
में प्रीति नहीं करै २९ अरु रौ ग्राहाड़ सदिरा

से न विवाह करै ११ जो चोटही अरु लंबे नाकवाली छत्तं
अरु टेढ़ेकान जिसके बोलतीवे बाविवाली अरु दुबले की
जो भीति बाली अर्थात् कपटी ऐसीसे सर्वथा विवाह न
करै १२ हे ऋषियो जो बालपने में अनजानसे स्त्री को
व्याह भी लेवै तो निर्गुणा अरु मूर्ख जानकर तिसका परि-
त्यागकरदेवै १३ अरु जोस्त्री सत्ता अरु पुरुषोंसे निठुर वर्तती
हो अर्थात् तिनके अनुकूल नहो अरु यदि लौकिक मानती
तो ऐसी नारी का सर्वथा परित्याग करदेवै १४ अरु हे
ऋषियो विवाह [ब्राह्म्य] आदि आठ प्रकार के होते
हैं सो पहिले ७ के अभाव में दूसरा २ करना १५ सो
ब्राह्म्य दैव अरु आर्ष (प्राजापत्य) अरु (आसुर गांधर्व
अरु राक्षस) अरु आठवां [पैशाच] विवाहहै १६ सो
ब्राह्मण तो ब्राह्मविधि अर्थात् ब्राह्मरीतिसे ब्राह्मण की
कन्याके साथ विवाह करै १७ अथवा दैव विवाह करै
अरु कोई आर्ष अर्थात् कन्या पिता से गऊलेके विवाह
करदेवै ऐसी विधि कहतेहैं १८ अरु हे द्विजो [प्राजा
पत्य] आदि पांचविवाह हैं सोदिन में भी जहां विवाह
न होसकै तो प्राजापत्यादिकोंकोही करै १९ अरु य-
ज्ञोपवीत [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

नित्यही पढ़ता रहै अरु यथा योग्य आचार धर्मसे रहै पराया अन्न न खावे अरु पर निन्दा न करे पैर पै पैर न धरै झूठेको उलंघे नहीं दोनोंहाथ मिलाकर शिर नखुजावे पूजन योग्य स्थान अरु देवमंदिर इनको सदा दाहिनेदेके चले २३।२४ अरु देवपूजन आचमन स्नान व्रतश्राद्धआदि कर्मोंमेंखुलीशिखा नरक्खेअरुएकवस्त्र धारणा नकरे २५ खोटी सवारीपर न चढ़ै अरु खाली विवाद न करे परस्त्री गमननकरे अरुनिन्दा रहितरहै २६ अरु हे द्विजो पीपल अरु चौराहे को वायेंदेके न चलै बड़ोंकी निन्दा न करै अरु दिनसें न सोवे २७ पराये पापोंको न कहै अरुअपने पुण्यका कथन न करै निजबल अरु निजजन्मनक्षत्र निज नाम इनको यत्नसे रक्षाकरे २८ नतो खोटे जनोंकेसाथ निवासकरे अरु न खोटे शास्त्रसुनै अरु मद्यजुआ गीत इन में प्रीति नहीं करै २९ अरु गी गाहाड़ सदिश उच्छिष्ट शूद्र अरु पतितको अरु सर्पको तथा वैद्यसे छूवेतो कपड़ों सहित स्नान करै तव शुद्धहोवे ३० ए टे अरु चिनाईका काठ शव अरु चांडालको अरु पजारिको छूएतो कपड़ों सहितनहावे ३१ दीपक अरु निजदेहकीछाया केशवस्त्र घड़ाजल नकरे अरु बिलाव को पैर तलेकी रज ये पर्व

को शरीर में न लगावे अशुद्धहुआ ताम्बूल न खावे अरु सोतेको नहीं जगावे ३६ अशुद्धभया अग्निकी परिचर्या अर्थात् रसोई आदिक न करै अरु तैसेही गुरुदेवताओंकी पूजा नकरै केवल बायें हाथसे अरु मुंहलगाकर जल नहीं पीवे ३७ हे मुनियो गुरुजीकी छाया अरु तिनकीआज्ञा नहीं उलंघै अरु योगी ब्राह्मण व्रती यति इनकी निन्दा नहीं करै ३८ अरु पराये मर्मकीबात अर्थात् जिसेसुन के दूसरा दुःखीहो ऐसा वचन न बोले अरु मावस पूर्णिमा को यथा विधि यज्ञ पूजन करतारहै ३९ आपोशान कर्म अर्थात् कुल्लकुल्लेना साम सवेरे हे ब्राह्मणो भोजन के साथ करता रहै अरु भोजनके अंतमें आपोशान त्यागे अर्थात् कुल्ला कुल्ले न करै तो पतित कहाताहै ४० दक्षिणायन उत्तरायणमें अरु युगादि तिथियोंमें अरु मेषतुलाकीसंक्रांति में अरु पितृपक्ष अर्थात् कन्या राशिमें हे द्विजो गृहस्थी सदाबड़ाईसे श्राद्ध करता रहै ४१ अरु मन्वादि तिथियों में अरु अष्टकाओंमें अरु नया अन्नहोनेपर गृहस्थी श्राद्ध करै ४२ वेदपाठ घरमें आयाहो जब अरु सूर्य चंद्रमा के ग्रहणा में पवित्र तीर्थ क्षेत्रोंपै गृहस्थी श्राद्ध करै ४३ यज्ञ दान तप होम पठन अरु देव पूजा पितृ तर्पण यह सब कर्मक्रिया जहां तिलक न लगायें बिन वृथा होता है ४४ चार आंगुलोंवाला ऊंचा तिलक लगाना कहा है नियत करने से तिसमें वर्णोंका प्रकार प्रकाश करना ४५ हे मुनियो मैंने ? देवमार्ग में कहे अनेक धर्म किन्तु अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रियवैश्य इन तीनोंको कर्तव्यहै जो सबकाम फल देनेवाले सो हे अरु जो देव आचारमें से प्रमाण है

तिनहीं पर विष्णुजी प्रसन्न होते हैं अरु तिन विष्णुजी के प्रसन्न भये हे द्विजो क्या असाध्य है अर्थात् तिनके प्रसन्न भये सबही सुलभ है ४७ ॥

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणभाषापण्डितदेवीसहायकृतमकल आश्रमधर्मनिरूपणन्नामचतुर्थविंशोऽध्यायः २४ ॥

पच्चीसवां अध्याय ॥

गृहस्थोंके आचार धर्मोंका निरूपण ॥

श्रीसूतजी बोले हे मुनीश्वरो अब हम गृहस्थी के आचार का बर्णन करते हैं जिसे आचरण करते जनों के पाप निस्संदेहही नष्टहोते हैं १ सोजन रात्रिके चौथे पहरमें उठकर शुद्धआजीविकाका बिचारकरै निजबालों को बाहके सुधारता रहै २ सो दिन अरु संध्याओं में तो कानमें जनेऊ चढ़ाये उत्तरमें मुख कर मलमूत्र छोड़ै अरु तैसेही रात्रिको दक्षिणामुख मलमूत्र छोड़ै ३ सोशिर के वस्त्र लपेटकर अरु पृथ्वीको तिनकोंसे ढकके जिस से भूमिमें मल न पड़ै अरु एकहाथमें लोटा लिये मौन भया शौच शुद्धिकरै ४ सो मार्गमें गऊओंके स्थान अरु नदीके तीरपर तड़ागमें अरु कूएँके निकट अरु वृक्षोंकी छायामें उपवनमें अरु अग्नि निकट ५ देव मंदिर अरु उजाड़ में जहां आड़ नहींहो हलजोती भूमिमें अरु चौराहे में ब्राह्मणों को अरु गऊ गुरु स्त्री इनके निकट ६ तुस अंगारे कपालों में अरु जलमें हे द्विजो इत्यादि अयोग्य स्थानोंमें मलमूत्र नहीं छोड़ै ७ इस प्रकारसे सदा शौचकरना यह द्विज शौचही से कहाता है शौच अरु आचारसे रहितका सब कर्मक्रिया निष्फल होताहै ८

अरु शौचबाहर अरुभीतरके भेदसेदोप्रकारकाहै सोबाहर की शुद्धि तो जल मृत्तिका से होती अरु भावशुद्धि यह भीतरका शौचहै९ ऐसेही फिर मलमूत्र छोड़के लिंगको हाथ से पकड़े शौच के लिये मृत्तिका लेवे सो जबतक दुर्गंधि दूरहो तबतक शुद्ध कियेजावे १० अरु जो स्थान उच्छिष्ट भ्रष्ट न होवे तहांसे मृत्तिका लेवे अरु जो चूहे आदिकोंने खोदी अरु हल से उखड़ी ऐसी न लेवे ११ अरु बावड़ी कूप तड़ाग की मृत्तिका नहीं लेवे फिर जल मिट्टी मिलाकर प्रयत्न से शुद्धि करै १२ सो एकबेर तो लिंग के मृत्तिका लगावै अरु तीन बेर बायें हाथ के फिर दोनों के फिर दोदो बेर गुदाके पांचबेर दशबेर तथा सातबेर अर्थात् सबहुबेर दोनों हाथोंके १३ ऐसे दुर्गंध छूटनेकेलिये शुद्धि करैयह गृहस्थोंकाशौच कहा ब्रह्मचारियोंका इससे दुगुना जानना १४ वानप्रस्थ वालों को तिगुना अरु संन्यासियों को चौगुना शौच करना कहा है अरु निज ग्राम में तो यह संपूर्ण शौचकरना अरु मार्गमें आधाही कहाहै १५ अरु हे द्विजो आतुरता में अरु आपत्तिमें कुछ नियम नहीं जैसाबनै तैसाही करै परन्तु भी दुर्गंध मिटनेतक शौच यत्नसे करै १६ तिन त्यागी स्त्रियोंको भी दुर्गंध छुटनेतक शौच करनाकहा अरु जो नियमवालीहैं तिनसबोंकोहेद्विजो यतियोंके समान अर्थात् चौगुना शौचकरना कहा १७ अरु हे द्विजो विधवाओं कोभी चौगुना शौचकरना कहाहै तिस से शौचकरके फिर दर्भ वा उनरमें मुखकरके १८ नावधानभया आचमनकरै जो जल दुर्गंध झागसे रहितहो तिसमें ।

गालों को धोवे और इसे होठोंको पोंछे १९ और तर्जनी अँगूठाके योगसे दोनों नासिका छिद्रोंका स्पर्श करे और अँगूठे अनामिकासे नेत्र और कानोंको छूवे २० और छोटी अंगुली अँगूठे से नाभिस्पर्श करे और हथेली से हृदा छूवै और अंगुलियों के अग्रभाग से छाती का स्पर्शकरे २१ ऐसे आचमन करके द्विज उत्तम शुद्ध होताहै फिर स्नान करे और मार्जन तर्पण करे २२ फिर संध्यावंदन करे और गायत्री मंत्रसे सूर्य जीको अर्घ्यदेवै कि प्रातःकालजबतक सूर्य दीखे तबतक गायत्री जपतारहे २३ तैसेही सायं-काल में बैठा तारे दीखें तब तक जपता रहै और तैसेही मध्याह्न की संध्या करके पहिलेकी नाईं अर्घ्य देवै २४ और खड़ावा बैठाविधिसे गायत्री जपै प्रातःकाल और मध्याह्न में गृहस्थी स्नान करे २५ और दर्भ हाथ लिये ब्रह्मयज्ञ करे जो प्रमाद वा विघ्न आलस्य आदिकोंसे दिनके कर्म न किये जावें तोवे रात्रि के पहिले पहर में सबकर लेने चाहिये अर्थात् सबकर्मोंका वहही कालहै तभीकरलेवै २७ जो मूर्ख द्विज स्वस्थ भयाभी संध्या नहीं करै वहसब धर्मोंसे बहिष्कार किया पाखंडी जानना २८ जो कपट बुद्धिवाला संध्या वन्दन आदिकर्मोंका परित्यागकरे तिसे महापापी जानना २९ जो द्विजसंध्यादि कर्मत्यागने वालों से संभाषण करतेहैं प्रलय पर्यंत घोरनरकमें पड़तेहैं ३० [illegible] ऐसे कर्मकांडो विधिसे देवपूजन और बलि-[illegible] ३१ [illegible] का [illegible] से [illegible] होकर अतिथि आदि जनों को मधुर वाणी कहनी चाहिये ३२ और जिसका फल कंदमूल वा

अन्नदान से पूजन करै अथवा मधुर वचन सेही तिसका संतोष करदेवै ३३ क्योंकि जिसके घर से अतिथि आश तोड़के जाता वह तिसको निजपापसौंपके अरु तिसका सब सत्कर्म लेकर चलाजाताहै ३४ जिसका नामगोत्रनजाना होजोऔरग्रामसेआयाहो ऐसेको विद्वान् अतिथि कहतेहैं गृहस्थी तिसका विष्णु बुद्धिसे यथायोग्य पूजन करै ३५ निज ग्रामवासी वेदपाठी विष्णुभक्त अनाथ विप्र इनको नित्य अन्नदेकर पितृयज्ञश्राद्धादिककरै ३६ पंचयज्ञका परित्यागकरै सोब्रह्महत्यारा होताहै तिससे नित्यप्रयत्नसे पंचयज्ञकरतारहै ३७ सो देवयज्ञ १ पितृयज्ञ २ भूतयज्ञ ३ मनुष्ययज्ञ ४ अरु ब्रह्मयज्ञ ५ ये पांच यज्ञ कहेहैं ३८ फिर चाकर सिंगों सहित सोलभया अपशा भोजनकरै सो द्वि-ज भोजनीय अर्थात् शुद्ध योग्य अन्नखावै अरु अन्न का परित्याग न करै अर्थात् अन्न को उच्छिष्ट में छोड़ के न फेंके ३९ अरु जो आसन पर पैररखके अरु एकवस्त्रमें अर्थात् अंगौछे बिन अरु जो मुखसे फूंक देकर अर्थात् भसकता भया भोजन करै वह सुरापानी कहाता है ४० जो मोदक फल आदिकों को खाके आधे २ फिर खावै अर्थात् जो मुंहसे तोड़तोड़के खावै अरु जो प्रत्यक्ष में ल-वण अर्थात् लवण लेके खाखावै तिसको गोमांस भक्षण का पापलगता है ४१ जो बिन कुल्ला किये अरु आचमन में एक जलपीके आधे में जल को अर्थात् दोनोंका बचाकर पीवे वह दुराचारी होजाहै ४२ जो वह गृहस्थी भो-जनका पश्य अर्थात् नवानादिक तथा अयोग्य काल में भो-जनकोत्यागे अर्थात् तुल्यकालकेबिना तृप्ता भोजनकरै ४३ फिर

आचमन करके शास्त्रोंका चिंतनकरै फिरअग्नि भयेभी यथाशक्ति शयनआसन भोजनोंकरके वा कंदमूल फलों से आये अतिथि का सत्कारकरै ऐसे बुद्धिमान् गृहस्थी नित्य श्रेष्ठ आचार करतारहै ४४ । ४५ जो आचारों का परित्याग करे तौ वह अवश्य प्रायश्चित्ती होता है फिर हे द्विजो निज देहको बुढ़ापे आदि रोगों से दुःखित देखके ४६ पुत्रोंके आश्रय निजस्त्रीको छोड़के या साथ हीलेकर वनमें चलाजावे तहां त्रिकाल स्नानकरै अरु नख दाढ़ीजटाधारण किये ४७ धरतीमें सोवे अरु ब्रह्मचारीरहै अरु पंचयज्ञ में परायणा रहै सो नित्यफलमूल खावै अरु पढ़नेमें परायणरहै ४८ सबभूतोंमें दयावान् अरु नारायणमें परायणा रहै अरुग्राममें उत्पन्न भयेफल फूलोंको ग्रहण नहींकरै ४९ आठग्रास भोजन करै अरु रात्रिको नखावै अरु वनके भयेतैल सेही सदा वानप्रस्थ संगमरखै ५० दंडआदि बल दर्प नकरै अरुअधिकनिद्रा आलस्य तजै मिथ्या वाद विवाद अरु वृथा वाद इनसे रहितरहै ५१ अरु नित्यही शंख चक्र गदाधारी मुरारिजी को ध्यातारहै अरु वह यति चांद्रायण आदि व्रतनियम करै ५२ अरु शीत वायु आदिकोंको सहै अरु सदा अग्निरखता रहै जबकि सब वस्तुओंमें मनसे वैराग्य उत्पन्न होवै तबही ५३ विना संन्यास लेलेवै नहीं तौपतित होजाता है जो वेदांत अभ्यासमें परायण शांतदांत अरु जितेंद्रिय ५४ निर्द्वन्द्व अरु अहंकार रहित अरु सदा ममता रहितहो नवासक आदि गुणोंसेहीन अरु सदाकाम क्रोध रहित रहै ५५ नंगारहा चीर कोपीन धारी अरु

संन्यासी शिर मुंड अर्थात् केशरहित रहै अरु शत्रु मित्र में समान अरु मान अपमान में भी समान रहै ५६ अरु एक रात्रि तौ ग्राम में अरु तीन रात्रि नगर में रहै नित्य भिक्षा-मांगे अरु एक अन्न सदा नहीं खावे ५७ अरु अनिंदित ब्राह्मण के घर जो भक्ति युक्त अरु विवाद रहित होवे तहाँ संन्यासी भिक्षा के लिये जावै ५८ अरु त्रिकाल स्नान करता नारायण में परायण रहै अरु जितेंद्रिय सावधान भया प्रणव ओंकार का जाप करै ५९ जो लंपट यति एकाकी अन्न खाता रहै तौ तिसकी तौ प्रायश्चित्तों से भी शुद्धि नहीं होय ६० हे ब्राह्मणो जो संन्यासी द्र-व्यावान् रहै वह चांडाल समान अरु वर्णाश्रमों से निंदित है ६१ जो आत्मा का चिंतवन करै सो केवल ना-रायण का चिंतवन करै फिर जो माया से परे अनिंदित नि-र्मल शांत अरु आकाश से परे ऐसे तिसे अहंकार रहित भ-या ध्यावै ६२ जो विष्णु जी अविनाशी परिपूर्ण अरु स-च्चिदानंद विग्रह हैं जिस आत्मा में स्थित शुद्धस्वरूप सना-तन परम जो तिसे ६३ फिर जो निर्विकार आदि अंतरहि-त अरु जगत् के कारण हैं ऐसे निर्गुण परमात्मा का ध्या-न करै ६४ अरु उपनिषदों का पाठ अरु वेदांत के अर्थों-का अभ्यास करै ६५ अरु उपशांतात्मा जो नित्य ब्रह्मनि-ष्ठ वाले तिसे जो तिन्हीं भया तथा प्रजपता रहै तिसको उत्तम फल होता है ६६ वेद ध्यान में परायण अरु अहंकार से रहित रहता वह परमानंद पुरुष परम ज्योति सनातन ब्रह्म को पहुँचै है ६७ संन्यासी वे सब पापों से छूट भये परम स्थान को प्राप्त होते हैं ६८ जहां गये शोच नहीं आवै अरु

वर्णाश्रम धर्मों से रहित परंपद को प्राप्त होताहै ६६ ॥

इतिश्री.बृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमेंगृहस्थोंकेधर्मोंकावर्णन इसनामसेपच्चीसवांअध्यायभया २५ ॥

छब्बिसवां अध्याय ॥

श्राद्ध विधान का वर्णन है ॥

श्री सूतजी बोले हेऋषियो अब तुमसारे श्राद्धकी उत्तमविधिको सुनोजिसेकरके सबपापोंसेजनछूटै गो इसमें संशय नहीं १ सो श्राद्ध करता द्विज पहिले दिन विधिसे स्नानकर एकबेर भोजन करे पृथ्वी में सोवे ब्रह्मचारी रहै रात्रिको ब्राह्मणों को न्योतादेवै २ अरु आप दंतधावन तांबूल तैल उबटना विषय औषधि अरु पराया अन्न इतनी वस्तुओंका सेवन नहीं करै ३ तथामार्ग चलना कलह क्रोध रति बोझ उठाना अरु दिनमें शयन ये श्राद्ध कर्त्ता अरु भोक्ता इनदोनोंको वर्जित हैं ४ जोद्विजश्राद्धमें न्योताभया अरु स्त्रीसंगकरैतोवह ब्रह्महत्याराहोता अरु नरककेलिये तयार होता जाननाः५ श्राद्धमें ऐसे ब्राह्मणों को बुलावे वेदपाठी अरु विष्णु भक्तहोअरु निज आचार धर्म परायण शांतहो अरु कुलीन होवै ६ अरु जो रागद्वेषरहित अरु पुराणार्थ वेत्ताहो अरु (त्रिमधु) त्रिसुपर्णा इनपाठोंको जानताहो अरुसर्वज्ञ दयावान होवै ७ जो देवपूजा में परायण अरु शांतहो स्मृतियोंके तत्त्वको जानताहो अरु वेदांत अभ्यास सहित अरु सबके हितमें परायण होवै ८ हालतक अभ्यास अरु गुरुसेवामें परायण होवैअरु जो श्रेष्ठ शास्त्रों से औरोंको उपदेश करताजान

देताहोवै ९ हेब्रह्मर्षे ऐसे २ ब्राह्मण श्राद्धमें बुलानेचाहिये अब हम श्राद्धमें वर्जनीय ब्राह्मणोंको कहतेहैं तुम हमसे सुनो १० जो हीन अंगवाला अरु अधिक अंगवाला वैश्य और शूद्रसे जन्मा अरु रोगी कुष्ठी अरु जिसके नख खोटेहों लंबेकानोंवाला अरु नियमत्याग करनेवाला ११ अरुनक्ष- त्रसूची सुखदेजलानेवाला विवादी दुःखनाशीखोटा अरुपुजारी निंदक न सहनेवाला धूर्त तैसेही ग्रामभरका याचक अरु शास्त्र पढनेवाला अरु परान्न भोजन करनेवाला १३ व्य- भिचारिणी स्त्रीका पोषण करे अरु तिसकापति कुण्ड अरु गोलक तथा अयाज्य याजक १४ पाखण्डाचारी वृथामुंडापराई स्त्री अरुधनहरणमें परायण जो विष्णु भ- क्तिहीन अरुशिवभक्तिसे विमुखहोवे १५ जो वेदबेचै अरु नियमबेचै स्मृतिबेचै संबदेवै गानेवाले काव्यबनानेवा- ले अरु वैद्यक जीविकावाले १६ जो वेद अरु ब्राह्मणोंकी निंदामें परायण जो नित्य राजाकी सेवाकरै ग्रामयाचक दुर्जन १७ जो मदपानकरै जो जुवा खेलै अरुपापी मिथ्या- भाषी अरु ग्राम वन जलानेवाला १८ तैसेही अत्यंतकामी अरु रस बेचनेवाला कपटयुक्तावाला ऐसे ब्राह्मण श्राद्ध में प्रयत्नसे वर्जनीयहैं १९ हेब्रह्मर्षे श्रेष्ठब्राह्मणोंको पहि लेदिन बुलावै सर्वोदिन स्नानादिकै अरुक्रोधरहित ब्राह्मण भीब्रह्मचारी अरुजितेन्द्रियरहै २० श्राद्धकोदेनेवालाभी देवै अरु प्रसन्नता से भोजन करै तैसे बुद्धिमान् ब्राह्मण को स्त्री त्यागिदेवै जितेन्द्रिय सदा धनवान रहै २१ फिर दूसरे प्रातःकाल उठ नित्यकर्म नमस्कारके (कुतप) अर्थात् मध्याह्न से कुछ न्यून समय में श्राद्धका प्रारम्भ

करे २२ सो कि जिनके आठवें मुहूर्त अर्थात् सोलहवीं घड़ी में जब सूर्यजी शिखरपर ठहरें वह (कुतप) कालजानना तिसमेंपितरोंकोदियाअन्नादिक अक्षयफलहोताहै २३ हे ऋषियो ब्रह्माजीने पितरोंको मध्याह्न समयही भोजन करनेको बतायाहै तिससे ब्राह्मणोंको तबही श्राद्धकरना चाहिये २४ हे मुनि वर्यो जो द्विज अकाल में पितरोंको अन्न देतेहैं सो राक्षसी अन्नहोता अरु पितरों को नहीं मिलताहै २५ जो सांझसमय पितरोंको अन्नदियाजाता वह राक्षसीय अन्नहोताहै तिसे देनेवाला नरक में जाता अरु भोजन करनेवालाभी नरक भोगता है २६ हे द्विजो जो मध्याह्नकी तिथि खंडित हो अर्थात् टूटीहोवे तो जिस दिनमध्याह्न में होवे वह ग्रहण करनी २७ जो श्राद्ध की तिथि दोनोंदिन मध्याह्नमेंहो तो जोक्षयहोवे तो पहिली ग्रहण करनी अरु बढ़ीहोवे तो पिछलीमें श्राद्धकरना २८ जो तिथि पहिलेदिन तो चारघड़ीहो अरु दूसरेदिन सांझ तक होवे तो तहां वह पिछलीही पितरों को अन्नदेने में श्रेयहै २९ कई कहते हैं कि पहिलेदिन मध्याह्न में चार घड़ी हो तो पहिलीही कव्यदान में ग्रहण करनी पर हे मुनीश्वरो यह सत्शासन नहींहै ३० ऐसे फिर न्योते ब्राह्मणोंके मिलनेते पवित्रमणा करता तिनसे श्राद्धकेलिये आज्ञालेके फिर आज्ञा पाके फिर ब्राह्मणोंका निमंत्रण करे ३१ जो दो द्विज तो विश्वेदेवोंके लिये अरु तीनपितरों के लिये क्रिसमें न्योते अथवा विश्वेदेवा अरु पितरों के लिये एक एक ही न्योतनेके ३२ फिर पाद्य देनेके लिये आज्ञालेके फिर दोमंडल बनावे सो चौकोना तो ब्राह्मण

के अन्न लेपित के निकालना चैवयों, तीन अन्न बूंद के
विड़कालों लगालेना चाहिये ३३ जो पका ब्राह्मण न
मिले तो भांडेको वा पुत्रको नियोजन करे अथवा अपने
से भावना करके अर्थात् आपक स्थापन करके श्राद्ध
करलेवै परंतु शूद्र ब्राह्मण को नहीं वैठावै ३४ फिर
ब्राह्मणों के पैर धोय तिन आचमन कराकर आसनपर
वैठावै अथवा विष्णु परम विष्णु नारायण जी की पू-
जा करै ३५ फिर हे द्विजो ब्राह्मणोंके चरणोंमें अर्थात्
अगाड़ी भोजन पात्र में तिल डारै जो (अपहता) इस
ऋचा को पढ़कर तिल डारै ३६ अन्न अवयवों देवोंकि
चे देवोंका यज्ञभागनके) यहहनके विश्वेदेवोंके आगे
छोड़दे अन्न कहदेवें कि इस आसनपर बैठिये ३७ सं-
कल्प अर्थात् [विश्वेदेवाः संतु] इत्यादिकसे संकल्प में
अन्न आसनके संकल्पमें तो यहां विशेष अर्थात् [अमु-
क गोत्रस्यामुक नाम्नः] ऐसा कहना अन्न आवाहन में
द्वितीया हैं (अमुकगोत्रममुकनामानं) ऐसा कहना
चाहिये अन्न अक्षय दानमें चतुर्थी हैं (अमुकगोत्रा-
यामुकनाम्ने) ऐसा अन्न रेय स्वधास्थान में संबोधन प्र-
थमा लगाना हैं (अमुकगोत्रामुकनाम) ऐसा कहना
चाहिये ३८ फिर दो पात्रमें तिनके ऊपर कोई अन्न
तिनके (शन्नोदेवी) इस मंत्रसे जलडारै ३९ फिर तिनमें
(यवोसि) इस मंत्रसे यव छोड़ना संपूर्णों से पाहनको
फिर (विश्वेदेवास) इत्यादि से विश्वेदेवोंका आवाहन
करै ४० (विश्वेदेवाः) इसके से इसका प्रश्न से
विश्वेदेवोंके अर्थात् फिर [illegible] अन्न पूर्व [illegible]

नैवेद्य आचमन तांबूलफलोंसे विश्वेदेवोंकी पूजाकरे ४१ फिर (उशंतस्त्वा) इस मंत्रसे पित ेंको आवाहन करके तिनको भी पहिलेकी नांई अर्घ देवे सो तिसमें (तिलोसि) इस मंत्रसे तिलछोडकर फिर (यादिव्या) इस मंत्रको पढ़के देवे फिर गंधपुष्प धूपदीपों से अरु वस्त्र आभूषणोंसे यथाशक्ति पूजाकरे ४२।४३ फिर घृतमिलित अन्नको ग्रहणकरके (अग्नौकरवाणिकरिष्ये) ऐसे कहकर तिनसे आज्ञाले ४४ फिर ब्राह्मण कहैं कि हां अग्नौकरणकरिये अर्थात अग्नि में आहुति दीजिये ऐसे ४५ फिर यथा विधिसे (आपोशान) करकेवाला अग्निमेंडाकर (अग्नये कव्यवाहनायस्वाहा) अरुसोमायपितृमतेस्वाहा इनदोनों मंत्रोंसे अग्निमें दोआहुति छोड़े ४६ यहही पितृयज्ञ कहाताहै इन दोआहुतियोंसे पितरतृप्तहोतेहैं ४७ जो विधिपद अग्नि न मिले अर्थात् कर्त्ता निरग्निकहो तो ब्राह्मणों के हाथमें हवनकरे अथवा आचार से जलमेंही आहुति देवे ४८ जिसकेऊपर अग्नि नष्ट होगयाहो जैसे स्त्री आदिके

दूर होनेपर जल आदि पात्र बिये हाथसेंही आहुति देना
कहते हैं सो ठीक नहीं ५३ हे द्विजो ये आहुतियें द्रव्य
उपजानेवाले कहीं कहती फिर तिनसे शेष अन्नको ब्रा-
ह्मणों के भोजन पात्रोंमें धरै अरु हरि स्मरणकरै ५४
फिर भक्ष्य भोज्य लेह्य चोष्य इन चारों अन्न अरु नानाव्यं-
जनोंसे ब्राह्मणोंके पात्रोंको पूर्णकर फिर दोनोंजानोंमें
अन्नपरोसकर ५५ फिर हे बडभागी विश्वेदेवा आवैं तें
निमित्तमहाबली जो आवैंगे सो सावधानहोओ ५६ ऐसे
अरु [येदेवास] इस ऋचासे देवोंकी प्रार्थना करै अरु
तैसेही [येचेह]इस मंत्रसे विद्वान् कर्त्ता पितरोंकी प्रार्थना
करै ५७जो शुभ प्रकार प्रकाशमान तेजस्वी पितर हैं तिन
योगदृष्टिवाले ध्यानेयोग्य पितरोंको मैं नमस्कार करता
हूं ऐसे पितरोंको नमस्कार करके फिर नारायणादी ये
नारायणार्पण यजमान दिये अन्नको अरु किये कर्मको
विप्राग्निमें समर्पण करदेवै ५९ फिर वे ब्राह्मणमौन
भये भोजन करें जो हँसैं अरु विवादकरैं तो वह अन्नरा-
क्षसीय होजाताहै ६० फिर यथा आचारसे मधु सोना-
दिकपदार्थोंमें अरु उत्तमपदार्थ भोजनमें ब्राह्मणपाकादिकों
की प्रशंसा न करें ६१जो श्राद्धमें बैठाया ब्राह्मण पत्तल
छोड़कर चला जावै तो वह श्राद्ध करनेवाला अरु नरक
वासी जानना ६२ जो भोजन किंतु आपसमें स्पर्शकरैं
अरु तिस अन्नको न छोड़ैं किंतु खातेजावें तो उच्छिष्टको
आचमन नहीं तब तक होवे ६३ हे द्विजो तिनके भोजन
करते नारायणको भोजनभया कहीं अनन्त नामवाला
विष्णु का स्मरण करना ६४ भोजन करना अरु किया

सम्बन्धी अरु विशेषसे पितरों के मंत्रोंका पाठ करें फिर पुरुषसूक्त अरु तीनबेर (नाचिकेत) अरु तीनबेर (मधु) तीन बेर सुपर्ण फिर और पवित्रकारक यजुर्वेदकी ऋचा पढ़ै ६५ अरु औरभी इतिहास कथाकहै तथा धर्मशास्त्र पठन करै सो जब तक ब्राह्मण भोजन करते रहैं तब तक पठन करै फिर ब्राह्मणोंके भोजन करचुके पिंडके अर्थ अन्न छोड़ै अरु (मधुवाता) इत्यादि पढ़ै फिर आचमन कर निजपैर धोकर तिनको भी आचमन कराकर सावधान भया पिंडदानकरै ६६।६७।६८ अरु हे द्विजो अध्वगामी अर्थात मार्गमें चलनेवाला अरु आतुर अरु जो धनहीन होवे वह कच्चाकोरा अर्थात कंदमूल फलादिकोंसे श्राद्ध करे जो श्रद्धाहोतो सुवर्णसेकरै ६९ जो द्विजअरुद्रव्य दोनों न हों तो केवलअन्नहीसे पाकबनाकर तिससे (पितृसूक्त) करके हवनकरै ७० जो अत्यंतही द्रव्यहीन हो तो यथा शक्ति गउओंको चारा चरावै अथवा स्नानकरके यथा विधि तिलोंसे तर्पणकरै ७१ अथवा निर्जनवनमें एकांत जाकर ऊँचेसे रोवै अरुकहै किमैं दरिद्री महापापीहूं ७२ जो श्राद्ध करने योग्य पितरों के परमश्रेष्ठ दिनमें पितरों का तर्पण भी नहीं करै तो तिसकाकुल नष्ट होता अरु तिसको ब्रह्महत्या लगतीहै ७३ हेमुनिजनो जो श्रद्धायुक्त इस भांतिसे श्राद्धकरते वे सुन्दर संतानपाकर विष्णुलोको जाते हैं ७४ जो श्रद्धासे श्राद्ध करते तहां विष्णु जी पू-जित होते हैं तिन जगतके नाथ विष्णुजी के प्रसन्न भये सब सिद्धि होसक्ती है ७५ फिर हे द्विजो स्वस्तिवाचन अ-क्षतोदक देवै फिर स्वधावाचनतथा गोत्राभिवादन करै ७६

सत्ताईसवां अध्याय ॥

तिथियों के निर्णय का वर्णन ॥

श्री सूतजी बोले हे ऋषियो अबहम तिथियोंका निर्णय और प्रायश्चित्तोंकी विधि वर्णन करते हैं सो तुम श्रवण करो जिससे सबकर्मोंकी सिद्धिहोतीहै १ हे द्विजो नहीं निर्णय करी तिथियों वालेकर्मों का कुछ फलसिद्ध नहीं होता जो एकादशी अष्टमी छठ पूर्णमासी चतुर्दशी २ और तीज अमावस ये नियम उपवासादिकों में पर विद्ध अर्थात पिछली तिथिसे मिली श्रेष्ठ कहीजाती हैं पहिलीसे मिली नहीं लीनी ३ और इनसे रही जोकि दशमी नवमी पंचमी आदि तिथियेंहैं वेपहिलीसे मिली लीनी और जो छठ पंचमी से विद्धी और अष्टमी से विद्धा सप्तमी ४ और दशमीसे विद्धा एकादशी येकभीनहीं ग्र-

नक्षत्र व्रतकी तिथिहै सोभी रातमें होती ग्रहण करनी. १० हे मुनिश्रेष्ठो नक्षत्रव्रतमें वहही तिथिग्रहण करनी है मुनियो जोदोनों अर्द्धरात्रियों में नक्षत्र पायाजावे तोतिनमें पवित्रतिथि युक्तनक्षत्र ग्रहण करना चाहिये ११ । १२ जो अर्द्धरात्रियों में नक्षत्रअरुतिथि दोनोंहोवेंतो जोसयहो तो पहिलीलेनी अरु वृद्धिहोवे तोपिछली तिथिग्रहणकरनी १३ अरु ज्येष्ठासे मिलासल कृत्तिका से मिली रोहिणी अनुराधासे मिली ज्येष्ठा ऐसेंतानादिक नष्टकरतीहैं १४ तिससे अनुष्ठान कर्मऐसो दिनकीतिथि पवित्रहैं अरुरात्रि व्रतोंमें संधियोग श्रेष्ठ कहाताहै १५ जोजो तिथियें नक्षत्रयोगसे पवित्रकहीहैं तिनमें जोजो व्रतकरणा सोसोही ग्रहणकरनी १६ सोश्रवणा द्वादशी ग्रहमें उदय व्यापिनी तिथिलेनी अरु सूर्यचंद्रमाके ग्रहणमेंभी जपादिकोंमें वहही ग्रहण करनी १७ अरु सब संक्रांतियों करतों में मध्याह्न व्यापिनी तिथिग्रहण करनी जो अमावसतिथि दोनोंदिन मध्याह्नमें पाईजावे तो १८ तहां पहिली वा पिछली एकग्रहण करलेनी विद्वान पर्वपर्वमें अन्वाधान यज्ञकर्म करना कहतेहैं १९ अरुजेहिजो पंद्रांतपदासंतान श्राधादिकरणा कहाहै जोपर्वका चतुर्थांशमें अरु प्रतिपदादिक चारतिथिये तिनमें प्रातःकाल यज्ञसमय जानना चाहिये २० जो अमावस वा पूर्णिमा दोनों मध्याह्न व्यापिनीहोवें तो हे द्विजो पहिलीको पवित्रजानना २१ सब जनोंको महाद्वादशी द्वादशीमें ग्रहणकरना करणा क्योंकि वहनी दिनानिकाननी नानींजन को पुण्यधो करतीहैं २२ जो महाद्वादशी कहा यदीतिथितिथीमें पाई जावे सब हो-

दशमीकी रात्रि को तेरस आजावे तबव्रतकरनाकहतेहैं २३
कि गृहस्थियों को तो पहिली करनी अरु बैरागियों
को पिछली करनी चाहिये क्योंकि गृहस्थी सुख चाहते
अरु संन्यासी मोक्षकी इच्छा करतेहैं इससे २४ जोएक
घड़ी भी द्वादशी न हो तिसदिन पारणा न होसके अर्थात्
व्रत न खुलसके तो वहएकादशी दशमीविद्धाभी करलेनी
२५ शुक्लपक्ष में वा कृष्णपक्ष में दो एकादशी होती हैं
तिनसे गृहस्थों को पहिली अरु यतियों को दूसरीकरनी
चाहिये २६ जो द्वादशीके दिन कुछ दशमी प्रतीतहोवे
तथाएकादशी काक्षय होवे तब तबको दूसरेदिन अर्थात्
द्वादशी व्रत करना २७ जोपिछले दिनद्वादशी न हो अ-
र्थात् पारणा नहोसके तो दशमी विद्धाभी एकादशी कर
लेनी अरु जोदूसरे दिनद्वादशीहोवे तो न वेधीभईभीनहीं
करनी २८ एकादशी केदिन एकादशीअरु द्वादशीकेदिन
द्वादशी अरुद्वादशीकीरात्रिके अंतमें त्रयोदशीआजावे तो
तहाँत्रयोदशीको पारणाकरनाबारह द्वादशियोंकेफलको
देताहै २९ इससे दशमी विद्धाभी पहिलीही एकादशी
गृहस्थियोंको करनी अरु संन्यासियोंकोजो वनरहतेहैं
तिनको पिछली करनी चाहिये ३० जो सारी एकादशी
शुद्धहोद्वादशीको कुछभी नहींहो पर द्वादशीमें तेरसआ-
जावेतहांवैसेव्रतकरना ३१ तो तहांभी पहिलीगृहस्थोंको
करनी अरु पिछली यतियोंको करनी अरु कोई कहतेहैं
कि दोनोंको पिछलीही करनी ३२ जो दशमी विद्धा ३
एकादशी द्वादशीको न पाईजावे अरु द्वादशीत्रयोदशी
दोनों तहां कैसे करना ३३ तो तहां सबको शुद्धएकादशी

तिससे तिनको संसाररूप रोग कभीभी नहींहोताहै ५६ ॥

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणभाषाअनुवादमेंतिथियोंकानिर्णय इसनामसे सताईसअध्यायभया २७ ॥

अट्ठाईसवां अध्याय ॥

प्रायश्चित्तोंका विधान वर्णित है ॥

श्रीसूतजीबोले हेद्विजो अबहमप्रायश्चित्तविधान बखान करतेहैं जो कर्म प्रायश्चित्त हीनजनों करके कियाजावे १ वह सब निष्फल होताहै सोजो काम क्रोध रहित अरु धर्मशास्त्र में कुशलहोवें २ तिनसेश्रेष्ठधर्म चाहनेवाले जन निजधर्म पूछें कि हमको क्याकर्त्तव्यहै जिससे शुद्धहोवें ३ अरुजो विष्णु जीसे विमुखहैं तिनको कियेभये प्रायश्चित्त भी पवित्र नहींकरते जैसेमदिराकाघड़ा नदियोंसेधोयाभी शुद्धनहीं होता ४ सो हेद्विजो ब्रह्महत्यारी १ अरु मदिरापीने वाला २ सोनाचुरानेवाला ३ गुरुकी स्त्रीको भोगनेवाला ४ अरु पांचवां इनकेसंगकरनेवाला ५ येपांचों महापापी जान ने ५ । ६ जो मनुष्य ब्राह्मण को अपने हाथ से वध करे तौ तिसे ब्रह्महत्यारा जानना ७ जोकोई वि- नजाने ब्राह्मणको मारे तौ वहपापी बारह वर्ष तक वनमें रहे अरु तिसहीमरे विप्रकी खोपड़ी हाथमेंलेकेफिरै ८ हेद्विजो जो वह न मिले तौ औरही कपाललेवे अरुतिसद्रव्यको जो भिक्षाकरिके लावे उतनेसे मिला तिसकोलकड़ीमेंलगाकेविचरै ९ अरु नित्यप्रति सेरकबेर वनफल भोजनकरै अरु स- न्ध्या प्रकारसे त्रिकालस्नान संध्या करता रहै १० अरु पढ़ना पढ़ानाकरै किंतुविष्णुजीका हरिहरि स्मरणकरै अरु

रता ब्रह्मचर्य सेवहै सुगंध माला न पहिरे ११ और पवित्र तीर्थ और आश्रमवनोंसे निवासकरै ओवनमतोंसे प्राणा न वधै लोभादसे भिक्षासाकेलो उस्तादकार्ज पानहोवे और विष्णुओंसे बराबर रहै १२ बोकि (सैब्रह्मचत्यागाहूं)किसेतकक पतिवरोंसे निवरै सोचारविवर्णोंको भिक्षा वा विवर्ण ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इनतीनोंकेघरकी भिक्षा लेवे १३ और शुद्ध अशुद्ध का विचार करके एक काल भोजनकरै केसेहरि नाम पराशरा भया कारन वर्ष व्रतकरै १४ तोब्रह्मचारी शुद्धहोताहै और तिसको कर्मोंकी योग्यताहोजातीहै अथवाब्रतको चौथवें भूगोंमे बारोसादिकोंमे अस्तभया १५ वा राज ब्राह्मणोंके निमित्त प्राणत्यागदेवै या ब्राह्मणोंको दशलक्ष स्वर्णदान करै १६ इनमेंसे भी किसी प्रायश्चित्तको करके ब्रह्मचारी शुद्धहोताहै जो वेदपाठीऔर संयोधनेगोकेभे ब्राह्मणोंको करैवर्णन प्रायश्चितकरै १७ किसीदिनसैंवरिजावे वापर्वतपरसे गिरपड़ै और पूर्वकहा व्रतकरता जावे तौ हूबका करै तबशुद्ध होता है १८ और गुरु आदिकों केनतनेमें यत्नसे ब्रह्मोपदेशकरना कहाहै और किसीभी ब्राह्मण को हननेको उद्यम करै १९ होवेको यवज्ञानवालोंको करना प्रायश्चित्त कहाहै क्षत्रिय इससे दुगुनाकरै और वैश्यको तिगुना करना कहाहै २० जोशूद्र ब्राह्मणको मारडालै तौतिसकोप्रायश्चित कहा नहीं जाता तिसको राजाही प्राणदंड देवै ऐसा शास्त्रोंमें निश्चय है २१ और ब्राह्मणी के हनने में कहिये गये प्रायश्चित्त और कन्याके बोधादि करना कहाहै गोकिन्नागोको हननेको बोधादिन करै २२ गवब्राह्मणा स-

त्रियकोहनैतोछःमहीनेकाव्रतकरै अरुवैश्यकोहनै तोतीन
महीने अरुशूद्रको हनैतो ९० दिन व्रतकरना कहाहै २३
अरु संयोपदेशकारी अर्थात् जिनका विवाह होचुका हो
तिनके हननेसें आठवर्ष ब्रह्महत्या व्रत करनेसे शुद्धिहोती
है २४ अरु हे द्विजो यह प्रायश्चित्त विधान वृद्ध आतुर
स्त्री बालकों के हनने में आधा करना कहा है २५ अरु
गुडकी पिष्टीकी मधुकी ऐसे तीनप्रकारकी मदिराजान-
नी वह चारों वर्णोंको अरु स्त्री जनों को भी नहीं पान
करनी २६ जो किसी प्रकार पीली जावे तो दूध घृत वा
गोमूत्र को स्नान करके गीले वस्त्रोंसे मनमें नारायणजी
का स्मरण करता २७ अग्निके समान उष्ण तपाकर सु-
रापान कर पीजावे अथवा तपाये लाल २ लोहेके पात्र
में भरके पीजावे २८ तो मदिरा पीनेवाला शुद्धहोताहै
और किसी प्रकारसे तिसकी शुद्धिनहीं है जो अज्ञानसे
अरु बुद्धिसयां द्विज मदिरा पीवे तो ब्रह्म हत्या व्रत करे
तिसका चिह्न रखाहै अर्थात् वस्त्र्यां (मैं मदिरा पानीहूं)
ऐसे कहता फिरकरै [illegible] २९ जो राग निरोधके लिये

तो ३३ तिनका फिर उपनीत करना और जिसने तीन दिन कृच्छ्र करलियाहै तब वह सब पापसे छुटजाताहै ३४ और हेविप्रो छल या प्रकट बलसे व चोरीसे पराया द्रव्य हरना सो स्तेय कहाताहै ३५ और सुवर्णका प्रमाण जो मनु आदिकोंने कहाहै सोभी हम कहतेहैं जो हे द्विजो तिस प्रायश्चित्त साधकको तुम सुनो ३६ सो झरोखे में रहे सूर्य किरणों में जो सूक्ष्म रजकण पड़े वह त्रसरेणु कहाताहै ३७ आठ त्रसरेणुकी एक लिक्षा होतीहै लिक्षा-ओंका एक राजसर्षप तीन राजसर्षपोंका एक गौरसर्षप और छै गौरसर्षपोंका एक यव होताहै ३८ तीन यवोंका एक कृष्णल गुंजा होती इन पांचोंका एक माषा होताहै और सोलह माषोंका प्रमाण सुवर्ण कहाताहै ३९ जो अज्ञानसे ब्राह्मणके द्रव्यको हरताहै सो पीछेकी नाईं बारह वर्ष कपालध्वजा इनके बिना ब्रह्महत्या व्रत के समान करै ४० गुरुओं का धन करनेवालोंका और देवपाटियोंका द्रव्य हरै तो यहां वैसा करना सो कहते हैं कि ४१ हेद्विजो आत्मस्वरूप जानके और सुवर्णको चुराके लेकरके ऊपर कंडेलगाकर जलजावे तब पापसे छूटताहै ४२ अज्ञानसे ब्राह्मणका द्रव्य चोरियाहुआहै तो पूर्वोक्त व्रत से शुद्ध होताहै या आत्मसमान सुवर्ण देवे या योगीदान करै ४३ जो ब्राह्मणका द्रव्य चुराकर फिर पछताकर देदेवे तो

प्रायश्चित्त ब्रह्महत्या के समान कहाजाता है ४६ अरु जो त्रसरेणु समान सुवर्ण चुरावे तो सावधानभया दोप्राणायाम करै तव शुद्ध होता है ४७ जो लिक्षासम सुवर्ण हरै तो तीन प्राणायामकरै जो राजसर्षपभरहरै तो चार प्राणायाम करै ४८ अरु जो गौर सर्षप समान हरै तो विधिसे स्नानकरके आठसहस्र गायत्रीजपै तवशुद्ध होता है ४९ हे द्विजो यवमात्र सुवर्णचुरानेमें प्रातःकालसे लेकर सायंकालतक गायत्री का जपकरै तव शुद्धहोता है ५० जो कृष्णलसमान सुवर्ण चुरावे तो सांतपन व्रतको करै हे द्विजो अव माषेभर सुवर्ण चुराने का प्रायश्चित्त कहाजाताहै ५१ सो कि चुरानेवाला गोमूत्र से भया यवोंकादलियाखावे अरु देवपूजन करतारहै ऐसे महीने तक नियम परायण होवे ५२ सोलहमासे से कुछ थोड़ा सुवर्ण चुरावे तो वर्षतक गोमूत्रयवोंकेदलियेके भोजनसे शुद्धहोता है ५३ जो सोलहमासे सुवर्ण चुरावे तो बारह वर्षतक ब्रह्महत्या व्रतकरे तवशुद्धहो ५४ सोलहमासे से थोड़ीचांदी चुरावे तो विधि से सांतपन व्रतकरै नहीं तो पतित होताहै ५५ अरु चारनिष्कसे दशनिष्क अर्थात चालिस रुपये भरचांदी चुरालेवे तो हे द्विजो चांद्रायण व्रतकरै तव शुद्धहोवे नहीं तो पतित होजाताहै ५६ अरु हे द्विजो दशनिष्कसे सौ निष्कतक चांदीचुरानेमें तिस पापकीनिवृत्तिकेलिये दोचांद्रायण व्रतकहेहैं ५७ अरु शतनिष्कसे अधिक चुरावे तो ब्रह्महत्याव्रत करे अरु कांसा पीतल लोहा इनके सहस्र निष्ककों कोपर द्रव्य लेता है ५८ अरु रत्नों के चुराने से चांदी के समानहो

गुरुपुत्री अरु सासी इनसे जोइच्छा करके संग करै ६९ जोसकबेर करैतो बारहवर्ष ब्रह्महत्या ब्रतकारनेसे शुद्धहोताहै अरु बहुत बेरकरै तो अग्निमें जल जावै और कोई प्रकार नहीं ७० चांडालीअरु कसाईकी स्त्री बेटेकी बहू अरु बहन मित्रकीस्त्री अरु शिष्य पत्नी जो इनसे इच्छा करके संगकरैतो छःवर्षब्रह्महत्या ब्रतकारनेसे शुद्धहोताहै ७१ अरु जो इच्छानकरके इनसे संगहोजावे तोतीनवर्ष यहही ब्रतकरै अबयहा पापियोंसे संपर्क करनेका प्रायश्चित्त कहते हैं सो जिसका जिस जिन जैसेजैसे पापी से संपर्क होजावे वह तैसातैसाही प्रायश्चित्त करनेसेशुद्धहोता है ७२ जो अज्ञानसे इन पापियों के साथ पांच दिनसंग करै तो(कायकृच्छ्र) ब्रतकरै नहींतो पतित होता है ७३ जोबारह दिनसंपर्क करैतो (महासांतपनब्रतकरना कहाहै) अरु पंद्रहदिन संगकरै तो दश उपवास करै अर्थात् दशदिन तकअन्न जलरहित होवे ७४ अरु महीने भरसंगमें [पराक] ब्रतकहा अरुतीन महीनेसंगमें [चांद्र]

पल दूधपीवै एकपल घीपीवै ऐसा व्रतकरै गऊहननेमें पराक अर्थात्बारह दिनखाना ऐसा व्रतकरना कहाहै सोजो अज्ञानसे गोहिंसा होजावेतो अरु जानकर गोवध करनेका तोप्रायश्चित्तहीकहींनहीं है ७८ अरुसवारीमें जफूलकंद मूलफल अरु भक्ष्य भोज्य चुरानेमें पंचगव्य विशेषशुद्धिकारीकहाहै अर्थात् पंचगव्य पीके व्रतकरे तबशुद्ध होता हैनहींतो पतितजानना चाहिये७९ । ८० अरु जो सूखा काठ तिनके वृक्षफल अरु गुड़ अरु चर्म इनको चुरावे तो तीनदिन भोजन रहितरहे तब शुद्ध होवे ८१ अरु जो टटीरी चकवा हंस कारंडुआ उल्लू सारस कबूतर अरु मुरगाई ८२ सूवा नीलटांच मकार ककुवा इनको हते तो बारहदिन भोजन नहींकरे तब शुद्धहोता है ८३ अरु जो वीर्य विष्ठा मूत्र इनको खालेवे तो (प्राजापत्य) व्रतकरै अरु शूद्रका झूठ खा लेवे तो तीन चांद्रायण व्रतकरै तब शुद्ध होता है ८४ अरु जो रजस्वला अरु चांडाल अरु महा पापी सूतिका स्त्री अरु पतित अरु उच्छिष्ट अरु धोबी आदिकोंको जो छूवे तो वस्त्रोंसहित स्नान करे अरु घृत चाटै अरु पवित्र भया आठ सौ गायत्री जपे तब शुद्धहोता है नहीं तो पापको होता है ८५ । ८६ इन कहे भयोंमेंसे किसी का भी स्पर्श करके बिन जाने जो भोजन करलेवे तो तीनदिन उपवास करे अरु पंचगव्य पीने से शुद्ध होता है ८७ हे द्विजो स्नान दान जपादिकोंमें अरु भोजनसे यत्नसे इनका शब्द सुन लेवे तो कैसा प्रायश्चित्त करना ८८ तो हे द्विजो वह भोजन किये अन्नको छांडदेवै अरु स्नान करके गा-

यत्री जपै अरु दूसरे दिन घृत चाटै तब शुद्ध होताहै ८९ हेद्विजो जो व्रत आदिकों में इनका शब्द सुनै तौ एक सौ आठ गायत्री जपै तब शुद्धहोताहै अरु हेद्विजो तिन महापापियों का सब शास्त्रों में प्रायश्चित्त भी कहीं नहीं हैगा ९० हेराजन् जो जो महा पापों केसमान पाप कहे हैं तिनसबों का यथाविधि से प्रायश्चित्तकरै ९१ जोजन नारायण जी में परायण अथा प्रायश्चित्तों को करै तो तिसके पापनष्ट होते हैं नहींतौ पतित होजाता है ९२ जो रागादिकोंसे छूटा पश्चाताप सहित अर्थात् दुःखवालोंको देखके जो दुःखी होता सब भूतों में दया-वान् विष्णुजीके स्मरण मेंपरायण ९३ वह महापापों से वा सबपापोंसे संयुक्तहोवे परन्तु छूटजाताहै क्योंकि तिसने विष्णु जी में मन लगाया है ९४ जो आदि अन्त रहित आरोग्य रूप नारायण जीका स्मरण करैसो सब पापोंसे छूटताहै इसमें संशयनहीं ९५ जोविष्णुजी ध्याये वा स्मरण किये पूजे वा नमस्कार किये सनातन आपसब पापोंको नष्टकरतेहैं ९६ जोसंगतिसे वा लोभसेभी विष्णु जीकी पूजाकरै वहदुष्ट पापोंसे छूटा परमपदको पहुँचता

तौ तिसके सब विघ्न नष्टहोते अरु चित्तकी शुद्धिहोतीहै अरु विष्णुजीके पूजेजातेपरमसोक्षप्राप्तहोतीहै१०१धर्म अर्थ काम मोक्ष ये सनातन चार पुरुषार्थहैं सो हरि पूजा करनेवालोंको सर्वसिद्ध होतेहैं इसमें संशयनहीं१०२इस महाघोर संसारमें जो मोहरूपी निद्रा सहित इसमें जन्म लेके जो हरिकेशरणहोते वे धन्यहैं१०३अरे इसपुत्र स्त्री घर खेत धन धान्य इनसे मोहनेवाली मनुष्य वृत्तिको पाकर वृथाअहंकार मतकरो१०४किंतुकाम क्रोध मद लोभ मोह इनको तजकर अरु परसे विवाद अरु निंदाको भी तजके भक्तिसेविष्णुजीकोपूजो१०५और सबझूठे व्यवहारोंको तजकर जनार्दनजी की पूजा करो क्योंकि वे तो गंधर्वनगरकेसमानझूठहोनष्टहोतेहैं१०६जितनेकालनहीं आता अरु जितने बुढ़ापा नहींआवे अरु जितने इंद्रियों की विकलता नहीं होती तितनेही हरिपूजाकरो १०७ बुद्धिमान इसअनित्यसंसार में विश्वास नहीं करे क्योंकि मृत्यु नित्य२निकटआता अरु संपत्ति अतिचंचलहै१०८ अरु ये देह भी निकटही नाशमानहै तिससे इस अहंकार को छोड़ो जो संयोगहैं सो वियोग साथ लियेहैं यह सब प्रपंच क्षणमें नष्टहोनेवालाहै१०९हे ब्राह्मणो तुमयह जानकर जनार्दनजी की पूजा करो क्योंकि अत्यंत दुर्लभ मुक्ति इस आगाके होतेनहीं प्राप्त होती इससे सब आशा छोड़के मोक्षकी इच्छाकरो११०जो भक्ति से विष्णु जी की पूजा करता वह महापापवानभी सब पापोंसे छूटकर परमपद पाताहै१११हेद्विजो तीर्थ यज्ञ अरु सांगोपांग वेद ये सबविष्णुजीकीपूजाकी सोलहवींकलाकोभीनहींपाते

हैं ११२ वेदअरु शास्त्रोंसेअरुतीर्थोंकेसेवनसेविष्णुभक्ति हीन जनोंको क्याहै अरु तिन्होंको तप अरु यज्ञों से भी क्या होताहै ११३ श्रीसूतजी बोले हे शौनक आदि मुनि जनो ऐसे सनत्कुमार को नारदजी ने संक्षिप्त से ये प्राय-श्चित्त वर्णनकियेहैं ११४ जोआदिरहितव्यापक विष्णु जीकी पूजा करते जो विष्णु जी चेष्टारहित प्रणावस्वरूप वरयोग्य हैं अरु जो वेदांतों करके जाननीय अरुसंसार रूप रोगके वैद्य ऐसे तिनको भजके सबभक्त बैकुंठलोक को जातेहैं ११५ फिर जो अनंतमूर्त्ति व्यापक लोकोंके आश्रय भये परम ईश जो कारणरूप परम अच्युत नाम ध्येय ऐसे विष्णुजीको जोपूजें वे पवित्र पदपातेहैं ११६ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमें पण्डितदेवी-
सहाय कृतप्रायश्चित्तों का वर्णन इसनामसे
अट्ठाईस अध्यायभया २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

यममार्गका वर्णनहै ॥

ऋषीश्वरोंने पूछा हे सूतजी आपने सम्यक् प्रकार करके वर्णाश्रमोंका विधान वर्णन किया अब हम यम मार्गको पूछा चाहते हैं १ तैसेही संसार दुःख अरु तिन का शोकके नाशकाकारण अरु यहांवहांके नरकोंका भी आप यथावत वर्णन करिये २ श्रीसूतजी बोले हेऋषियो अब हम दुर्गम यममार्गका वर्णन करते हैं तुम सुनो जो मार्ग पुण्यात्मात्र्योंको सुख देता अरु पापियों का दुःख

तौ तिसके सब विघ्न नष्टहोते अरु चित्तकी शुद्धिहोतीहै अरु विष्णुजीके पूजेजातेपरमसोक्षप्राप्तहोतीहै१०१धर्म अर्थ काम मोक्ष ये सनातन चार पुरुषार्थहैं सो हरि पूजा करनेवालोंको सर्वसिद्ध होतेहैं इसमें संशयनहीं१०२इस महाघोर संसारमें जो मोहरूपी निद्रा सहित इसमें जन्म लेके जो हरिकेशरणहोते वे धन्यहैं १०३ अरे इसपुत्र स्त्री घर खेत धन धान्य इनसे मोहनेवाली मनुष्य वृत्तिको पाकर वृथाअहंकार सतकरो१०४किंतुकाम क्रोध मद लोभ मोह इनको तजकर अरु परसे विवाद अरु निंदाको भी तजके भक्तिसेविष्णुजीकोपूजो१०५ और सबझूठे व्यवहारोंको तजकर जनार्दनजी की पूजा करो क्योंकि वे तो गंधर्वनगरकेसमानझूठहोनिष्टहोतेहैं१०६ जितनेकालनहीं आता अरु जितने बुढ़ापा नहींआवे अरु जितने इंद्रियों की विकलता नहीं होती तितनेही हरिपूजाकरो १०७ बुद्धिमान् इसअनित्यसंसार में विश्वास नहीं करे क्योंकि मृत्यु नित्य२ निकटआता अरु संपत्ति अतिचंचलहै१०८ अरु ये देह भी निकटही नाशमानहै तिससे इस अहंकार को छोड़ो जो संयोगहैं सो वियोग साथ लिये है यह सब प्रपंच क्षणमें नष्टहोनेवालाहै१०९हे बड़भागियो तुमयह जानकर जनार्दनजी की पूजा करो क्योंकि अत्यंत दुर्लभ मुक्ति इस आशाके होतेनहीं प्राप्त होती इससे सब आश छोड़के मोक्षकी इच्छाकरो११०जो भक्ति से विष्णु जी की पूजा करता वह महापापवान्‌भी सब पापोंसे छूटके परमपद पाताहै१११हेद्विजो तीर्थ यज्ञ अरु सांगोपांग वेद ये सबविष्णुजीकीपूजाकी सोलहवींकलाकोभीनहींपाते

हैं ११२ वेद अरु शास्त्रों से अरु तीर्थों के सेवन से विष्णुभक्ति हीन जनों को क्या है अरु तिन्हों को तप अरु यज्ञों से भी क्या होता है ११३ श्रीसूतजी बोले हे शौनक आदि मुनि जनो ऐसे सनत्कुमार को नारदजी ने संक्षिप्त से ये प्रायश्चित्त वर्णन किये हैं ११४ जो आदिरहित व्यापक विष्णु जी की पूजा करते जो विष्णु जी चेष्टारहित प्रणवस्वरूप वरयोग्य हैं अरु जो वेदांतों करके जाननीय अरु संसार रूप रोग के वैद्य ऐसे तिनको भजके सब भक्त बैकुंठलोक को जाते हैं ११५ फिर जो अनंतमूर्त्ति व्यापक लोकों के आश्रय भये परम ईश जो कारणरूप परम अच्युत नाम ध्येय ऐसे विष्णुजी को जो पूजे वे पवित्र पद पाते हैं ११६ ॥

इतिश्रीवृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमें पण्डितदेवीसहाय कृतप्रायश्चित्तों का वर्णन इसनामसे अट्ठाईस अध्यायभया २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

यममार्गका वर्णनहै ॥

ऋषीश्वरोंने पूछा हे सूतजी आपने सम्यक् प्रकार करके वर्णाश्रमोंका विधान वर्णन किया अब हम यम मार्गको पूछा चाहते हैं १ तैसेही संसार दुःख अरु तिन लोगोंके नाशकाकारण अरु यहांवहांके नरकोंका भी आप यथावत वर्णन करिये २ श्रीसूतजी बोले हे ऋषियो अब हम दुर्गम यममार्गका वर्णन करते हैं तुम सुनो जो मार्ग पुण्यात्माओंको सुख देता अरु पापियों का दुःख

वाहै ३ हेमुनीश्वरो छियासी योजन विस्तार वाला पापियोंको भयदायी दुर्गम वतलायाहै ४ जो नर दानशील हैं वे सुखीसमे जाते अरु जोवहोने सुख्यके वे दुःखसे पीड़ा को प्राप्त होते जाते हैं ५ सो वे नंगे सूखे प्रेत सूखा कंठ तालु वा जिनका रोमे वे दीनपापीस्वर पूर्वक अर्थात् पुकार २ कर रोते तिस दुर्गम यमलोकको चलतेहैं ६ सोहो यमसार्ग भयंकर नरक करके कहाजाता है तिसही करके पापीजन जातेहैं जो सुननेवालों को भी भयदायी ७ जो पापी यमदूतोंसे हतेजाते अरु बेत आदिकों से हतेजाते अरु इधर उधर भगाते दुःखसे तिस यममार्गसे चलतेहैं ८ सो तिस मार्गमें कहीं कीच कहीं अग्नि अरु कहीं तपी कीचहै कहीं तपी बालू अरु कहीं२ पैनी धारवाले पत्थर अरु कहीं भारी शिलाहैं ९ कहीं अंगारोंका ढेर अरु कहीं महाधूवां है कहीं दुस्सह शीत अरु कहीं तिक्ष्णपवन से सुखता १० कहीं अंगारोंकी वर्षा कहीं शिलवर्षा अरु कहीं दुष्ट जल वर्षा शस्त्रवर्षा अरु कहीं उष्ण जल वर्षा होतीहै ११ कहीं खारी कीचकी वर्षा कहीं महादुःखदायी पवन कहीं उष्ण कीचकी वर्षा कहीं भारी दलदल कीचहै १२ कहीं कांटों के वृक्ष अरु कहीं दुःख से चढ़नेवाली अर्थात् दिवारी गिरतेहैं १३ अरु कहीं भारी अँधेरा है अरु भारी कांटोंका विस्तार है कहीं लोगों पर पड़ना अरु कहीं गुफाओं में पड़ना पड़ता है तिस दुर्गम मार्गमें १४ कहीं [illegible] अरु कहीं [illegible] कहीं मुर्दोंके [illegible] कहीं तिस मार्गमें [illegible] अरु कहीं [illegible] [illegible] १५ [illegible] [illegible] पापी

जन जाते हैं अरु वे पुकारते दुःखीहोते अरु मलीन होते हैं १६ कोई तो फाँसों से बँधे अरु कोई आंकडों से खैंचे कोई शस्त्रोंकी धारपर चलाये जातेहैं तिसमार्गमें १७ अरु कोई नकेलसे खैंचे कोई कर्म फांसोंसे फँसे कोई कालफांस में फंसे कोई बाल पकडके घसीटे जाते १८ कोई पैर में फांसा डालके खैंचे जाते कोई दृढदेह बँधे अरु कोई निज लिंगसे भार उठाते जाते हैं १९ कोई नासिकासे लोहभार उठाते कोईपापी तहां कानोंसे भार सहारते घिस्लातेजाते हैं २० कोई सांकलोंसे बंधे जाते कोई मुग्दलों से पिटते जातेहैं कोई श्वास रुकनेसे अरु कोई आँख ढकनेसे दुःखी भये जातेहैं २१ ऐसे वे छाया रहित तिस दुर्गम मार्ग में जातेहैं जो निज२किये कर्मोंको भोगरहे सूखेकंठतालुवे जिनके २२ हेमुनीश्वरो जोधर्मात्माअरुदानी तथाशुभमति वालेहैं वे अत्यंतसुखीभयेधर्मराजकेभुवनकोपधारतेहैं २३ सोवेआनंदभयेसुंदर स्वादभोगते जिन्होंनेजलदानकिया वे उत्तमदूधपीते जातेहैं २४ अरुजोमट्ठादेवेऐसी उत्तमदुग्ध-पानकरतेहैं घृतदाता अरुमधुदाता हेविजो दुग्धदाता २५ येअमृतपान करते धर्मराज मंदिरमें जातेहैं अरुशाक देने वाला खीरखाता अरुदीपकदाता प्रकाशसे जाताहै२६ हेऋषियो वस्त्रदाता सुन्दर वस्त्रपहरता जाताहै अरु पा-दुकादानकर्ता देहसदा देवताओं करके पूजाजाताहै २७ अरु गौदान करने से संपूर्ण कालसहित स्वर्गको जाता है भूमिदान अरु गृहदान करते वे विमानमें विराजमानहुये जातेहैं २८ सौ कि अप्सराओंके साथ विहार करते जाते हैं रथदाता अरु सवारीदेनेवाला हेऋषियो अन्नदाता ये

सब भोगोंसहित विमानमें विराजमान होकरजातेहैं २९
३० हे मुनि ये दो बैल देनेवाले उत्तम सवारी चढ़ेजाते हैं
हेब्राह्मणो फलपुष्प देनेवाले प्रसन्नतासे पधारते हैं ३१
अरु तांबूल देनेवालेभी प्रसन्नभया धर्मराज भुवनको प-
धारता है जोउत्तमजन निजमाबापोंकी सेवाकरें वेदेवतों
करके पूजित भया जाताहै ३२ अरु जो यतिअरु ब्रह्म-
चारियोंकी टहलकरते तथा ब्राह्मणों को प्रसन्न रखते
वेअत्यंतही सुखीभये जातेहैं ३३ जोसब प्राणियों पैदया
रखता वे देवतों करकेसहित पूजितभये सबभोगसहितवि-
मान में विराजमान भये धर्मराज मंदिर को जाते हैं ३४
अरु हेद्विजो जो विद्यादान करै वह ब्रह्माजी करके पूजा
जाताहै अरु पुराण बांचने वाला मुनिजनोंसे सेवाकिया
जाताहै ३५ हेब्राह्मणो धर्मात्मा ऐसे सुखसे धर्मराजके
भवनको पधारतेहैं अरुजो पापीहैं वेदुःखसे दुर्गमयमसार्ग
में चलते हैं ३६ अरु धर्मात्माओं को यमराज चतुर्भुज
अरु शंख चक्र गदा पद्म धारण करके स्नेहसे मित्रोंके स
मान मानताहै ३७ कि हे बुद्धिवालोंमें श्रेष्ठो नरक रोग
सेडरेहुये तुमने पुण्य साधनकियाहै जोसुख देनेवाला है
३८ जोमनुष्य जन्मको पाकर सुकृतनहीं करता वह अत्यं-
त महापापी आत्मघाती जानना ३९ जो अनित्य यहमनु-
ष्यपनको पाकरनित्य धर्मका साधन न करे वहघोर नर-
कमें पड़ताहै ४० हेब्राह्मणो तिनमें परिवेदुद्धिकोनहै यह
शरीरतो पीड़ामय अरुमलमूत्रादिकों करके दूषित है ४१
तिसमें जो विश्वास करै सो आत्मघाती जानना सब भूतों
मेंसो प्राणवाले श्रेष्ठ अरु प्राणवालोंमें बुद्धिवाले श्रेष्ठ हैं-

ह्मिवालोंमें मनुष्य श्रेष्ठ अरु मनुष्योंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ ४२
अरु ब्राह्मणोंमें विद्वान् श्रेष्ठ विद्वानों में निश्चित मति
वाले श्रेष्ठहैं निश्चित मतिवालोंमें करनेवाले श्रेष्ठहैं ४३
अरु करनेवालोंमें ब्रह्मज्ञानी श्रेष्ठहैं ब्रह्मवादियोंमें भीजो
ममता रहित है सो श्रेष्ठ है इससेभी जो परम श्रेष्ठ नित्य
ध्यान करनेवाला है ४४ तिससे सब प्रयत्न करके धर्म्म
का संग्रह करना चाहिये सोई ठीक है ४५ क्योंकि ध-
र्मात्मा सर्वत्र पूजित होता इसमें संशय नहीं इससे हे
पुण्यात्माजनो तुममेरे पवित्रस्थानमें पधारो जोकि तुमने
सुकर्म कियाहै सोसब आनंदसे भोगो श्रीसूतजी बोले हे
ऋषियो ऐसे यमराज पुण्यात्माओं को पूजिकर श्रेष्ठ
गति देताहै ४६ । ४७ अरु वही यमराज कालरूप भया
पापियोंको दंडसे ताड़ताहै जोयमराज प्रलयकेमेघकेजैसे
शब्दवाला अरु काजलके पर्वत की समान कांतिवाला
अरु बिजलीके समान कांतिमान शस्त्रसे भयदायी अरु
बत्तीस भुजोंसहित ४८।४९ तीन योजनमें विस्तारवाला
लालनेत्र जिसके लंबीनासिकाजिसकी अरुडाढ़ोंसेभया-
नक मुख जिसका बावड़ी के समान नेत्रोंवाला ५० अरु
मृत्युज्वरआदिरोगों सहित भयानक चित्रगुप्तहै सोभीतहां
हीरहता है ५१ अरुसारे दूतभी यम के समान भयानक
तहांहीं गर्जरहेहैं फिरतो कांपतेभये अरु निज कुकर्मों को
शोचरहे तिन पापियोंको यमकीआज्ञासे चित्रगुप्तयहक-
हताहै ५२ अरेपापियो अरे खोटे आचारोंवालो अरेअ-
हंकार करके अकार्यसे दुष्टभये जनोतुमने अज्ञानसे येपाप
क्यों इकट्ठाकिया५३सोकि तुमनेकाम क्रोध आदिकरके

जातेहैं ७७ वेही लोकोंके ईश्वर विष्णु जो गुणोंके आश्रय भये सब ओर भोगते हैं ७८ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमेंयममार्गकावर्णन इसनामसे उन्तीस अध्यायभया २९ ॥

तीसवां अध्याय॥

संसार सागरके जन्मादिक दुःखोंका वर्णन किया गयाहै ॥

श्रीसूतजीबोले हे शौनक आदि मुनिजनो कैसेनिज२ कर्म फाँसोंसे बँधे प्राणी स्वर्गआदि पवित्र स्थानोंमें निज २ पुण्यके भोग भोगके अरु नरकोंमें अत्यंतही दुःखदायी पापफल भोगकर निज २ कर्म शेषसे इस मृत्युलोक में आकर सब भयोंसे व्याकुल मृत्युबाधा सहित कैसे२ स्थावर आदिकों में उत्पन्न होतेहैं १।२।३ देहिजो वृक्ष गुच्छ वेल लता पर्वत ये महामोह सहित स्थावर कहाते हैं ४ सो इनमें से किसीके बीज पृथ्वी में बुवे सो तिस२स्थान में जलके पड़नेसे निज२ संस्काररूप कारणोंमें भौमके उष्मापनसे पकाये अंकुरपन को प्राप्त होकर तिनके जड़ निकली फिर तिसके अंकुरभया फिर तिनके पत्तदहने नालीआदि होतेहैं ५ । ६ । ७ तिनके भये फिर पुष्पहोते हैं पुष्प कहुं तो फलोंसहित अरु कहुं निष्फल होतेहैं सो तिन२ वृक्षोंके पुष्पोंमें तिनके मूलसे तिन फलोंकी उत्पत्ति होतीहै सो तिनहीं पुष्पों में फल खानेवालों के संस्कार कारण से सूर्य की किरणों से पका के तिन २ ओषधियोंका रस दृढ़पन को प्राप्त होकर तिनपाक समयमें तंडुलके आकार होकर फिर तंडुल पककेतय्यार भये वे ओषधी वृक्ष सूखजाते हैं ८।९।१०।११ कोई व

होकर भी फिर पूर्ववत उत्पन्न हो वृक्षपनको पाकर प्राणियोंके भोजन करने के संस्कार वशसे फिर वर्षदिन में तैसेही फूलते फलते हैं १२।१३ अरु भारी वृक्षपनमें भी वे बहुत समय पवन आदिकों से टूटना काटाजाना वन अग्निसे जलना अरु शीत घाम आदि दुःखोंको भोगतेहैं १४ तिसके अनंतर कीड़ेहोकर जो सदा बहुत दुःखी आधेछिनहीं जीवते फिर आधेही छिनमें मरजाते अरु बलवाले प्राणियोंसे भईपीडाको हटानेमें असमर्थ शीतवायु अरु घाम इत्यादि बहुत क्लेश भोगते नित्यही क्षुधा से बाधा किये मलमूत्र आदिकों में कुलबुलाते दुःखपाते हैं १५।१६।१७ फिर वेही पशुयोनि में आकर बलवालोंसे पीड़ित भये सदा भयसे डरे भूखे पियासे अरु नित्यही वनमें फिरते अरु जोमातात्र्योंमेंभी कामातुरभयेवायुआदि बहुतक्लेशभोगते किसी जन्ममें तृण चरते किसीजन्ममें अपवित्र मांस भक्षणकरते अरु किसी जन्म में कंद मूल फलखाते अरु दुर्बल प्राणियों को पीड़ादेते अत्यंत दुःख भोगते हैं १८।१९।२० अरु कोईगांव के पशुहोकर निज जातिसे वियोग अर्थात् ठान छूटना भार उठाना फांसोंसे बँधना पिटना अरु हल आदिकों के नीचे चलना इत्यादिक बहुतसे दुःखोंकोभोगतेहैं २१।२२ अरु चंडालआदिकों मेंभी वायुभोजन अपवित्र भक्षण करते अरु तब्को पीड़ा देतेहैं २३।२४ ऐसे बहुत योनियों में जन्मलेते क्रमसे मनुष्य जन्मपाते हैं किसो पुण्य वशसे मनुष्य जन्मपाकर तहांभी छलेवसे ऊंचे होतेजाते अर्थात् जैसे नानायोनि भोगके मनुष्य देहपाया तैसेही पुण्यकाने से फिर उत्तम

अरु मातासे खाये कडुवा खारी उष्ण लहूका भोजन करनेसे जलते निज देहको देखकर यह देहवान् पूर्वजन्मों के स्मरण होने से पहिले भुगते नरक दुःख आदि का स्मरण करके भीतरके दुःखसे संतप्त अंतःकरण जिसका ऐसा देही माताके मलमूत्रों से अति दुःखित भया ऐसे मनहीं मन पछिताकर विलाप करता है ४१। ४२।४३ ४४।४५ ओःहोः मैं अत्यंत पापी पूर्वजन्ममें चाकर पुत्र मित्र स्त्री घर खेत धन धान्य आदिकों में अत्यंत स्नेह करके कुटुंब पोषण के लिये पराये धन क्षेत्रादिकों को देखते २ हरलेता ऐसे२ उपायोंसे धनसंचित करके अरु कामदेवसे अंधाभया पराई स्त्री हरना इत्यादि कुकर्मों के दुःख भोग कर महा पाप करता रहाहूं ४६।४७।४८ ४९ तिन पापों करके मैं अकेलाही अनेक नरकों के दुःख भोगकर फिर वृक्ष पर्वत आदिकोंमें महा दुःख पा-कर अब जेरसे लपेटाभीतर गर्भके दुःखसे अरु बाहरमाता के तीक्ष्ण भोजन करनेके दुःखसे जलाजाताहूं ५०।५१ अरु जिन पुत्र कलत्र मित्र आदिकोंका पोषण मैंने किया था वे औरही कहीं चलेगये हैं ५२ ओही देहवालोंको महादुःखहै २ अरु यह देहभी पापसेही भया है तिससे पापको कभी नकरै ५३ पुत्र मित्र कलत्र आदिकों के लिये मैंने परधन चुराया तिसही पाप करके जेरसे ल-पेटामैं जलाजाताहूं ५४ अरु मैंने पहिले पराई स्त्रीको देखके ईर्षा करीथी तिससे अब इस गर्भअग्नि से जला जाताहूं ५५ मैंने मन वचन कर्मसे औरोंको दुःख दिया था तिस पाप से मैं अकेला दुःखी होरहाहूं ५६ ऐसे

बहुत प्रकारसे यह प्राणी विलाप करके अपनी आत्माको आपही धीरज धराताहै ५७ अरु अब जन्म लेनेके पीछे सज्जनोंके संग करके शुद्ध चित्तहोकर मार्ग श्रेष्ठ कर्मको करसबसंसारके अंतर्यामी सत्यज्ञान आनंदस्वरूप निजजनोंको अरुकांति करनेवाले अनुष्ठानक्रियाअर्थात् निजआवीनक्रिया स्वर्गोंका समूह जिन्होंने ऐसेविष्णु जीअरु जोसंपूर्णगणसुर असुर सिद्धगंधर्व यक्षराक्षसपन्नग मुनिसमूहों से पूजित चरणारविंद जिनके ऐसे तिनकी पूजाकरके दुःखसंसारके दूरकरने केकारण ईश्वरको वेदरहस्य उपनिषदों करके हृदयमें धारकर अतिदुःखदायी इससंसार समुद्रसे तिरजाऊंगा ऐसेयह मनमनमें विचारताहै ५८।५९।६०।६१। ६२ फिरतो माता के गर्भसे बाहर होने केसमय गर्भ में स्थितवहप्राणीप्राजापत्य वायुसे पीडितभयामाताकोपीडा करता कर्मफांसे से बंधा योनि के मार्ग मेंमहापीडाओंके भोगअर्थात् अत्यंतदुःखितभया योनियंत्रसेपीडित चारितरहीं को ऐसेगर्भसेनिकलता अरुतबहीं निश्चेष्ट होताहै ६३। ६४।६५ फिरतिससे बाहर कावायु जिवाताहै तिसबाहरके वायुकेस्पर्श करतेही तिसका स्मरण नष्टहोताहै कि वह पहिलेजोने अरुजोनत लखावानेवाले सबदुःखोंको नहीं जानता तिस अज्ञान से अत्यन्तही दुःखपाता है ६६ । ६७ ऐसे फिर बालपन को प्राप्तभया वह प्राणी मल से लिप्त तिरस्कृतभया बालग्रहादिदुःखोंकरके पीडित भया कुछभी कहनेको नसमर्थसदस्वारूप्रावस्थामेंपीडित होताहै अज्ञानको तत्त्वज्ञानकको कहनेवाला होतो है ऐसे मानते भयेमाता आदिकभी उनतिनको औषधि पिलाते हैं जिसमें

सुखीहोवे ६८ । ६९ । ७० अरु गर्भआदिकी देहपीड़ा भयेतिसवालककोरोतेभये (इसकोचंचीपिल नो चाहिये) ऐसे विचारते प्रयत्न करने ल ते हैं ७१ ऐसे पराधीन-पनसे अनेकसे दुःखोंकोभोगता निजदेहमें काटते मच्छ-र आदिकों को नहीं हटासक्ता ऐसा यहप्राणी बालपन को प्राप्तहोकर माबाप अरु पढ़ानेवालेसे सदापिटताभट-कताराख धूलकीच आदिकों में खेलता अरुसदा कलह करता अपवित्रपन से रहता फिर व्यापारादि कार्यमेंल-गता कार्यनभये भीतरके दुःखोंसे पीड़ित होताहै फिरतो तरुणभये धनसंचय करना कमाये की रखवाली करना अरु तिसधनके नष्टभये अत्यन्त दुःखित भये मायासे मो-हित अरु काम क्रोध आदिकों से दुष्टचित्त भये सदा निंदामें तत्पर परस्त्री अरुपरधनहरनेके उपायमें परायण अरु पुत्रमित्र कलत्र आदिकों के पोषणमें परायण वृथा अहंकारसे दूषित अरुजबपुत्रादिक व्याधिसे पीड़ितहोते तबसब व्यापार तजिकर तिन रोगीभयों के निकट बैठे भीतर के दुःखों से सन्तप्त भये इस वक्ष्यमाण प्रकार से चिंताकरतेहैं ७२ । ७३ । ७४ । ७५ । ७६ । ७७ । ७८ । ७९ । ८० सोवह प्राणी ऐसेपछता हुता दुःखपाताहै कि अहोहो मैंने घर खेत आदि कामोंका कुछ भी विचार न किया इस वर्षभये अर्थात भारी परिवारका कैसे निर्वाह होगा मेरे पास मूलधन नहींहै अरु वर्षा भी नहीं होतीहै घोड़ा मरगया गौवें कहांहैं मेरे बालक बचे क्यों नहीं आये ८१ । ८२ । ८३ मेरी बालकों वाली स्त्री है अरु मैं निर्धन मेरा ग्रसनभया अरु खेती नष्टभई वन क्षयभया

अरु ने बालक नित्य उठ २ कर रोते हैं ८४ मेरा घर टूट फू गया अरु भाई भी दूर होगये आजीविका नहीं मिलती शत्रुकी पीड़ा भारी होरही है ८५ गरु जन मुझ पीड़ित करते मैं अन जिनसे कैसे जीऊँगा मैं परिश्रम नहीं करता ये अतिथि घरमें प्राप्तभये ८६ प्राणी ऐसे चिंता से व्याकुल निज दुःखोंको हटाने में असमर्थ मुझ भाग्य हीनको धिक्कार २ अब मुझको दैव कैसे रक्खेगा ऐसे शंकित होताहै ८७ तैसेही फिर वृद्धपनको प्राप्तभया बल घटने से दुःखीभया खाल लटकनेसे दुर्दर्शनीय देहभया अंत्रा सथा बहराभया देहसे कंपताभया श्वास खांसी आदिकों से पीड़ित लज्जित होभया कफसे कंठभया पुत्र कलत्र आदिकों से बकाया जाता मुझको कब मौत आवे ऐसे विचारता चिंता करता है ८८ । ८९ । ९० फिर मेरे पर पीछे घर खेत कुटुंब आदिकी कौन रक्षा करेगा ये किस के भाग्य होवेंगे अरु जिस धनको और हर लेवे गये यह विचारता कि मेरे पुत्रादिकोंका कैसे निर्वाह होगा ऐसी ममताके दुःखसे व्याकुलभया अत्यंत श्वास भरकर निज अवस्थामें किये कर्मोंको बार २ स्मरण करता हुआ २ मैं यह प्राणी दुःखपाता है ९१ । ९२ । ९३ फिर तो निकट ही मरणा प्राप्तभये व्याधि से पीड़ित तापसे संतप्त [illegible] अवस्थामें खाटपर पड़ा चित्तको निकट निकट भटकाता सुधा तृषासे पीड़ितभया बाधामा जन पित्ताको ऐसे अत्यंत दीनतासे जल मांगता अरु स्वबांधवोंको तबभी बुलानेहीं करता फिर धनवोंको तिनका निषेध करता ऐसे निश्चीताहुया कर्मसंबंधयोंफिर तो वायुपर कानसे निकसने

में असमर्थ जो दुःखी भये भाइयों से घेराभया अरु आप
तिनसे कुछ नहीं कहसक्ता अरु मुझ से इकट्ठा किया
यह धनादिक किसका होगा ऐसी चिंतामें पराश्रयाश्रांसु
नेत्रभरे कफकंठमें रुकनेसे (घुरघुर) शब्द करता अर्थात्
दुःख से श्वास खैंचताहै ९४।९५।९६।९७।९८।९९।१००
फिर तिसके शरीर से निकलतेही वह जीव यमदूतों से
दमकाया गया फाँसों से बाँधा पहिले की नाई नरक
आदिदुःखोंको भोगता है १०१ जैसे निज २ मलजलनेतक
धातुवें अग्नि से तपाई जाती हैं तैसेही सब प्राणी कर्म
भोगपर्यंतनरकोंमेंपड़ेरहतेहैं १०२ तिससेसंसाररूपअग्नि
से संतप्त यह प्राणी हे ऋषियो निरंतरही परमज्ञान का
अभ्यासकरैंअरुज्ञानसेयहमुक्तिप्राप्तहोतीहै१०३हेद्विजो
जो नर ज्ञानसे शून्यहैं वेपशुसमान जानने हैंद्विजो तिससे
परममोक्षकेलियेपरमज्ञानकाहीअभ्यासकरै१०४जोसब
कामसाधनेवाले इसमनुष्यपनको प्राप्तहोकर विष्णुजीको
पूजानहींकरता तिससेपरे वै बुद्धिकौनहै १०५ हेमुनीश्वरो
बड़ाआश्चर्य २बड़ाआश्चर्यहै कि कामदाता विष्णुजीके
होते ये जन नरकोंकीपीडाभोगतेहैं १०६ सोकि सबकाम
दाता जगत्केनाथ नारायणजीके होते भी ये जन ज्ञानसे
शून्यभयेनरकोंमेंपड़ेसड़तेहैं १०७ इसमलमूत्रसेभरेअनित्य
शरीरमें येअज्ञानीजन नित्यता अर्थात् इसका सदारहना
जानतेमहामोहसेठगेभये वेनरक भोगते हैं १०८ जो नर
रुधिरमांसआदिकोंसे निंदितइसशरीरकोपाकरभी संसार
पारउतारनेवालेविष्णुजीकोनहींपूजतेवहपातकीहैं१०९
वे लडकी मारते हैं २ जो मूर्खतासे हरिपूजा न करतेहैं

हि जो हरिपूजा में परायण भया चांडाल भी महाप्रियो
होता है १२० इसवास्ते पापी जन द्विजदेह मलमूत्रादिको
को निकलते देखकरके भी क्यों नहीं समझजाते कि यह मल
मूत्रवाला शरीर अनित्य है १२१ मनुष्यपन जो देवताओंको भी
दुर्लभ सो इसे प्राप्त होता है बुद्धिमान् इसे पाकर परलोक
के लिये अवश्य यत्नकरे १२२ जो आत्मज्ञान सहित अ-
र्चित पूजा में परायण हैं वे परमधामको पधारते हैं जहां
से फिर आगमन न होवे १२३ जिन विष्णुजी से जगत भया
अरु जिनसे चैतन्यवाला होता है अर्थात् पाला जाता है
अरु जहां लीन होता है ऐसे विष्णु जी संसार से छुडाने
वाले हैं १२४ जो निर्गुण अरु परमआनंद रूपभी सगुणरू-
पसे विख्यात हैं तिन्होंके ऐसे विष्णुजीकी पूजा करके
जन संसारसे छूटता है १२५ ॥

कामसे सताया जाता है अरु कामसे लोभकरके तिरस्कार किया जाता है अरु लोभसे क्रोधमें परायण होता है ४ क्रोधसे धर्मनाश होता धर्मनाशसे बुद्धिनाश होती है फिर नष्टबुद्धी भया मनुष्य पाप करता है ५ तिससे देहही पापका मूल अरु पापकर्ममें परायण है अरु सो देह जन्मवालोंके होता है तिससे मोक्षका उपाय कहो ६ सूतजी बोले अच्छा २ हे महामतियो तुम्हारी उज्वल निर्मलबुद्धि है जो कि संसारदुःखों के नाशक उपायको पूछना चाहते हो ७ जिनकी आज्ञा से ब्रह्माजी सब जगत्को रचते हैं विष्णु जी पालते अरु शिवजी संहार करते हैं सोही परमात्मा मोक्षदाता है ८ जिनके प्रभावसे महत्तत्वसे आदिले विशेषपर्यंत उत्पन्न भये सो नारायण विष्णु जी मोक्षदाता जानने ९ जो जड़ चेतन जिनसे भिन्न नहीं अर्थात् तन्मय ही है ऐसे तिनस्तुति योग्य अविनाशी देवजी को ध्याकर प्राणी दुःख से छूटता है १० ऐसे जो निर्विकार अनन्त शुद्धस्वयंप्रकाश निरंजन ज्ञानरूप महाआनंद ऐसे विष्णुजी मोक्षके साधन हैं ११ जिनकी अवतार मूर्त्तियोंको ब्रह्मादिक देवता ध्याते तिन विष्णुजीको मोक्षदानदाता जानने १२ अरु जिनको प्राणजीते अरु आहार वश किये सदा ध्यान में परायण योगीजन हृदयमें देखते हैं तो विष्णुजी अक्षय सुखदाता जानने १३ अरु जो निर्गुणभी लोकअनुग्रहके लिये गुणोंके आश्रय अनेकरूप धरते हैं अरु जो आकाश मध्यवर्ति अर्थात् तत्स्वरूपपराहैं सो मोक्षदाता जानने १४ अरु जो सब कर्मोंकेसाक्षी विष्णुजीको मुनीजन हृदय में स्थित हैं मरु जो आप रूपरहित सब रूपके आधार हैं

तिन देवजीको रक्षक जानो १५ जो प्रलयके अंतमें सब जगत्को संहार के जलमें सोतेहैं ऐसे तिनविष्णु जी को तत्त्वदर्शी मुनि जनमोक्ष दाताकहतेहैं १६ अरु जो वेदके जाननेवाले कर्मकांडियों करके अनेकयज्ञों से पूजेजाते हैं सोकर्मोंकेफलदाता भक्तवत्सलविष्णुजीमोक्षदेतेहैं १७ जो हवन श्राद्ध आदि कर्मों में देव पितृ आदिरूप भये अरु हवन श्राद्धादिकको अन्नको भोगलगाते ऐसेअव्य-त ईश्वर विष्णुजीको मोक्षदाता कहतेहैं १८ जोध्याये वा प्रणाम किये अथवा भक्तिसेपूजे । अचल स्थानदेतेहैं तिनदयालु विष्णुजीको मोक्षदाता जानो १९ जो शक-तीरूप विष्णुजी पुरुष रूपभये सब प्राणियोंके आवा-सहैं । अरु जो जगत्रूपसे हुये जो अविनाशी विष्णु जी मोक्षदाता हैं २० जिनके चरणारविन्दको पूजके देव-तालोभी मुक्तिभये । देवपनको प्राप्तभये तिन पुरुषोत्तम जीको जानतेहैं २१ जो विष्णु जी आनन्द अविनाशी ब्रह्म परम सनातन अरु परसे पर जो परमपद २२ अहा-योरूप निर्गुण नित्य केवल उपमारहित परिपूर्ण ज्ञानम-यऐसे विष्णु जीको मोक्षदाता जानतेहैं २३ ऐसे परमव-स्तुभये विष्णु जीको योगधारी निरन्तर योगसे सदाऽ-भ्यास करके जो परमपद पातेहैं २४ जो सब संन्यासी ज्ञानशम आदि गुणोंसे संयुक्त अरु कामादिकोंसे हीन-होना होकेभी परमपद पातेहैं २५ इन्द्रियोंसे रहित मनको स्थिरकरके पुष्पादिकोंसे जिनको पूजतेहैं तिनके उपासको नाशक जानके ध्यानको २६ जो मुनीश्वर नित्य ऐसे पापरहित होके मोक्षको प्राप्त होय

होनेयोग्य कहतेहैं सो ज्ञानभक्ति मूलहै अर्थात् भक्तिही सेहोताहै अरु भक्ति श्रेष्ठकर्म से उत्पन्न होतीहै २७ हे ऋषियो जितने दान अरु अनेकयज्ञ तथा तीर्थयात्रादिकसहस्रों जन्मोंमें कियेहों तिसकी विष्णुजीमें भक्तिहोतीहै२८ अक्षय जो परमधर्महै सो भक्तिलेस सेहीहोताहै अरु परम श्रद्धा से भक्तिकिये सबपाप नष्टहोता है २९ अरु सबपापोंके नष्टभये बुद्धिनिर्मल होतीहै तिसहीबुद्धि को विद्याञ्जन (ज्ञान) कहते हैं अरु ज्ञानमोक्ष दाता है सो ज्ञान योगियोंको होताहै ३० अरुयोग कर्मअरुज्ञान के भेदसे दो विधकाहै अरुकर्म योगके बिन ज्ञान योग सिद्धनहीं होताहै ३१ तिससेकर्म योगमें परायण भया श्रद्धासे विष्णुजीकोपूजे सो प्रतिमा विप्रभूमि अग्निसूर्यइनकी चिन्तित होय ३२ अरु अथवा जलमें पूजाकरै अरु इनविष्णुजी की पूजाकरै क्योंकि विष्णुजी सर्वत्र व्यापतहैं ३३ अरुकर्म वचन अरु मनसे पराई पीड़ासे विमुखरहै अरुपार पूर्ण आत्मरूप सनातन विष्णुजीही विश्वरूपहैं ३४ ऐसेमनमें निश्चय करके दोनोंयोगोंका अभ्यास करै अरु अपने समान जो मनुष्य सब प्राणियोंको देखै वह विष्णुजी के परमभाव को जाने ३५ जो दुष्टात्मा क्रोधसे पूजाध्यान में परायणहो तो तिस पै विष्णुजी प्रसन्न नहीं होतेहैं क्योंकि वो अधर्मका पतीहै ३६ जो काम क्रोधादि युक्तभया देवार्चन करैतो वह पाखण्डाचारी जानना अरु वह चुनुवां पापीहै३७ जोतप पूजा ध्यान करता अरु निंदामें परायण होवै तो तिसका वह तप अरु पूजा अरु वह ध्यान सर्वानर्थकहैं

३८ तिससेमुक्तिकेलिये समदमआदिगुणोंमें अरुकर्मयोग
सेंपरायणहुआ सर्वात्मकविष्णुजीकीपूजा सम्यक्प्रकार
से करे अरुमन वचन कर्मसे सबलोकोंके हितसेंपरायण
भये जनसे जहां विष्णुजी की पूजाकी जावे सोकर्मयो-
ग कहाताहै ३९।४०।४१ अरु जो सबके अंतर्यामी अरु
जगतके कारण नारायणजीको स्तोत्रादिकसे स्तुतिकरे
सो कर्म योग कहाता है ४२ अरु व्रतादिकों से अरु
पुराणोंके श्रवणादिकों से अरु पुष्पादिकों से जोविष्णु
जीका पूजनहै सो कर्म योगकहा ४३ ऐसे जो विष्णुजी
में कर्म योगसे भक्ति करते तिनकेपूर्वसंचित भी सबपा-
पनष्ट होजातेहैं ४४ अरु पापोंके क्षयसे शुद्ध बुद्धि भया
वह ज्ञानकी इच्छा करताहै अरु ज्ञानही मोक्ष दाताहै
तिसका उपाय हम कहतेहैं ४५ अरु जो इसचर अचर
संसारमें नित्य अनित्यका विचार करता वह सर्व शास्त्र
कुशलहै सो सब पदार्थ तो अनित्यहैं अरु केवल विष्णु
जी नित्यहैं सो अनित्य इनसबोंको छोड़के नित्य विष्णु
जीकेही आश्रयहोवे ४६।४७ अरु सर्वविषयों से विर-
क्तहोवे क्योंकि जो विरक्त नहींहोता सो फिर संसार में
होआताहै ४८ जो अनित्य पदार्थोंमें अनुरागीहोवे तिस
का संसारसे छूटना कभीभी नहीं होता है ४९ सो शम
दम आदि गुणायुक्तभया मुमुक्षु अर्थात मोक्षचाहने वाला
भया ज्ञानहोनेका अभ्यास करे क्योंकि समादि गुणोंसे
हीनको ज्ञाननहीं होताहै ५० जो रागद्वेषरहित शमद-
मादि गुणोंसे सहितहै अरु हरिध्यान में परायण होता
सो तिसको मुमुक्षु जानना ५१ अरु जो सब प्राणियोंमें

दयावान् अरु काम क्रोधादिकों से रहित है अरु नित्य विष्णुजीके ध्यानमें परायण ऐसाभक्त मुमुक्षु कहाता है ५२ अरु जो इन चारोंसाधनों से निर्मल बुद्धिभया सब प्राणियोंमें दयावान्-विष्णुजी को सर्व व्यापीजाने ५३ अरु इस नित्य अनित्यात्मक विश्वको तथा जड़ चेतन को निजज्ञानसे विष्णुरूप जाने तिस ज्ञान को योगजन्य अर्थात् योगसे भया कहते हैं ५४ सोही योगका उपाय हम कहते हैं जिस संसार शत्रु से जय होवे सो कि जो योगसेभया निर्मलज्ञान होवे सोयोगज ज्ञानजानना ५५ अरु आत्माको भी परापरके भेदसे दो प्रकार का कहतेहैं अर्थात् परमात्मा अरु जीवात्मा ऐसे अरु (द्वे ब्रह्मणी-वेदितव्ये) अर्थात् दो ब्रह्म जानने सोकि जीवात्मा अरु परमात्मा ऐसी अथर्वणवेदकीश्रुतिहै५६सो परमात्मातो निर्गुणहै अपर अर्थात् जीवहै सो अहंकार सहितहै अरु तिनका जो अभेद ज्ञान अर्थात् जीवात्मा परमात्मा एक हीहैं ऐसे जानना सो योग कहाता है ५७ अरु पंच भूता-त्मक देह विषे साक्षीरूप जो हृदयमें स्थित है सो अपर कहाता अरु परमात्मा पर कहाताहै ५८ हे ऋषियो श-रीरको तो क्षेत्र कहते हैं अरु तिसमें जो स्थित अर्थात् जीवात्मा सो क्षेत्रज्ञ कहाताहै सोही परमात्मा शुद्ध परि-पूर्ण अव्यक्त कहाता है तिसके विचारसे जन मोक्ष पाता है ५९ हेऋषियो जब जीवात्मा अरु परमात्माका अभेद ज्ञान होताहै तबही हेमुनि यह जो संसार रूप फांसीका छे-दन होताहै ६० सोही परमात्मा केवल शुद्ध अविनाशी आनन्दरूप है जो मनुष्यों के भेद ज्ञानमेंही भेदवान् प्रतीत

होताहै ६१ हेद्विजो ब्रह्म तो केवल है तद्रहित सकल
है जो सनातन वेदोंसे गायाजाता तिससे पर और कुछभी
नहीं है ६२ अरु हेद्विजो न तो तिन परमात्माके कोई
कार्यहै अरु न कार्यरूप या कर्णाहै अरु न तिस निर्गुण प-
रमात्माके कर्त्ता भोक्तापनहै ६३ जो सब कारणोंके का-
रण अरु सब तेजके परमतेजहैं अरु जिनसेपर कुछभीवस्तु
नहींहै तिसे शब्द ब्रह्मरूपीकोंलिये जानना ६४ और जो
(तत्त्वमसि) इत्यादि महावाक्य सो शब्द ब्रह्महै तिनही
के विचारसे ज्ञानहोताहै और ज्ञानसेही परमगति होता
है ६५ अरु जो सम्यक प्रकार ज्ञानसे हीनहैं तिनहींको
संसार अनेक प्रकारका दीखता है अरु ज्ञानी जनों को
सब परमात्मका स्वरूप है ६६ अरु जो निर्गुण एकरूप
परमात्मा एकहीहै अरु विनाशके भेदसे अनेक रूपवाले
दीखतेहैं ६७ जो मायावीहैं वे परमात्मामें मायासे भेद
देखतेहैं तिससे हेउत्तम द्विजो मुमुक्षु जन मायाको त्यागे
६८ यह माया न तो सत्रूप अरु न असत रूप है अरु
उभयात्मक अर्थात् सत असत्रूप भी नहींहै किंतु सकल
तीयहै सोही माया भेद बुद्धिदेनेवालीहै ६९ इसलिये हे द्वि-
ज अज्ञानहीको माया कहतेहैं तिसहीसे जो मायाको जीते
तिनहीं परमात्माका भी ज्ञान होता है ७० अरु ज्ञानकोंही
सनातन परब्रह्म कहतेहैं अरु ज्ञानियोंही को परमात्मा-
का निरंतर भानहोताहै ७१ सो योगी नित्ययोग से स्व-
रूप का ध्यानकरे अरु यह [illegible] कहींहै [illegible]
[illegible] तिनको कहताहूं ७२ सो यम अरु नियम [illegible]
आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा अरु ध्यान ७३

अरु हे मुनि श्रेष्ठो समाधी ये आठ योग के अंग जानने अब इनका संक्षेपसे लक्षण कहतेहैं ७४ हे मुनीश्वरो अहिंसा सत्य अस्तेय अर्थात चोरी न करना ब्रह्मचर्य अरु नपरीग्रह अर्थात जितेंद्रियरहना क्रोधरहित अरु निंदा न करनी ये संक्षेपसे यम कहेहैं ७५ जो सब प्राणियों को क्लेश नहीं उत्पन्न करती योग सिद्धि देनेवाली है तिसे अहिन्सा कहते हैं ७६ अरु जो धर्म्म अधर्म्म के विचार से यथार्थ कहना है तिसे मुनि जन (सत्य) कहते हैं अब (अस्तेय) को सुनो कि ७७ चोरीसे वा डाड से जो पर द्रव्य चुराता सो स्तेय कहाताहै अरु तिससे उलटा अस्तेय अर्थात न चुराना ७८ अरु सर्वथा विषय त्याग को ब्रह्मचर्य कहतेहैं अरु जो ब्रह्मचर्यको त्यागे वह ज्ञानी भी पापीहै ७९ जो सब संग छोड़हो अरु विषयकरे तो वह चांडालके समान सब वर्णों में नीच जानना ८० हे द्विजो जो योगसें परायणभया जो भोगोंको चाहता हो तो तिस पापीके साथ बोलनेसें भी मनुष्योंको ब्रह्महत्या होतीहै ८१ अरु जो सब संग त्यागके फिर संगीहोजाय तो तिसके संगवालोंके संगसे भी महापापी होताहै ८२ हे मुनीश्वरो आपत्तिसें भी किसी का द्रव्य नचुराना यह (अपरिग्रह) कहाताहै जो योगसिद्धि देनेवाला ८३ जो अपना उत्थापन चाहता कठोर वचनकहै तिसे धर्मवेत्ता क्रोध कहते अरु तिससे उलटा अक्रोधहै ८४ अरु किसी को धनादिकसे समृद्धि देखके मनमें अत्यंत ताप करना अर्थात दुःख पाना तिसे महात्मा असूया कहते अरु तिसे त्यागना सो अनसूया है ८५ ऐसे हे ऋषीश्वरो हमने सं-

करके इसकालमें संतुष्ट भया धर्मसें परायण होवे १०० अरु बाह्य अरु अभ्यन्तर भेदसे दोप्रकारका शौचकहाहै सो मृत्तिका अरु जलसे तो बाहिरकी शुद्धी अरु भाव शुद्धी सो भीतरकी पवित्रता है १०१ हे ऋषियो अंतःकरण की शुद्धीसे हीन जनोंकरके जो यज्ञ प्रारंभ कियेगये ते फलित नहीं होते जैसे भस्ममें होमक्रिया निष्फलहै १०२ जो भावशुद्धीसे हीनहै सो तिनकी संपूर्णक्रिया कर्मनिष्फल है तिससे स्नेहादिकों का परित्याग करके सदा सुखी होवे १०३ हे ऋषियो दुष्टचित्त जनहजारभार मृत्तिका अरु करोडकलशोंके जलोंसे शौचकरे पर वह चांडाल-ही कहाताहै १०४ जो अन्तःकरणशुद्धिहीनभया देवपूजा करै तो वह देवकोही हतता अर्थात् निज प्रारब्ध को फोडता अरु नर्कोंमें पडताहै १०५ जो निजभीतरकी शुद्धि हीनभया बाहरकी शुद्धीकरै तो वह सजायेभये मदि-राके घडेके समान जानना १०६ जो चित्त शुद्धिहीन भये तीर्थयात्राकरते हैं तो तिन्हैं वे तीर्थ पवित्र नहींकरते जैसे मदिरापात्र को नदियेंभी नहीं धोसकती १०७ जो वाणी से तो धर्मकहै मनमें पापविचारे तो हे मुनियो तिसेमहा पापीजानना १०८ जो निर्मल मनसे धर्मकरते हैं तो तिन का फलभी अक्षयसुखदायकहोताहै १०९ जो मन वचन कर्मसे स्तुति ध्यान पूजनों करके विष्णुजी में दृढभक्ती करहैं सो पूजाकहाती है ११० हे ऋषियो ऐसे यम अरु नियम तुमको हमने संक्षेपसेकहे इनकरके शुद्धचित्तजनोंको मुक्ति देनेवालेही है १११ यम अरु नियमोंकरकै अरु चलबुद्धी अरु जितेन्द्रिय भया मुमुक्षुजन उत्तम योगके उत्तम साधन

आसनका अभ्यासकरै ११२ सो आसन पद्मक स्वस्तिक पीठसैंहक कौक्कुट कौंजर कौर्म वज्रासन अरु वाराह मृग चैलाक ११३ क्रौंच अरु नालिक अरुसर्वतोभद्र रासभ नाग मत्स्य अरु वैयाघ्र अरुअर्द्ध चंद्रक ११४ दंड स्वस्त्यासन शैल खड्ग मुद्गर मकरासन संकट स्थाणु अरु हस्तकर्णिक भैम अरु वीरासन ११५ अरु योग साधनके कारण हे मुनीश्वर ऐसे तीस प्रकारके आसन कहे इनमें से कोईसे आसनको लगाके गुरुभक्ति में परायण भया मुमुक्षु अभ्याससे प्राणों को जीते अर्थात श्वास रोकना सिद्धकरै ११६सो पूर्व वा उत्तरमें मुखकरचा अथवा पश्चिमाभिमुख अभ्यास करके प्राणायाम करै एकांत स्थान में ११७ सो प्राण तो शरीर स्थित वायु अरु आयाम तिसका रोकना इसे प्राणायाम कहा सो दोप्रकार का है ११८सो अगर्भ अरु सगर्भ सो तिन दोनोंमें पिछला अर्थात सगर्भ श्रेष्ठहै क्योंकि गर्भ तो जप अरु ध्यान इन के विनाभी होताहै अरु सगर्भ इन करके सहितहै सोही सगर्भ प्राणायाम पूरक रेचक कुंभक अरु शून्यक ऐसे चारप्रकार काहै ११९ अरु प्राणायोंकी दहनीनासिका की नाडी पिंगला कहाती सो सूर्य तिसके देवता अरु पितर इसके कर्त्ताहैं इससे ये पितृयानि कहातीहै अरु बांयीं इडा नाडी सो देवयानिहै१२० तिसका अधिदेवता चंद्रमाहै अरु इनदोनोंके बीचमें सुषुम्ना नाडीकही१२१ सो अत्यन्त सूक्ष्म अरु गुप्त जाननी तिसका ब्रह्मदेवताहै सो बाईं नासिका से वायुको रितावै अर्थात छोडे अरु रेचकसेती वह रेचक प्राणायाम कहाता है अरु दहने

से पूर्वासको परै अर्थात् भरै पूरणसेही वह पूरक होताहै १२२ अरु निजदेहमें भरे वायुको रोकके जो नहीं छोड़े अरु भरे घड़ेकी नाईं जो ठहरे वहकुंभक कहा १२३ अरु जो न भरै अरु न छोड़ै अरु न रोके भीतर बाहर के पवनको सो शून्यकनाम प्राणायामहै १२४ सोप्राणा धीरे २ मत्त हाथी के समान रोकने अर्थात् अभ्यास से साधन करने नहीं तो महाघोर होतेहैं १२५ सो योगी क्रमसे वायु का योगकरै अर्थात् प्राणायामकरै तो वह सब पापों से छुटा ब्रह्मपद को पहुँचताहै १२६ अरु हेश्वरियो विषयों में आसक्त भये इंद्रियोंको खैंच के जो रोकता है सो वह प्रत्याहार कहा १२७ सोजो महात्मा जितेंद्रियहैं वे ध्यान से शून्य भये भी परमधाम को पधारते हैं जहां से फिर आगमन नहोवे १२८ अरु जो प्राणोंको न जीतकर ध्यान में परायण होवे तो तिसे मूढ़मति जानना अरु तिसका ध्यान सिद्धनहीं होता १२९ जो जो दीखनेमें आवे सोसब ब्रह्मबुद्धिसे अपने में देखै अरु इन इंद्रियोंको सम्यक् प्रकार धारणाकरे अर्थात् वशमें रक्खे सो धारणा होती है १३० अरु जितेंद्रियभया योगी तिनइन्द्रियोंके विषयों को हृदय में दृढ़धारणाकरै अर्थात् सम्यक् प्रकार मनसे रोक कर परमात्मा को ध्यावे जो सबके धाता अर्थात् पोषण करनेवाले विष्णुजी १३१ तिनका ध्यान करै जो सब लोकोंके मुख्यकारण अरु खिले कमल के समान नेत्रोंवाले अरु सुन्दरकुण्डल झलकाये पीताम्बर धारी अरु सुर असुरों से नमस्कारकिये देवजी अरु १३२। १३३ योगियोंके हृदय कमलमेंबारह अंगुल विस्तार भये

ऐसे परसेपरविभु अव्यक्त परमात्माको ध्यावे१३४ तिसे सज्जनोंने ध्यान कहाहै सो ऐसेध्यान को मुहूर्त अर्थात दोघड़ीभीकरकेनर परममोक्षको प्राप्तहोताहै१३५ध्यानसे पापनष्टहोते अरु ध्यानसे मुक्तिप्राप्त होती है अरुध्यानसेविष्णुजी प्रसन्नहोते इससेध्यानही सब अर्थ साधक है१३६ जोजो ब्रह्माविष्णुजीके रूपहैं तिन२को ध्यावेतो तिसध्यानसे प्रसन्नभये विष्णुजीमोक्षदेते हैं १३७अरु हे ब्रह्मर्षियो ध्यानयोग्य वस्तुमें इसचंचल मनको निश्चल करकेठहरावे जिससेध्यान ध्येयध्याता यहभावसर्वथानष्टहोय१३८फिरतो ज्ञानरूप अमृतके सेवनसे इसजनको उन्मनपना अर्थात प्रसन्नता होतीहै सोकि निरंतरध्यान करनेसे अभेदबुद्धि होतीहै सो सुषुप्ति अवस्था में तत्पर ऐसे परमआनन्द युक्त अरु शांतमन तथानिर्वात स्थानमें अर्थात पवनरहित ठौरमेंधरे दीपक की नाईंही स्थिति रहैसोसमाधि कहीजातीहै१३९।१४०सोसब उपाधियों से छुटा अरु सच्चिदानंद रूप निश्चल अरु पूर्ण समाधि ऐसे कहाताहै १४१ अरु योगीसमाधि अवस्थामें न तो सुनता अरु नदेखता अरुनसूंघता नस्पर्शकर्ता अरुनकुछ भोक्तताहै१४२अरुहेब्रह्मर्षियो सच्चिदानंद परमात्मा तो शुद्धनिर्मल है अरुसब उपाधियोंसे छुटा अरु निश्चल ऐसा ईश्वर योगिजनोंको प्रतीतहोने लगताहै १४३जो परमात्मा देवआप निर्गुणभी अज्ञानसे गुणवालासा प्रतीत होताहै अरु अज्ञान का नाशभयेतो वहीनिर्गुणही स्वस्वरूप किया अर्थात्पहिचानलिया जाताहै१४४ जो परमज्योति अप्रमेयपरमात्मा मायाविओंको मायावान

से प्रतीतहोताहै अरु मायाका नाशभये तो हे द्विजो वह
ही शुद्धब्रह्म भासताहै १४५ जोकेवल परमज्योतिनिरंजन
अरु जो संपूर्ण प्राणियों के अंतःकरणसे स्थित १४६ जो
अणुसे अत्यन्तअणु अर्थात् सूक्ष्मसेभी अति सूक्ष्म अरु
बड़ेसे बड़े ऐसे सनातन संपूर्ण संसारके कारण परमात्मा
जिसकोश्रेष्ठज्ञानीजनपरसेपरअरुपरमपवित्रदेखतेहैं १४७
अरुजोअकारादिहकारांत वर्णभेदसे बाहिर भीतर स्थित
भयेअर्थात् सर्वव्यापहैं ऐसेवे अनादिपुराणपुरुष (शब्द
ब्रह्म)कहातेहैं १४८ अरु इस पंचभूतात्मक अर्थात् पृथ्वी
१ जल २ आकाश ३ तेज४ वायु ५ से उत्पन्न भये देहमें
मनबुद्धि चित्त अंतःकरण इनसे संयुक्तभये देवपुराण पु-
रुषजो अपर अर्थात् जीवआत्मा कहाते हैं१४९अरु जो
निर्मल अविनाशी पूर्ण आकाश सदृशजो अर्थात् आ-
काश स्वरूप अरु आनंद निर्मल शांत ऐसे विष्णु जी (पर
ब्रह्म) कहातेहैं१५० जिस ब्रह्मके सकाशते अर्थात् जहां
तक पहुंचकर मन सहित वाणी फिर उलटी आजाती है
अर्थात् जिनको जानसक नहीं सक्तीहै ऐसे परमज्योति
परमधाम विष्णुजी (परब्रह्म) कहाते हैं अरु जिनके अंश
कलारूपभये सहस्रों ब्रह्मा विष्णु महेश रचना पालना
संहार करतेहैं सो विष्णुजी (ब्रह्म) कहाते हैं अरु जिन
सनातन परमात्मा विष्णुजीको योगीजन हृदय में देखते
ऐसेनिर्विकारअजन्मा विष्णुजी(परब्रह्म) कहातेहैं १५१
अब हे ऋषियो जब ध्यान करते हैं सो सुनो जो ध्यान
संसारसेतपेमनुष्योंको अमृत वर्षाके समानहै१५२सोकि
परम आनंद नारायणजीको प्रणामकर ओंकार अर्थात्

सो कहिये १ जोकि योग भक्ति वालोंकोही होता यह आपने कहाहै अरु जिसपर विष्णुजी प्रसन्नहोते तिसको निरन्तर भक्ति भी होतीहै २ सो जैसे देवोंकेदेव ईश जनार्दनजी प्रसन्नहोवें सोही हमको हेकरुणाके सागर सूतजी कहने योग्यहो ३ श्रीसूतजी बोले हे ऋषियो ऐसेहीसनत्कुमार करकेपूछेगये नारदजीने जोजो कहा सोही कथा अमृतपीने योग्यहो ४ सो हेद्विजो जोतुम मुक्ति चाहतेहो तौपरमसच्चिदानंददेवविष्णुजीकायजनकरौ अर्थातितिन्हें ध्याओ५ जो विष्णुजीमें परायणहै तिसेशत्रुमारनहीं सक्ते अरु ग्रहबाधा नहींकरसक्ते अरुराक्षस तिसेखा नहींसक्ते अर्थात विष्णुभक्तको कहींभी भयनहींहै ६ जिसकोदेवों केदेव जनार्दनजी में दृढ भक्ति होतीहै तिसके सब कार्य सिद्धहोते अरुशक्तिभी बढ़ती जातीहै७मनुष्योंके पैरवेही सफल जानने जिनसे देवमंदिरमें गमनहोवे अरुवेहीहाथ भाग्यमानहैं जिनसे विष्णुजीकी पूजाकीजावै८ अरुवेही नेत्र बड़भागीहैं जिनसे विष्णु जी का दर्शनहोवे अरु जो हरिनाम जपने में परायणहै वहही जिह्वा कहाती है ९ यह सत्य २ फिर सत्य भुजउठा बार बार अर्थात विचार करके कहाजाता है कि वेदसे पर कोई और शास्त्र नहीं अरु विष्णुजीसेपर और देवता नहींहै १० मैं सत्यकहता हित कहता अरु बार २ सार वचन कहताहूं कि असार इस संसारमें विष्णुजी का पूजनही सारहै ११ इस महा मोह देनेवाले संसाररूप दृढ फांसको विष्णु भक्ति रूप कुल्हाड़ेसे काटकर जन सुखी होताहै १२ जन वहही है जो विष्णुजीमें लगा होवे वाणी वहही जोतिनमें परायण

मृत्यु सहितहै अरु जीवन भी चपलहै अरु राजासे आदि सब नाशमानहैं अरु संपत्ति सरासें नष्ट होनेवालीहै २६ हे जनो क्या तुम नहीं जानते हो कि आधी अवस्था तो निद्राने हती अरु कुछ भोजनादिकोंने हरिली २७ अरु कुछ बालपनने अरु बूढेपनेमें बीती अरु कुछेक विषय भोगोंमें खपी तो कब धर्म करोगे २८ जो बालपनमें अरु बुढापेमें विष्णुजीका भजन नहीं बनता तो इस युवा अवस्था में तो अहंकार रहितहो धर्मकरो २९ हे जनो इस शरीरको वृथाभयदायी संसारसमुद्रमें मत डुबोवो ये शरीर नाशमान अरु परस्परआपत्ति योंका स्थानहै ३० अरु यह शरीर रोगोंका पात्र अरु मलादिकों करके भरा हुआ है ऐसे इसको आसरेहोके तुम सर्वथा पाप क्यों करते हो ३१ इस नाना दुःख देने वाले असार संसार में विश्वास नहीं करना चाहिये यह अवश्य नष्ट होवेगा ३२ हे ऋषियो तुम सारे सुनो मैं सत्य कहताहूं कि यह शरीर नाशमान है इससे विष्णु जी अवश्य पूजने ३३ हे जनो इस हननेवाले कामको तजो अरु निरंतर विष्णु जी की पूजा करो मनुष्यपन अत्यंत दुर्लभ है ३४ अरु हे द्विजो स्थावर आदि करोड़ों जन्मोंमें भ्रमते भये प्राणीको किसी प्रकार कठिनतासे मनुष्यों को मिलता है ३५ तहां भी देवपूजामें अरु दानमें अरु योग में बुद्धी होना यह पूर्व जन्म का तप जानना ३६ जो दुर्लभ मनुष्यपनको पाके एक बेर भी विष्णुजीको न पूजता तिससे परे औरकोई अत्यन्त मूर्ख नहींहै ३७ अरु जो दुर्लभ मनुष्यपनको पाकर देव पूजा नहीं करते तिन अत्यन्तमूर्खोंको विवेकता

फिर कहांसे ही होवे ३८ जो आराधन किये जगत् के नाथ विष्णु जी वांछित फल देते हैं ऐसे तिनको हे द्विजो संसाररूप अग्निसे जलाजन कौन नहींपूजै ३९ हे मुनि श्रेष्ठो विष्णुजी का भक्त चांडाल भी हो पर वह ब्राह्मण से भी अधिकहै अरु जो विष्णुभक्तिसे हीनहै वह द्विज भी अधम नीच जानना ४० राग द्वेष रहित चांडालभी द्विजसे अधिक जानना अरु रागद्वेष सहित ब्राह्मणभी अधम नीचहै ४१ तिससे कामादिकोंको त्यागके अविनाशी विष्णु जीको पूजो तिनके प्रसन्न भये सब प्रसन्नता होगी क्योंकि विष्णुजी सर्वत्र व्यापकहै ४२ जैसे हाथी के पैरमें सारे पैर समाजातेहैं अरु जैसे आकाश इसचर अचर संसार में व्याप्तहै तैसेही ये जड़चेतन जगत् विष्णु जी करके व्यापितहै ४३ मनुष्यों को जन्महुवा तो मरणा भयाहुआतोजन्म ये दोनोंदुःहेहुयेहोतेहैं इनकानाशकरने वाली विष्णुसेवाहै४४ जो विष्णुजी आगे स्मरणकिये पूजे वा नमस्कार किये संसार फांसे को काटते हैं ऐसे तिनको कौन नहींपूजै४५ जिनके नामोच्चारणसेही महा पातकोंका नाशहोता ऐसे तिनकी पूजाकरणेसे अवश्य मुक्ति होतीहै ४६ बड़ा आश्चर्य बड़ा आश्चर्यहै हे द्विजो बड़ा आश्चर्य है जो कि हरिदास होते भी यह जन इस संसारही में पड़ारहताहै ४७ हे तपस्वियो मैं बार २ सत्य कहताहूं कि ये यमदूतोंसे लेजायाजाता तब यमसे अत्यंतभया पविकिलावेगा ४८ जोलौंतक इन्द्रियोंमें बल न नहीं होतां अरुजितनेव्याधि न होवें तितनेही जोमनुष्य मुक्तिचाहै तो विष्णुजी की पूजाकरें ४९ यह प्राणी माताके गर्भमें

निक ततेही मृत्युमुखगामी अर्थात अवश्य मरनेवाला हो
जाता है तिससे जनधर्ममें परायण होवे बड़े आश्चर्य की
बातहै ३ कि यह शरीरतो नाशमान अर्थात नाश होनेवाला
है अरु इससे हरि पूजन नहीं होता मुझसे यह सत्य २ फिर
सत्य कहा जाता है कि पाखण्ड आचारत जके चक्रपाणि
जी विष्णुजीको पूजो ५०।५१।५२ हे पण्डितो मैं हाथ
उठाकर आपका यह हितबचन कहताहूं कि तुम करके
सर्वथा विष्णुजी पूजनीय अरु निंदा मिथ्यादिक त्याज्य
हैं ५३ मनके दुःखसे तो क्रोधहोता अरु क्रोध ही संसार
का कारणहै अरु क्रोधही धर्मका क्षयकरता तिसेजन
क्रोधही को छोड़ ५४ ये जन्म तो कामना मूल अर्थात
वासनाही से होताहै अरु वासना पापकी मूल है अरु
कामही इसका क्षय करता तिससे कामको छोड़े ५५
अरु समस्त दुःखोंके समूहका कारण अहंकारही है अरु
वहही नरकों में पटकता है तिससे अहंकार छोड़े ५६
अरु ये मनुष्योंकी कामनाही बंधमोक्ष दोनों की कारण
है तिससे मन को परमात्मा में लगाकर सुखी होवे ५७
ओहो मनुष्योंकी धीर्यता ३ जो जगतके नाथ विष्णुजी
के होते भजननहीं करतेहैंगे ५८ येजन सबकेदाता जगत
के नाथ विष्णुजीकी आराधना नहीं करते संसारसागर
में डूबते कैसेपार होवेंगे ५९ जो अच्युत अनन्त गोविन्द
ऐसे २ नाम उच्चरते तिनके सबरोग नष्टहोते मैंयहसत्य २
कहताहूं ६० हे नारायण जगन्नाथ वासुदेव जनार्दन ऐसे
जो नित्यकहते वे सबसे पूजित होते हैं हे मुनियो आज
तक ब्रह्मादिक देवनामी विष्णुभक्ति हितवालोंके प्रभा-

वको नहीं जानते हैं ६१ ओही दुर्जनों का मूर्खपन ३ जो हृदय में विराजमान भये विष्णुजी को नहींजानते ६२ हेऋषियो मैं सत्य २ कहताहूं कि विष्णुजी श्रद्धावालोंपै प्रसन्न होते हैं अरु आड्योंसे वा धनसे नहींहोते हे द्विजो आढ्यवान्पना धनवान्पना अरु पुत्रवानपना ये सब विष्णुभक्ति वालोंके जन्मजन्म में होते हैं ६३।६४ यह देह पापोंका मूल अरु पाप कर्मोंमें परायणहै यह जान करके निरन्तर विष्णुजीकोही पूजाकरो ६५ क्योंकि पुत्रमित्र कलत्रादिक अवस्थाअरु वे संपदा ये सर्वविष्णु भक्तोंके होतेहीहैं इसमें संशयनहीं ६६ सोयहाँ वहाँ सब परिवार चाहता सो निरंतर विष्णुजीको पूजै अरु यहाँ वहाँ सुखचाहै तो परनिंदा तजै नहीं तो निश्चयनरकों मेंपड़ै ६७ हेऋषियो देवोंके देव जनार्दन जी की भक्ति हीन जनोंका जन्मधिक्कार है ६८ अरु सत्पात्रके देनेसे शून्य ऐसा धन भी धिक्कारितहै ६९ अरु जिसका शरीर विष्णुजीके अर्थ नम्र नहींहोवे हे ऋषियो वह पापोंकी खानिजानना ७० जो द्रव्य सत्पात्र को नहीं दिया जावै तिसकी जो रक्षाकरै वह फिर सर्पहोकर उसीधनकी रखवाली करताहै ७१ देखो यौवन बिजलीके समान चंचल लक्ष्मीमें मत्तभये अरुसभामें नाशहोनेवाले भोगों पर पशुपाश मोचक विश्वेश्वरजी का आराधन नहीं करते ७२ अरु हे द्विजो स्त्रियें भी देवों की अरु असुरों की संसेवा प्रकारकी जानकी अरु जो हरिमन्त्र पुजाकोंय मा देवनों की अस नियम हीन होवे वह गानवोंकी है ७३ हांधिकों हविआज परायण ऐसनजनकी मानव निरन्थान होने में उन

से भक्ती परम दुर्लभ है जो निंदारहित अरु ब्राह्मणोंकी रक्षामें परायणाहैं अरु जो कामादिकोंसे रहितहैं तिनहीं पर विष्णुजी प्रसन्न होतेहैं ७४ जो बुहारीचौका इत्यादि-कोंसे विष्णुजीकी सेवाकरते अरु सत्पात्रों को दानदेते वे परमपद पातेहैं ७५ तिससे संसारसे दुखियोंकी विष्णु जीही परमगतिहैं जिनके नामसेही उत्तमपदप्राप्तहोता॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणभाषानुवादमें विष्णुभक्तिकाकथन

इसनामसे बत्तीस का अध्यायभया ३२ ॥

तेंतीसवां अध्याय ॥

विष्णुभक्तिमें वेदमालीका वृत्तांत वर्णित है ॥

श्रीसूतजी बोले हे शौनकादिक मुनियो देवोंके देव चक्रधारी विष्णुजीका हम औरभी माहात्म्यवर्णनकरते हैं जिसे पढ़ने सुननेवालोंकेपाप शीघ्र नष्ट होते हैं १ जो शांत और योगसे कामक्रोधादिकछओंशत्रुओंको जीतें अरुअहंकार रहितहैं सोवेज्ञानरूपकरकेज्ञानरूपी विष्णु जीका आराधन करतेहैं २ अरु जो तीर्थस्नानोंसेशुद्ध हैं वे व्रत दानतपोंकरकेकर्मयोगसे सबकेदाता विष्णुजीका आराधन करतेहैं ३।४ अरु जो मूढ़ दुखियारे अज्ञानीहैं वे विष्णुजीको नहींपूजते वे अजरअमर समानअर्थातसर्वदा सोहित भये कीड़े आदि योनि में पड़ते हैं ५ बिजली के समान चपल लक्ष्मीसे मत्त अरु अहंकारसे दूषित भये येजन सबके कल्याण दायक विष्णु जी की पूजा नहीं करते ६ अरु जो हरिधर्ममें परायण अरु शांत अरु हरि चरणारविन्द सेवक अरु जो हरिस्मरण में आसक्त अरु

वको नहीं जानते हैं ६१ ओही दुर्जनों का सर्वधन ३ जो हृदय में विराजमान भये विष्णुजी को नहींजानते ६२ हेऋषियो मैं सत्य२ कहताहूं कि विष्णुजी श्रद्धा-वालोंपै प्रसन्न होते हैं अरु भाइयोंसे वा धनस नहींहोते हे द्विजो भाइवालापना धनवान्पना अरु पुत्रवालपना ये सब विष्णुभक्ति वालोंके जन्मजन्म में होते हैं ६३।६४ यह देह पापोंका मूल अरु पाप कर्मोंमें परायणहै यह जान करके निरन्तर विष्णुजीकोही पूजाकरो ६५ क्योंकि पुत्रमित्र कलत्रादिक अवस्थाअरु वे संपदा ये सर्वविष्णु भक्तोंके होतेहीहैं इसमें संशयनहीं ६६ सोयहाँ वहाँ सब परिवार चाहता सो निरंतर विष्णुजीको पूजै अरु यहाँ वहाँ सुखचाहै तो परनिंदा तजै नहीं तो निश्चयनरकों मेंपड़ै ६७ हेऋषियो देवोंके देव जनार्दन जी की भक्ति हीन नरोंका जन्मधिक्कार है ६८ अरु सत्पात्रके देनेसे शून्य ऐसा धन पद२ धिक्कारितहै ६९ अरु जिसका शरीर विष्णुजीके अर्थ नम्र नहींहोवे हे ऋषियो वह पापोंकी खानिजानना ७० जो द्रव्य सत्पात्र को नहीं दिया जावे तिसकी जो रक्षाकरे वहभार वर्णहोकर इसीधनकी रख-वाली करताहै ७१ देखो येजन बिजलीके समान चंचल लक्ष्मीसे मत्तभये अरुक्षणमें नाशहोनेवाले भोगों पर पशु पाश मोचक विश्वेश्वरजी का आराधन नहीं करते ७२ अरु हे द्विजो सृष्टि भी देवों की अरु असुरों की ऐसे दो प्रकारकी जाननी अरु जो हरिभक्त युक्तहोय सो देवतों की अरु तिनसे हीन होवे वह राक्षसोंकी है ७३ हेद्विजो हरिभक्त परायणा अवज्ञनकी सर्वत्र विख्यात होने से इस

प्रतिग्रह अरु अयोग्य बेंचने इत्यादिकोंसे मैंने इन दोनों के लिये धन इकट्ठा किया २० पर अब भी मैं शांतिको प्राप्त नहीं होता ये तृष्णायुक्त मन मेरे वशमें नहीं होता यह तो अनगिनत सुमेरु समान सुवर्णके पहाड़ोंको चाहताही है २१ हाय कष्ट सबकामों को प्राप्त होकरके भी फिर भी आकांक्षा होती ये बड़ा लोभ है २२ जीर्ण देहवाले के केश जीर्ण होते अरु दांत जीर्ण होते अरु आंख कान थकित होते केवल तृष्णाही तरुण होती जातीहै २३ अरु सबकर्मेन्द्रिय मन्दहोती हैं अरु बलभी वेगसे घटजाताहै अरु तृष्णा तरुणाहीरहती है २४ जिसको तृष्णालगीरहती वह विद्वानभी मूर्खहीहै अरुवह शांतभी क्रोधी है अरु बुद्धिमान् भी अतिमूढ बुद्धिवाला कहलाताहै २५ यह आशा मनुष्योंको अजेय शत्रुओंके समान प्रतिष्ठा भंग करनेवाली है तिससेज्ञानी जोनिरंतर सुखचाहै तो आशाको तजै २६ अरु बल तेज यश विद्या मान बड़पन अरु श्रेष्ठकुलमें जन्मइनको आशाशीघ्रहीनष्ट करतीहै २७ आशाकरके तिरस्कारकियेजनोंको आश्चर्य करके यहकहाजाताहै कि धन दानकरनेसे चांडालभी तिनसेअधिक है २८ अरु जोपुरुष आशासेतिरस्कृत मनसहित लोहसे ठगेहुयेहैं वे यमलोकादिक दुःखोंको नहीं जानते यह भी आश्चर्यकी बातहै २९ सोही मैंने बहुत लोभों से यह धन इकट्ठाकिया अब शरीर जीर्णभया अरु दु-खोंने बलको भी हरा अरु परलोकके लिये कुछ भी आ-दरसे धन खर्च्या ऐसे निरुचयकरके हे विप्रो वह वैश्य-पाली धर्मनाश मैं धनखर्चा ३०।३१ सोही तभी

लोकके अनुग्रहमें परायण अर्थात् सबपै दयाकरते ७ वे मन वचन कर्मसे भक्ति करके विष्णुजीको पूजतेहैं इसी से वे सब लोकोंमें उत्तम स्थानको प्राप्तहोते हैं ८ इसही विषयमें एक पुराचीन इतिहास कहतेहैं जो कहने अरु सुननेवालोंके सब पापका नाशक ९ हेऋषियो तुमयज्ञ-मालि अरु सुमालिका चरित्र श्रवणकरो जिसके श्रवण सेही वाजपेय यज्ञका फलमिलताहै १० सो हे ब्राह्मणो पहिले रैवत मन्वंतरमें (वेदमाली) ऐसे विख्यातब्राह्मण भया जो वेदवेदांग पारगामी ११ सब प्राणियों पै दया-वान् अरुहरिभक्ति पूजामेंपरायणअरुपुत्रमित्रस्त्रीआदि-कोंकेलिये धन इकट्ठाकरनेमें तत्परभया १२ सो तिसने अबेचनेयोग्यवेंचनाव्यापारकिया सोकि वहरसवेंचताथाअरु चाण्डाल आदिकोंसे भी प्रतिग्रह लियाकरता था १३ सो तिसने तपवेंचे अरु व्रतवेंचे अरु परायेलिये तीर्थगया तहांसे द्रव्यल्याय कुटुम्बको पालनाकरी फिर कुछकाल बीते हे विप्रो तिसके दो पुत्र भये १४ सो (यज्ञमाली)अरु (सुमाली) ये जोड़ले अरु विशेष शोभावाले भये १५ फिर तो तिसके पिताने तिनअतितेजवाले दोनोंका लाड़ चाव से अनेकप्रकार पालनकिया १६ सो कि वह वेद-माली बहुत उपायोंसे धन इकट्ठा करके कि कितना है ऐसे जाननेको अपना धन गिनताभया १७ तो वह क-रोड़ सहस्र निष्कों को करोड़ गुणाकर फिर करोड़ गुणा करै इतना धनभया १८ सो (निष्क) चार रुपये का होताहै इससे गिनतीकरी नवतो वे इतना धन गिन कर हर्षित हो आश्चर्य कर विचारता भया कि १९ यादि

प्रतिग्रह अरु अयोग्य बेंचने इत्यादिकोंसे मैंने इन दोनों
के लिये धन इकट्ठा किया २० पर अब भी मैं शांतिको
प्राप्त नहीं होता ये तृष्णायुक्त मन मेरे बशमें नहीं होता
यह तो अनगिनत सुमेरु समान सुवर्णके पहाड़ोंको चा-
हताही है २१ हाय कष्ट २ सबकामों को प्राप्त होकरके
भी फिर भी आकांक्षा होती ये बड़ा लोभ है २२ जीर्ण
देहवाले के केश जीर्ण होते अरु दांत जीर्ण होते अरु
आंख कान थकित होते केवल तृष्णाही तरुण होती
जातीहै २३ अरु सबकर्मेन्द्रिय मन्दहोती हैं अरु बलभी
वेगसे घटजाताहै अरु तृष्णा तरुणहीरहती है २४ जि-
सको तृष्णालगीरहती वह विद्वान्भी मूर्खहीहै अरु वह
शांतभी क्रोधी है अरु बुद्धिमान् भी अतिमूढ़ बुद्धिवाला
कहलाताहै २५ यह आशा शत्रुओंको अजेय शत्रुओंके
समान प्रतिष्ठा भंग करनेवाली है तिससे ज्ञानी जो निरंतर
सुखचाहै तो आशाको तजै २६ अरु बल तेज यश विद्या
मान बड़पन अरु श्रेष्ठकुलमें जन्म इनको आशाशीघ्रहीनष्ट
करतीहै २७ आशाकरके तिरस्कारकियेजनोंको आपचक्र
करके यहकहाजाताहै कि दुग्ध दानकरनेसे चांडालभी
तिनसेअधिक है २८ अरु जोनरआशासेतिरस्कृत अरुमहा
मोहसे ठगेहुयेहैं वे अपमानादिक दुःखोंको नहीं जानते
यह भी आश्चर्यकी बातहै २९ तोभी मैंने बहुत क्लेशों
से यह धन इकट्ठाकिया अब शरीर जीर्णभया अरु बु-
ढ़ापेने बलको भी हरा इससे परलोकके लिये अब मैं आ-
दरसे यत्न करूंगा ऐसे निश्चयकरके हे द्विजो वह सं-
सारी धर्ममार्गमें प्रवृत्त भया ३० । ३१ सोही तभी

तिसने सब धनको चारठौर बांटा तिसमेंसे दोभाग तिसने इकट्ठाकिया तिसमेंसे आप लिये बचे दोभाग दोनोंपुत्रों को दिये ३२ अरु आप निज पापोंको नाशकरनेको सत्र किये पहुसले तडाग बाग तैसेही बहुत से देवमन्दिर बनवाता भया अरु तिसने गंगाजीके तीरपर अन्नादिकोंका दानकिया ३३ ऐसे धर्मधनको लगाकर विष्णुभक्तभया बदरिकाश्रम पै तप करनेकोगया ३४ तहां तिसने मुनियों से सेवित महावन देखा जो फलेफूले वृक्षों से सेवित अरु जो मुनिजी परब्रह्म को जप रहे अरु तेज समूह शान्ति युक्तसंयुक्त अरु रागादिकोंसे रहित ऐसे मुनी (जानंतिजी) ३५ ऐसे इन सूखे पत्ते खाने वाले मुनिजीको देख वेदमालीने प्रणामकिया अरु जानंतिजीने आपेभक्ते तिसका सत्कार किया सोकि कंदमूल फलादिकों करके विष्णु बुद्धिसे इसकी पूजा करी फिर तो तिनसे सत्कार किया गया अंजलिबांधे वेदमाली विनयसे नम्र होके यहकहने लगा ३६।३७ वेदमाली बोला हे भगवन् मैं धन्य हूं मेरे पाप नष्टभये अब हे बड़भागी पंडित अब आप मेरे ज्ञान के दानसे उद्धारकरो ३८ हेविज्जो तबतो तिनसे ऐसे कहे गये मुनि जानंतिजी हँसतेभये तिस वेदमालीसे यहकहने लगे ३९ श्रीजानंतजी बोले हे द्विज मैं संसार के नाशके उपाय को संक्षेप मे कहता हूं तू श्रवण कर जो उपाय अज्ञानियों को दुर्लभ है ४० नीतु नित्य परम विष्णुजी को भज अर्थात नारायण जी का स्मरण कर अरु पर निन्दा विवाद कभीभी न करना ४१ अरु हमेशाही सब पर उपकारमें परायणहो नैमेहो हरिपूजाओं बराबर हू अरु

मूर्खों का संग तज ४२ अरु काम क्रोध लोभ मोह मद
मत्सर इनको त्यागके अरु लोकको विष्णुमय देखकर
शांतिको प्राप्तहोवेगा ४३ अरु ईर्षा पराई निन्दा कभी
भी मतकर अरु पाखण्ड आचार अहंकार अरु निठुराई
इनका परित्याग कर ४४ प्राणिओंमें दया अरु सज्जनों
की सेवा कर तेरे करके जाने धर्मोंको पूछते तिनको तू
यथार्थकर ४५ अरु तिन्हें आचार भ्रष्टभये देखके ऐसा
मतकरै अर्थात् ज्ञानमार्गमें सबका अधिकारहै ४६ अरु
नित्य अभ्यागतोंका पत्र पुष्प फलोंसे अरु दूर्वा पत्तों से
सत्कार करता रहु ४७ अरु निष्काम सदा जगत्के नाथ
नारायणजीकी पूजाकर अरु देव ऋषि पितरोंका यथा
विधिसे तर्पणकर ४८ अरु देवाहृता अग्निकी भी वि-
शेष से परिचर्या अर्थात् हवनादिक कर अरु देवता के
मंदिरमें नित्य बुहारीदे अरु तैसेही जलकरके चौका
दे ४९ अरु सदा देवमन्दिर टूटे फूटेको सवाँरता रहु अरु
मार्ग शोभा अरु दीपक देव मन्दिर में यथावत् कर ५०
कंदमूल फलोंसे सदा विष्णुजीकी पूजाकरे वो प्रदक्षिणा
नमस्कारोंसे अरु स्तोत्रोंके पाठोंसे ५१ अरु पुराण श्रव-
ण अरु पठन तथा वेदांत व्याख्यान है दिन नित्य करता
रहु ५२ ऐसे करने तुमको उत्तम से उत्तम ज्ञान होवेगा
अरु ज्ञानसे पापोंसे छूटना इसही को विचार कर मोक्ष
करतेहैं ५३ श्रीसनन्दनजी बोले हे द्विजो मुनि नारदजी कर-
के ऐसे शिक्षित किये गये महाभाग्यवान् देवमाली तिन
को नमस्कार करके [illegible] होता भया ५४ तब
से [illegible] फिर [illegible] भया वेद-

माली मैं कौन हूं मेरा क्या कर्महै ऐसे विचारनेलगा सो कि ५५ मेरा जन्म कैसे भया अरु यह ऐसा रूप कैसे भया ऐसे मैं अकेला अथवा बहुतयुक्त हूं ५६ ऐसे अनिश्चित बुद्धि वेदमाली द्विज फिर जानंतिजीके पास आय प्रणाम करके पूछने लगा वेदमाली बोला हे ब्रह्मवेत्ता श्रेष्ठ गुरुजी मेरा चित्त अत्यंत भ्रांतिको प्राप्त है कि मैं कौन अरु मेराकर्म क्याहै अरु मेराजन्मकैसेभया५७।५८ जानन्ति जी बोले हे बड़भागी जो तुम्हारा चित्त भ्रान्त भया सो सत्यहै अविद्यामें स्थित भया मन कैसे श्रेष्ठपन को प्राप्तहो अर्थात शांति पावै ५९ तुमने जो मेरा ऐसे कहा यहभीभ्रांतिहीहै अरु अहंकारहीनायहमनकाधर्महै आत्माका नहीं है फिर जो वेदमाली द्विज तुमने (मैं कौन) ऐसा कहा ६० तो नाम अरु जाति आदिकों से रहित भये तेरा मैं क्या नाम रक्खों उपमा रहित स्वभाव जिसका अरु निर्गुण परमात्मा ६१ जो रूपरहित अप्रमेय ऐसे तिसके स्वरूपादिक कैसे कल्पना कियेजावें ६२ अरु परमज्योति स्वरूप परिपूर्ण अरु अपरिछिन्न भाव जिसका अर्थात जो किसीसे नहींढका ऐसे अविनाशी आत्मा के कर्म आदि कैसे संभव होवें ६३ अरु जो स्वयंप्रकाश नित्यपरमात्माहै अरु हेविप्र जो अंग रहित ऐसे तिसके जन्मकर्म कैसे होसक्तेहैं ६४ जोकेवल ज्ञानही से जानने योग्य अजर अमर सनातन परब्रह्म है अरु जो परिपूर्ण अरु सच्चिदानंद ऐसे तिससे पर और कुछ नहींहै ६५ सो हेद्विज (तत्त्वमसि) आदि महावाक्योंसे उत्पन्न जो ज्ञान सो मोक्षका साधन है क्योंकि श्रेष्ठज्ञान

के सिद्ध हुये सब ब्रह्ममयही होतेहैं ६६ हे ऋषियो ऐसे तिन जानंतिजी करके समझायाथा वेदमाली अपनेमेंही अविनाशी प्रभु परमात्मा को देखता हर्षित होता भया ६७ जो उपाधि रहित स्वयंप्रकाशक सनातन ब्रह्मनिरंजन सो मैंहीहूं ऐसा निश्चय करके परमसुख को प्राप्त भया ६८ फिर तो निज विचारके लिये मुनीश्वर जानंति जीको प्रणामकरके सदा ध्यानमें परायणाभया ६९ फिर तो बहुतकालबीते महामति वेदमाली काशीपुरीमें पहुंच के परममोक्षको प्राप्तभया ७० जो इस अध्यायको पढ़ै वा सावधान भया श्रवणाकरै तो कर्मफांसोंसेछूटके परम सुख पाता है ७१ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणे देवीसहायकृतभाषानुवादमें वेदमालीकीकथा इसनामसे अध्याय तेंतीसभयाहै ३३ ॥

चौंतीसवां अध्याय ॥

वेदमालीके पुत्र यज्ञमाली अरु सुमालीइनके आचारणोंका वर्णनहै ॥

श्रीसूतजी बोले हेमुनिश्रेष्ठो जो वेदमाली के पुत्र यज्ञमाली अरु सुमाली कहे तिनकाकर्म अब कहाजाताहै १ सोकि तिनमें पहिला जो यज्ञमाली था तिसने पिता के धनके दो विभागकिये सो एक भाग तो तिस सुमालीको दिया २ तो तिसने तिस धनको व्यसनमें परायणा हो के खोटे कामकियों करके नष्टकिया ३ जो कि वो नित्य गीत बाजोंमें अरु मदिरा पीनेमें परायणा होताभया अरु वेश्याओंके हाव भावों में लुभाया तथा पराई स्त्रियों में

स्तीया ४ तबतो पिता के कसाये सब धन नष्ट भये वह पराया द्रव्य चुराकर वेश्यागमन करताभया तबतो महामति [यज्ञमाली] इस सुमालीके स्वभावको देखके अत्यंत दुःखी भया ५ अरु तिस निजभाईसे यह कहनेलगा कि हे छोटेभाई इस अत्यंत कष्ट कल्पनाके वर्त्तावसे वस करो तूही एक हमारे कुल में दुरात्मा महापापी भया है ६ ऐसे कहते अरु बहुतप्रकार वर्जते यज्ञमालीको वह (खड्ग हाथ में लेकर मारूंगा) ऐसे कह इनके बाल पकडता भया ७ तबतो हे मुनियो नगरमें भारी रौलमचा अरु क्रोधितभये नगरवालों ने सुमालीको बांधा ८ तबतो निर्मल बुद्धि यज्ञमाली दुःखित हुवा पुरवालोंसे प्रार्थना करके तिसे बंधनसे छुटाता भया ९ जो भाई के स्नेह से मोहित फिर तिस (यज्ञमालीने) निजधनको फिर बांटा सो आधा आपके लिये अरु आधा तिस छोटे को दिया १० तबतो वह मूढबुद्धि सुमाली तिस धनकोभी मूर्ख चांडालोंके साथ मतवाला हुआ भोगताभया ११ दुर्जनोंका ऐश्वर्य खोटेको भोगनेके लियेही होता है क्योंकि फलों से संयुत भी कडुवा नीमका वृक्ष कव्वों करकेही सेया जाताहै १२ जो भाईके दिये धनको पायके सुमालीमत्त भया जैसे गङ्गजलका दूधपीके सर्पहोवे १३ तैसे अतिमूढ चित्त अरु चांडालजनोंसे सेवित सुमाली १४ मद्यपानमें लगाभया गोमांसआदि अभक्ष्यभी भक्षण करता भयातबतो सोनिश्चित चांडालभया वह भाइयोंने छोडादिया १५ अरु राजासेभी पीडितभया तबतो निर्जनवनमें पहुंचा अरु है विप्र वहपुण्यात्मा यज्ञमाली सदाधर्ममेंपरायणभया १६

सो सत्संग से निष्पाप भया नित्य अन्नदान देतारहा अरु पिताके बनाये सब तड़ागादिकों की पालना करता भया १७ ऐसेतिस महात्मासत्पात्रोंको दानदेनेवाले धर्ममार्गवर्ती यज्ञमालीका सबधन दानमें लगा १८ ओहो सज्जनों की विभूतिथें अच्छोंकेभोगकेलियेहीहोती हैं जैसेकल्पवृक्ष के फलको देवताही भोगतेहैं १९ सो महात्मा यज्ञमाली धर्ममें यत्न लगाकर विष्णुमंदिरमें नित्य सेवाकरने लगा २० कितनेही कालके बीते वे यज्ञमाली सुमाली वृद्धभये तो एकही समयमरे २१ तो हरिपूजा में परायण महात्मा इस यज्ञमाली को लेनेको लिये विष्णुजी ने उत्तम सो विमान भेजे २२ तबतो महाबुद्धि यज्ञमाली सुंदर विमानमें बैठके जोदेवतोंसे पूजता मुनियोंसे स्तुतिकिया २३ गंधर्वोंसे गाया अप्सरोंसे सेवाकिया कामधेनु सेपुष्ट किया विचित्र आभूषणोंसे भूषित २४ अरु कोमल तुलसीकी मालोंसे सजा तेजोंकासमूह विष्णु पुरको जाता मार्गमें निजभाईको देखता भया २५ जो यमदूतों करके पिटजाता अरु क्षुधा तृषासे पीड़ित प्रेतभया बिन वस्त्र फाँसेसे बँधादेखाई दिया २६ अरु जो इधर उधर अपने को कुलाता अरु अपने कर्म को वारम्बार विलाप करता ऐसे तिस निज भाईको मार्गमें देखा २७ तबतो दयायुक्त यज्ञमाली कृपावाले विष्णुदूतोंसेपूछनेलगा कि येयम के दूतोंसे बोधाभया कौनहै २८ किसको यें मारकर लिये जाते हैं तबतो यज्ञमालीसे बोलेकि यह तेराभाई सुमाली है २९ तबतो यज्ञमाली तिनविष्णुदूतोंका आना सुनके मनसे विचारकरनेवाला विष्णुदूतों से दुःखको प्राप्तभयाः ३०

सोकि दुष्टचित्त जनोंको ऐसीही गति होती है फिरआप जानताभी भाईके कर्मको तिन्हें जनावनेके लिये तिनसे यह पूछता भया ३१ कि इन इकट्ठे किये पापसमूहोंसे इसका छुटना कैसे हो सो हेभाइयो तुम शीघ्र इसका उपाय कहो ३२ जो सज्जापन मिलन सावसेही होजाताहै अरु मेरा तुम्हारा संगभयाहै तिससे तुममेरे बंधुहो इससे शीघ्रउपाय कहो ३३ तबतो यज्ञमालीका वचन सुनकर दयामें परायण अरु हर्षितभया विष्णुदूत यज्ञमाली से तिसके पूर्वजन्मको विचारकर ३४ बारंबार हँसतासामने होकर हरिके प्यारे यज्ञमाली से यह कहता भया ३५ विष्णुदूत बोलाकि हेयज्ञमाली बड़भाग हे नारायणजी में परायण मैं उपाय कहताहूं सोसुनिये ३६ कि तैंने पूर्व जन्ममें महाभारी कर्मकिया है सोई मैं सब कहताहूं तू सावधानभया श्रवणकर ३७ सोकि पहिले तू वैश्यजाति में (विश्वंभर) इस नामसे विख्यात था सो तैंने महाभारी अनगिनत पापकिये ३८ सो निज कर्म वासना से हीन अरु सब पापोंसे छूटा तथाभाइयोंसे त्यागा शोक दुःखसे पीड़ित ३९ अरु क्षुधाग्नि से भी तपा तू विष्णुमंदिर में गया तहां बर्षासे भई कीचको दूरकरने को इच्छा करके हटाई सोवो लेपनहोगया अर्थात चौकालगायागया ४० अरु हे द्विज तू तिसरात्रिको तहांही देवमंदिर में रहा अरु सवेरा होतेही तुझको सर्प ने काटा सो तहांही तैंने मृत्यु पाई ४१ तिसलेपन के पुण्यके प्रभावसे तेरा ब्राह्मणोंके घर जन्म अरु निजचरण हरिभक्ति भई ४२ अरु सो कोटि कल्पभर समय तक हरि निकट निवासकरके अरु तहांही

ज्ञान पाकर मोक्ष को प्राप्त होवेगा ४३ अरु जो तू इस
घातकी भाईका उद्धार करना चाहता है सोभी मैं तुझसे
उपाय कहता हूं सो सुन ४४ सो शाक बेंटे इतने भूमि के
लीपे के फल को देकर हे बड़भागी तिसका उद्धार कर
तिससे कल्याण होगा ४५ तब तो तिससे ऐसे कहा
गया महाबुद्धि यज्ञमाली तत्कालही तिस भाई के अर्थ
लेपनफलको देताभया ४६ तो तबही हेमुनीश्वरो तिसका
भी सबपाप समूह नष्टभया अरु यम के आज्ञाकारी भी
सारे दूत तिसे छोड़के भगगये ४७ अरु शीघ्र सब भोग
सहित विमान आया तिसमें वह सुमाली चढ़करके देव
समानसज्ञा हर्षितभया ४८ तबतो हेविप्रो वे दोनोंभाईजो
देवतों करके पूजेगये अरु आपसमें मिलकर परम प्रीति
को प्राप्तभये ४९ यज्ञमाली सुमाली दोनों महर्षियों से
स्तुतिकिये अरु गंधर्वोंकरके गानकिये विष्णु लोक में
पहुंचे ५० सो हरिस्वरूप ताको प्राप्तभये तहां दोनों चि-
रकाल तक भोगों को भोगके सो यज्ञमाली तो तहांहीं
ज्ञानको प्राप्त होके मुक्तभया अरु बड़भागी सुमाली तहां
विष्णुलोकमें दश सहस्र युगोंतक रहकर ५१ । ५२ फिर
भूमिमें आकर ब्राह्मणभया सोवह अति गुणसंपन्न
गुणवान वेदपारगामी अरु धनसंपत्ति सहित हरिपूजा
में परायण भया ५३ अरु हरिभक्तिमें तत्पर भये तिसने
मोक्षके लिये बहुतसे धर्मकिये अरु तप भी दान धर्मा-
दिक किये ५४ जो नित्य विष्णुपूजा में तत्पर अरु हरि
नाम परायण भया हरिके नाम ध्यान में संसारी के तरपे
पहुंचा ५५ तहां संसारीमें रहकर अरु विशेषकरके भी का

दर्शनक्रिया ऐसेही वह गंगा सेवन करता (सुमालीभी) योगियोंको जो दुर्लभ ऐसे परमपद को प्राप्तभया ५६ हे ऋषियो ऐसे ये उपलेपन का महात्म तुमको कहा तिस से सब प्रयत्नोंसे तुम श्री जनार्दनजीको पूजो ५७ हेद्विजो जो विष्णुजीकी पूजाकरें तिनको नर्क नहीं होता तिससे प्रयत्न करके जगत्पति विष्णुजी को पूजो ५८ अरु जो अभ्याससे विष्णुजीकी एकबार भी पूजाकरते तिनको संसार बंधन कभी भी नहींहोता ५९ अरु जो हरिभक्तोंकी हरिबुद्धि करके पूजा करता तो तिसपर ब्रह्मा विष्णु महेश प्रसन्न होतेहैं ६० हेद्विजो हरिभक्तोंके संगवालों के भी संगसे महापापी सब पापों से छूटता है ६१ अरु जो विष्णुपूजन अरु हरिनाम जपनेसें परायणहै तिनकी जो सेवाकरते वे पापी भी परमगति पाते हैं ६२॥

इतिश्री बृहन्नारदीयपुराण देवीसहायकृत भाषानुवादमें सुमालीके मोक्षका कथन इसनामसे चौंतीस का अध्याय भया ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय॥

विष्णुजीके पादोदक का माहात्म्यवर्णन ॥

श्रीसूतजीबोले हेऋषियो औरभी तुमकमलापतिविष्णुजीका माहात्म्य सुनो अमृतरूप हरिकथायश्रवणमें किसको प्रीतिनहींहोती अर्थात विष्णुजीकीपूजासबको प्रियहै १ हेद्विजो विषयोंमें अंध अरु ममतासेंव्याकुलचित्त वाले जनोंको एकभी विष्णुजीका नाम लेना सब पापों का नाशकहै २ जिसका शरीर विष्णुजीको एकबारभी नहीं नवता वह मृतकके समानजानना तिससे समायुग्मा

कभी भी न करना ३ हे द्विजो जिसका घर विष्णु पूजा रहितहैं सो श्मशान समान जानना तिसमें कभीभी प्रवेश नहीं करना जो हरिपूजासे हीन अरु वेद विद्वेषीहैं अरु जो गौब्राह्मणोंसे द्वेष रखते वे राक्षस जानने ४।५ हेब्राह्मणों जो द्विजोंके द्वेषमें परायणभया विष्णुजी की पूजा करैं तो वह पूजन निष्फल होताहै ६ जो औरके कल्याण के नाशके लिये विष्णु पूजा करते तो हेद्विजो वह पूजा पूजनेवालोंकोही शीघ्र हततीहै ७ जो हरिपूजामें परायण होके पापोंको करै तो तिसको तत्त्ववेत्ता जन विष्णुद्वेषी कहतेहैं ८ जो विष्णु जीमें परायण अरु लोक अनुग्रहमें तत्पर हैं अरु जो दयासे सब भूतोंको समान देखते वे विष्णुरूपहीहैं ९ हेद्विजो करोड़ जन्मोंके संचित पुण्यों से विष्णुभक्ति होतीहै अरु जो विष्णुजी में निश्चल बुद्धि वालेहैं तिनकी पापबुद्धी कैसे होवे १० जो विष्णु भक्ति से विहीनहैं वे चांडालकहे अरु जो विष्णुभक्तिमें परायण वे चांडाल भी श्रेष्ठजानने ११ मनुष्योंको हरिसेवाकरनी सबदुःखोंकी नाशकहै अरु भुक्ति मुक्ति देनेवाली कहीहैं १२ हेद्विजो जोनर संगसे स्नेहसे अरु लोभ से वा अज्ञान से विष्णुजीकी उपासनाकरै सो मोक्षका फल पाता है १३ जो अणु परिमाण अर्थात् अत्यंत थोड़ा भी हरिचरणोदक लेवेतो वह सततीर्थोंमें स्नानकिया अरु विष्णुजीका अत्यंतप्रियहै १४ जो अकाल मृत्युको हरणे वाला अरु सर्वव्याधि विनाशक अरु सब दुःख नाशक शुभ हरिचरणोदकहै १५ जो मनुष्य जन परम्वान ज्योतियों में ज्योति उत्तम नारायणजीको शरणहैं तिनकी पुनरावृत्ति

होती है १६ हे ऋषियो पहिले सतयुग में (कालिक) नाम लुब्धकभया जो परस्त्री अरु परद्रव्य हरनेमें निरंतर रत १७ तथा परनिन्दामें नित्यपरायण अरु प्राणियोंको पीडादेता अरु जिसने सैकड़ों सहस्रों गऊ ब्राह्मणहते १८ जो नित्य देवताके द्रव्यचुराने अरु परधन हरनेमें परायण ऐसे तिस करके हे द्विजो महाभारी२ पापकिये गये तिन की करोड़ वर्षोंमें भी संख्या नहींहोय १९।२० फिर वो प्राणियोंको यमके समान भयदाई महापापी कालिक राजा (सौवीर) के सब संपत्ति सहित नगर में गया २१ जो नगर सजीभई स्त्रियोंसे अरु निर्मल जलवाले सरोवरों से शोभित अरु जो दुकानोंसे सजा अरु जो अमरावतीके समान शोभायमान तिसमें गया २२ तिस नगरके उपवन के मध्यमें एक रमणीय विष्णु मंदिर था जो सुवर्ण के कलशों से शोभित तिसे देखके कालिक व्याध हर्षित भया २३ सो तिसने ये विचारा कि मैं यहां से यथेच्छ सुवर्ण चुरावोंगा ऐसेकहके वह लोभी भयदाई दुष्ट विष्णु मंदिरमें गया २४ तो तहां तिसने एक तत्त्वार्थवेत्ता श्रेष्ठ ब्राह्मणको देखा जो विष्णु जीकी सेवामें परायण (उ- त्तंक) नाम तपोनिधान मुनी २५ जो अकेला दयालु लोभ रहित भया ध्यानमें परायण तिसे तिसे देखके लुब्धकने निज चोरीमें विघ्नकारी देखा कि यह मुझे चुराने नदेगा २६ तो देवद्रव्य चुरानेको मनकिया गाढ़ीका मनवाला वह कालिक तलवार निकाल तिसे मारनेलगा २७ सो तिसकी छातीपै पैर धरकर अरु हाथसे तिसके केश प- कड़कर तिसको मारने को चाहा तो तिसे देख के उत्तंक

बोला २८ अरे साधु२ तू मुझ बिनअपराधीको वृथाक्यों मारता है अरे मैंने तेरा क्या अपराध किया सोतो कहु २९ अरे अपराधवालों कोही लोक में शिक्षा दीजाती है हे लुब्धक बिना अपराध कोई भी किसीको नहीं मारता ३० अरे जो शांतचित्त सज्जनहैं वे विरोधीरोगी मूर्खोंमें भी तिनके गुणोंको देखके विरोधनहीं करते ३१ जो बहुत प्रकार बाधा किया भी दयावान् जन पीड़ित नहीं होता तिसनरको उत्तम अरु अत्यंत विष्णुप्रिय कहते हैं ३२ ये युजन पराये हितमें बुद्धि तिसको वह निजनाश होतेभी बैर नहीं करता जैसे काटताभया भी चन्दनका वृक्ष कुल्हाड़ेके मुखको सुगंधित करदेताहै ३३ ओहो बलवान् विधाताही जनों को विविध बाधा करता है जोकि सब संगोंसे हीन भी इस दुर्जनसे पीड़ितहोताहै ३४ देखो वे कारणही लोकमें खोटे जन सज्जनोंको बाधाकरतेहैं तहां भी साधुवों को सताते हैं अरु बराबरवाले मे कुछ नहीं कहते ३५ हे ऋषियो मृगमीन अरु सज्जन जो तृण जल संतोषइन उचित वृत्तिवालेहैं तिनके लुब्धक धीवर दुर्जन ये बिन कारण अर्थात तिनसे आपही बैर करते हैं ३६ ओहो यह बलवाली माया सब जगतको पुत्र मित्र कलत्र आदिकों करके मोहित करके तिन्होंको दुःखमें नियोजित करती अर्थात दुःख में डुबोती है ३७ पराया द्रव्य चुराकर कुटुम्बका पोषण कियाजाता अरु अंत समयमें वह सबको छोड़के अकेलाही देखा चला जाता है ३८ मेरी माता मेरा पिता मेरी भार्या मेराभाई मेरायहइन ममें प्राणियोंको ममता वृथा बाधा करतीहै ३९ जिनने जन

द्रव्य कमाता तबतक भाई बंधुहैं फिर तो धर्म अधर्मही यहां वहां सहाय होवे और कोई नहीं ४० जिन्होंने धर्म अधर्मसे द्रव्य संचित करके कुटुम्बका पोषण किया वे अग्निमें घृत छोड़के घृत सहित अन्न भोजन करते वे सदा सुख भोगतेहैं अर्थात् वे भोजन करनेवालेहीहैं ४१ अरु परलोकमें जाते जनके साथ तो धन पुत्र सखा भाईकोई भी नहीं जासक्तेकेवल धर्म अधर्महीं जाते हैं ४२ इनपाप करनेवाले मनुष्योंका मनोरथ तो बढ़ता अरु पुण्यात्मा जनोंकी कामना अर्थात् इच्छा घटतीहै ४३ यह जन धनादिकोंके इकट्ठा करनेमें सदा बाधा कियाजाता अरु जो होनेवाला सो होताहीहै यह अज्ञानी जन नहींजानते ४४ हेद्विजयियो जो बात करोड़ों ग्रन्थों करके कहीगई वह हम एकही पदसे कहतेहैं कि होनेवाला होताहीहै ४५ तिसको संसार नहीं जानता जो होनेवाला सो होताहै अरु जो नहीं होनेवाला सो नहीं होताहै ऐसे निश्चय बुद्धि वालोंको चिंता कभी भी बाधा नहीं कर सक्ती ४६ यह सब चर अचर संसार दैवके आधीनहै तिससे जन्म अरु मृत्युको दैवही जानता और कोई नहीं ४७ जहां कहीं जन स्थितहोवे पर भावीहै सो अवश्य होताही है तिसमें यह संसार नहीं जानकर वृथा मायामें फँस रहा है ४८ अहो ममतासे व्याकुल मनुष्योंको महाभारी दुःखहोता सो महापाप करनेवालेको भी नहींहोता ४९ जो धन इकट्ठा किया सो सब भाईबंधु जनखाते अरु आप अकेला सहैतिसके पापफलको भोगताहै ५० ऐसे कहकर निर्मम को छोड़के भयभीत भया वह कालिक व्याध हाथ बांधे

वार २ कहनेलगा कि क्षमाकरो २ हेऋषियो तबतो तिसके संगके प्रभावसे अरु भगवान्‌के समीप पनसे निष्पाप हुआ किये का पछतावा करता व्याध यह कहने लगा ५१ हेद्विजेंद्र जितने कि बहुत से भी पाप मैंने किये थे वे सब आपके दर्शनसे नष्टभये ५२ मैं अज्ञानी पाप बुद्धि नित्य महापाप करताहूं अब मेरा उद्धार कैसेहोय मैं किस को शरण जाऊँ ५३ मैंने पूर्वजन्म के पापोंसे तो कसाई पन पाया अरु अभी बहुतसे पापकरता हूं सो किसगति को प्राप्त होऊंगा ५४ ओहो मेरी आयु छिन२ शीघ्र बीततीहै अरु बहुतसे पाप इकट्ठे भये अरु मुझसे कुछ प्रायश्चित्त बनानहीं न जाने मेरी कौन गतिहोगी ५५ हाय ब्रह्माने मुझ पापीको भारत भूमिपर क्योंरचा अबमैं तिन पापोंको कितने जन्मों में भोगोंगा ५६ ऐसे वह अपने आपको बिसराहता भया लुब्धक भीतरके दुःखाग्नि में तप्त भया शीघ्रही मरिगया ५७ तबतो दयालु मुनिउत्तंकजीने तिसे पड़ा देखके विष्णु जी के पादोदक से सींचा ५८ तब हरिपादोदक के स्पर्श से निष्पाप भया व्याध विमानमें विराजमान भया अरु इन मुनिजीसे यहकहता भया ५९ कि हे मुनि उत्तंकजी तुम मेरे गुरु हो जो कि आपने मेरे ऊपर हरि चरणोदक सींचा ६० अरु आप करके मैं परमपदको पहुँचायाहूं इसने आप मेरे गुरुहो ६१ हेद्विज आपको नमस्कार है जोमुझसे बना सोक्षमा करो ऐसे कहके तिसने तिन मुनिजीपर दिव्य पुष्प बरसाय अरु तीन प्रदक्षिणाकर बारम्बार नमस्कारकरी ६२ ६३ फिर तो नरश्रेष्ठ आदि सब शोभा सहित विमान में

विराजमान होकर वैकुंठ भवनको पधारताभया ६४ यह आश्चर्य देख मुनि उत्तंक जी विस्मय भये तबतो हाथ बांधिके विष्णुजी की स्तुति करनेलगे तिससे प्रसन्न भये महाविष्णु जीने उत्तम वरदिया तबतो तिस वरसे उत्तंक जी भी परमधामको पधारे ६५।६६ ॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराणदेवीसहायकृत भाषानुवादमें हरिपादोदक कामहात्म अध्यायपैंतीसवांभया ३५ ॥

छत्तीसवां अध्याय ॥

उत्तंकजी की स्तुति का वर्णन है ॥

ऋषीश्वरों ने पूछा हे सूतजी वह कौन स्तोत्रहै तिससे कैसे विष्णुजी प्रसन्नभये अरु पुण्यात्मा उत्तंकजीनेकैसा वर पाया सो कहिये १ सूतजी बोले कि हरिध्यान में परायण उत्तंक मुनिजी भक्ति से हरि चरणोदक के समर्थ की स्तुति करनेलगे २ कि मैं आदिदेव नारायणजी को प्रणाम करताहूं जो विष्णु जी जगतके निवास अरु संहार कारण अरु जो शंख चक्र गदा आदि आयुधधरे महान्‌जो स्मरण करते जनोंकी पीड़ाको हरनेवाले अरु प्रसन्नहैं ३ जिनकी नाभीसे उत्पन्न भया ब्रह्मा इस संसारको रचता है अरु जिनके क्रोध से भये शिवजी संहार करते हैं तिन आदि नारायणजीको प्रणाम करताहूं ४ जो कमलापति अरु कमलके समान नेत्रोंवाले विचित्र वीर्य सबके मुख्य हेतु वेदांत वेद्य पुराण पुरुष तेजोंके निधान ऐसे विष्णु जीको मैं प्राप्तहूं ५ जो अविनाशी आत्मा सर्वगत अच्युतजो ज्ञानात्मक अरु ज्ञानियों पै प्रसन्न केवल

ज्ञानसेही जानिये जो स्थूल सूक्ष्म स्वरूपवाले अनादिभगवान् सो हुक्कपर प्रसन्नहोयँ हैं जो विष्णुजी असंख्य वीर्य्य अरु गुणजाती होन गुणों के प्रेरक अरु ज्ञानवेत्ताओं में श्रेष्ठहैं अरु जो नित्य अरु भक्त पीड़ाहारी परमात्मा दयासागर सो विष्णुजी मेरे वरदायक होवें ७ अरु जो स्थूल सूक्ष्मादिक आदि भेदों करके जगत्को विस्तारित करते अरु आपही अनन्त विष्णुजी सबके सार हैसे आपसेपर और कुछ भी नहीं है ८ जो आपका अगोचर अर्थात् जो नहीं जानाजावे ऐसा सूक्ष्म रूपहै जो माया से हीन अरु गुण जाति रहितहै अरु जिन आपको योगीजन निर्मल निरंजन अप्रमेय परमात्म रूप देखते हैं ९ अरु जो आप एकही होते उपाधिभेद से भिन्न २ देखरहे हो हे सर्वेश्वर परिणाम में सबके आत्मा आप एकहीहो १० जिनकी मायासे मोहितभये प्रसिद्धभी निजआत्माको नहींजानते अरु जब वह माया दूरभई तब वेही आपको सर्वात्मक देखतेहैं ११ मैं विष्णुजीको नमस्कार करताहूं जोविष्णुजी निर्गुण परमानन्द अप्रमेय शुद्ध अजर अमरहैं अरु जो सर्वोपमेय परम ज्योति हैं १२ जिनसे ये सब प्रपंच भया अरु जहांरहता अरु जहांलयहोता अरु इनके लिये विष्णुजीको नमस्कार है जो अप्रमेय आधार रहित अरु संसार के आधार परमानन्द चैतन्यमात्र हैंते तिन वासुदेव जीको नमस्कारहै १३ जो देव हृदय गुफामें विराजित अरु योगियोंसे सेवितहैं अरु जो योगों के आदि में भये तेसे तिन प्राणवस्थित विष्णुजीकोप्रणामहै १४ जो नादात्मक नादके कारण प्रथम ज्ञानात्मक देहनवाले भगवान्-

जीकीमैं कैसेस्तुति कारसकों ३५ हे भगवन्‌ संसारसमुद्रमें पड़े जड़ सैकड़ों कामोंसे बाधाकिये व्याकुल अरुअज्ञान के भेदसे भ्रांतिबुद्धिभयेऐसेमेरीआपरक्षाकरो आपकेअर्थ निरन्तर नमस्कारहोवै ३६ अरु लज्जासेहीन दयासेहीन अरु परद्रव्यहारी मरुत्तासे सैकड़ों फांसोंसे बंधामैं आप को निरन्तर नमस्कार करताहूं मेरी रक्षाकरो ३७ जोमैं अपकीर्तिमानुनिंदक कृतघ्नी सदाअपवित्र पापमेंपरायण अरु प्रमत्तहूं सो हे दयासागर मुझभय व्याकुलकी आप रक्षाकरो मैं वारवार आपके शरणाहोताहूं ३८ श्रीसूतजी बोले हेऋषियो दयालु लक्ष्मीजीकेपति तिस उत्तंकमुनि से ऐसे प्रसन्न कियेगये तब तो तेजोनिधान भगवान् तिस को प्रकटदर्शनदेतेभये जो अलसीके पुष्पकेसमान कांति-मान्‌ खिले कमलके समाननेत्रों वाले अरु मुकुटकुण्डल धरे हार बाजू पहिरे ३९।४० श्रीवत्सचिह्न कौस्तुभमणि धारणकिये सुवर्णका जनेऊपहिरे नासिकाके अगाड़ी धारण किया जो मोती तिसकी कांतिकरके बांधी भई है मुखकी छवि जिनकी ४१ जो पीताम्बरधारी देव बन के फूलों की मालों से सजे अरु तुलसीजी के कोमल कोमलदलों करके पूजित चरणकमल जिनके ४२ अरु जो गरुड़ध्वज भगवान्‌ की तरफ़ी पैसरोंमें शोभित ऐसे तिन विष्णुजीको देखके उत्तंकजी भूमिमें पड़कर दण्ड-वत् प्रणाम करतेभये ४३ अरु विष्णुजीके पैरों को हर्ष के आंसुओं से सींचे अरु तिनमें मन लगाये हे मुरारि जी रक्षाकरो २ ऐसे कहताभया तबतो दया में परायण महाविष्णुजी ने इसे खड़ाकरके इसको आलिंगनकिया

अर्थात् तिनसे मिले अरु हेवत्सवरमांगो ऐसे इनश्रेष्ठमुनि जीसे कहतेभये ४४।४५ हे श्रेष्ठ मेरे प्रसन्न भये कुछभी असाध्य नहींहै तिससेतुम वरमांगो ऐसे विष्णुजीनेकहा ४६ ऐसे सुनके उत्तंकजी देवोंकेदेव चक्रपाणि जनार्दन जीको प्रणाम करके यहबोले किहे देवजी मुझ को इन तुच्छ वरदानोंसे क्या मोहितकरतेहो ४७मुझको तो यह हीवर देवो कि जन्मजन्मांतरमें मुझको आपकी दृढभक्ति होती रहै ४८ अरु कीड़ों में पक्षियोंमें सर्पोंमें अरु यक्ष राक्षस पिशाचों में अरु मनुष्योंमेंभी जहां २ मेरा जन्म हो तहां२ही हे केशवजी आपकी प्रसन्नता मुझपरहोती रहै सोकि आपमें अविचारवाली अचलबुद्धि होवे ४९ हे ऋषियो फिर तो देवेशजीने (ऐसहीहो) ऐसे कह कर शंखसे तिसका स्पर्श किया अरु तिसको योगिजनोंको भी दुर्लभ ऐसा दिव्यज्ञानदिया ५० हेऋषियो फिर भी स्तुतिकरते उत्तंकजीको हर्षितभये देवजनार्दनजीतिनके शिरपर हाथधरके यह कहतेभये ५१ श्रीविष्णुजीबोले हे द्विजश्रेष्ठ तुमेरा कर्मयोगसे सदा आराधन कर सो नर नारायणजी के स्थान अर्थात् बदरिकाश्रम चलाजा तो मोक्षको प्राप्तहोवेगा ५२ अरु तेरे किये इन स्तोत्रको जो नरनिरन्तरपढै वह सबकामफलपाता अरु फिर मोक्षको प्राप्त होताहै ५३ हेऋषियो उत्तंकजी से ऐसे कहके विष्णुजी तो तहांहीं अन्तर्द्धान होते भये अरु उत्तंक जी बदरिकाश्रमको चलेगये तिससे हे ऋषियो देवजनार्दनजी में निश्चलभक्तिकरनी क्योंकि हरिभक्ति लोकोंपर अरु सबकाम फलदाता है सोहे ब्राह्मणो तुम सदा नम्रहृदय

बांधके यह कहता भया २० यज्ञमाली बोला हे द्विजेंद्र जो मैंने पहले किया है सो श्रवणकरो मैं स्मरणहोने से जानताहूं जो सुननेवाले को आश्चर्य्य देनेवाला वृत्तांत है २१ सोकि पहले सतयुगके विषे (स्वारोचिषमन्वंतरमें) (रैवतनाम) ब्राह्मण वेदवेदांग पारगामी भया २२ जो अपूज्यों को पूजता अरु सदाग्राम भरको पुजाता निंदक अरु छिद्र अरु जो अयोग्य बेचनेवाला २३ सो निषिद्ध कर्म करनेसे भाइयों करके त्यागागया जो दरिद्री दुःखी जीर्ण अंगवान् रोगीभया २४ ऐसा वह द्विज कभी धन के लिये पृथ्वीपर विचरता खांसी श्वास पीड़ित हुआ नर्मदाजीके तीरपर मृत्युको प्राप्तहुआ २५ अरु तब तिसकी भार्या (बंधुमति) व्यभिचारमें परायण भई तो वह भी भाइयोंसे छोड़ीगई २६ हे द्विज तिस समयसे मैं चांडालसे जन्मा (दण्डकेतु) ऐसे करके मैं विख्यातहुवा था २७ जो महापापोंसे परायण अरु नित्य ब्राह्मणोंसे द्वेष करता अरु परस्त्री परधनमें नित्यलोभी प्राणियोंका हिंसक था २८ अरु मैंने गऊ ब्राह्मण अरु बहुत से मृग पक्षी मारे अरु बहुतसा सुवर्ण चुराया २९ अरु नित्य मद्यपीता अरु निंदक खोटाथा ऐसे नित्यपापोंमें रत मैंने बहुत से मार्ग रोके सब पशु पक्षी मृगादिकों को यमके समान जान पड़ताथा ३० ऐसा मैं कभी कि कामदेवसे तथा परस्त्री से रमण चाहता रात्रीको पुष्पादिक से रहित सूने विष्णुमंदिर में गया ३१ तहां मैंने स्त्री भोगकेलिये अरु सोनेको निज वस्त्रसे रहित कुछेक थोड़ा सा स्थान बुहारा ३२ तो जितनेका रज बुहारानेसे दूरकिया तितनेही जन्मोंका

पीडानाश करनेवाले महाविष्णुजी को पूजतेहैं ५७ जो
श्रद्धा सहित निष्काम भया विष्णुभक्तों को पूजे तो वह
इक्कीसकुलका उद्धारकरकेविष्णुजीकेभवनमेंरहताहै ५८
जो निष्काम विष्णुभक्तकेअर्थ अन्न जल देता सो विष्णु
भगवानही जानना अरु जो विष्णुभक्तों की सेवाकरते
तिनको इक्कीश पीढ़ीसहित वैकुण्ठवास होताहै ५९ जो
निष्कामभये विष्णुजीकी वा शिवजीकीपूजाकरैं तो वे
आपपवित्रभये सबभुवनोंकोभी पवित्रकरतेहैं ६० विष्णु
पूजा करनेवाला जिसके घर रहै तहांही सब देवता अरु
नारायणजीलक्ष्मीसहित रहतेहैं ६१ अरुपूजतीभई तुलसी
जी जिसकेघरमें विराजमानरहैंतिसकेसबकल्याण प्रति
दिनबढ़तेहैं ६२ शालिग्राम शिलारूप विष्णुजीहैं तहां
भूतवेतालादिकोंके भयकी बाधानहींहोती है ६३ जहां
शालिग्रामकी शिलाहै सोहीस्थान तीर्थ अरु तपोवनके
समानहै क्योंकि तहां भगवान मधुसूदन जी विराजमान
हैं ६४ जिसकेघर तुलसीजी अरु शालिग्राम शिला का
पूजननहीं सो स्थान स्मशानकेसमान जानना ६५
हे द्विजो पुराणन्याय मीमांसा अरु धर्मशास्त्र अरु छः अंगो-
पांग वेद ये सब विष्णुरूपहीहैं ६६ जो विष्णुजीकी भक्ति
से चार प्रदक्षिणा करते हैं वेभी सब लोकोंमें [illegible]
स्थान पाते हैं ६७ हे द्विजो इसलोक में [illegible] ने [illegible]
[illegible] कराहै सो [illegible] अरु [illegible] [illegible]
करनेवाला ६८ सोभी पहिले [illegible] [illegible] अरु
[illegible] भारी [illegible] ६९ [illegible] अरु
सब शोभासहित देवतों के [illegible] अरु [illegible]

रहता नहींहै अरु मृत्यु सदा लगा रहता तिससे धर्मका संग्रह करना ४५ सारे बंधु अनित्यहैं अरु संपत्ति भी अत्यंत चंचलहै अरु देहोंका अवश्य नाश होता है इससे केशवजीको पूजो ४६ हेजनो क्यों मदसे मत्तभये वृथा गर्व करतेहो यह शरीरही नहीं रहता फिर धनादिकोंका क्याही कहना है ४७ जिन्होंने करोड़ों जन्मों में पुण्य संचय किया तिनकी भगवान्में भक्तिहोतीहै हेब्राह्मणो इससे तुम सब निरंतरही देवोंके देव जनार्दनजीकी पूजा करो ४८ गंगाजीका स्नान तो सुलभहै अरु अतिथिपूजनभी सुलभहै तैसेही सबयज्ञभी सुलभहैंपर विष्णुभक्ति बड़ी दुर्लभहै ४९ तुलसी सेवा दुर्लभ अरु सत्संगति दुर्लभ है अरु संसारसमुद्रमेंपड़े मनुष्योंको विष्णुभक्ति अत्यंतही दुर्लभहै ५० सब प्राणियोंपर दयाभी दुर्लभहै अरु सत्संग तुलसीसेवा भी पर हरिभक्ति अत्यंत दुर्लभहै ५१ सो तुम दुर्लभ मनुष्यतनको पाकर वृथा मति नष्टकरो किंतु जगत्केनाथ विष्णुजीको पूजो यह मैं वेर२ कहताहूं५२ हेजनो जोभवसागरसे तरनाचाहतेहो तो हरिभक्तोंका जो दुर्लभसंगहै तिसको आश्रयकरो५३सोकि शीघ्रही गोविन्द जीको पूजो विलम्ब क्या करतेहो यमकानगर निकटही दिखाताहै५४ इससे हे द्विजो तुम जगत्के योनि सबकारणोंके कारण नारायणजी के चरणोंको पूजो ५५ जो मुक्तिचाहतेहो तो सबके आधार सबकेकारण सबकेअन्तर्यामीविभुविष्णुजीको पूजो क्योंकि जोविष्णुजीको शरणहैं वे सनातन धन्य हैं ५६ अरु वही वंदनीय पूजनीय अरु विशेषसे नमस्कार करनेयोग्यहैं जो भक्तोंको

ब्रह्माजीका एकदिन होताहै तिसहीदिनमें हैइन्द्र चौदह मनुहोतेहैं अरु चौदह इंद्रहैं और देवता भिन्न२ अनेक प्रकारकेहैं ८३ अरुसब इन्द्रोंकीयथावत् अर्थात् पृथक्२ सम्पत्तियें होतीहैं सोहे द्विजो तिन मनुओंके नाम बखान करतेहैं सो तुमसे कहतेहैं सो श्रवणाकरो ८४ सो तिसतिस मन्वंतरमेंहेइन्द्रतिनतिनमनुपुत्रराजाओंकोश्रवणाकरो ८५ ८६ सोकि पहिलेतो स्वायंभुव मनुफिर स्वारोचिषमनुफिर उत्तम तामस रैवत चाक्षुष येमनु ८७ फिर वैवस्वतमनुफिर सूर्यसावर्णि धर्मसावर्णिक धर्मसावर्णि दशवां ब्रह्मसावर्णि फिररुद्रसावर्णि फिर रौच्यमानऔरचौदहवां भौत्य ये मनुकहे ८८ अबहे देवयेष्ठ हमदेवता अरु इंद्रोंकोकहते हैं सो श्रवणाकरो सो पहिले स्वायंभुव मन्वंतर में (याम) ऐसे विख्यात देवता भये अरु (शचीपति) ऐसेविख्यात महामति तिनका इंद्रभया ८९ अरु स्वारोचिषमन्वंतर में (पारावत्त) अरु (तुषित) ऐसेविख्यातदेवताभये अरु (विपश्चित) नामसेप्रसिद्ध तिनका सकलसंपत्तिसहितइंद्रभया ९० अरु तिसरे मन्वंतर सुधामान अरु सत्य तथा शिव अरु प्रतर्दन ये देवताभये अरु (सुशांति) ऐसे विख्यात तिनका इंद्रभया ९१ अरु सुपार हरिसत्य ये देवता भये अरु शिखि ऐसे विख्यात तिनका इंद्रभया ये चौथे में कहे ९२ अरु (विभुनाम) इन्द्र पांचवें मन्वंतर में कहा अरु अमित कांति इत्यादिक देवता कहे अब छठेकोभी सुनो सो तिस में भाव्यआदि देवता कहे अरु (मनोजव) तिनका इन्द्रभया ९३ अरु वैवस्वत मन्वंतरमें आदित्यवसु इन्द्र आदिक देवताभयेअरु(पुरंदर) तिनकाइन्द्रभया ९४

संयुक्त इन्द्र बृहस्पतिजी को यह पूछता भया ७० इन्द्र बोला हे सबअर्थ तत्त्वकुशल बृहस्पतिजी वीतेभये ब्रह्माजीकेकल्पमें यहस्वर्ग कैसाथा ७१ तबइन्द्र कौनथा अरु देवता कैसेथे अरु तिनका कैसाकर्मथा सो आपयथावत कहियेबृहस्पतिजीबोले कि ७२ हेइन्द्र मैं अबहीकाभया हूं इससे कुछ नहीं जानता मुझ सेपहिले दिनकेकियेकर्म भी मैं नहीं कहसक्ता ७३ अरु आजदिनतक ब्रह्माजीमे कैसनु व्यतीतभयेहैं तिनको भीमैं बताय नहीं सक्ता ७४ इससे एक (सुधर्म) इस नामसे विख्यातब्राह्मण तुम्हारे पुरमें है सोही वह सब वृत्तांत जानता है तिससे चलकर पूछो ७५ हेद्विजो ऐसे निश्चय करके सबदेवताओंसहित इन्द्रबृहस्पतिजीकेसाथ निजगुरुब्राह्मणकेपासआय ७६ अरु तब तो बृहस्पतिजीके साथ आये देवतोंकेपति इन्द्र की सुधर्म्म ने यथायोग्य विस्तारसे पूजाकरी ७७ तबतो सुधर्मसे पूजितभया इन्द्र तिनकीउत्तम शोभादेखिके मन में विस्मितभया नम्रतायुक्तयह कहनेलगा ७८ इंद्रबोला हे सब धर्मजाननेवाले सब सम्पत्तिसहित सुधर्मजी तुम यश तेज कीर्त्तियोंसे मुझसेभी अधिक भयेहो सो दान सेवा तपोंसे अरु यज्ञ वा तीर्थसेवनोंसे हे साधो किस प्रभाव करकेतुम ऐसी शोभाको प्राप्तभयेहो ७९ ८० अरु वितीत भये ब्रह्माजीके कल्पके वृत्तांत को भी तुम अवश्यजानते हो अरुबीते इन्द्रको अरु देवतोंको किसप्रकार जानतेहो सो कहो ८१ हे द्विजो तब तो इन्द्र करके ऐसे कहागया सुधर्म्म नम्रतासे भरा हँसताभया यथावत पहिले वृत्तांत कहता भया ८२ सुधर्मबोला हा बारसहस्र चौयुगियों का

विष्णु मंदिरकेआगेगिरा १०६ सोमेरेतोकंठमेंप्राण आगये अरु तिस मांसलोभी कुत्तेने मेरा कंठपकड़ा अरु मुझको पकड़के मुखसे ढूंढदवाता और कुत्तोंकेडरसे भीकितभया तिस विष्णुमंदिर की प्रदक्षिणाकेआकार अर्थात् चक्कर खाकरगया १०७ तिसहीकरकेजगतकेअंतर्यामी विष्णु जीप्रसन्नभये सो मुझको अरुकुत्तेकोभी परमधामकोपहुंचाया १०८ हे इन्द्र प्रदक्षिणाके आकार सेभी रायेका ये फलहुआ तो हे देवश्रेष्ठ फिरसम्यक् पूजनसे तो क्यों नहींहोवे १०९ हेद्विजो तदमहात्मा तिससुवर्णसेऐसेकहा गयाइंद्रमनसेप्रीति करताहरिपजामें परायणभया ११० अब भी इसलर्गमें भारतभूमि में जन्मलेना चाहते देवता आरोग्यरूप नारायणजीको पूजतेहैं १११ हेद्विजो ब्रह्मादिकदेवता विष्णुजीको पूजके तिनके लोककोगये अरु जातेहैं जो महात्मा नारायणजी का स्मरणकरते अरुवैराग्यको प्राप्त हैं तिनके संसार का दृढवंधन कैसेहोगा जो सत्संगके लोभी अरुभक्तिसेवा करतेहैं ११२ जोनिक्त संगजन नित्यही गरुड़वाहननारायणजीकी पूजाकरतेहैं वे सब पापोंसे छुटे हरिमंदिरको पधारतेहैं ११३ जोजन वैराग्यमें परायण परम विष्णु जीको जाननेवाले सुरोंके गुरुतिन विष्णुजीकानिरंतर स्मरणकरतेहैं तोवेतिसध्यान से हतपापभये फिर माताके स्तनोंके रसको नहीं पीते अर्थात् वे फिर जन्म नहीं लेते ११४ जो अहंकार रहित सर्वेश्वर सुरोंके ईश सबुहंता अजन्मा विष्णु जीको हृदय में भावना करते अर्थात् तिनकास्मरण करतेहैं तोवे अप्सराओंके अतिथिहोते कोकि इन्द्रादिकोंकरके पूजेजाते

जो सब कामयुक्त अरु आठवें में (सुनय) आदिक देवता कहे अरु विष्णुजीके प्रभावसे (बलि) तिन का इंद्रभया ९५ अरु पारादिक देवता अरु (अद्भुत) इंद्र ये नवें में कहे जाते अरु दशवें सवामन आदि देवता कहे गये ९६ अरुहेद्विजो (शांति) नामसबभोगोंसहिततिनका इंद्रजानु अरु विहंगमादिक देवता अरु(वृष) तिनका इंद्र ये ग्यारहमें कहे ९७ अबबारह मन्वंतरके सुनोसो (ऋभु) नाम तो इंद्र अरु हरित आदिक देवता अरु (सुगमागा) आदि देवता तेरहवेंमेंकहेअरु महापराक्रमी (दिवस्पति) तिनका इन्द्रकहा ९८ अरु चौदहवेंमें (चाक्षव) आदि देवता (शुचि) तिनका इन्द्र जानना हे इन्द्र ऐसे तुम को देवता अरुइन्द्र मनु ये कहेहैं ९९ येब्रह्माजीके एक२ दिनमें निज२ अधिकार भोगतेहैं हेइन्द्र सब सर्गोंमें सृष्टि रचना एकही प्रकारकीहै पर इनके करता बहुतहैं१०० तिनकी संख्याको नहींकरसक्ताहूं हे इन्द्र मेरे स्थितभये विष्णुलोकमेंबहुतसेब्रह्मागयेतिन्हेंमैंगिननहींसक्ता२०१ अरुइस स्वर्गलोक में आकर भी मैंने चार मन्वंतर व्यतीत किये क्योंकि मेरीगोभा मेरी संपत्ति बहुत विस्तारवाली है१०२सो हेप्रभोमैं सौकरोड़युगोंतक यहांहीरहूंगा फिर में पृथ्वीकोभोगनेको जाऊंगा अरु मैंनेजो सुकृत किया सोभी तुमको कहताहूं १०३जो कहते अरु सुनते जनोंके सब पापोंका नाशकहै १०४ हे इन्द्रमें पहिलेके पापमें शोच भया सो अशुद्ध मांस भोजन करता भूमिमें स्थित रहा १०५ एकबेर हे इन्द्र में विष्णुमन्दिर के घिराव में स्थितरहा तो सायंकाल में व्याधके गम्भसे ताड़ित भया

सो हे द्विजो किसी काल में तो धर्म बढते हैं अरु किसी
समय इस अभिप्रायसे धर्म घटजातेहैं ३ सो सतयुग त्रेता द्वापर
कलियुग ये चार युग कहे ये चारों बारह दिव्य वर्षों के
होतेहैं और संध्या अंश इन करके युक्त युग यथा योग्य
कालसे जानने चाहिये तत्त्वदर्शी ऐसे कहते हैं ४।५ सो
पहिला तो सतयुग कहा तिससे परे त्रेतायुगहै फिर द्वापर
युग फिर तिनके अंतमें कलियुगहोताहै ६।७ हे ऋषियो दे०
दानव गंधर्व यक्ष राक्षस पन्नग सतयुग में ये सब देवों के
समान शुद्धशरीरी थे ८ और सारे प्रसन्न वर्णाश्रम अरु
तहां लेना बेंचना कुछ नहीं होता था ९ अरु सतयुग में
वेदोंका विभागभी नहींभयाथा अरु ब्राह्मणक्षत्रियवैश्य
शूद्र ये निज२ आचार धर्मोंमें परायण थे १० सो सदा
नारायणजीके चरणोंकी शरण अरु तप ध्यानमें परायण
काम आदि दोषोंसे छूटे अरु प्रसादके गुणोंसे सहित ११
निज२ आश्रम आचार युक्त ईर्षा अरु पाखण्ड रहितथे
अरु सारे सत्य वक्ता अरु चारों आश्रम धर्मवाले थे द्वि
ब्राह्मण वेदअध्ययन सहित अरु सब शास्त्रोंमें कुशल थे
अरु सब वर्णभी निज२ आश्रमयुक्त धर्म करके तत्पर
रहाथे १२।१३ अरु निष्काम कर्म करते थे तिससे [illegible]
[illegible] परमगति पातेथे १४ अरु त्रेतायुगमें [illegible]
[illegible] अरु हे ऋषियो त्रेतायुगमें [illegible]
[illegible] १५ सो हे द्विजो द्वापरमें [illegible]
से हीन होजाताहै अरु कलियुगमें [illegible]
[illegible] सो कलियुगमें [illegible] १६ [illegible]
परायण अरु धन [illegible] अरु ज्ञान

हैं ११५ जो हरि कथाके श्रवणसे निष्पाप भये अरु हरि को चरणारविंदमें आसक्त मनवालेहैं वे स्पर्श करते अरु संभाषण करतेभी लोकोंको पवित्र करते हैं इससे विष्णु जीही पूजनीयहैं ११६ हे द्विजो जहां हरिपूजा में तत्पर निर्मल बुद्धिवाले महात्माजन रहते तहांहीं सबकल्याण भी जानने ११७जैसेगहरी निचानमें जल रहताहै हेद्विजो हरिही परमवस्तु अरु हरिही परमगतिहैं इसलिये चैतन्य कारण परमविष्णुजी पूजने योग्य हैं ११८ सो हेद्विजो तुमभी स्वर्गमोक्ष फलदातासच्चिदानंद आरोग्यरूप विष्णु जीकोपूजो तिससे परम कल्याण होवेगा११९ जो शुद्ध-चित्त जन निष्काम भये विष्णुजीको पूजतेहैं तो प्रसन्न भये विष्णुजीतिनकोसबकामफलदेतेहैं १२० हेऋषियो जोइसेपढ़ैवा श्रवणकरैसोवह अश्वमेधयज्ञकेफलकोप्राप्त होताहै१२१ हेद्विजोऐसेहमने तुमकोसंक्षेप अरुविस्तार से हरिपूजाकाफलकहाअबतुमक्यापूछाचाहतेहो१२२॥

इतिश्रीबृहन्नारदीयपुराण भाषानुवादमें हरिपूजाकाफल इसनामसे सैंतीसका अध्यायभया ॥

अडतीसवां अध्याय॥

युगोंकेधर्मोंका वर्णनकियागयाहै ॥

ऋषीश्वरोंने पूछा हे सूत अर्थ तत्त्ववेत्तासूतजी आपने हमसे सब आख्यान कहा पर अब हम युगों की संख्या अरु तिनके लक्षण पूछा चाहते हैं १ श्रीसूतजीबोले कि ऋषीश्वरो अच्छा तुम लोक के उपकारी हो इससे हम लोगोंके उपकार करनेवाले युगोंकेधर्मोंका वर्णनकरेंगे

अर्थात कलियुग प्राप्तभये सारे धर्म नष्टहोजावेंगे तिससे
महा घोर कलियुग सब पापों का कारण जानना ३०
हेद्विजो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र येसब धर्मसे विमुख हो
जावेंगे हेद्विजो महाघोर कलियुग में ब्राह्मण वेद पढ़ना
छोड़देंगे ३१ अरु वे विष्णुभक्तिसे विमुख अरु वेदविद्वेषी
होवेंगे अरु परद्रव्य पराई स्त्री में लोभी अरु आचारों
की निन्दा करनेवाले अरु जन कृतघ्नी होवेंगे ३२ अरु
कन्याओं को वेंचेंगे अरु सब बौद्धों के आचार अर्थात
जैनिमतमें परायण होजावेंगे ३३ अरु सदा सत्संगसे द्वेष
करेंगे अर्थात सब पाखंडाचारी होंगे अरु गुणों में दोष
लगावेंगे तथा वृथा अहंकार से दूषित होवेंगे ३४ अरु
सब निज२ पंडिताईसे गर्वित कालक्षेप करेंगे अरुवेही
सबमें अविकाई रोसे सदा करते रहेंगे ३५ अरु सब जन
अवसीं लोभी अरु मांस चर्म व्यापारी होवेंगे इसही से
कलियुगमें सब अल्प आयुवाले होजावेंगे ३६ अरु अल्प
आयु होनेसे मनुष्य विद्या नहींपढ़ेंगे अरु विद्या न पढ़ने
से सर्वथा अवसकोही वृद्धिहोगी ३७ अरु सबप्रजा निज२
धर्म त्यागने से शीघ्र मरेंगी अरु ब्राह्मण आदि सब वर्ण
आपसहीमें विरोध करके नष्ट होजावेंगे ३८ लोकोभ
आदिकोंमें परायण मोहित भये अरु वृथा अहंकार से
दूषित अरु आपसमें वैरबांधे एकको एक मारनेकोलिये
तय्यार होवेंगे ३९ अरु ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ये सब
धर्मसे विमुखहोंगे अरु धन लक्ष्य रहितभये शूद्रकिसमान
आचरण करेंगे ४० अरु सबजन निर्दयी अरु निर्लज्जा
अर्थात बेहयापनसे रहित होंगे अरु ब्राह्मणं के गोत्रवाला

में परायण अरु द्विज दानलेने देने में परायण १७ अरु हे मुनीश्वरो धर्म द्वापरमें दोपाद घटजाता अर्थात आधाही रहजाता है अरु विष्णुजी पीले होते अरु वेदों का भी विभाग होताहै १८ अरु कोई२ भूठ बोलने भी लगतेहैं अरु ब्राह्मण आदिक वर्ण कुछ२ राग आदि खोटेगुणों को ग्रहण करते हैं १९ अरु तुच्छ स्वर्ग भोगने के लिये ब्राह्मण यत्न करते हैं अरु कोई पाप बुद्धि वाले जन धन आदिकोंकी कामना करते हैं २० हे द्विजो द्वापर में अधर्म उत्कृष्ट होजाताहै अर्थात बढजाताहै अरु अधर्मके प्रभावसे संतान नष्टहोतीहैं २१ अरु हेमुनीश्वरो जनअल्प आयुवाले होजावेंगे अरु पुण्यकरते को देखके ईर्षा करेंगे २२ अब हम कलियुगकी मर्याद कहतेहैं तिसे सावधान भये सुनो हेद्विजो कलियुगमें धर्म तीनपाद न्यून अर्थात चौथाईहीरहजावेगा २३।२४ अरु कलियुगमेंआकर विष्णुजी भी काले होजावेंगे जो कोई भी धर्मात्मा कर्म योगमें परायण होगा अर्थात अच्छेकर्म करेगा तो तिसे देखके सब ईर्षा करेंगे २५ व्रत आचार धर्म नष्टहोंगे अरु ज्ञान यज्ञादिक भी उठजावेंगे अरु निज२ धर्म नहोनेसे उपद्रव होवेंगे२६ सारेजन ईर्षामें परायण अरु पाखंडाचारी होंगे अरु कलियुग मत्र प्रजा अल्पआयुवाली होवेगी २७ ऋषीश्वरोंने पूछा हेसूतजी आपने संक्षेप में युगोंके धर्म वर्णन किये पर अब आप कलियुग काही विस्तारसे वर्णन करिये २८ सूतजी बोले हेऋषियो तुम सारे श्रवण करो जो महात्मा नारदजी ने सनत्कुमार से कहा सोही हम कहते हैं २९ सो विप्रा जाके कालभय

सा पाखंड जनावनेको पितृयज्ञ आदि कर्म अर्थात् श्राद्ध
आदि कर्म करेंगे ५३ तैसेही जन कुपात्र द्विजों को दान
देनेलगजावेंगे अरु दूधरहे पर्यंतजन शठवोंकी सेवाकरेंगे
५४ अरु तब ब्राह्मण स्नान शौच आदि सत्कर्म कुछभी
नहींकरेंगे जोकरेंगेतो वेसमयसेंकरेंगे अरुकपटयुक्तियोंसें
कुशलहोवेंगे५५अरुजन देवनिंदातथा ब्राह्मणोंकी निंदा
करेंगे अरुकिसी जनकाभी मन विष्णुजीसें नहीं लगेगा
५६ अरुदेवताको पूजतेजनको देखलोग हँसीकरेंगे अरु
ब्राह्मणों कोही राजदूत धनलेनेके लिये बाँध लेजावेंगे
अरु तिनको बहुतसी ताड़नादेंगे ५७ अरु हेद्विजो कलि-
युगमें दान यज्ञ जप तप आदिकोंको ब्राह्मण वेचेंगे अरु
चांडालोंसेभी प्रतिग्रहलेवेंगे५८कलियुगके लगतेही जन
विष्णुजी की निंदा करने लगेंगे अरु कलियुग के अंतमें
तो कोई विष्णुजीका नामभी नहींलेंगे ५९ सोकलियुग
में द्विज शूद्र स्त्रीसंग में तत्पर अरु विधवा शील नष्टक-
रनेवाली होंगी शूद्रकाअन्न भोजनकरेंगे ६० अरुकपटी
कसाई जनोंके साथ वार्तालाप करेंगे तथा पाखंडी अरु
आश्रम धर्म त्यागीहोंगे ६१ जो ब्राह्मण की सेवा नहीं
करेंगे अरुनिज धर्मको नहींपालेंगे ऐसे शूद्र तपस्वियोंके
चिह्नधारण करके सो कि गेरुवे वस्त्रको जटा रखा धूल
लपेटे झूठीयुक्तियोंसें कुशलभये शूद्रधर्मवर्णनकरेंगे ६२
६३ हेद्विजो कलियुगमें सबजन दुःखी सन्तानवाले अरु प-
राया भोजन करनेवाले अरु लोभीहोंगे ६४ अरु शूद्रभी
संन्यास लेंगे लोभी आजीविका करेंगे अरु महापाप में
प्रवृत्त होंगे अरुकालपायकेलोभीहोंगे६५अरु ब्राह्मणांका

वेंगे अरु नीच उत्तम पदको पहुंचेंगे ४१ राजालोग द्रव्य लूटनेमें परायण अरु लोभमें तत्पर होंगे अरु धर्मकानाश पहिरे अर्थात् धर्मभेष धरे तथापि धर्मका विध्वंस क-रेंगे ४२ हेनारदजी सब धर्मरहित तिस घोर कलियुगमें जोजो हाथी घोड़ोंवाला होगा वह२ही राजा होजावेगा ४३ अरु पुत्रोंके ब्राह्मण कहलुवे रहेंगे अरु घर में निज धर्मवाली स्त्री के होते भी जन जार कर्म अर्थात् व्यभि-चार कर्ममें परायण होंगे ४४ पुत्र निज२ बापों से द्वेष करेंगे अरु शिष्य गुरुवोंसे शत्रुता करेंगे अरु तिस घोर कलियुगमेंस्त्रियें निज२पतियोंसे शत्रुताकरनेलगजावेंगी ४५ अरु सब नर लोभ सब अरु कुकर्मकरनेवालेहोंगे अरु ब्राह्मण सदा परअन्न भोजन करने की आशाकिया करेंगे ४६ सब पर स्त्रियोंमें रत अरु परद्रव्य हरनेमें तत्पर होंगे अरु मांससे जीवेंगे जो कि भेडे बकरोंकोमार२ मांसकी आजीविका करेंगे ४७ अरु तिसघोरकुसमय कलियुगमें जो मनुष्य निजधर्ममें परायणहोगा तिससे द्वेषकरते तिस की निंदा करेंगे ४८ ब्रह्मवादियोंकेतीरपरकुचालोंसेवाद२ करेंगेविविधिसें बोलेंगे अर्थात्आपसेंजल्पकहोनेसे रहजा-वेंगी अरु कलियुगमें सबकाल नगरके सींचनेसे ग्रामहोवेंगे ४९ अरु स्त्रियें वेश्याओंके जैसे आचरण करनेवालीहो-वेंगी अरु अधर्मिणी स्त्रियें निजनिज पतियोंकोभी हनेंगी ५० अरु नास्तिकजन दुर्बल कृपणोंका अरु भाइयोंका साधु अरु विधवाओंका द्रव्यचुरावेंगे ५१ अरु ब्राह्मण कोई नियम नहींकरेंगे किंतु वेदकी निन्दाकरेंगे अरु कु-तर्कोंसे निश्चितभये यज्ञ यजन न हवनकरेंगे ५२ अरुब्राह्म-

सत्त भये दुःख भोगनेवाले होंगे तथा रोग चोर महँगापन इत्यादिकोंसे अरु राजसे पीड़ित होंगे ७७ अरु औरोंको विन विचारेही कलंकहनेलगेंगे अरुपापीजन निजनिज दोषको प्रयत्नसे छिपावेंगे अरु अच्छे कुलकेभी जनपापोंकासम्यक् विवर्णकरेंगे अर्थात् बहुत पापकरेंगे अरु वे पापी धर्ममार्गवतानेवालेका तिरस्कारकरेंगे अरुधर्मकार्यकरतेकाहठया ठट्ठाकरेंगे ७८।७९ अरु कलियुगमें नीच जातिमेंजन्मेजन राजाहोने लगेंगे अरु ब्राह्मण शूद्र से भिक्षालेवेंगे अरुतिसकीटहल करेंगे ८० अरु हेद्विजो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अरु और२भी जातिवाले सब अत्यंत कामीभये आपस में वर्णसंकर होजावेंगे अर्थात् सबकी स्त्रियोंसे सब विषय करेंगे८१ अरु हेद्विजो न तो तहां शिष्य न गुरु न पुत्र अरु न पिता तैसेही न स्त्री न पति येहोंगे किंतु हेद्विजो तिस कलियुगमें सर्वथा वर्णों का संकर अर्थात्मिलना होगा ८२ अरु हे द्विजो कलियुगमें धनवालेसी संगतेहोजावेंगे अरुब्राह्मणभी रसवेंचने लगेंगे अरु धर्मका जामा पहिरे अरु मुनिभेषधरे ब्राह्मण होंगे अरु निज२ पुरायवेंचेंगे अरुवेदकी निंदामें परायण अरु धर्मशास्त्रके निंदक होंगे ८३।८४ अरु नरकमें जाने वाले ब्राह्मण शूद्रोंकी वृत्तिसे आजीविका करेंगे अरु न वर्षने के भयसे सदा आकाश में दृष्टी लगाते रहेंगे ८५ अरु कलियुगमें सारे मनुष्य भूखके भयसे डरतेरहेंगे जो कि केवल फलखाते मनुष्य तपस्वियोंकीनाईं आत्माकी रक्षा करेंगे ८६ जो न वर्षनेसे अत्यंत दुःखितहोंगे अरु कलियुग में मनकामी अरु छोटे देहवालेहोंगे नकालोंभीअरुनी [illegible]

शिक्षा देवेंगे अरु हे द्विजो धर्मविध्वंसी ब्राह्मणोंको तप-
स्विभेष किये शूद्रजन धर्मसुनावेंगे ६६ हे द्विजो ऐसे रोगे
बहुतसे अरु ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यभी ये सब कलियुग में
पाखंडी होंगे अरुब्राह्मण वेदध्वनिको छोड़के गानेबजाने
में परायण होंगे ६७ अरु सारे ब्राह्मण शूद्रमार्गमें वर्तने
लगेंगे थोड़ा परिश्रम करेंगे अरु मिथ्या भेष भरेंगे अरु
तैसेही वृथा अहंकार करके दूषित होंगे ६८ अरु हे द्विजो
तिस कलियुगमें दाता अरु भोक्ता ये कोई भी नहीं होंगे
अरु द्विज प्रतिग्रह परायण अरु कुमार्गमें चलनेवाले होंगे
६९ जो निज २ स्तुति करनेमें परायण अरु परनिंदा क-
रनेवाले होयंगे सो विद्याहीन चुगल अर्थात देव ब्राह्म-
ण गउओंके निंदक होंगे ७० अरु माया वचन बोलेंगे
अरु वैरबांधेंगे अरु हे द्विजो सोलह वर्षकी जनोंकी परम
आयुहोवेगी ७१ तिससे परे कोई नहींजीवेगा अरुतिसक-
लियुग में पाँचवें वा छठे वर्षमें स्त्रीके संतान होने लगेगा
७२ तथा आठ सात वर्ष के पुरुष संतान वाले कहावेंगे
अरुसारे निजधर्म त्यागी लज्जा रहित भिन्न मर्यादवाले
होंगे ७३ अरु कलियुग में बहुतसे चुगल होंगे जो पराये
अपमानमें परायण भये अपनी २ स्तुति करेंगे ७४ अरु
जन सदा परद्रव्य हरनेका उपाय चिंतवन करेंगे अरुपर
अन्नभोजन में परायण भये घर घर जीमते फिरेंगे तिनहीं
निंदाकरते अरु वृथा विश्रम्भी अर्थात निरर्थक विश्वासी
होंगे ७५ अरु मा बाप बेटा ये निरंतर निंदा करेंगे अरु हे
द्विजो जन वाणीसे तो धर्मबखान करेंगे अरु चित्तसेपाप
विचारेंगे ७६ अरु सारे जन विद्या अवस्था उनके मदमें

शास्त्रोंका निश्चयहै सोहीहमकहतेहैं जोगुह्यसेभी अत्यंत गुह्य अरुलोकोंका उपकारकहै १२४।१२५सोकि ये चर अचर संसार सबदैवके आधीनहै अरु तिसहीकरके प्रेरणा किया यह जगत् चेष्टा करता है १२६ सोकि जब निज शक्तिसे जो२ वेदोक्त कर्मकरे तिनसबको नारायणजीमें परायणभया विष्णुजीमेंसमर्पणकरतारहै १२७हे योगींद्र सनत्कुमार विष्णुजीमेंसमर्पणकिये सबकर्म तिन नारायणजीके प्रभावसे अनाशिवत होतेहैं १२८ अरु वेसंपूर्ण चंद्रमाके समान हर्षित करनेसे संपूर्णताको प्राप्त होतेहैं हे सनत्कुमार सब धर्मोंसे वाहिर किये इसघोर कलियुग में जोजन विष्णुजीमें परायणहैं वे धन्यहैं इसमें संशय नहीं १२९ कलियुग में विष्णुजी की भक्ति दुर्लभ है हे द्विज जो हरिभक्ति में परायणहैं तिनको पापबंधन संसार नहींहोता १३० अरु अनादिरोंको मननेभी उनावना करना दुर्लभहै १३१ जो महापापोंमें वा सब पापोंमें युक्तहोवे पर जो विष्णुभक्तोंके तिसका सनंग होजावे सोवहसबपापोंसे छुटता है १३२सोकियह निश्चय जिनमें निष्पापहोता मैं यह सत्य२ कहताहूं हे द्विज तुला पुरुष दानकरनेका अश्वमेध करनेका भी फल विष्णुजीके स्मरण समान नहीं होताहै १३३ अरु जन हरिभक्त में परायण अरु सदा तीर्थसेवन करनेवाले हरिभक्तों की श्रीमहपीडलोंको पीनहीं जाते १३४ हे द्विज जिनकी जिह्वा में भी विष्णुजीकेनाम सबकहतेहैं विष्णुजीका महाप्रसाद जोजिनकी पूर्ण नैवेद्य खाते वे धन्यहैं इसमेंसंशय नहीं १३५ हे द्विज जो सर्वकर्म रहित अरु सत्कर्मोंमें हुवे

नाम जोनित्य उचारते तिनको कलियुगबाधा नहींकरता है १११ अरु हेशिवशंकररुद्र त्र्यम्बक नीलकंठ महादेव जी ऐसे जो नित्य नामलेते तिनको कलियुग बाधा नहीं करताहै ११२ हे त्रिलोचन विरूपाक्ष गंगाधर मृडअरि-नाशिव ऐसे जो नित्य उच्चारण करते वे धन्य हैं इस में संशय नहींहै ११३ हे भवानीश भवईशान काशीश हे करुणाकरऐसे जो नित्यउच्चारण करते वेवारवार धन्य हैं ११४ हेनारायण रमाकांतश्रीकृष्ण कमलनयनऐसे२ जो नित्यनाम उचारते वे कृतार्थहैं ११५ हे द्विजो संसार में भटकतेभये जनोंको पुत्र मित्र धन आदिक तो प्रारब्धा-नुसार मिलतेहींहैं ११६ पर हरिभक्तिहोनी कलियुग में अत्यंतदुर्लभहै सनत्कुमारजीबोलेकिहेमुनिनारदजी११७ आपने सत्यकहाहै हे करुणानिधान मैं सब सुनताहूं सोकि पाखंडी वेद निंदककर्म श्रद्धासेहीन जनहोजावें सो यह आपने कहा है अरु कलियुगमें वेदोक्त मार्ग नष्ट होंगे यहभी आपहीनेकहाहै ११८।११९अरुअधर्मकरने वालोंको पीड़ाभी आपनेकही अरु वेदमार्गसे बाहरकिये कलियुगके प्राप्तभये सबका प्रसिद्ध पाखंडपनभीवर्णन किया १२० पर हे मतजी घोर कलियुगमें चित्त शुद्धि हीन होरहे जो पाप करनेवाले जन तिनका उद्धार कैसे होवे १२१ हे मतजी चित्तशुद्धि न होनेसे ब्राह्मणआदि वर्णोंके नित्य कर्मसिद्ध नहीं होते अरु तिनको उत्तम ज्ञान होताहै १२२ श्रीनारदजी बोले हे लोकोंके अनुग्रह में तत्पर सनत्कुमार जबतकपूछा तबतुममें तिसका उपाय वर्णन करते हैं तिसे सावधान भये सुनो १२३ जो सब

राता) जो सब पापहारी पवित्र अरु सब दुष्टों को हटाने
वालाहै १४८ अरु जो समस्त पुण्यफल देने वाला अरु
सब यज्ञफल दाता है इसे जो विद्वान् जन पढ़ैंगे सो कि
इसका एक वा आधा श्लोकभी १४९ तो तिनको पाप
बंधन कभी भी नहीं होता अरु जो इसका एक अध्याय
एकबेर भी पढ़ैंगे तो वे उत्तम द्विज ज्योतिष्टोम यज्ञका
फल पावैंगे १५० जो इस विष्णुजीके अर्थ समर्पणकरने
योग्य सुरोंकोभी सबकाम फल देनेवाले उत्तम पुराणको
भक्तिसे जो कहैंगे तिनके पुण्यफलको श्रवणकरो १५१
हे द्विजोवेकोटिजन्मोंकेसंचितपापोंसेशीघ्रहीछूटेसहस्रोंनिज
कुलों सहित परम धामको प्राप्त होते हैं १५२ हे द्विजो
तीर्थोंसे क्या अरु दान करने से तथातप अरु यज्ञोंसेक्या
है जोप्रतिदिन गोविन्दजीकी कथासुनतेहैं १५३ अरुजो
प्रतिदिन श्रीकृष्णजीका गुणानुवाद सुनतेहैं तिनको स्त्री
पुत्र अरुअश्वमेध आदिकोंसेभी क्या अर्थात्तिनकीअपेक्षा
से सब तुच्छहैं १५४ हे द्विजो यह विष्णुजीकीप्रसन्नता
करनेवाला अरु हरिभक्ति बढ़ानेवालाहै अरुयह पवित्र
आरोग्य अरु धन धान्य बढ़ानेवालाहै १५५ जिनके घर
में लिखाधरा यह पुराण [illegible] तिनका [illegible] कि [illegible]
[illegible] [illegible] विघ्न बाधानहीं करतेहैं १५६ अरुसब
[illegible] कभीभी [illegible] [illegible] तहां [illegible] द्विजो
बाधा नहींहोती अरु चोरोंसे भयनहीं होताहै १५७ अरु
जो मनुष्य द्विजको [illegible] पढ़तेहैं तिनका [illegible]
[illegible] सो इसका अध्यायपढ़नेसे प्राप्त होताहै १५८ अरु
जो सौबेर गंगास्नान करनेका अरु ज्योतिष्टोम यज्ञका

वालेहैं अरु जो साधुवोंका सन्मान करते वे धन्यहैं इसमें संशय नहींहै १३६ अरु जो कलियुगमें विष्णुजीकी पूजा करते वे धन्यहैं जो विष्णुजीके स्मरणमें निष्ठावाले अरु शिवजीके नाम स्मरणमें परायणहैं १३७ अरु जो धन्य रूप कर्मवाले अर्थात् जो निष्काम कर्मकरते तिनके सब कर्म संपूर्णताको प्राप्त होतेहैं १३८ हेसनत्कुमार विष्णु जीको पूजनेवालोंका अहोभाग्यहै२ क्योंकि वे देवतोंकर केभी पूजे जातेहैं और कहनेसे क्याहै १३९ तिससे सब लोकोंके हितके लियेही हम कहतेहैं सोकि जो विष्णु जीके नाम स्मरणमें परायण हैं तिनको कलियुग बाधा नहीं करताहै १४० हे सनत्कुमार हमारा (हरिनामही हमारा जीवनहै) हेद्विज और प्रकारसे कोई गतिनहीं है १४१ श्रीसूतजी बोले हेशौनक आदि ऋषियो ऐसे ना- रदजी करके बोधन कियेगये सनत्कुमारजी शीघ्रही परम आनंदको प्राप्तहोते भये १४२ तिससे हे द्विजो जो हरि निष्ठ चित्तवालेहैं वे परमधामको पधारतेहैं जहांसे फिर आगमन न होवे १४३ इस घोर कलियुगमें जो हरिनाम स्मरणमें परायणहैं वे सब पापोंसे छूटे परमगति पातेहैं १४४ जो विष्णुजीकी पूजामें परायण अरु शिवपूजन में तत्परहैं तिनको स्वप्न अतिरिक्त भय कुछनहीं होता अरु तिनके सबकर्म संपूर्ण होतेहैं १४५ जो कलियुगमें एक वार भी हरिनाम उच्चारतेहैं वे महात्माजन धन्यहैं तिनको नित्य नमस्कार है १४६ हेऋषियो ऐसे हमने तुमसे जो नारदजीने सनत्कुमारजी को कहा था सो सब वर्णन किया १४७ जो कि यह वेदके समान (बृहन्नारदीयपु-

राया) जो सब पापहारी पवित्र अरु सब दुष्टों को हटाने वालाहै १४८ अरु जो समस्त पुण्यफल देने वाला अरु सब अर्थफल दाता है इसे जो विद्वान् जन पढ़ैंगे तो कि इसका एक वा आधा श्लोकभी १४९ तो तिनको पाप बंधन कभी भी नहीं होता अरु जो इसका एक अध्याय एकवेर भी पढ़ैंगे तो वे उत्तम द्विज ज्योतिष्टोम यज्ञका फल पावेंगे १५० जो इस विष्णुजीके अर्थ समर्पणकरने योग्य सुरोंकोभी सबकाम फल देनेवाले उत्तम पुराणको भक्तिसे जो कहैंगे तिनको पुण्यफलको श्रवणकरो १५१ हे द्विजो वेकोटजन्मोंकेसंचितपापोंसेशीघ्रहीछूटसहस्रोंनिज कुलों सहित परम धामको प्राप्त होते हैं १५२ हे द्विजो तीर्थोंसे क्या अरु दान करने से तथातप अरु यज्ञोंसेक्या है जोप्रतिदिन गोविन्दजीकी कथासुनतेहैं १५३ अरुजो प्रतिदिन श्रीहरिजीका गुणानुवाद सुनतेहैं तिनको स्त्री पुत्र अरुवरक्षेत्र आदिकोंसेभी क्या अर्थातजिनकोअपेक्षा से सब तुच्छहैं १५४ हे द्विजो यह विष्णुजीकीप्रसन्नता करनेवाला अरु हरिभक्ति बढ़ानेवालाहै अरुयह पवित्र आरोग्य अरु धन धान्य बढ़ानेवालाहै १५५ जिनके घर में लिखाधरा यह पूजाजाता तिनका पालनजो कि निज दरें वेतालभूतआदिग्रह बाधानहीं करतेहैं १५६ अरु यह कल्याण लक्ष्मी जहांही प्रतिदिन बढ़तीहैं तहां अग्निआदिकी बाधा नहींहोती अरु चोरोंसे भयनहीं होताहै १५७ अरु जो शुचिको द्विजको कोटिसहस्र गऊदेवै तिनको जो फल मिले सो इसका अध्यायपढ़नेसे प्राप्तहोताहै १५८ अरु जो सौवेर गंगास्नान करनेका अरु ज्योतिष्टोम यज्ञका

वालेहैं अरु जो साधुवोंका सन्मान करते वे धन्यहैं इसमें संशय नहींहै १३६ अरु जो कलियुगमें विष्णुजीकी पूजा करते वे धन्यहैं जो विष्णुजीके स्मरणमें निष्ठावाले अरु शिवजीके नाम स्मरणमें परायणहैं १३७ अरु जो धन्य स्त कर्मवाले अर्थात् जो निष्काम कर्मकरते तिनके सब कर्म संपूर्ण ताको प्राप्त होतेहैं १३८ हेसनत्कुमार विष्णु जीको पूजनेवालोंका अहोभाग्यहै २ क्योंकि वे देवतों कर के भी पूजे जातेहैं और कहनेसे क्याहै १३९ तिससे सब लोकोंके हितके लियेही हम कहतेहैं सोकि जो विष्णु जीके नाम स्मरणमें परायण हैं तिनको कलियुग बाधा नहीं करताहै १४० हे सनत्कुमार हमारा (हरिनामही हमारा जीवनहै) हेद्विज और प्रकारसे कोई गतिनहीं है १४१ श्रीसूतजी बोले हेशौनक आदि ऋषियो ऐसे नारदजी करके बोधन कियेगये सनत्कुमारजी शीघ्रही परम आनंदको प्राप्तहोते भये १४२ तिससे हे द्विजो जो हरि निष्ठ चित्तवालेहैं वे परमधामको पधारतेहैं जहांसे फिर आगमन न होवे १४३ इस घोर कलियुगमें जो हरिनाम स्मरणमें परायणहैं वे सब पापोंसे छूटे परमगति पातेहैं १४४ जो विष्णु जीकी पूजामें परायण अरु शिवपूजन में तत्परहैं तिनको न्यून अतिरिक्त पन कुछनहीं होता अरु तिनके सबकर्म संपूर्ण होतेहैं १४५ जो कलियुगमें एक बार भी हरिनाम उच्चारतेहैं वे महात्माजन धन्यहैं तिनको नित्य नमस्कार है ॥१४६ हेऋषियो ऐसे हमने तुमसे जो नारदजीने सनत्कुमारजी को कहा था सो सब वर्णन किया १४७ जो द्विज यह वेदके समान (बृहन्नारदीयपु

हते अरु श्रवण करते जनोंके सबपापोंका नाशकहै १७१ अरु जो पुरुषों को सायुज्य मुक्तिदाता अरु स्त्रियों को स्वर्ग वासदेताहै हेद्विजो तुलादानका भी फल दिव्य पुराणश्रवणकी बराबरी नहीं करसक्ता १७२ हेमुनि जनो यह हमारा सत्य २ वचनहै सोकि जो संशसे वा मोह से इस उत्तम पुराण का श्रवण करेंगे वे सब पापों से छूटे परम मोक्ष को प्राप्तहोवेंगे १७३।१७४ हेमुनीश्वरो बेर२ बहुत कहनेसे क्याहै श्रद्धासे वा अश्रद्धासेभी यह उत्तम पुराण अवश्यही श्रवण करना १७५ ॥

इतिश्रीशुक्लोपनामकपंडितदेवीसहायविरचित बृहन्नारदीयपुराणकेसरलदेशीय भाषा नुवादमें युगोंकेधर्मोंका विस्तारसे वर्णन इसनामसे अड़तीसवां अध्याय ३८ ॥

दोहा ॥

निधि वेद पुनि नन्द शशि सम्वत् माधव मास ।
शुक्ल पूर्णिमा पूर्ण दिन शुक्र रचित अभिराम १
सरल देश भाषा विधि पूर्ण भयो अनुवाद ॥
याद त्यागकरि [illegible] २

अर्थात् सम्वत् १९५४ वैशाख शुक्लपूर्णिमाके [illegible] समंतात् पूर्णभरे अर्थात् आनंददायक दिन प्रातःसमय में शुक्ल, भारत भूमि मंडलान्तर्गत मध्यदेश प्रसिद्ध इंद्रप्रस्थ नगरके पश्चिमकोणमें प्राचीन [illegible] ग्राम निवासी, श्रीमद्वृद्धसमूह शुक्ल जी श्री [illegible] नाथ जी तिनके [illegible] तिनके लघुभाई पंडित देवीसहाय [illegible] [illegible] [illegible] शुक्ल [illegible] [illegible] के [illegible]

फल है सो इसके दश अध्याय सुनने से मिलता है १५९ हे
द्विजो जो विष्णुभक्ति में परायण भये इस पुराण का श्रवण
करैं तिनके पुण्य का फल हम कहते हैं हे ऋषियो तुमसब
सावधान भये श्रवण करो १६० कोटि जन्मों के पापों
से शीघ्रही छूटे सौ कुलों समेत अंतसमय में मोक्षपाते हैं १६१
अरु जो इस पुराणका श्रवणकर के बाचनेवाले की पूजा
करता तिसपर लक्ष्मी सहित नारायण जी प्रसन्न होते
हैं १६२ अरु हे द्विजो वाचकके प्रसन्न होतेही ब्रह्मा विष्णु
महेश्वर येभी तिसपै प्रसन्न होते हैं संशय नहीं १६३ जो
पुराण वाचनेवाले को गऊ वस्त्र सुवर्ण भूमिदान अरु अन्न
दान श्रद्धा के अनुसार देवे १६४ पुराणवाचनेवाले को अंगूठी
अरु कमण्डलु देवे अरु दो पटवस्त्र अर्थात धोतीयुगोंका
अरु तौका सहित सेजदेवे १६५ अरु तिसको सब अन्न
पृथक् २ अरु भक्ति से तिलपात्रदेवे अरु जो शक्ति होवेतो
सौगऊ देनी चाहिये १६६ अरु संपूर्ण पुराण श्रवणकरके
और भी ब्राह्मणों को दक्षिणा देवे पर वित्त की शठता
अर्थात श्रद्धा से अधिक नहीं करै १६७ जो प्रातःकाल
उठके इसके एकाध श्लोकोंका भी पाठकरता तिसप्रति-
दिन करने से ज्योतिष्टोम यज्ञ अरु गंगास्नान काफल
नित्य होता है इसमें संदेह नहीं १६८ यह आरोग्य रूप
दिव्य पुराण अज्ञानियोंको न सुनाना किंतु जो द्विज
विष्णु भक्त हैं तिनको श्रवण कराना चाहिये १६९
जो नीचा आसन किये बैठा इस संपूर्ण पुराणका श्रवण
करै वह संपूर्ण फल पाता है १७० इस पुराणका श्रवण
करो करो अर्थात इसलोक परलोकमें कल्याणकारी है

लिये तथा समस्त महात्मा विद्वज्जनोंके चित्त रंजन लिये श्रीयुत मुन्शीनवलकिशोरजी की आज्ञाकेअनु सरलदेशीय भाषामें बनाया यह बृहन्नारदीय पुराण अनुवाद सो समाप्तभया सो समस्त लोकों को धनधा संतानआदि समस्त फलदेनेवालाहोवे ॥

मंगलंलेखकानांतु पाठकानांचमंगलम् ॥
मंगलंसर्वलोकानां भूयोभूयोस्तुमंगलम् १
मंगलंभगवान्विष्णु र्मंगलंगरुड़ध्वजः ॥
मंगलंपुण्डरीकाक्षो मंगलायतनोहरिः २

इति ॥

इस पुस्तक को पण्डित रामबिहारी व पण्डित रामसेवक व पण्डित बन्दीदीन व पण्डितरामेश्वर व पण्डितगौरीशंकर व पण्डित कामताप्रसाद व पण्डितबद्रीनाथ व पण्डितरामलाल व पण्डितहरदयाल ने शुद्ध किया

मुंशीनवलकिशोरके छापेखाने मुकाम लखनऊमें छपी जौलाईसन् १८८० ई०

——※——